

**THE BOOK WAS  
DRENCHED**

**TEXT PROBLEM  
WITHIN THE  
BOOK ONLY**

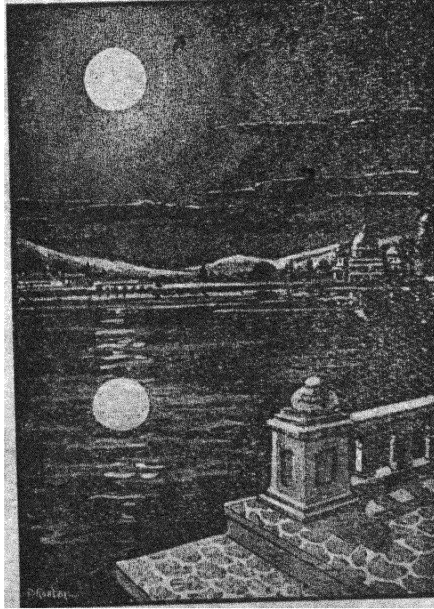
हरिः ॐ तत् सत्

श्रीमत्

# अभंगा-ज्ञानेश्वरी

उत्तरार्ध

अध्याय १३ ते १८



स्वा मी स्व रू पा नं द

UNIVERSAL  
LIBRARY

**OU\_196141**

UNIVERSAL  
LIBRARY





हरि ॐ तत् सत्

श्रीमत्

# अभंग-ज्ञानेश्वरी

श्रीज्ञानेश्वरीचा अभंग वृत्तांत केलेला सुबोध अनुवाद

## उत्तरार्ध

अध्याय १३ ते १८

“सुर्वसुखीं पूर्ण। होवोनि त्रि-लोक।  
नित्यमजो एक। ईश्वरातें॥३२०९॥”

-(अ. ज्ञा. अध्याय १८)

अनुवादक

स्वामी स्वरूपा नंद

संयोजक  
श्रीसंतदिगंबरदास वि. ग. जोशी,  
C/o श्रीसद्गुरु बाबामहाराज समाधिमंदिर,  
न.जु.सुंगी रोड, शिवाजीनगर, पुणे ४

प्रकाशक  
डॉ. रा. य. परांजपे,  
सजीवन दवाखाना,  
मु. पो. जि. रत्नागिरी

लेखनकाल : शके १८७५ ते १८७८

प्रथमावृत्ति

श्रीज्ञानेश्वरपुण्यतिथि

कार्तिक वद्य १३ शके १८८१

मूल्य

(पूर्वार्ध व उत्तरार्ध मिलून )

वारा रुपये

( पुनर्मुद्रणासंबंधीं वगैरे सर्व हक्क प्रकाशकाचे स्वाधीन )

चित्रकार  
श्री. वि. ना. गोलिवडेकर,  
समर्थसदन,  
मुंबई ४

मुद्रक  
मा. ह. पटवर्धन,  
सगम प्रेस प्रायव्हेट लिमिटेड,  
३८३, नारायण पेठ, पुणे २

# अध्यायानुक्रम

( उत्तरार्ध )

| अध्याय | अध्यायाचें नांव           | श्लोक | मूळ ओंव्या | चरणसंख्या | पृष्ठ       |
|--------|---------------------------|-------|------------|-----------|-------------|
| १३     | क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोग | ३४    | ११७०       | १९५७      | ३६१         |
| १४     | गुणत्रयविभागयोग           | २७    | ४१५        | ६८०       | ४४३         |
| १५     | पुरुषोत्तमयोग             | २०    | ५९९        | १०८२      | ४७३         |
| १६     | देवासुरसंपत्तिभागयोग      | २४    | ४७३        | ८३७       | ५१९         |
| १७     | श्रद्धात्रयाविभागयोग      | २८    | ४३३        | ७४३       | ५५५         |
| १८     | मोक्षसंन्यासयोग           | ७८    | १८१०       | ३१३३      | ५८८         |
|        |                           |       |            |           | ते }<br>७२१ |

## परिशिष्टे

|              |                                   |     |                  |
|--------------|-----------------------------------|-----|------------------|
| परिशिष्ट : १ | आरत्या व गुरुषादुक्ताष्टक         | ... | पृष्ठ ७२२ ते ७२४ |
| परिशिष्ट : २ | कांहीं विशेष शब्दांचें स्पष्टीकरण | ... | पृष्ठ १ ते ६     |
| परिशिष्ट : ३ | अनुवादांत वगळलेल्या ओंव्या        | ... | पृष्ठ ७ ते ८     |
| परिशिष्ट : ४ | देणगीदारांचा नाम-निर्देश          | ... | पृष्ठ ९ ते ११    |

## चित्रसूचि

( उत्तरार्ध : अध्याय १३ ते १८ )

प्रास्ताविक :

स्वामी स्वरूपानंद

पृष्ठ

४

श्रीमत् अमंग-ज्ञानेश्वरी :

१७ मर्वत्र तो ईश

४३५

१८ त्रिगुणानीत

४६८

१९ मम एव अंशः

४९९

२० आशा - पाश

५४४

२१ मात्त्विक यज्ञ

५६९

२२ मामेकं शरणं ब्रज

६९०

२३ कर्तव्योन्मुखता

७०२





## लागलासे छंद स्व-रूपाचा

सद्गुरु गणनाथ उदार समर्थ ।  
घाली नयनांत ज्ञानांजन ॥१॥

सहज समाधि सांपडलें धन ।  
लाचावलें मन तथा ठायीं ॥२॥

चालतां बोलतां न ढळे आसन ।  
न भंगे तें मौन कदाकाळीं ॥३॥

स्वामी म्हणे लाभे अवीट आनंद ।  
लागलासे छंद स्व-रूपाचा ॥४॥







सहज समाधि सांपडलें धन । लाचावलें मन तथा ठायीं ॥२॥



स्वामी स्वरूपानंदविरचित

# श्रीमत् भावार्थगीता

( अध्याय १ ते १८ )

( श्रीमद्भगवद्गीतेचा मुख्यत्वे श्रीज्ञानेश्वरीच्या आधारे केलेला सुबोध, प्राकृत, टीकात्मक साकीबद्ध अनुवाद. मूल्य ३॥. रुपये )

## श्रीमत् संजीवनीगाथा

( श्रीमद्गुरुपर, श्रीहरिरूपपर, ज्ञानभक्तिपर, सतपर, नामपर, उपदेशपर, साधनपर आणि संकीर्ण अभंग. मूल्य २ रुपये. )

## श्रीज्ञानेश्वरी — नित्यपाठ

( श्रीज्ञानेश्वरीतील निवडक १०८ ओंव्या. मूल्य २५ नवे पैसे. )

प्राप्तिस्थळे :

- ( १ ) श्री. देसाई बंधु, मु. पो पावस, जि. रतनागिरी.  
( किवा ८६४ सदाशिव पेठ, पुणे नं. २ )
- ( २ ) संजीवन औषधालय, ८०० मदाशिव पेठ,  
शनीचा पार, पुणे नं. २
- ( ३ ) श्री. वैद्य रा. य. परांजपे, संजीवन दवाखाना,  
बाजारपेठ, रतनागिरी
- ( ४ ) श्री. त्र्यं. वि. परचुरे, बलवंत पुस्तक भांडार  
गिरगाव, मुंबई नं. ४
- ( ५ ) संजीवन औषधालय, टिळकपूल, प्लाझामार्गे,  
दादर, मुंबई
- ( ६ ) महाराष्ट्र ग्रंथ - भांडार, महाद्वार रोड, कोल्हापूर

# शुद्धिपत्र

[ विनंति :—खाली दिलेल्या शुद्धिपत्राप्रमाणे प्रथम अगत्यपूर्वक ग्रंथ सुधारून मगच तो वाचावयास घ्यावा. —प्रकाशक ]

| पृष्ठ | श्लोक | अभंग—चरण | अशुद्ध     | शुद्ध       |
|-------|-------|----------|------------|-------------|
| ३७०   |       | २०५      | दुणावें    | दुणावे      |
| ३७५   |       | ३५१      | पोहोनि     | पाहोनि      |
| ३७६   |       | ३७३      | व्याकूळ    | व्याकुळ     |
| ३७९   |       | ४२८      | राग        | क्रोध       |
| ३८०   |       | ४६२      | तें        | ते          |
| ३८७   |       | ६५२      | पाहे       | पाहें       |
| ३९०   |       | ७२४      | नावें      | नावें       |
| ३९२   |       | ७६५      | देई        | देई         |
| ३९४   |       | ८१६      | तेमें      | ऐमें        |
| ४००   |       | ९५४      | कापेल      | कांपेल      |
| ४०१   |       | ९९३      | जो         | तो          |
| ४०८   |       | ११४६     | वाळगी      | वाळगी       |
| ४१५   |       | १३३२     | राहीं      | राही        |
| ४१५   |       | १३३९     | पावां      | वापां       |
| ४१७   |       | १३९४     | म्वे       | म्वेर       |
| ४१८   |       | १४०४     | आत्मज्ञानी | आत्मज्ञानीं |
| ४२६   |       | १५९२     | ऐमें       | ऐमें        |
| ४२९   |       | १६६६     | हि         | ही          |
| ४३४   |       | १७७८     | भूतजात     | भूतजात      |
| ४३५   |       | १८०३     | भिन्न      | भिन्न       |

| पृष्ठ | श्लोक | अभंगचरण | अशुद्ध               | शुद्ध               |
|-------|-------|---------|----------------------|---------------------|
| ४३७   |       | १८४७    | घातलीजी              | घातली जी            |
| ४४०   |       | १९१८    | चि न होय             | चि न होय            |
| ४४३   |       | ११      | विश्व चि             | विश्व हि            |
| ४४७   |       | १०३     | म्हण                 | म्हणे               |
| ४५१   |       | १९९     | मानू                 | मानूं               |
| ४५१   |       | २०३     | संगें                | संगें               |
| ४५४   | ७     |         | तृष्णा ङ्ग समुद्र म् | तृष्णासङ्गसमुद्रवम् |
| ४५८   |       | ३४१     | त्वगुण               | सत्त्वगुण           |
| ४५८   |       | ३५३     | शुद्धि               | शुद्धि              |
| ४५९   |       | ३७५     | बांधोनियां           | बांधोनियां          |
| ४७१   |       | ६४७     | तसा                  | तैसा                |
| ४७१   |       | टीप     | र्यसिंबवा            | सूर्यबिंबा          |
| ४७९   |       | १४७     | आणि                  | आणी                 |
| ४९४   |       | ५०८     | जयालार्गी            | जयांलार्गी          |
| ४९५   |       | ५३२     | जया                  | जयां                |
| ४९५   |       | ५४१     | जयासी                | जयांसी              |
| ५०४   |       | ७३५     | एशोपरी               | ऐशापरी              |
| ५०९   |       | ८५२     | तसें                 | तैसें               |
| ५१२   |       | ९३१     | विश्वासवें           | विश्वांसवें         |
| ५१३   |       | ९६३     | जागृतींची            | जागृतीची            |
| ५२२   |       | ८१      | भक्तांचियां          | भक्तांचिया          |
| ५३०   |       | २६७     | देई                  | देई                 |



| पृष्ठ | श्लोक | अभंग-चरण | अशुद्ध         | शुद्ध           |
|-------|-------|----------|----------------|-----------------|
| ५३९   | ६     |          | शृणु           | शृणु            |
| ५४२   | ९     |          | ॥८॥            | ॥९॥             |
| ५५३   |       | ७९७      | भोगतो          | भोग तो          |
| ५५८   |       | ८९       | तया            | तयां            |
| ५७०   |       | ३५०      | जप             | तप              |
| ५७२   |       | ४०८      | बोलू           | बोलूं           |
| ५८२   |       | ६२४      | व्यवहार        | व्यवहारा        |
| ६०५   |       | ४१०      | । तें          | तें ।           |
| ६१०   |       | ५३०      | दरेव           | देश्व           |
| ६१३   |       | ५८८      | । तमर          | तिमरें          |
| ६२५   |       | ९००      | कारण           | करण             |
| ६२५   |       | ९०३      | तसीं           | तैसीं           |
| ६३०   |       | १०२१     | ओवीं           | ओधीं            |
| ६४२   |       | १२८६     | नवग्रहामार्जीं | नवग्रहांमार्जीं |
| ६४४   |       | १३२३     | पार्थ          | पार्था          |
| ६५४   |       | १५५३     | ईश्वराच        | ईश्वराचें       |
| ६५९   |       | १६८९     | तैसे           | तैसें           |
| ६६०   |       | १६९६     | आपांनि         | अपांनि          |



# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय तेरावा

सकळ विद्यांचें । जें का 'अधिष्ठान । गणेश-स्मरण । आत्मरूप ॥१॥  
ते चि सद्गुरूचे । पावन चरण । तयांसी वंदन । करूं भावें ॥२॥  
सद्गुरूचे पाय । आठवितां चित्तीं । 'जिह्वाग्रीं नाचती । सर्व विद्या ॥३॥  
अंतरींचे भाव । प्रकटती पूर्ण । होवोनि स्वाधीन । शब्दसृष्टि ॥४॥  
वक्तृत्वासी ऐसी । रसाळता येई । फिकें अमृत हि । तयापुढें ॥५॥  
अक्षरांची आज्ञा । पाळिती निःशंक । होवोनि 'पाईक । नव-रस ॥६॥  
श्रीगुरूचे पाय । धरितां हृदयीं । ऐसें भाग्य येई । 'उन्मेषासी ॥७॥  
ते चि पाय भावें । वंदोनियां आतां । एका पुढें कथा । निवेदीन ॥८॥  
ब्रह्मदेवाचा हि । पिता रमा-नाथ । काय बोले तेथ । पार्थालागीं ॥९॥

श्रीभगवानुवाच—

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।  
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥१॥

म्हणे पार्था ऐक । सांगतों आघवें । देहा नांव द्यावें । \*क्षेत्र ऐसें ॥१०॥  
आणि क्षेत्रासी ह्या । जाणे जो स्वभावें । \*क्षेत्र-ज्ञ म्हणावें । त्यासी येथ ॥११॥

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।  
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥२॥

सर्व हि क्षेत्रांचें । करी जो पालन । क्षेत्रज्ञ तो जाण । मी च येथें ॥१२॥

\* परिशिष्ट पहा. १ आधार; राहाण्याचें ठिकाण. २ जिभेच्या शेड्यावर. ३ सेवक. ४ स्फूर्तीला.

जाणणें यथार्थ । क्षेत्र-क्षेत्रज्ञास । ज्ञान ऐसें त्यास । मानूं आम्ही ॥१३॥

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ।

म च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥३॥

देहासी कां दिलें । क्षेत्र ऐसें नांव । अभिप्राय सर्व । तो चि सांगूं ॥१४॥

असे ओट हात । अल्प कीं हें मोठें । तेविं कैसें कोठें । जन्म पावे ॥१५॥

वाढविती ह्यातें । कोणते विकार । कशाचें साचार । कोणाचें हें ॥१६॥

सुपीक नापीक । इत्यादिक भाव । सांगेन तें सर्व । ऐक आतां ॥१७॥

ह्या चि माठीं श्रुति । बडबडे साच । करी तर्क ही च । वाटाघाट ॥१८॥

दर्शनें हि हात । टेंकिते निभ्रांत । ही च वाटाघाट । चालवितां ॥१९॥

चाले चर्चा परी । अज्ञानि हि साच । मिटले नाहीं च । मतभेद ॥२०॥

आणि शास्त्रांची हि । तुटे सोयरीक । कारण तें एक । हें चि तया ॥२१॥

जगामार्जां वाद-। विवाद चालती । ह्याची च निश्चिती । करावया ॥२२॥

एकाचा निर्णय । न जुळे दुजाशीं । पडे ना बोलासी । मेळ कांहीं ॥२३॥

नाना युक्तिवाद । करितां साचार । तेणें आला जोर । चर्चेसी च ॥२४॥

कोणाचें हें क्षेत्र । कळे चि ना परी । चाले घोघरीं । काथ्याकूट ॥२५॥

अचूक निर्णय । वाटे ज्याचा त्यास । कैसा अभिलाष । थोर देखा ॥२६॥

नाम्तिकामी तोंड । द्यावया साचार । बद्धपरिकर । झाले वेद ॥२७॥

प्रचंड तें बंड । देखोनि पाखंड । करी बडबड । वेगळी च ॥२८॥

म्हणे अहो तुम्हीं । आहांत निर्मूळ । लटिकें वागजाळ । तुमचें हें ॥२९॥

जरी अप्रमाण । म्हणाल आमुतें । तरी विडा येथें । पैजेचा हा ॥३०॥

कोणी नाम्तिकांच्या । पंक्तीसी बैसोन । हिंडती होवोन । दिगंबर ॥३१॥

वेदांचे निंदक । कोणी श्रमणक । मुंडिते मस्तक । स्वहस्ते चि ॥३२॥

तयांनीं वितंड-। वाद जे योजिले । ते हि येथें भले । रंगती गा ॥३३॥

काळात्रिया मुखीं । जाईल हें वायां । ऐसें देखोनियां । योगीजनें ॥३४॥

मेविला एकान्त । मृत्यूमी भिवोन । अष्टांग-साधन । पूर्ण केलें ॥३५॥

ह्या चि सार्ठीं सुखें । त्यजोनि कैलास । शिवें केला वास । म्मशानीं च ॥३६॥  
 करीन निर्णय । पैज ही मारून । मग पांघरून । दाही दिशा ॥३७॥  
 मोहवी म्हणोन । 'जाळोनि' अनंग । होवोनि निःसंग । राहिला तो ॥३८॥  
 'सत्यलोकनाथ । चतुर्मुख होय । नेणे चि निर्णय । परी ह्याचा ॥३९॥

ऋषिभिर्वद्भुथा गीतं छन्दोभिर्विभिधैः पृथक् ।

ब्रह्ममंत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥४॥

कोणीएक ऐसें । बोलती हें साच । असे जीवाचें च । संपूर्णत्वं ॥४०॥  
 मग प्राण-रूप । कुळासी तो देत । देहाचें हें शेत । कसावया ॥४१॥  
 ज्या प्राणाचिया । घरीं बंधू चार । राबती साचार । रात्रं-दिन ॥४२॥  
 तेविं मनाऐसा । कारभारी भला । कष्टाळू लाभला । शेतकरी ॥४३॥  
 आवशीं पहाटे । न मानितां त्रास । इंद्रिय-बैलांस । जुंपोनि जो ॥४४॥  
 शब्दस्पर्शादिक । विषय-भूमींत । करी अविश्रांत । नांगरणी ॥४५॥  
 मग कर्तव्याची । वाफ चुकवून । बीज हि पेरून । अन्यायाचें ॥४६॥  
 जरी कुकर्माचें । देववी पोषण । तरी पीक जाण । पापाचें चि ॥४७॥  
 मग 'अनन्वित । पातकांची रास । बांधोनि गांठीस । तैसी च ती ॥४८॥  
 कोटी कोटी जन्म । घेवोनि निभ्रांत । दुःखें असंख्यात । भोगी जीव ॥४९॥  
 किंवा कर्तव्याची । साधोनियां वाफ । सदाचाररूप । बीज पेरी ॥५०॥  
 तरी पुण्य-पीक । 'लाहोनि उत्तम । शतावधि जन्म । सुख भोगी ॥५१॥  
 तंव दुजे कोणी । बोलती ऐसें च । म्हणावें ना साच । जीवाचें हें ॥५२॥  
 देह-क्षेत्राचें ह्या । सर्व आम्हां ठावें । विचारा आघवें । आम्हांसी च ॥५३॥  
 अहो जीव हा तों । वाटसरू येथें । वस्ती करी वाटे । जातां जातां ॥५४॥  
 आणि प्राण तो हि । 'बलुत्या म्हणोन । करी संरक्षण । क्षेत्राचें ह्या ॥५५॥  
 अनादि म्हणोन । जिये प्रकृतीतें । सर्वथा वर्णितें । सांख्य-शास्त्र ॥५६॥  
 तिये प्रकृतीचें । क्षेत्र हें वतन । ती च मालकीण । जाणा येथें ॥५७॥  
 कसावया शेत । सर्व हि तो 'संच । असे घरचा च । हिच्यापार्शीं ॥५८॥

म्हणोनि आपण । घरीं च ही नीट । करी वहिवाट । क्षेत्राची ह्या ॥५९॥  
 सृष्टीमार्जां येथ । 'वहाया हें शेत । मूळ खटपट । असे ज्यांची ॥६०॥  
 सत्त्व रज तम । तीन हि ते गुण । जाहले उत्पन्न । हिच्या पोटीं ॥६१॥  
 पेरी रजोगुण । तें तें संरक्षण । करी सत्त्वगुण । स्वभावं चि ॥६२॥  
 मग सर्व पीक । घेतसे काढून । देखा तमोगुण । एकला च ॥६३॥  
 महत्-तत्त्वरूपी । रचोनियां खळ । जुंपोनियां 'पोळ । काळ-रूप ॥६४॥  
 पिकाची मळणी । काढितां सकळ । होय सांजवेळ । अव्यक्ताची ॥६५॥  
 तंव ते आणिक । कोणी बुद्धिमंत । वाटोनियां खंत । बोलाची ह्या ॥६६॥  
 म्हणती हें ज्ञान । असे अर्वाचीन । कैसें सनातन । म्हणूं ह्यातें ॥६७॥  
 अहो परब्रह्म-। स्वरूपाचे ठायीं । वार्ता चि तों नाहीं । प्रकृतीची ॥६८॥  
 तरी ह्या क्षेत्राचा । सर्व हि वृत्तांत । सांगूं तो निवांत । एका तुम्ही ॥६९॥  
 पूर्ण लीनावस्था । ही च कोणी शय्या । पर-ब्रह्माचिया । शेजघरीं ॥७०॥  
 त्या चि शय्येवरी । निवांत निद्रित । होता बळवंत । संकल्प हा ॥७१॥  
 तो चि एकाएकीं । जाहला जागृत । थोर भाग्यवंत । व्यवहारीं ॥७२॥  
 म्हणोनियां त्यामी । तत्क्षणीं च भला । ठेवा प्राप्त झाला । त्रैलोक्याचा ॥७३॥  
 परब्रह्माचिया । वागेमार्जां जें का । होतें लीन देखा । त्रिभुवन ॥७४॥  
 ह्या चि संकल्पाच्या । योगें तें आघवें । पावलें स्वभावं । व्यक्तदशा ॥७५॥  
 महाभूताचिया । भाट जमिनींत । केली मशागत । पंचकांची ॥७६॥  
 मग जारजादि । महजें साचार । विभागिले चार । प्राणिवर्ग ॥७७॥  
 आधीं भिन्न भिन्न । बांधिले अनेक । बांधे पंचात्मक । मिश्रणाचे ॥७८॥  
 कर्माकर्मरूपी । जमवोनि धोंडे । बांध दोहींकडे । घालोनियां ॥७९॥  
 निकम नापीक । जमिनीचीं भलीं । रानें बनविलीं । कसदार ॥८०॥  
 मग संकल्पें ह्या । रानामार्जां तथा । मुखें करावया । येरझार ॥८१॥  
 जन्ममृत्युरूपी । 'निलागी भुयार । खोदिलें साचार । शोभिवंत ॥८२॥  
 अहंकारामंगं । मग यावज्जीव । ऐक्य सर्वथैव । करोनियां ॥८३॥

बुद्धीकडोनी ही । चराचर सृष्टि । हा चि वहिवाटी । मंपूर्णत्वे ॥८४॥  
 ऐसी पर-ब्रह्मीं । महा-शून्यां देखा । वाढताहे शाखा । संकल्पाची ॥८५॥  
 म्हणोनि सर्वथा । संकल्प केवळ । हा चि असे मूळ । प्रपंचासी ॥८६॥  
 ऐमीं मुक्ताफळें । पडतां बाहेर । त्या हि वरी जोर । करोनियां ॥८७॥  
 म्हणती आणिक । दुजे कोणी तेथ । दिमतां पंडित । तुम्ही मोटे ! ॥८८॥  
 जरी का देखावी । संकल्पाची शय्या । परब्रह्माचिया । शेजघरीं ॥८९॥  
 तरी मांख्यांची जी । अनादि प्रकृति । नये मानूं कां ती । परब्रह्मीं ॥९०॥  
 परी नव्हे तैमें । म्हणोनि ह्या कामीं । नका बोलूं तुम्ही । कांहींएक ॥९१॥  
 अहो क्षेत्राचा ह्या । निर्णय जो साच । मांगूं तो आम्ही च । एका आतां ॥९२॥  
 तरी आकाशांत । ढगामार्जी पाणी । ठेविलें भरोनि । कोणीं सांगा ॥९३॥  
 सांगा अंतराळीं । दिव्य तारा-गण । अधांतरीं कोण । धरी कैसा ? ॥९४॥  
 किंवा आकाशाचें । छत हें विस्तीर्ण । धरिलें ताणून । केव्हां कोणीं ? ॥९५॥  
 नातरी पवन । कोणाच्या आज्ञेंत । राहोनि संतत । वाहतसे ? ॥९६॥  
 अहो अंगभरी । रोम कोण पेरी ? । सांगा कोण भरी । सागरातें ? ॥९७॥  
 सांगा कोण पाडी । पर्जन्याच्या धारा ? । खेळ हा तों सारा । स्वाभाविक ॥९८॥  
 तैमें क्षेत्र झालें । स्वभावं निर्माण । नव्हे हें वतन । कोणाचें हि ॥९९॥  
 वाहेल जो ह्यातें । तयातें सफळ । होतसे निष्फळ । आणिकांसी ॥१००॥  
 तंव दुजे कोणी । बोलती शोभून । मानावें प्रमाण । जरी तुम्हां ॥१०१॥  
 तरी एकला च । काळ कैसा मग । घेई उपभोग । क्षेत्राचा ह्या ॥१०२॥  
 काळाचा तडाखा । ऐसा दुर्निवार । महा-भयंकर । देखोनि हि ॥१०३॥  
 स्वमताभिमानी । आपुलाल्या मतीं । कैसा भर देती । आवेशानें ॥१०४॥  
 सिंहाचिया दरी- । सारिखा अधोर । काळ हा साचार । जाणोनि हि ॥१०५॥  
 स्व-मते च केली । बडबड फोल । तरी का पडेल । पुरी तैथें ॥१०६॥  
 राहे एकाएकीं । मिठी देवोनियां । महाकल्पाचिया । पलीकडे ॥१०७॥  
 सत्यलोकरूपी । हत्तीस हि धाक । दावी चपराक । मारोनि तो ॥१०८॥

काळरूपी सिंह । स्वर्गरूप रानी । संचार करोनि । एकाएकीं ॥१०९॥  
 अष्ट दिग्गजातें । आणि लोक-पाळां । संहारी सकळां । वारंवार ॥११०॥  
 अहो काळाचिया । वान्यासरिसे च । होवोनियां साच । शक्तिहीन ॥१११॥  
 जन्म-मृत्यूचिया । पडोनि खाचेंत । राहती भोंवत । जीव-पशु ॥११२॥  
 विश्वाकाररूपी । कुंजरालागोन । ठेविलें धरोन । जयामार्जी ॥११३॥  
 तो हा काळरूप । सिंहाचा चवडा । विस्तीर्ण केवढा । न्याहाळा पां ! ॥११४॥  
 म्हणोनि काळाची । क्षेत्रावरी सत्ता । प्रमाण सर्वथा । हा चि बोल ॥११५॥  
 नाना मतभेद । ऐसें धनंजया । देह-क्षेत्राचिया । निर्णयार्थी ॥११६॥  
 एकान्तीं वैमोन । नैमिषारण्यांत । शिष्यांसमवेत । ऋषिजनें ॥११७॥  
 क्षेत्र-निर्णयार्थ । चर्चा केली किती । ह्याची साक्ष देती । पुराणें हि ॥११८॥  
 अनुष्टुभादिक । छंदामार्जी साची । असे चर्चा ह्याची । ज्या ज्या ग्रंथीं ॥११९॥  
 अभिमानें त्या त्या । ग्रंथांचा आधार । घेती थोर थोर । अजूनी हि ॥१२०॥  
 ऋग्वेदामधील । बृहत्साममूत्र । असे जें पवित्र । ज्ञानदृष्ट्या ॥१२१॥  
 तयासी हि क्षेत्र । देहरूपी भलें । नाहीं आकळलें । सर्वथा हें ॥१२२॥  
 नाना युक्ति-युक्त । प्रकांड-पंडितीं । खर्च केली मति । ह्या चि साठीं ॥१२३॥  
 परी एवढें हें । अमुक्याचें साच । नाहीं कळलें च । ऐसें कोणा ॥१२४॥  
 आतां ह्यावरी हें । क्षेत्र असे जैसें । साद्यन्त गा तैसें । सांगूं तुज ॥१२५॥

महामृतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ।

इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥५॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः ।

एतत्क्षेत्रं समाप्तेन सविकारमुदाहृतम् ॥६॥

पंचमहाभूतें । आणि अहंकार । दशक साचार । इंद्रियांचा ॥१२६॥  
 मन बुद्धि तेविं । अव्यक्त आणिक । दशक हि एक । विषयांचा ॥१२७॥  
 इच्छा द्वेष तैसें । सुख दुःख येथ । चेतना मंग्यात । आणि धृति ॥१२८॥  
 ऐसीं दाखवोनि । छत्तीस हि तत्वे । क्षेत्र हें आधर्वें । स्पष्ट केलें ॥१२९॥

आतां महाभूतें । इंद्रियें विषय । इत्यादिक काय । कैसीं कोण ? ॥१३०॥  
 वेगळालेपणें । सर्व हि एकैक । सांगेन तें एक । धनंजया ॥१३१॥  
 पृथ्वी आप तेज । वायु व्योम हीं च । महा-भूतें पांच । जाण येथें ॥१३२॥  
 अमावास्या-दिनीं । चंद्र जैसा गुप्त । किंवा जागृतींत । स्वप्न जैसें ॥१३३॥  
 ना तरी लहान । बालकाचे ठायीं । लपोनियां राही । यौवनत्व ॥१३४॥  
 किंवा अप्रफुल्ल । कळीमार्जीं भला । सुगंध राहिला । दडोनियां ॥१३५॥  
 काय मांगूं फार । अग्नि जैसा काष्ठीं । तैसा जो का पोटीं । प्रकृतीच्या ॥१३६॥  
 किंवा हाडीज्वर । व्हावया प्रकट । कुपथ्याची वाट । पाहे जैसा ॥१३७॥  
 मग तें होतां च । देहा एकाएकीं । व्यापोनि तो टाकी । अंतर्बाह्य ॥१३८॥  
 तैसी पांचाची हि । पडोनियां गांठ । होतां चि प्रकट । देहाकार ॥१३९॥  
 तथा देहासी जो । नाचवी चौफेर । तो चिं अहंकार । ऐमें जाण ॥१४०॥  
 बुद्धीचीं लक्षणें । सांगूं आतां तुज । म्हणे यदु-राज । ऐक पार्था ॥१४१॥  
 कामाचिया बळें । इंद्रियांच्या वृत्ति । भिडोनियां येती । विषयांशीं ॥१४२॥  
 तेव्हां जीवासी जें । लाभे सुख-दुःख । तथाचा विवेक । करी जी का ॥१४३॥  
 पुण्य आणि पाप । सुख आणि दुःख । शुद्धाशुद्ध देख । निवडी जी ॥१४४॥  
 अधम-उत्तम । तेर्वि सान-थोर । कळे हें साचार । जिच्या योगें ॥१४५॥  
 जिच्या योगें पार्था । जिवालागीं देख । होतसे पारख । विषयांची ॥१४६॥  
 तेजतत्त्वाचिया । उत्पत्तीचें स्थान । आणि सत्त्व-गुण । वाढवी जी ॥१४७॥  
 आत्मया-जीवाचा । संबंध जी दावी । पार्था ती आघवी । बुद्धि जाण ॥१४८॥  
 'अव्यक्त'ची खूण । सांगतसें आतां । ऐक बुद्धिमंता । धनंजया ॥१४९॥  
 प्रकृति म्हणोनि । वर्णीं सांख्य-मत । ती च गा अव्यक्त । जाण येथें ॥१५०॥  
 सांगितली पूर्वीं । तुज द्विविध जी । त्यांतील जी दुजी । जीवभूता ॥१५१॥  
 धनंजया त्या च । परा प्रकृतीतें । नांव दिलें येथें । अव्यक्त हें ॥१५२॥  
 संपोनियां रात्र । उजाडतां दिन । लोपे तारा-गण । आकाशांत ॥१५३॥  
 किंवा जैसें सर्व । लोकांचे व्यापार । थांबती साचार । अस्तमानीं ॥१५४॥



देहादि उपाधि । किंवा देहापाठीं । कृतकर्मापोठीं । लपे जैमी ॥१५५॥  
 किंवा बीजीं जैमा । वृक्ष अंतर्भूत । राहे कीं तंतूंत । वस्त्रपण ॥१५६॥  
 तैमीं स्थूलधर्म । सांडोनियां जेथें । पंच-महाभूतें । धनुर्धरा ॥१५७॥  
 सर्व प्राणिगणा-। सहवर्तमान । सूक्ष्मत्व पावोन । लीन होती ॥१५८॥  
 तयातें अव्यक्त । ऐसें जाण पार्था । ऐक भेद आतां । इंद्रियांचे ॥१५९॥  
 नाक डोळे जिह्वा । त्वचा आणि कान । पांच ऐसीं जाण । 'ज्ञानेंद्रियें' ॥१६०॥  
 करी बुद्धि मुख-। दुःग्वाचा निर्णय । घेवोनि माहाय्य । पांचांचें ह्या ॥१६१॥  
 वाचा हात पाय । शिश्न आणि गुद । जाण ऐसे भेद । आणिक हे ॥१६२॥  
 ह्यांसी 'कर्मेंद्रियें' । ऐसें देती नांव । म्हणे कृष्णदेव । ऐक पार्था ॥१६३॥  
 सर्व शरीरीं ह्या । वसे धनंजया । प्राणाची जी प्रिया । क्रियाशक्ति ॥१६४॥  
 तिचें ह्या च पांच । इंद्रियांच्या द्वारा । होत असे वीरा । येणें जाणें ॥१६५॥  
 सांगितलीं ऐसीं । इंद्रियें दहा हि । आतां 'मन' तें हि । स्पष्ट सांगूं ॥१६६॥  
 इंद्रियां-बुद्धीच्या । संघांत जें फिरे । रजोगुणाधारें । चंचलत्वे ॥१६७॥  
 मृगजळावरी । भासती लहरी । नातरी अंबरीं । नील-वर्ण ॥१६८॥  
 तैसा देहीं भासे । जयाचा आभास । नाहीं च जयास । वास्तवता ॥१६९॥  
 रज आणि रेत । होवोनियां एक । पंचभूतात्मक । देह घडे ॥१७०॥  
 मग वायु तत्व । एक चि तें देहीं । दशविध होई । स्थान-भेदें ॥१७१॥  
 देह-धर्म बळें । मग ते दहा हि । आपुलाल्या ठायीं । 'निवसतां ॥१७२॥  
 तेथ चांचल्य तें । एकलें चि राही । म्हणोनियां घेई । 'रजोबळ ॥१७३॥  
 बुद्धीच्या बाहेरी । अहंकारावरी । थोर बळ धरी । माझारीं च ॥१७४॥  
 वायां तयालागीं । मन ऐसें नांव । तें तों 'सावयव । कल्पना च ॥१७५॥  
 जयाचिया संगें । ब्रह्मालागीं साच । आली नसती च । जीवदशा ॥१७६॥  
 सर्व प्रकृतीचें । असे जें का मूळ । वासनेसी बळ । मिळे जेणें ॥१७७॥  
 अहंकारालागीं । द्यावयासी भर । राहे निरंतर । तत्पर जें ॥१७८॥  
 वाढवी इच्छेतें । चढवी आशेतें । आधार जें देतें । भयालागीं ॥१७९॥

जेणें चढे बळ । अविद्येलागोन । होय जन्म-स्थान । द्वैताचें जें ॥१८०॥  
 जें का इंद्रियांसी । लोटी विषयांत । रची मनोरथ । सवें मोडी ॥१८१॥  
 संकल्प-विकल्पें । अखंड उदंड । करी घडामोड । सृष्टीची जें ॥१८२॥  
 जेणें बंद केलें । बुद्धीचें हि द्वार । भ्रांतीचें कोठार । होय जें का ॥१८३॥  
 वायु-तत्त्वाचिया । आंतील जें सार । तें चि गा साचार । मन जाण ॥१८४॥  
 नको मानूं बोल । 'अन्यथा हे पार्था । एक भेद आतां । 'विषयांचे' ॥१८५॥  
 शब्द स्पर्श रूप । रस आणि गंध । जाण पंचविध । विषय हे ॥१८६॥  
 गुरेंदोरें जैसीं । जाती भांबावोनि । कुरणीं देखोनि । हिरवळ ॥१८७॥  
 तैसें ह्या च पांच । दारांनीं साचार । धांवतें बाहेर । ज्ञान येथें ॥१८८॥  
 मुखें 'स्वर' 'वर्ण' । 'विसर्ग' उच्चार । हाताचा व्यापार । देवधेव ॥१८९॥  
 गुद-शिश्र-द्वारा । मलमूत्र-त्याग । चालणें हा भाग । चरणांचा ॥१९०॥  
 कर्मेंद्रियांचे हे । पांच हि विषय । क्रियेसी आश्रय । ते चि होती ॥१९१॥  
 दहा हि विषय । ऐसे देख देहीं । आतां इच्छा ती हि । सांगूं तुज ॥१९२॥  
 तरी जे जे भांग । भोगिले आपण । होतां आठवण । गोष्टींची त्या ॥१९३॥  
 किंवा पडतां चि । श्रवणीं वृत्तांत । होतसे जागृत । वृत्ति जी का ॥१९४॥  
 आणि इंद्रियांचा । विषयांशीं योग । घडतां 'सवेग' । उठावोनि ॥१९५॥  
 कामाचा आश्रय । घेवोनि जी राहे । जेणें धांवताहे । मन सदा ॥१९६॥  
 करूं नये तेथें । करिती प्रवेश । इंद्रियें 'अशेष' । जेणें योगें ॥१९७॥  
 असे ज्या वृत्तीतें । विषयांची गोडी । जिच्यामुळें वेडी । बुद्धि होय ॥१९८॥  
 जाण त्या वृत्तीस । इच्छा ऐसें नांव । सांगतसे देव । अर्जुनातें ॥१९९॥  
 इच्छिल्यासारिखा । विषय अर्जुना । सर्वथा लाभे ना । इंद्रियांसी ॥२००॥  
 ऐसी स्थिति होतां । उपजे जी वृत्ति । तिज नांव देती । द्वेष ऐसें ॥२०१॥  
 आतां जें का 'सुख' । तें चि ऐसें जाण । तयाचें लक्षण । सांगूं तुज ॥२०२॥  
 लाभतां जें एक । जीव सर्व काहीं । विसरोनि जाई । एकाएकीं ॥२०३॥  
 काया वाचा मन । 'निष्क्रिय' होवोन । देहाचें स्मरण । लोपूं लागे ॥२०४॥

'पांगुळतो प्राण । लाभतां जें एक । दुणावें सात्त्विक । वृत्ति जेणें ॥२०५॥  
 जेणें योगें सर्व । इंद्रियांच्या वृत्ति । झोंपती एकांतीं । हृदयाच्या ॥२०६॥  
 काय सांगूं फार । जेथें जीवाप्रति । होय आत्मप्राप्ति । धनंजया ॥२०७॥  
 तया स्थितीलागीं । सुख ऐसें जाण । दुःखाचें लक्षण । ऐक आतां ॥२०८॥  
 तरी सर्वथैव । आत्मप्राप्तिविण । व्यर्थ जें जीवन । तें चि दुःख ॥२०९॥  
 कल्पनेच्या संगें । नव्हे प्राप्त सुख । ए-हवीं तें देख । स्वयसिद्ध ॥२१०॥  
 मनाचें 'सुस्थैर्य' । आणि चंचलता । ह्या चि दोन वाटा । सुख-दुःखां ॥२११॥  
 आतां धनंजया । चैतन्य अलिप्त । असे साक्षीभूत । शरीरीं जें ॥२१२॥  
 पायापासोनियां । मस्तकापर्यंत । नित्य जें जागृत । देहामार्जी ॥२१३॥  
 मन-बुद्ध्यादिकां । करी टवटवीत । तिन्ही अवस्थांत । पालटे ना ॥२१४॥  
 मायारूप वना । वसंत जें साच । वागे सारखें च । जडाजडीं ॥२१५॥  
 तया चैतन्यातें । चेतना तूं जाण । नव्हे अप्रमाण । बोलणें हें ॥२१६॥  
 जैमें राजालागीं । निज-दळभार । ठाऊका माचार । नसतां हि ॥२१७॥  
 तयाची आज्ञा च । सर्वथा तूं जाण । करी निवारण । परचक्र ॥२१८॥  
 किंवा पौर्णिमेचा । उगवतां चंद्र । सहजें समुद्र । उचंबळे ॥२१९॥  
 ना तरी लोहातें । चाळवितें साचें । लोहचुंबकाचें । सन्निधान ॥२२०॥  
 लोक-व्यवहार । चालाया सकळ । निमित्त केवळ । भानु जैसा ॥२२१॥  
 किंवा कामवीच्या । पिलांचें पोषण । होय स्तनाविण । दृष्टीनें च ॥२२२॥  
 तैसी पार्था देहीं । आत्म्याची संगति । देई जडाप्रति । सजीवत्व ॥२२३॥  
 आत्मसत्तेसी च । बोलती चेतना । 'धृति-विवंचना । ऐक आतां ॥२२४॥  
 तरी महाभूतां- । मार्जीं परस्पर । स्वभावतां वैर । दिसे स्पष्ट ॥२२५॥  
 काय पृथ्वीलागीं । जिरवी ना पाणी । पाण्याची आटणी । तेज करी ॥२२६॥  
 त्या चि तेजासवें । वायु घेई झुंज । वायूसी सहज । भक्षी व्योम ॥२२७॥  
 सर्वदा सर्वत्र । असे ओतप्रोत । परी जें अलिप्त । सर्वाहूनि ॥२२८॥  
 पंचमहाभूतें । ऐसीं धनुर्धरा । जरी परस्परं । साहती ना ॥२२९॥

तरी तीं हि देहीं । विसरोनि वैर । नांदती साचार । ऐक्यभावे ॥२३०॥  
 नव्हे एवढे च । 'निज-गुणें एक । होतसे पोषक । 'दुजेयाते ॥२३१॥  
 ऐसी एकमेकां । पटे ना त्यांची । होय मैत्री साची । जेणें धैर्यें ॥२३२॥  
 त्या धैर्यासी च । धृति ऐसे जाण । 'संघाताची' खूण । सांगूं आतां ॥२३३॥  
 तो चि पार्था येथ । संघात केवळ । जीवासह मेळ । छत्तिसांचा ॥२३४॥  
 तुजलगीं ऐसे । छत्तीस हि भेद । करोनि विशद । सांगितले ॥२३५॥  
 क्षेत्र ऐसे नांव । ह्यासी च सर्वथा । असे पंडु-सुता । प्रसिद्ध जें ॥२३६॥  
 धनंजया चाक- । 'धुरा इत्यादिक । रथार्ची अनेक । अंगें जीं का ॥२३७॥  
 त्यांच्या समूहास । रथ ऐसे नांव । सर्व अवयव । तो चि देह ॥२३८॥  
 गज-तुरंगांचा । जो का समुदाय । त्या नांव होय । सेना ऐसे ॥२३९॥  
 किंवा अक्षरांच्या । समुदायासी च । वाक्य ऐसे साच । बोलती गा ॥२४०॥  
 ना तरी सकळ । मेघांचा जो मेळ । त्यासी आभाळ । नांव देती ॥२४१॥  
 किंवा नानालोक- । समूहास जैसे । पार्था जग ऐसे । संबोधिती ॥२४२॥  
 मिळतां एकत्र । तेल वात अग्नि । त्या नाम जर्नी । दीप ऐसे ॥२४३॥  
 तैसीं छत्तीस हि । मिळतां एकत्र । त्यासी च 'क्षेत्र' । बोलती गा ॥२४४॥  
 'रावतां च येथे । पाप-पुण्य पिके । म्हणोनि कौतुकें । क्षेत्र म्हणूं ॥२४५॥  
 कोणी ह्यासी 'देह' । ऐसे नाम देती । नामांसी तीं मिति । नाहीं ह्याच्या ॥२४६॥  
 परी परब्रह्मा- । अलीकडे येथे । होतें आणि जातें । जें जें काहीं ॥२४७॥  
 चराचरादिक । अर्जुना समस्त । जाण तें निभ्रांत । क्षेत्र चि हें ॥२४८॥  
 परी सुर-नर- । सर्प ऐशा भिन्न । योनि होती गुण- । कर्म-संगें ॥२४९॥  
 तो चि गुण-त्रय- । विभाग साचार । तुज सविस्तर । पुढें सांगूं ॥२५०॥  
 विकारांसहित । क्षेत्राचें वर्णन । विस्तारेंकरोन । केलें येथें ॥२५१॥  
 तरी पार्था ऐक । उदार जें ज्ञान । त्याचें वर्णन । करूं आतां ॥२५२॥  
 अगा योगी-जन । गिळित्ती गगन । लाभावे जें ज्ञान । म्हणोनियां ॥२५३॥  
 जया ज्ञानासाठीं । स्वर्गाची बिकट । जाती आडवाट । ओलांडून ॥२५४॥

नाहीं तयांलागीं । सिद्धीची हि चाड । धरिती ना भीड । ऋद्धीची ते ॥२५५॥  
 आणि योगाऐसी । साधना दुर्घट । परी ते हि कष्ट । लेखिती ना ॥२५६॥  
 ज्या ज्ञानासाठीं । तपोनिधि कोणी । जाती ओलांडोनि । तपोदुर्ग ॥२५७॥  
 तेविं ह्या चि साठीं । कोणी कोटी कोटी । साङ्ग अमुष्टिती । यज्ञयाग ॥२५८॥  
 कर्मफलत्याग । करोनियां कोणी । काढिती खणोनि । कर्म-वल्ली ॥२५९॥  
 कोणी सुषुम्नेच्या । गुप्त पथें जाती । कोणी आचरिती । भक्तिमार्ग ॥२६०॥  
 वेद-वृक्षाचिया । कोणी पानोपानीं । हिंडताती ज्ञानी । मुनीश्वर ॥२६१॥  
 ज्या ज्ञानासाठीं । ऐसे उत्कंठित । गुरुसेवा-व्रत । स्वीकारोनि ॥२६२॥  
 कोणी श्रद्धावंत । आपुलें जीवन । सुखें ओवाळून । टाकिती गा ॥२६३॥  
 लाभतां जें ज्ञान । अविद्या नासोन । जीव होय लीन । पर-ब्रह्मीं ॥२६४॥  
 प्रवृत्तीचे पाय । मोडोनि जें टाकी । तेविं दारें झांकी । इंद्रियांचीं ॥२६५॥  
 मनाचें दारिद्र्य । नाहीसैं करोन । टाकी जें गिळोन । द्वैतालागीं ॥२६६॥  
 लाभतां जें ज्ञान । सर्वत्र सुकाळ । होय सर्वकाळ । अद्वैताचा ॥२६७॥  
 महा-मोहातें जें । टाकितें ग्रासून । मदाचा मोडून । मागमोस ॥२६८॥  
 मंकलपाचा पंक । स्वभावे धुवून । करी उन्मूलन । संसाराचें ॥२६९॥  
 उरूं देई ना जें । भाव आपपर । ज्ञेय अनावर । वेंटाळोनि ॥२७०॥  
 ज्या ज्ञानाचिया । प्रकाशेंकरोन । बुद्धीचे लोचन । उघडती ॥२७१॥  
 तेविं लाभतां जें । जीव निरंतर । लोळे दोंदावर । आनंदाच्या ॥२७२॥  
 ऐसें पावित्र्याचें । एक जें निधान । विटाळलें मन । शुद्ध करी ॥२७३॥  
 जीवोपाधिरूप । क्षयरोगांतून । मोडवी जें ज्ञान । आत्म्यालागीं ॥२७४॥  
 नव्हे निरूपण । करावयाजोगें । परी तें प्रसंगें । निरूपीन ॥२७५॥  
 ऐकतां बुद्धीसी । मग आकळेल । एन्हवीं दिसेल । ऐसें नाहीं ॥२७६॥  
 मग तें चि ज्ञान । जेधवां किरीटी । देहीं निज-शक्ति । प्रकटवी ॥२७७॥  
 होय दृष्टीसी हि । तेधवां दर्शन । व्यापारावरोन । इंद्रियांच्या ॥२७८॥  
 वृक्षवल्लीरीचें । टवटवीतपण । दावी आगमन । वसंताचें ॥२७९॥

तैसे ज्ञानियाचे । इंद्रिय-व्यापार । दाविती साचार । ज्ञान लोकां ॥२८०॥  
 वृक्ष-मूळालागीं । खालीं मिळे 'नीर । कळे तें बाहेर । पानोपानीं ॥२८१॥  
 ना तरी भूमीचें । आकळे 'मार्दव । पाहोनि लवलव । अंकुरांची ॥२८२॥  
 श्रेष्ठ कुलीनांचें । किंवा थोरपण । आचारावरोन । कळे जैसें ॥२८३॥  
 ना तरी सत्कार-। सामुग्री पाहोन । स्नेहाचें लक्षण । जाणूं येई ॥२८४॥  
 किंवा दर्शनें च । होय समाधान । तेणें पुण्य-जन । ओळखूं ये ॥२८५॥  
 ना तरी केळींत । कापूर जो झाला । जेविं जाणवला । 'परिमळें ॥२८६॥  
 किंवा भिंगांतील । दीपाचा प्रकाश । सर्व हि बाजूंस । फांके जैसा ॥२८७॥  
 तैसी अंतरांत । होतां ज्ञान-प्राप्ति । देहीं उमटती । लक्षणें जीं ॥२८८॥  
 सांगेन तीं आतां । एक धनंजया । भलें देवोनियां । अवधान ॥२८९॥

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिराज्वम् ।

आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥७॥

व्हावी कोणासंगें । आपुली तुलना । जयाचिया मना । रुचे ना हें ॥२९०॥  
 मज्जन म्हणोनि । वाखाणिला कोणी । तरी तें ऐकोनि । 'भार वाटे ॥२९१॥  
 मान्यपणें ज्यासी । दिला कोणी मान । अंगींचे सद्गुण । वर्णोनियां ॥२९२॥  
 आणि लोकांमार्जीं । महंत म्हणोनि । झाली 'नावाजणी । योग्यतेची ॥२९३॥  
 तरी तेणें चितीं । 'गजबजे कैसा । 'व्याधें 'मृग जैसा । आडविला ॥२९४॥  
 किंवा बाहु-बळें । तरूं जातां कोणी । जावें आडकोनि । भोंवऱ्यांत ॥२९५॥  
 तैसा सन्मानें जो । पडे संकटांत । अंगीं नाहीं घेत । थोरपण ॥२९६॥  
 आपुला लौकिक । ऐकूं नये कार्नीं । पूज्यता नयनीं । पाहूं नये ॥२९७॥  
 अमुका हा थोर । महंत म्हणोन । लोकां आठवण । होऊं नये ॥२९८॥  
 ऐसें जेथें वाटे । तेथें सत्काराचा । आणि आदराचा । काय पाड ! ॥२९९॥  
 पूज्यभावे कोणी । करितां वंदन । मरणासमान । वाटे जया ॥३००॥  
 बृहस्पतीऐसी । सर्वज्ञता थोर । तयासी साचार । लाभतां हि ॥३०१॥  
 आपुला लौकिक । न व्हावा म्हणोन । वेड पांघरून । जर्गी राहे ॥३०२॥

चातुर्य लपवी । महत्त्व हारवी । वेडीव मिरवी । आवडीनें ॥३०३॥  
 लौकिकाचा खेद । शास्त्रांचा कंटाळा । जया वाटे भला । स्वस्थपणा ॥३०४॥  
 जगें अवज्ञावें । ऐसी इच्छा जीवी । सोय ना धरावी । आसवर्गे ॥३०५॥  
 अंगीं हीनतेचें । भूषण होईल । लीनता बाणेल । तें चि करी ॥३०६॥  
 जर्गीं हा जिवंत । आहे कीं नाहीं च । लोकांसीं हें साच । कळावें ना ॥३०७॥  
 ऐसें जिणें व्हावें । ही च आशा भारी । स्वभावें अंतरीं । जयाचिया ॥३०८॥  
 हिंडे फिरे कीं हा । वाऱ्यासवें जाय । ऐसी भ्रांति होय । लोकांलागीं ॥३०९॥  
 आपुलें अस्तित्व । कळूं नये लोकां । नामरूप जें का । तें हि लोपो ॥३१०॥  
 भिऊं नये कोणी । जर्गीं आपणास । ऐसे चि नवस । करी जो का ॥३११॥  
 जनहीन स्थान । वाटे जणूं प्राण । नित्य रममाण । एकांतीं जो ॥३१२॥  
 जयाचें सख्यत्व । जुळे वायूपाशीं । बैसे गगनाशीं । बोलत जो ॥३१३॥  
 जीवेंप्राणें झाडें । आवडती जया । फार धनंजया । काय सांगूं ॥३१४॥  
 देखसी हीं चिन्हें । जयाचिया ठायीं । तया झाली पाहीं । ज्ञान-प्राप्ति ॥३१५॥  
 ज्ञानियाच्या ठायीं । अमानित्व कैसें । तुज येंणें मिषें । दाखविलें ॥३१६॥  
 आतां पंडु-सुता । अ-दंभाची खूण । देऊं दाखवून । तुजलागीं ॥३१७॥  
 तरी अवधारीं । अदंभित्व ऐसें । चित्त मन जैसें । लोभियावें ॥३१८॥  
 जिव जावो परी । ठेविलें पुरोन । आपुलें तें धन । प्रकटी ना ॥३१९॥  
 तैसें निज-पुण्य । मुखें उच्चारोनि । मिरवी ना जर्नी । प्राणान्तीं हि ॥३२०॥  
 जैसी पान्हा चोरी । खोडकर गाय । किंवा झांकी वय । प्रौढ वेश्या ॥३२१॥  
 नातरी धनाढ्य । वेढिला चोरांनीं । दाखवी ना रानीं । धनिकत्व ॥३२२॥  
 किंवा कुंति-सुता । कुलस्त्री साचार । आपुलें शरीर । झांकी जैसें ॥३२३॥  
 किंवा शेतकरी । झांकी जैशा परी । मृत्तिकेमाझारीं । पेरिलें जें ॥३२४॥  
 तैसें दान-पुण्य । घडे जें हातून । ठेवी तें झांकून । नम्रपणें ॥३२५॥  
 बाह्य शरिराचा । न हो उपासक । रंजवी ना लोक । लौकिकार्थ ॥३२६॥  
 स्वधर्मानुसार । आचरे तो जें का । जर्गीं त्याचा डंका । वाजवी ना ॥३२७॥

करो कोणावरी । किती उपकार । करी ना उच्चार । परी त्याचा ॥३२८॥  
 विकोनियां विद्या । मिरवी ना कीर्ति । नाहीं गर्व पोटीं । अभ्यासाचा ॥३२९॥  
 देव-धर्म-कार्यीं । उदार संपूर्ण । परी तो कृपण । देह-भोगीं ॥३३०॥  
 पाहूं जातां धरीं । सर्वथा 'टंचाई । आणि देह तो हि । रोडका च ॥३३१॥  
 परी 'दातृत्वांत । कल्पवृक्षासी हि । हार जात नाहीं । स्वभावे तो ॥३३२॥  
 काय सांगूं फार । स्व-धर्मी तो थोर । प्रसंगीं उदार । परिपूर्ण ॥३३३॥  
 आत्मचर्चेमार्जीं । अत्यंत प्रवीण । एन्हवीं अज्ञान । वेडा जैसा ॥३३४॥  
 केळीचीं तीं जैसीं । सोपटें पोकळ । परी 'सुरसाळ । फळें दाट ॥३३५॥  
 नातरी विरळ । दिसे मेघ-जाळ । वाऱ्यानें जाईल । ऐसें वाटे ॥३३६॥  
 परी जल-धारा । वर्षांनि नवल । करी भूमि-तल । जळ-पूर्ण ॥३३७॥  
 तैसें संपूर्णत्व । तयाचें पाहोन । होय समाधान । कोणासी हि ॥३३८॥  
 परी सांसारिक । दृष्ट्या सर्वथैव । उणीवेसी ठाव । तो चि असे ॥३३९॥  
 असो ऐसीं चिन्हें । जयाचिया ठायीं । तया झाली पाहीं । ज्ञान-प्राप्ति ॥३४०॥  
 पार्था अदंभित्व । सांगितलें जाण । आतां ऐक खूण । अहिंसेची ॥३४१॥  
 जो तो अहिंसेचें । करी निरूपण । परी मतें भिन्न । ज्याचीं त्याचीं ॥३४२॥  
 वृक्षाचिया शाखा । खांडोनियां जाण । करावें कुंपण । बुंधालागीं ॥३४३॥  
 किंवा तोडोनियां । आपुला च हात । तेणें 'क्षुधा शांत । करावी गा ॥३४४॥  
 ना तरी देऊळ । मोडोनि साचार । बांधावें आवार । देवालागीं ॥३४५॥  
 तैसी हिंसेनें च । साधावी अहिंसा । निर्णय हा ऐसा । कर्मकांडीं ॥३४६॥  
 'अवर्षणें त्रस्त । झालें सारें जग । मग केले 'याग । 'पर्जन्येष्टि ॥३४७॥  
 तंव तया यज्ञ-यागारंभीं साच । दिसे रोकडी च । पशु-हिंसा ॥३४८॥  
 ऐशा स्थिति-मार्जीं । कैसें पैल तीर । पाहतां येणार । अहिंसेचें ॥३४९॥  
 सांग पार्था हिंसा । परोनि केवळ । काय उगवेल । अहिंसा ती ॥३५०॥  
 परी याज्ञिकांचें । पोहोनि हें धैर्य । वाटतें आश्चर्य । महाबाहो ॥३५१॥  
 आयुर्वेद तो हि । हा चि मार्ग धरी । जीवासाठीं करी । जीवघात ॥३५२॥



देखोनियां नाना-१ रोग-व्याधि-ग्रस्त । लोळती बहुत । जीव येथें ॥३५३॥  
 तथा जीवांचें तें । हरावया दुःख । औषधें अनेक । योजिलीं जीं ॥३५४॥  
 तेथें प्रारंभीं च । नाना कंद भले । काढावे लागले । खणवोनि ॥३५५॥  
 पानांसमवेत । नाना वनस्पती । काढविल्या किती । उपटोनि ॥३५६॥  
 मोडोनियां भाग । घेतला मधील । काढविली साल । कित्येकांची ॥३५७॥  
 सगर्भ कित्येक । वनस्पती भल्या । पुटीं काढविल्या । उकडोनि ॥३५८॥  
 ज्यांचें कोणी हि । करिती ना वैर । ऐशा थोर थोर । वृक्षांलार्गी ॥३५९॥  
 खांचोनि सर्वांगीं । काढविला चीक । मग केले शुष्क । सत्त्वहीन ॥३६०॥  
 कोणा सचेतना । घालोनियां हात । काढोनियां पित्त । त्यांचें हि ॥३६१॥  
 तेंणें दुजे जीव । केले रोग-मुक्त । होते जे शिणत । महा-दुःखें ॥३६२॥  
 राहतीं नांदतीं । मोडोनियां घरें । जैसे का देव्हारे । उभारावे ॥३६३॥  
 किंवा व्यवहारीं । लुबाडोनि धन । सहस्र-भोजन । घालावें कीं ॥३६४॥  
 मस्तकावरून । घ्यावें पांघरून । तंव ते चरण । उघडे च ॥३६५॥  
 किंवा घराचे च । काढोनियां वांसे । उभारावे जैसे । मंडप ते ॥३६६॥  
 किंवा घ्यावा शेक । जाळोनि वाकळ । ना तरी आंधोळ । कुंजराची ॥३६७॥  
 जैसा आधीं राघू । घावा घालवून । पिंजरा करून । घ्यावा मग ॥३६८॥  
 विकोनियां बैल । बांधावा कीं गोठा । पाहोनि या चेष्टा । हंसूं काय ! ॥३६९॥  
 धर्मसंप्रदाय । म्हणोनियां कोणी । घेऊं जाती पाणी । गाळोनियां ॥३७०॥  
 तंव तें गाळोनि । पिळोनि घेतां च । होय तेथें साच । जीव-हत्या ॥३७१॥  
 हिंसा-भयें कोणी । रांधिती ना अन्न । राहती खावोन । धान्य-कण ॥३७२॥  
 परी तेथें प्राण । जाहले व्याकूळ । हिंसा चि केवळ । नव्हे का ती ? ॥३७३॥  
 ह्यापरी तूं जाण । हिंसा चि अहिंसा । कर्मकांडीं ऐसा । सिद्धान्त हा ॥३७४॥  
 धनंजया आम्हीं । अहिंसेचें नांव । उच्चारिलें जंव । प्रारंभीं च ॥३७५॥  
 तंव ऐसी आम्हां । झाली स्फूर्ति येथें । निरूपावीं मते । भिन्न भिन्न ॥३७६॥  
 डावलोनि ह्यातें । पुढें कैसें जावें । म्हणोनि बोलावें । लागलें हें ॥३७७॥

तेविं तं हि ध्यावें । जाणोनि हें सर्व । ऐसा होता भाव । अंतरींचा ॥३७८॥  
 पार्था हिंसात्मक । अहिंसेचें ऐसें । निरूपण दिसे । जेथें तेथें ॥३७९॥  
 ए-हवीं जावोनि । आडमागें वायां । मते हीं सांगाया । नको होती ॥३८०॥  
 अन्य मत ध्यावें । लागे विचारांत । अर्जुना स्व-मत- । निर्णयार्थ ॥३८१॥  
 निरूपणाची ही । ऐसी असे रीत । मुख्य तें स्व-मत । ऐक आतां ॥३८२॥  
 दाविली जाईल । अहिंसेची खूण । दिमूं लागे ज्ञान । बाणतां जी ॥३८३॥  
 लावितां सुवर्ण । जैसें कसोटीस । तयाचा तो कस । कळूं येई ॥३८४॥  
 तैसें ज्ञानियाच्या । आचारावरून । जाणूं येई खूण । अहिंसेची ॥३८५॥  
 ज्ञाना-मनाच्या । भेटीसरिसा च । ठसा उठे साच । अहिंसेचा ॥३८६॥  
 तयाचें लक्षण । सांगूं तुज आतां । ऐक पंडु-सुता । एकचित्तें ॥३८७॥  
 नोलांडितां पायें । न फोडितां लाटा । न मोडितां सांठा । पाणियाचा ॥३८८॥  
 रोखोनि क्षणैक । आपुली नजर । राहोनि तत्पर । बक वेगें ॥३८९॥  
 आमिषासी लागूं । न देतां चाहूल । घालितो पाऊल । जळीं जैसा ॥३९०॥  
 किंवा पद्मीं वैसे । हळू च भ्रमर । चुरेल केसर । म्हणोनियां ॥३९१॥  
 तैसें परमाणु- । मार्जी हि सानुले । असंख्य भरले । सूक्ष्म जीव ॥३९२॥  
 जाणोनि हें जो का । आपुलीं पाउलें । लपवोनि चाले । दयेमार्जी ॥३९३॥  
 जिये वाटेनें तो । चालतसे ज्ञानी । टाकी ती भरोनि । कृपेनें च ॥३९४॥  
 आणिक तो ज्या ज्या । दिशेकडे पाही । दिशा च ती होई । प्रेम-पूर्ण ॥३९५॥  
 जो का आपुलिया । प्राणाचें चि जाण । घाली अंथरून । जीवा-तळीं ॥३९६॥  
 अर्जुना जें ऐसें । चालणें जपून । तयाचें वर्णन । होय कैसें ॥३९७॥  
 आणि तयालागीं । मापावया पूर्ण । आणावें कोठून । परिमाण ॥३९८॥  
 मांजरी ती मोहें । न लावितां दांत । पिलासी तोंडांत । धरी जैसी ॥३९९॥  
 ना तरी स्नेहाळ । माउली ती साची । वाट तान्हुल्याची । पाहे जेव्हां ॥४००॥  
 तेव्हां तियेच्या । दृष्टीमार्जी जाण । हळुवारपण । असे जैसें ॥४०१॥  
 ना तरी धरोनि । डोळियांजवळ । कोमल कमळ । डोलवितां ॥४०२॥

मंद सुगंधित । वायु बुबुळांस । सुकुमार स्पर्श । करी जैसा ॥४०३॥  
 तैसें भूमीवरी । हळुवारपणें । पाउल ठेवणें । तयाचें गा ॥४०४॥  
 पाउलें तयांचीं । जेथें लागतील । होतसे तेथील । जीवां सुख ॥४०५॥  
 ऐशा मृदुपणें । चालतां चि तेथें । कृमि-कीटकातें । देखे जरी ॥४०६॥  
 तरी तयावरी । न ठेवितां पाय । हळू मागें जाय । निघोनियां ॥४०७॥  
 म्हणे झोंपमोड । प्रभूची होईल । लागोनि चाहूल । पाउलांची ॥४०८॥  
 तयाचिया सुखीं । न हो अडथळा । ऐसा कळवळा । अंतरांत ॥४०९॥  
 म्हणोनि कोणा हि । प्राण्यावरी पाय । न ठेवितां जाय । माधारा तो ॥४१०॥  
 अगा तृणातें हि । मानोनि जिवंत । नाहीं तुडवीत । पायांतळीं ॥४११॥  
 मग तो प्राण्यातें । न लेखतां जाय । ऐसें कैसें होय । धनंजया ॥४१२॥  
 नोलांडवे मेरु । मुंगीसी साचार । मशका सागर । तरवेना ॥४१३॥  
 तैसा तयालागीं । प्राणी भेटो कोणी । त्यासी उलंघोनि । जाववेना ॥४१४॥  
 ऐशापरी पार्था । ज्याची चाल भली । कृपारूप फळीं । फळा आली ॥४१५॥  
 आणि दया-वृत्ति । ज्याच्या वाणींत । राहिली जिवंत । देखसील ॥४१६॥  
 ज्याचे श्रामोच्छ्वास । ते हि सुकुमार । मुख हि माहेर । मोहाचें गा ॥४१७॥  
 जणूं माधुरीसी । फुटले अंकुर । तैसी मनोहर । दंत-पंक्ति ॥४१८॥  
 पुढां स्नेहभाव । पाझरे संपूर्ण । अक्षरें मागून । धांव घेती ॥४१९॥  
 कृपा तरी आधीं । होतसे प्रकट । मग पाठोपाठ । शब्द येती ॥४२०॥  
 होतां होईल तों । बोलणें चि नाहीं । आणि जरी काहीं । बोलूं म्हणे ॥४२१॥  
 तरी कोणासी हि । खुपूं नये बोल । म्हणोनि जपेल । जीवेंभावे ॥४२२॥  
 बोलतां अधिक-। उणा निघे शब्द । तरी मर्म-भेद । होऊं नये ॥४२३॥  
 आपुलें भाषण । ऐकोनियां कार्नीं । पडूं नये कोणी । घोटाळ्यांत ॥४२४॥  
 असेल जी कोणी । केली मांडामांड । तयांत बिघाड । होऊं नये ॥४२५॥  
 ऐकोनियां शब्द । भिऊं नये कोणी । किंवा दचकोनि । उडूं नये ॥४२६॥  
 किंवा मुखांतून । होतां शब्दोच्चार । कोणा तिरस्कार । वाटूं नये ॥४२७॥

आणि कोणासी हि । येऊं नये राग । ऐकोनियां शब्द । आपुले गा ॥४२८॥  
 त्रासूं नये कोणी । जीवीं भाव ऐसा । म्हणोनि सहसा । बोले ना जो ॥४२९॥  
 एखादिये वेळे । मग बोलावया । मनोभावे तया । विनवितां ॥४३०॥  
 तरी 'ऐकत्यासी । मायबाप होय । कांहीं बोलूं जाय । जरी लोभें ॥४३१॥  
 मग शब्द बोले । सु-मधुर भले । जणूं प्रकटलें । नादब्रह्म ॥४३२॥  
 पतिव्रतेलागीं । वृद्धपण आलें । किंवा उसळलें । गंगोदक ॥४३३॥  
 तैसे सत्य मृदु । मोजके रसाळ । शब्द ते कळोळ । अमृताचे ॥४३४॥  
 उठे ना विरोध । ऐसें चि भाषण । होय ना कारण । वादासी जें ॥४३५॥  
 ऐकोनि जे शब्द । कोणा हि जीवासी । दुःखें 'कासाविसी । वाटूं नये ॥४३६॥  
 नाहीं निंदा नाहीं । टाकोनि बोलणें । वर्मासी झोंबणें । नाहीं जेथें ॥४३७॥  
 नाहीं हट्ट नाहीं । आवेश कपट । जयाच्या वाणींत । धनंजया ॥४३८॥  
 नाहीं ठकविणें । संशयीं घालणें । आशेसी लावणें । नाहीं जेथें ॥४३९॥  
 आणि दृष्टि ती हि । तैसी च किरीटी । नाहीं कधीं आठी । कपाळासी ॥४४०॥  
 प्राणिमात्रीं ब्रह्म । असे जें सखोल । 'न' जाणों खुपेल । तयालागीं ॥४४१॥  
 म्हणोनि बहुत- । करोनि किरीटी । उघडी ना दृष्टि । आपुली जो ॥४४२॥  
 ऐसें असोनी हि । कोणे एके वेळे । जरी कृपा-बळें । अंतरींच्या ॥४४३॥  
 उघडोनि डोळे । कोणाकडे पाही । तरी तया देई । समाधान ॥४४४॥  
 जरी चंद्रामृत । होय ना 'गोचर । तरी ते चकोर । तेणें पुष्ट ॥४४५॥  
 'कृपावलोकनीं । तयाच्या जी प्रीति । नेणे सर्वथा ती । कांसवी हि ॥४४६॥  
 काय सांगूं ऐसी । प्रेमळ ती दृष्टि । हात हि किरीटी । तैसे चि ते ॥४४७॥  
 सिद्धपुरुषांचे । जैसे मनोरथ । राहिले कृतार्थ । होवोनियां ॥४४८॥  
 तैसे ज्याचे हात । व्यापार-रहित । जणूं मौन-व्रत । मुकेयाचें ॥४४९॥  
 ना तरी जन्माधें । मिटावे नयन । अग्नि काष्ठाविण । विज्ञावा कीं ॥४५०॥  
 तैसे ज्याचे हात । एके ठायीं स्वस्थ । अकर्ता निवांत । राहे जैसा ॥४५१॥  
 पार्था 'अंबरासी । नख तें बोंचेल । आघात पोंचेल । वायूलागीं ॥४५२॥

मनीं ऐसा भाव । म्हणोनि साचार । हालवी ना कर । आपुले जो ॥४५३॥  
 तेथ अंगावरी । बैसली जी माशी । झाडावें तिघेसी । कोठोनि हें ॥४५४॥  
 किंवा 'धुंगुरटीं । सारावीं बाजूस । भिडोनि डोळ्यांस । राहती जीं ॥४५५॥  
 पशुपक्ष्यांलार्गीं । दाखवावी भीति । कोठोनि ह्या गोष्टी । घडतील ॥४५६॥  
 हातीं दंड काठी । नावडे तयासी । शस्त्राची कायसी । भाषा तेथें ॥४५७॥  
 लीलेनें हि हातीं । धरोनि कमळ । फिरवोनि खेळ । करी ना जो ॥४५८॥  
 सूक्ष्म जीवां जणूं । वाटेल गोफण । न झेली म्हणोन । पुष्प-माला ॥४५९॥  
 फिरवी ना हात । शरीरावरोन । हालेल म्हणोन । रोमावळी ॥४६०॥  
 आणि जयाचिया । बोटांवरी भलीं । नखांचीं गुंडाळीं । वाढलीं गा ॥४६१॥  
 असो हातांसी तों । कर्तव्य चि नाहीं । परी पार्था पाहीं । प्रसंगें तें ॥४६२॥  
 जोडले जावेत । मनोभावे साच । 'सराव ऐसा च । झाला तयां ॥४६३॥  
 ना तरी अभय । द्यावया त्वरित । वर करी हात । आपुले तो ॥४६४॥  
 त्या चि परी कोणी । पडला पाहोन । तया उचलोन । धरी करीं ॥४६५॥  
 किंवा दुःखितांचे । हरावया क्लेश । हळुवार स्पर्श । करी त्यांसी ॥४६६॥  
 तो हि त्याचा स्पर्श । जरी वरीवरी । तरी भय 'हरी । पीडिताचें ॥४६७॥  
 चंद्र-किरणें हि । अर्जुना साचार । नेणती पाझर । कृपेचा त्या ॥४६८॥  
 मलय पर्वता-। वरोन जो वात । मंद सुगंधित । वाहतसे ॥४६९॥  
 तोहि तयापुढें । वाटेल 'प्रखर । ऐसा सुखकर । स्पर्श त्याचा ॥४७०॥  
 करोनियां ऐसा । मृदु सुख-स्पर्श । पशु-पक्षियांस । कुरवाळी ॥४७१॥  
 चंदनाचा वृक्ष । सर्वांगीं शीतळ । सर्वदा सफळ । फळांविण ॥४७२॥  
 तैसे त्याचे हात । निष्क्रिय मोकळे । तरी होती भले । कृतार्थ ते ॥४७३॥  
 अमो हें 'वाग्जाल । सज्जनांचें शील । तैसें कर-तल । स्वभावे तें ॥४७४॥  
 आतां मन त्याचें । सांगूं जरी साचें । वर्णिले कोणाचे । विलास हे ॥४७५॥  
 शाखारूपें वृक्ष । नव्हे का साचार । असे का सागर । जळांविण ॥४७६॥  
 वेगळीं का होती । 'गात्रें आणि 'तनु । तेज आणि भानु । भिन्न काय ॥४७७॥

किंवा सांग बरें । रसाहूनि 'तोय । वेगळें का होय । धनंजया ॥४७८॥  
 म्हणोनि वर्णिले । जे हे बाह्य भाव । जाण सावयव । मन चि तें ॥४७९॥  
 भुईमार्जी बीज । खोंविलें जें असे । तें चि वर दिसे । वृक्षरूपें ॥४८०॥  
 तैसा जाण सर्व । इंद्रियांच्या 'द्वारा । फांकला पसारा । मनाचा चि ॥४८१॥  
 जरी मानसीं च । अहिंसा नसेल । बाहेरी येईल । तरी कैसी ? ॥४८२॥  
 कोणती हि वृत्ति । धनंजया साच । आधीं मानसीं च । उठतसे ॥४८३॥  
 मग तियेचा चि । होय 'आविष्कार । दृष्टि-वाचा-कर-। द्वारा येथें ॥४८४॥  
 ये-हवीं जें पार्था । मानसीं च नाहीं । उमटेल काई । वाचेसी तें ॥४८५॥  
 भूमीमार्जी बीज । पेरिल्यावांचोन । अंकुर कोठून । उगवेल ॥४८६॥  
 नदी उगमीं च । आटोनियां जाय । तरी ओधीं तोय । मग कोठें ॥४८७॥  
 जातां देहांतून । निघोनियां प्राण । चलन वलन । उरे कैसें ॥४८८॥  
 म्हणोनि मनाचें । मनपण नाहीं । तरी वायां दाही । इंद्रियें तीं ॥४८९॥  
 बाहुळीं तीं जैसीं । सूत्रधाराविण । असोन नसोन । सारखीं च ॥४९०॥  
 तैसें सर्वेंद्रिय-। भावांसी केवळ । मन चि तें मूळ । जाण पार्था ॥४९१॥  
 सर्वेंद्रिय-द्वारा । सर्व हि व्यापार । मन चि साचार । करीतसे ॥४९२॥  
 वासनेच्या रूपें । असे आंत जैसें । बाहेरी तें तैसें । दृश्य होय ॥४९३॥  
 होतां चि सुगंध । परिपक्व भला । जैसा तो निघाला । घमघमत ॥४९४॥  
 तैसी अहिंसा ती । बाणतां अंतरीं । प्रकटे व्यापारीं । इंद्रियांच्या ॥४९५॥  
 म्हणोनि इंद्रियें । अहिंसेलागीं च । मानोनियां साच । 'निज-धन ॥४९६॥  
 करिती तयाचा । अखंडित 'वेंच । तरी संपेना च । भांडवल ॥४९७॥  
 अपार भरती । दाटतां सागरीं । सागर चि भरी । खाड्या जैशा ॥४९८॥  
 तैसें अहिंसेनें । पूर्ण होतां मन । अहिंसा-संपन्न । इंद्रियें हि ॥४९९॥  
 जैसा धरोनियां । बाळकाचा हात । 'पंतोजी लिहीत । आपण चि ॥५००॥  
 तैसें दयालुत्व । मनें चि आपुलें । सर्वथा आणिलें । हातां-पायां ॥५०१॥  
 मग तयां हातां-। पायांचिया ठायीं । तें चि जन्म देई । अहिंसेतें ॥५०२॥

म्हणोनियां येथें । तुज 'गुडाकेशा । सांगोनि अहिंसा । इंद्रियांची ॥५०३॥  
 तथा ज्ञात्याचिया । मनाचें चि जाण । उघड दर्शन । घडविलें ॥५०४॥  
 ज्याच्या ठर्यां ऐसा । मनें देहें वाचा । 'संन्यास हिंसेचा । देखशील ॥५०५॥  
 ज्ञानाचें विस्तीर्ण । मंदिर तो जाण । तो चि पार्था ज्ञान । मूर्तिमंत ॥५०६॥  
 अहिंसा म्हणोनि । ऐकावी जी कार्नी । सांगावी वर्णोनि । ग्रंथाधारे ॥५०७॥  
 पहावी ती ऐसें । जरी वाटे साच । तरी तयासी च । पहावें गा ॥५०८॥  
 ऐसें पार्थालागीं । सांगितलें देवें । तें मीं निरूपावें । एके बोलें ॥५०९॥  
 परी येथें फार । जाहला विस्तार । क्षमावें साचार । मज तुम्हीं ॥५१०॥  
 हिरव्या कुरणीं । नादावलें गुरूं । जैसें मार्गे फिरूं । विसरतें ॥५११॥  
 नातरी पांखरूं । जैसें का अंबरीं । मारितें भरारी । वायुवेगें ॥५१२॥  
 प्रेमभरें तैमें । येवोनि स्फुरण । चाखोनियां भिन्न- । भिन्न रस ॥५१३॥  
 गेली वहावत । मति माझी येथें । वाटेल तुम्हांतें । अनावर ॥५१४॥  
 परी तैसें नोहे । एका श्रोतेजन । असे चि कारण । विस्तारासी ॥५१५॥  
 ए-हवीं तीन चि । अक्षरांवरोन । पाहूं जातां सान । दिसे कोणा ॥५१६॥  
 परी नाना मते । काढावीं खोडोन । तेव्हां चि दिसोन । येई स्पष्ट ॥५१७॥  
 ए-हवीं तीं मते । तैसीं च ठेवोन । तयांचें खंडन । न करितां ॥५१८॥  
 आपुल्या चि बळें । बोलें हे बोल । तरी तें मानेल । कैसें तुम्हां ? ॥५१९॥  
 रत्नपारख्यांच्या । गांवीं 'गंडकीतें । दुर्मिळ 'पुसतें । निघे जेथें ॥५२०॥  
 तेथें स्फटिकासी । विचारितो कोण । काय मोठेपण । तेथें त्याचें ? ॥५२१॥  
 कापुराचा गंध । मंद वाटे जेथें । कोण पुसे तेथें । पिठालागीं ? ॥५२२॥  
 म्हणोनि केवळ । आवेशाच्या भरें । बोलें हे सारें । जरी येथ ॥५२३॥  
 तरी काय तथा । तुम्ही संतजन । वक्तृत्वासी मान । डोलवाल ? ॥५२४॥  
 सामान्य-विशेष । कालविलें जरी । नावडेल तरी । तुम्हांसी तें ॥५२५॥  
 शुद्ध सिद्धांतांत । शंकेचें 'गदळ । जरी 'अळुमाळ । मिसळेल ॥५२६॥  
 तरी तें जाईल । येथें अवधान । मार्गे परतोन । एकाएकीं ॥५२७॥

सांचलें शेवाळ । जळीं जिये ठायीं । तेथें हंस काई । रहातील ? ॥५२८॥  
 नातरी चकोर । उघडी ना तोंड । चंद्र ढगाआड । देखोनियां ॥५२९॥  
 तैसें गीता-तत्त्व- । निरूपणीं येथें । उरेल शंकेतें । जरी जागा ॥५३०॥  
 तरी ग्रंथाचा ह्या । करोनि अव्हेर । वरी मजवर । रागेजाल ॥५३१॥  
 जरी ना करीन । शंका-निरसन । ऐसीं विचारोन । नाना मतें ॥५३२॥  
 तरी तेणें तुम्हां । सज्जनांची प्राप्ति । न होय निश्चितीं । मजलागीं ॥५३३॥  
 तुम्हीं मज नित्य । असावें प्रसन्न । सर्व हें व्याख्यान । ह्या चि साठीं ॥५३४॥  
 तुम्ही गीतार्थाचे । सोयरे जाणोन । गीतेचें व्याख्यान । आरंभिलें ॥५३५॥  
 आतां कृपारूप । सर्वस्व देवोन । न्याल सोडवोन । गीतार्थातें ॥५३६॥  
 नव्हे ग्रंथ हा तों । कृपेचा जामीन । ऐमें समजोन । बोलतो मी ॥५३७॥  
 सर्वस्वाचा लोभ । धरोनि साचार । कराल अव्हेर । जरी ह्याचा ॥५३८॥  
 तरी जी गीतेची । ती च माझी गति । ऐसें मजप्रति । वाटे साच ॥५३९॥  
 काय सांगूं फार । कृपा व्हावी प्राप्त । म्हणोनि निमित्त । ग्रंथाचें हें ॥५४०॥  
 तुम्हीं रसिकांनीं । डोलवावी मान । शोधावें व्याख्यान । ऐसें लागे ॥५४१॥  
 म्हणोनियां येथें । मत-मतांतरें । जाणोनि विस्तारें । बोलूं गेलों ॥५४२॥  
 तंव तें व्याख्यान । वाढलें बहुत । राहिला श्लोकार्थ । एकीकडे ॥५४३॥  
 तरी बाळकातें । क्षमा करा मातें । थोर तुम्ही श्रोते । संतजन ॥५४४॥  
 कालवितां घांस । सांपडे हरळ । काढाया तो वेळ । लागे जरी ॥५४५॥  
 तरी काय तेथें । कोणा घावा दोष । खावें सावकाश । हें चि योग्य ॥५४६॥  
 दिसावया बरा । ऐशा सावचोरा । चुकवोनि घरा । यावयासी ॥५४७॥  
 लागला विलंब । पुत्रालागीं जरी । कोपेल का तरी । माता त्यासी ॥५४८॥  
 आला सुखरूप । घरासी म्हणोन । ती तों निंबलोण । उतरील ॥५४९॥  
 असो जरी नोहे । तैसी माझी बोली । तरी क्षमा केली । भली तुम्हीं ॥५५०॥  
 तरी आतां ऐका । बोलिले जें देव । तें चि तुम्हां सर्व । निरूपीन ॥५५१॥  
 म्हणे ज्ञानदृष्टि- । संपन्न तूं पार्था । तरी देई आतां । अवधान ॥५५२॥



करूं तुज साच । ज्ञानाची ओळख । ज्ञान तें गा देख । ऐसें असे ॥५५३॥  
 तरी नांदे जेथ । \*क्षमा अनाक्रोश । जाण तूं अशेष । ज्ञान तेथें ॥५५४॥  
 वाढे लक्ष्मी जैशी । भाग्यवंता-धरीं । किंवा सरोवरीं । कमळिणी ॥५५५॥  
 तैसी क्षमा-वृत्ति । जयाचिया ठायीं । दिसंदीस होई । वृद्धिंगत ॥५५६॥  
 तयाचें लक्षण । तुज आकळेल । ऐसे स्पष्ट बोल । बोलेन मी ॥५५७॥  
 जैसा आवडता । अलंकार देहीं । तैसें सर्व काहीं । साहे जो का ॥५५८॥  
 त्रिविध हि ताप । आदळतां शिरीं । हाले ना अंतरीं । अणुमात्र ॥५५९॥  
 जेवढा संतोष । होतां इष्ट-प्राप्ति । संतोष अनिष्टीं । तेवढा च ॥५६०॥  
 मान अपमान । समान मानोन । करी जो सहन । समाधानें ॥५६१॥  
 निंदा आणि स्तुति । मुख आणि दुःख । सारखीं च देख । जयालागीं ॥५६२॥  
 जयालागीं नाहीं । उष्ण किंवा शीत । नाहीं च जो भीत । कोणातें हि ॥५६३॥  
 काय शिखरांचा । आपुल्या साचार । वाटतसे भार । मेरूलागीं ॥५६४॥  
 वराहावतारा । काय जड वाटे । दंताग्रीं पृथ्वीतें । धरावया ॥५६५॥  
 चराचर भूतें । वाहोनियां काय । दडपली जाय । वसुंधरा ॥५६६॥  
 तैसीं नाना दंडें । जरी झालीं प्राप्त । तरी नाहीं होत । कष्टी कदा ॥५६७॥  
 जळें घोघावत । नदी नद आले । सागरें घेतले । सामावोनि ॥५६८॥  
 तैसें धनंजया । जयाचिया ठायीं । न साहणें नाहीं । कांहींएक ॥५६९॥  
 आणि मर्व कांहीं । साहतां आपण । ऐसें हि स्मरण । नुरे जया ॥५७०॥  
 मुख-दुःखादिक । जें जें होय प्राप्त । रूप तें समस्त । आपुलें चि ॥५७१॥  
 मानोनियां ऐमें । आत्मतुष्ट राही । साहतों हा नाहीं । अभिमान ॥५७२॥  
 ऐसी क्षमावृत्ति । जयाचिया ठायीं । दिसोनियां येई । प्रिय पार्था ॥५७३॥  
 तयाचिया योगें । ज्ञानासी हि जाण । आलें थोरपण । आगळें चि ॥५७४॥  
 अर्जुना तो जाण । ज्ञानाचें जीवन । आतां ऐक म्खूण । आर्जवाची ॥५७५॥  
 प्राणाचें सौजन्य । धनंजया साच । असे सारखें च । सर्वा ठायीं ॥५७६॥  
 किंवा प्राण्यांचें का । पाहोनियां तोंड । देतसे उजेड । चण्डरश्मि ॥५७७॥

ना तरी आकाश । देई सर्व जगा । सारखी च जागा । स्वभावतां ॥५७८॥  
 तैसें ज्याचें मन । सर्वांशीं समान । आणिक वर्तन । तें हि ऐसें ॥५७९॥  
 जयाची जगाशीं । जुनी सोयरीक । स्वभावे ओळख । सर्वांशीं च ॥५८०॥<sup>१</sup>  
 'आपपर-भाव । नेणे चि जो कांहीं । स्वभावे जो स्नेही । सर्वांचा च ॥५८१॥  
 उदकासारिखें । जयाचें वर्तन । राहे मिसळून । सर्वांशीं जो ॥५८२॥  
 धावे वारा तैसा । सरळ स्वभाव । शंका आणि हांव । नाहीं जया ॥५८३॥  
 ना तरी वाळक । निःशंक तें जैसें । मांडीवरी बैसे । मातेचिया ॥५८४॥  
 तैसें 'निजान्तर । कराया उघडें । लोकीं मार्गेपुढें । पाहे ना जो ॥५८५॥  
 फुलतां कमळ । फांके परिमळ । सर्वत्र सरळ । तैसा जो का ॥५८६॥  
 पुढें सुनिर्मळ । फांकती किरण । मार्गे दिसे रत्न । जैसें चोख ॥५८७॥  
 तैसें चि सरळ । पुढें धावे मन । शुद्ध आचरण । दिसे पाठीं ॥५८८॥  
 बैसे ना रचीत । नाना मनोरथ । अखंड जो तृप्त । स्वानुभवे ॥५८९॥  
 कर्म हें करीन । किंवा हें सोडीन । नाहीं अभिमान । मनीं ऐसा ॥५९०॥  
 बोलणें जयाचें । नाहीं संशयित । नाहीं च कपट । दृष्टींत हि ॥५९१॥  
 कधीं कोणाशीं जो । करी ना वर्तन । अंतरीं धरोन । 'हीन-बुद्धि ॥५९२॥  
 सर्वदा जयाचीं । इंद्रिये सकळ । 'प्रांजळ निर्मळ । 'निष्प्रपंच ॥५९३॥  
 अमृताची धार । तैसें उजू मन । आणि पंच-प्राण । 'बंध-हीन ॥५९४॥  
 ऐशा लक्षणांचें । असे जो माहेर । काय सांगूं फार । धनंजया ॥५९५॥  
 पुरुष तो जाण । आर्जवाची मूर्ति । ज्ञानें केली वस्ती । ठायीं च त्या ॥५९६॥  
 चतुरांच्या राजा । ऐक पंडु-सुता । तुज सांगूं आतां । गुरुभक्ति ॥५९७॥  
 पार्था सर्व भाग्ये । जेथें घेती जन्म । पाववी जी ब्रह्म । दुःखी जीवा ॥५९८॥  
 गुरुभक्तीचें त्या । करीन वर्णन । देई अवधान । परिपूर्ण ॥५९९॥  
 धेवोनि सकळ । सर्वे जळ-राशि । मिळे गंगा जैसी । सागरातें ॥६००॥  
 ना तरी धेवोनि । सर्व अभिप्राय । 'श्रुति स्थिर होय । ब्रह्म-पर्दा ॥६०१॥  
 किंवा सकळ हि । गुण-अवगुण । सांगातीं धेवोन । आपुलिया ॥६०२॥

१ आपला व परका असा भेद. २ आपलें अंतःकरण. ३ बुष्ट विचार. ४ शुद्ध; निष्कपट. ५ मोकळे. ६ वेद.  
 अ. जा. २५

पतिव्रता जैसी । आपुलें जीवन । करी समर्पण । प्राणनाथा ॥६०३॥  
 तैसें अंतर्बाह्य । सर्व समर्पण । जयें केलें जाण । गुरु-कुळीं ॥६०४॥  
 मग स्वयें जो का । राहिला साचार । भक्तीचें मंदिर । होवोनियां ॥६०५॥  
 श्रीगुरूचें घर । चिंती जो मानसीं । विरहिणी जैसी । वल्लभातें ॥६०६॥  
 दिशेकडोनि त्या । येतसे जो वारा । धांवोनि सामोरा । जाय तया ॥६०७॥  
 मग लोटांगण । घालोनियां भावें । म्हणे घरा यावें । आमुचिया ॥६०८॥  
 बोले आवडीनें । दिशेसवें त्या च । भुलोनियां साच । प्रेमभरें ॥६०९॥  
 ऐशापरी गुरु-गृहींची भिरास । देतसे जीवास । भोगावया ॥६१०॥  
 जैसें वांसरासी । लावोनियां दावें । बांधोनि ठेवावें । वाडेयांत ॥६११॥  
 तैसी गुरु-आज्ञा । म्हणोनियां देहें । एकला चि राहे । दूर गांवीं ॥६१२॥  
 परी म्हणे केव्हां । सुटेल बंधन । भेटेल विद्वधन । गुरुराय ॥६१३॥  
 ऐशा स्थितीमार्जीं । तया एक क्षण । युगायुगाहून । वाटे भारी ॥६१४॥  
 गुरु-ग्रामाहून । तों चि कोणी आलें । किंवा पाठविलें । गुरूनीं च ॥६१५॥  
 तरी मरत्यासी । लाभावें जीवन । तैसें समाधान । होय तया ॥६१६॥  
 ना तरी पडाव्या । अमृताच्या धारा । सुकत्या अंकुरा-वरी जैशा ॥६१७॥  
 अल्पोदकांतून । निघोनियां मासा । भेटावा कीं जैसा । सागरासी ॥६१८॥  
 नातरी निधान । लाधावें रंकासी । किंवा आंधळ्यासी । यावी दृष्टि ॥६१९॥  
 किंवा भणंगासी । दैवें अवचित । जैसें व्हावें प्राप्त । इंद्र-पद ॥६२०॥  
 तैसें श्रीगुरूचें । नांव ऐकतां च । थोरावे जो साच । महा-सुखें ॥६२१॥  
 महा-सुखाची त्या । व्यापकता ऐसी । कौतुकें नभासी । पोटाळील ॥६२२॥  
 गुरु-कुळीं ऐसी । आवडी जयासी । ज्ञान तयापार्शीं । सेवा करी ॥६२३॥  
 करी भक्ति-भावें । अंतरिं चिंतन । मूर्ति आठवोन । श्रीगुरूची ॥६२४॥  
 निर्मळ हृदय-रूपी आवारांत । श्रीगुरु दैवत । पूजनीय ॥६२५॥  
 करोनि स्थापन । दृढ-भावें जाण । होय जो आपण । परिवार ॥६२६॥  
 शुद्ध चैतन्याची । निर्मोनि पोवळी । पूजोनि राउळीं । आनंदाच्या ॥६२७॥

करी ध्यानरूप । अमृताभिषेक । गुरुरूप <sup>१</sup>एक- । लिंगावरी ॥६२८॥  
 बोध-सूर्योदयीं । बुद्धि-परडींतं । <sup>२</sup>पद्म-राशी अष्ट- । सात्त्विकांच्या ॥६२९॥  
 भरोनि तयांची । लाखोली जो अर्पी । श्रीगुरुस्वरूपी । त्र्यंबकासी ॥६३०॥  
 जीवदशा-धूप । जाळी शुद्धकाळीं । अखंड ओवाळी । ज्ञान-दीपें ॥६३१॥  
 ऐक्यभावरूपी । नैवेद्य सुग्रास । नित्य श्रीगुरुस । समर्पी जो ॥६३२॥  
 श्रीगुरुसी भावें । मानी शिव-पिंडी । आपण <sup>३</sup>भराडी । होय साचा ॥६३३॥  
 किंवा जीवाचिया । शेजेवरी जाण । वल्लभ मानोन । श्रीगुरुसी ॥६३४॥  
 घेई निरंतर । एकान्ताचा भोग । ऐसें प्रेम चांग । बुद्धीलार्गी ॥६३५॥  
 नातरी स्वभावें । कोणे अवसरीं । दाटतां अंतरीं । गुरु-प्रेम ॥६३६॥  
 तया प्रेमासी च । क्षीराब्धि मानोन । शेष समजोन । ध्यान-सुखा ॥६३७॥  
 त्या चि सुनिर्मळ । शेष-शय्येवरी । सद्गुरुश्रीहरी । झोंपवी जो ॥६३८॥  
 मग सेविते जी । श्रीहरीचे पाय । <sup>४</sup>इंदिरा ती होय । आपण चि ॥६३९॥  
 जोडोनियां हात । नातरी आपण । गरुड होवोन । उभा राहे ॥६४०॥  
 किंवा जन्मोनियां । <sup>५</sup>नाभि-कमलांत । आपण चि होत । ब्रह्मदेव ॥६४१॥  
 गुरुमूर्ति-प्रेमें । ऐसें ध्यान-सुख । भोगीतसे देख । अंतरीं जो ॥६४२॥  
 किंवा श्रीगुरुसी । एखादिये वेळे । मानी भाव-बळें । माता ऐसें ॥६४३॥  
 मग आवडीनें । स्तनपान करी । सुखें मांडीवरी । लोळोनियां ॥६४४॥  
 नातरी चैतन्य- । वृक्षाचिया तळीं । श्रीगुरु सांवळी । गाय उभी ॥६४५॥  
 ऐसें भावोनियां । तियेचिया मार्गे । आपण <sup>६</sup>निजांगें । वत्स होय ॥६४६॥  
 किंवा एके वेळीं । गुरुकृपा-जळीं । होवोनि मासोळी । खेळतसे ॥६४७॥  
 गुरुकृपारूप । अमृत-वर्षाव । स्वयें सेवाभाव- । रोप होय ॥६४८॥  
 ह्यापरी संकल्प । नानाविध जाण । जयाचें गा मन । करी नित्य ॥६४९॥  
 फुटले ना पंख । दृष्टि आली नाहीं । ऐसें पिलूं होई । आपण चि ॥६५०॥  
 श्रीगुरुसी मग । पक्षिणी कल्पून । कैसा चोंचीतून । चारा घेई ॥६५१॥  
 श्रीगुरुच्या ठायीं । अर्जुना निःसीम । पाहे कैसें प्रेम । तयाचें हें ॥६५२॥

ना तरी गुरूसी । कल्पोनि तारक । आपण निःशंक । धरी कांस ॥६५३॥  
अपार भरती । सागरासी येतां । लाटांवरी लाटा । उसळती ॥६५४॥  
तैसें प्रेमबळ । अंतरीं वाढोन । ध्यानावरी ध्यान । होऊं लागे ॥६५५॥  
ह्यापरी अंतरीं । भोगी गुरु-मूर्ति । तुज सांगूं किती । धनंजया ॥६५६॥  
श्रीगुरूची कैसी । करी बाह्य-सेवा । सांगेन पांडवा । ऐक आतां ॥६५७॥  
तरी अवसान । धरी ऐसें जीवीं । करीन बरवी । गुरु-सेवा ॥६५८॥  
जेणें ते सद्गुरु । संतोषून मग । कांहीं तरी माग । म्हणतील ॥६५९॥  
जाणोनियां माझा । साच भक्तिभाव । होतां गुरुदेव । सुप्रसन्न ॥६६०॥  
जोडोनियां हात । त्यां विनवीन । आदरें म्हणेन । अहो देवा ॥६६१॥  
तुमचा अपार । सर्व परिवार । बनावें साचार । मी च एक ॥६६२॥  
आपुल्या पूजेचें । साहित्य बरवें । आघवें तें व्हावें । मी च देवा ॥६६३॥  
ऐसा श्रीगुरूसी । मागतां चि वर । देतील होकार । मजलागीं ॥६६४॥  
मग त्यांचा तो । सर्व परिवार । होईन साचार । स्वयें मी च ॥६६५॥  
वस्तू उपयोगी । ज्या ज्या सकळिक । त्यांतील प्रत्येक । होईन मी ॥६६६॥  
तेव्हां चि कौतुक । गुरुपासनेचें । येईल कीं साचें । देखावया ॥६६७॥  
गुरु तरी होय । बहुतांची माता । परी एकुलता । लाडका मी ॥६६८॥  
होवोनि राहीन । निश्चयेंकरोन । पूर्ण संपादीन । कृपा त्यांची ॥६६९॥  
एकपत्नीव्रत । मग घेववीन । गुरूसी लावून । प्रेम-वेड ॥६७०॥  
क्षेत्र-संन्यासी कीं । राहे एके ठायीं । तैसा लोभ पाहीं । श्रीगुरूचा ॥६७१॥  
मज एकावरी । जडेल संपूर्ण । ऐसें चि वर्तन । ठेवीन मी ॥६७२॥  
कांहीं होवो परी । निघेना बाहेरी । वारा जैसा चारी । दिशांचिया ॥६७३॥  
तैसा गुरूचिया । कृपेसी कोंडून । ठेवीन होऊन । पिंजरा मी ॥६७४॥  
गुरुसेवारूपी । स्वाभिनीस सार्ची । लेणीं स्व-गुणांचीं । लेववीन ॥६७५॥  
असो भक्तीलागीं । मी च गवसणी । राहीन होवोनि । एकमात्र ॥६७६॥  
गुरुस्नेहाचिया । वृष्टीलागीं भली । होईन मी खालीं । वसुंधरा ॥६७७॥

मनोरथांचिया । ऐशा अगणित । सृष्टी तो रचीत । बैसे नित्य ॥६७८॥  
 म्हणे होईन मी । नितांत सुंदर । पावन मंदिर । श्रीगुरूचें ॥६७९॥  
 होवोनि सेवक । तयांचिया दारीं । करीन चाकरी । मी च सर्व ॥६८०॥  
 श्रीगुरु दयाळ । ओलांडिती तेथें । जे जे उंबरठे । येतां जातां ॥६८१॥  
 ते ते आवडीनें । होईन सकळ । दारें द्वारपाळ । मी च एक ॥६८२॥  
 मी च एकभावे । पादुका होवोन । पार्यीं लेववीन । तयांचिया ॥६८३॥  
 तेविं मी च छत्र । होवोनि स्व-करीं । धरीन तें शिरीं । स्वामींचिया ॥६८४॥  
 येथें हा खळगा । येथें उंचवठा । ऐसें जाणविता । चोपदार ॥६८५॥  
 होईन मी धीट । धरोनियां हात । दाखवीन वाट । श्रीगुरूसी ॥६८६॥  
 मी च गुरूवरी । ढाळीन चवरी । मी च करीं झारी । धरोनियां ॥६८७॥  
 नीट ओंजळींत । ओतीन तें जळ । भरावया चूळ । श्रीगुरूसी ॥६८८॥  
 आणिक ती चूळ । टाकितील ज्यांत । होईन तें तस्त । मी च मग ॥६८९॥  
 देवोनियां विडा । थुंका मी झेलीन । स्नान हि घालीन । मी च तयां ॥६९०॥  
 मी च श्रीगुरूचें । होईन आसन । वस्त्र-परिधान । तें हि मी च ॥६९१॥  
 मी च अलंकार । होईन साचार । नाना उपचार । चंदनादि ॥६९२॥  
 वाढीन फराळ । श्रीगुरूसी मी च । होवोनियां साच । स्वयंपाकी ॥६९३॥  
 पूर्ण परब्रह्म । गुरूसी मानोन । मी च ओवाळीन । जीवेंभावे ॥६९४॥  
 करितील जेव्हां । श्रीगुरु भोजन । पंक्तीस बैसेन । तेव्हां मी च ॥६९५॥  
 होतां चि भोजन । पुढें मी होवोन । तयांसी देईन । पानविडा ॥६९६॥  
 ताट मी काढीन । शेज मी झाडीन । पाय हि चेपीन । मी च त्यांचे ॥६९७॥  
 मी च सिंहासन । होवोनि आपण । वरी बैसवीन । श्रीगुरूसी ॥६९८॥  
 सर्व हि प्रकारें । सेवा व्हावी पूर्ण । म्हणोनि झटेन । आवडीनें ॥६९९॥  
 ज्या ज्या वस्तूवरी । श्रीगुरूचें मन । होईन आपण । ती ती वस्तु ॥७००॥  
 आणि तयांचिया । श्रवणांगणांत । शब्द अगणित । होईन मी ॥७०१॥  
 करितील स्पर्श । गुरु जेथ जेथ । होईन पदार्थ । तो तो मी च ॥७०२॥

पाहतील जेथें । श्रीगुरू प्रेमळ । धरीन सकळ । तीं तीं रूपें ॥७०३॥  
 आवडेल जो जो । तयांच्या जिहेस । तो तो सर्व रस । होईन मी ॥७०४॥  
 आणि नानाविध । सुगंध होवोन । तयांची करीन । ब्राण-सेवा ॥७०५॥  
 ऐसी बाह्य-सेवा । व्यापीन समस्त । सर्व वस्तुजात । होवोनियां ॥७०६॥  
 जोंवरी हा देह । तोंवरी ऐसी च । उपासना साच । करीन मी ॥७०७॥  
 मग देहान्तीं हि । कैसी विलक्षण । आवडी धरीन । सेवाकार्यीं ॥७०८॥  
 भूमीवरी जेथें । नित्य पूजनीय । राहतील पाय । श्रीगुरूचे ॥७०९॥  
 देह ठेवतां च । देहाची ती माती । मेळवीन क्षिती- । मार्जीं तेथें ॥७१०॥  
 मेळवीन तेथें । देहांतील जळ । गुरु स्पर्शतील । जळतें ज्या ॥७११॥  
 श्रीगुरूसी ज्या ज्या । दीपीं ओवाळिती । ना तरी लाविती । मंदिरीं जे ॥७१२॥  
 तथा दीप-तेजीं । देहांतील तेज । आनंदें सहज । मेळवीन ॥७१३॥  
 चवरींत किंवा । विंजण्यांत प्राण । करीन विलीन । श्रीगुरूच्या ॥७१४॥  
 मग तथाचिया । सेवीन शरीरा । ऐशापरी वारा । होवोनियां ॥७१५॥  
 जिये अवकाशीं । श्रीगुरु दातार । सहपरिवार । राहतील ॥७१६॥  
 त्या चि आकाशांत । मेळवीन साचें । माझिया देहींचें । आकाश मी ॥७१७॥  
 ऐशा परी देहीं । किंवा देहान्तीं हि । सोडणार नाहीं । गुरु-सेवा ॥७१८॥  
 नाहीं पळभरी । देणार निश्चितीं । लोकांचिया हातीं । सेवा-कार्य ॥७१९॥  
 कोटी कल्प गेले । तरी मोजी कोण । करीत राहीन । ही च सेवा ॥७२०॥  
 जयाचिया मनीं । ऐसा चि निर्धार । उत्कंठा अपार । सेवेलागीं ॥७२१॥  
 थोडें बहू ऐसें । म्हणे ना सेवेंत । नाहीं दिनरात- । भान जया ॥७२२॥  
 गुरु-सेवा-कार्य । अपार देखोन । प्रफुल्लित मन । होय ज्याचें ॥७२३॥  
 गुरु-सेवेचिया । नांघें चि साचार । नभाहूनि थोर । होय जो का ॥७२४॥  
 गुरु-सेवा-कार्य । स्वयें एकटा च । करी जो एका च । वेळीं सर्व ॥७२५॥  
 पुढें धांवें देह । मार्गें मनोवृत्ति । पैज मारी कृति । मानसाशीं ॥७२६॥  
 गुरूचिया अल्प । लीलेसाठीं जाण । टाकी ओवाळून । जीवित हि ॥७२७॥

गुरुदास्यें रोड । गुरु-प्रेमें पुष्ट । गुर्वाज्ञेसी मठ । आपण जो ॥७२८॥  
 गुरु-बंधंसर्वें । सौजन्यें वागून । सुजन बनोन । राहिला जो ॥७२९॥  
 ज्यातें गुरु-सेवा । जडलें व्यसन । होय जो कुलीन । गुरु-कुळें ॥७३०॥  
 गुरु-संप्रदायें । प्राप्त जे जे धर्म । ते चि वर्णाश्रम । जयाचे गा ॥७३१॥  
 गुरुसेवेविण । जया दुजें कांहीं । राहिलें चि नाहीं । नित्य-कर्म ॥७३२॥  
 गुरु ही च एक । आपुली देवता । गुरु माता पिता । ऐसें मानी ॥७३३॥  
 गुरुसेवेहून । दुजा मार्ग नेणे । श्रीगुरूसी म्हणे । पुण्य-क्षेत्र ॥७३४॥  
 श्रीगुरूचें द्वार । जयातें साचार । सर्व-धर्म-सार । ऐसें वाटे ॥७३५॥  
 गुरुसेवकांसी । आपुले मानोन । भावंडांसमान । प्रेमें भजे ॥७३६॥  
 शुद्ध भक्तिभावें । गुरु-नाम-मंत्र । मुखें अहोरात्र । उच्चारी जो ॥७३७॥  
 गुरुवाक्य हें चि । शास्त्र जया एक । शिवे ना आणिक । शास्त्रातें जो ॥७३८॥  
 असो अमंगळ । कसलें हि जळ । तया स्पर्शातील । गुरुपाय ॥७३९॥  
 तरी सर्व तीर्थें । तेथें रहायास । आलीं ऐसें ज्यास । वाटतसे ॥७४०॥  
 लाभे अवचित । गुरूचें उच्छिष्ट । तरी घेई वीट । समाधीचा ॥७४१॥  
 वाटे जातां येतां । श्रीगुरु दयाळ । उडे पायधूळ । पाठीमार्गे ॥७४२॥  
 तेथील पावन । जे का धूलिकण । मस्तकीं धारण । करोनि ते ॥७४३॥  
 तेणें चि तो भोगी । कैवल्याचें सुख । गुरुभक्ति देख । ऐसी थोर ॥७४४॥  
 असो आतां किती । करावें वर्णन । अपार ती जाण । गुरु-भक्ति ॥७४५॥  
 परी बुद्धीलागीं । चढोनि स्फुरण । विस्तारें वर्णन । झालें येथें ॥७४६॥  
 जयालागीं ऐशा । भक्तीचें कौतुक । उत्कटेच्छा एक । भक्तीची च ॥७४७॥  
 ह्या चि भक्तीची गा । जयासी आवड । दुजें कांहीं गोड । मानीना जो ॥७४८॥  
 पुरुष तो जाण । ज्ञानाचें ठिकाण । तेणें आलें ज्ञान । प्रतिष्ठेसी ॥७४९॥  
 असो हें, तो देव । ज्ञान त्याचा भक्त । ऐसें चि निभ्रांत । जाण पार्थी ॥७५०॥  
 तथाचिया ठायीं । जगा पुरे ऐसें । ज्ञान नांदतसे । स्पष्टपणें ॥७५१॥  
 अहो संतजन । माझिया हातोन । घडावी संपूर्ण । गुरुसेवा ॥७५२॥



ऐसी उत्कटेच्छा । मानसीं म्हणोन । मर्यादा सांडोन । बोलिलों हें ॥७५३॥  
 एन्हवीं मी थोटा । असोनी हि हात । नाहीं च घडत । गुरु-सेवा ॥७५४॥  
 अंध मी संपूर्ण । असोनि नयन । गुरुचें भजन । नाहीं होत ॥७५५॥  
 गुरुसेवेलागीं । पंगूहूनि मंद । होय मी 'द्विपाद । असोनि हि ॥७५६॥  
 मुका नव्हे मी का । असोनि वदन । करीं ना वर्णन । श्रीगुरुचें ॥७५७॥  
 आणि लागे व्यर्थ । पोसावें देहासी । ऐसा मी आळसी । असें जरी ॥७५८॥  
 परी गुरुभक्ति- । प्रेमभाव भला । अंतरीं दाटला । म्हणोनियां ॥७५९॥  
 लागलें वर्णावें । विस्तारें हें सर्व । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥७६०॥  
 अहो संतजन । वाढलें व्याख्यान । करोनि सहन । थोरपणें ॥७६१॥  
 द्यावा 'अवसर । करावया सेवा । ग्रंथार्थ बरवा । निरूपीन ॥७६२॥  
 एका संतजन । प्रभु नारायण । करी जो सहन । भूत-भार ॥७६३॥  
 तो चि वक्ता येथें । कृष्ण भगवंत । श्रोता पंडु-सुत । भक्तराज ॥७६४॥  
 देव म्हणे आतां । शुचित्व सांगेन । देई अवधान । धनुर्धरा ॥७६५॥  
 देह आणि मन । ज्याचीं मल-हीन । कापुरासमान । अंतर्बाह्य ॥७६६॥  
 किंवा रत्न-दळ । 'सबाह्य निर्मळ । नातरी तेजाळ । सूर्यबिंब ॥७६७॥  
 तैसा बाहेरी जो । कर्में शुद्ध झाला । ज्ञानें उजळला । अंतरांत ॥७६८॥  
 दोहों परी ऐसी । जयालागीं साची । पूर्ण शुद्धत्वाची । प्राप्ति झाली ॥७६९॥  
 वेद-मंत्रोच्चारें । माती आणि तोय । लावितां चि होय । बाह्यशुद्धि ॥७७०॥  
 बुद्धीचिया बळें । 'रजःकणें जैसा । करूं ये आरसा । सुनिर्मळ ॥७७१॥  
 किंवा घाण वस्त्रें । घालितां भट्टींत । 'मल-विरहित । होती जैसी ॥७७२॥  
 तैसें चि शरीर । बाहेरी चोखाळ । अंतरीं निर्मळ । ज्ञान-दीप ॥७७३॥  
 एन्हवीं अज्ञान । अंतरांत जरी । आणिक बाहेरी । कर्मभाग ॥७७४॥  
 तरी ती केवळ । विटंबना जाण । जैसें 'विभूषण । प्रेतालागीं ॥७७५॥  
 किंवा गर्दभासी । जैसें गंगास्नान । बांधिलें तोरण । 'ओस गृहीं ॥७७६॥  
 चोपडिला गूळ । कडू भोपळ्यासी । अन्नें उपवासी । लिंपिला गा ॥७७७॥

किंवा विधवेनें । कुंकुमाचा टिळा । लाविला कपाळा । आपुलिया ॥७७८॥  
 किंवा मुलाम्याचा । कळस पोकळ । झळाळे केवळ । बाहेरून ॥७७९॥  
 किंवा चित्रांतील । फळ रंगदार । बाहेर सुंदर । आंत शेण ॥७८०॥  
 तैसें बाह्यकर्म । जाणावें निष्फळ । अंतर निर्मळ । नसे जरी ॥७८१॥  
 हीण बहु-मोलें । खपेल कीं काय । गंगे ऐसा होय । 'मद्य-घट ? ॥७८२॥  
 म्हणोनि अंतरां । होतां ज्ञान-प्राप्ति । शुद्ध बाह्य-कृति । स्वभावे चि ॥७८३॥  
 ऐसें ज्ञान-कर्में । जें का प्राप्त झालें । दुर्मिळ तें भलें । निर्मळत्व ॥७८४॥  
 तरी कर्में शुद्ध । झाला बाह्य भाग । ज्ञानें गेला डाग । अंतरांचा ॥७८५॥  
 तेव्हां अंतर्बाह्य । एकरूप झालें । उरलें एकलें । शुचित्व चि ॥७८६॥  
 स्फटिक-गृहांत । लाविला जो दिवा । डोलत दिसावा । बाहेरी तो ॥७८७॥  
 तैशा अंतर्गामी । उद्भवती वृत्ती । त्या चि प्रकटती । बाहेर हि ॥७८८॥  
 संशय-विकृति । जेणें उद्भवती । 'कुकर्मी' प्रवृत्ति । घडे जेणें ॥७८९॥  
 ऐशा पदार्थांसी । भेटे, ऐके, पाहे । तरी मन राहे । निर्विकार ॥७९०॥  
 नभीं नाना रंगी । उद्भवती मेघ । परी नाहीं डाग । नभासी त्या ॥७९१॥  
 तैसा विकारांच्या । विटाळें लिंपेना । जरी भोग नाना । उपभोगी ॥७९२॥  
 वाटेवरोनियां । निर्मळ ब्राह्मणी । जावो किंवा कोणी । महारीण ॥७९३॥  
 परी वाटेच्या । मनीं सर्वथैव । 'स्पृश्यास्पृश्यभाव । नसे जैसा ॥७९४॥  
 तैसा जो साचार । सर्व व्यवहार । करी निरंतर । अलिप्तत्वे ॥७९५॥  
 नातरी एक चि । 'तरुणांगी जैसी । पतीसी पुत्रासी । मिठी देई ॥७९६॥  
 परी पुत्रालागीं । मिठी देतां तेथें । शिवे ना मनातें । काम-भाव ॥७९७॥  
 संकल्प-विकल्पां । तैसें जाणे नीट । 'कृत्याकृत्य स्पष्ट । ओळखे जो ॥७९८॥  
 ना तरी शिजेना । खडा आघणांत । भिजेना पाण्यांत । हिरा जैसा ॥७९९॥  
 तैसा मनोवृत्ति । ज्याची अलिप्त । नाना विकल्पांत । सांपडे ना ॥८००॥  
 पार्था जेथें ऐसें । शुचित्व संपूर्ण । जाण तेथें ज्ञान । मूर्तिमंत ॥८०१॥  
 आणि तो चि देख । ज्ञानार्थें जीवन । ज्याचें चित्त मन । स्थिरावलें ॥८०२॥

वरिवरी हिंडे । देह तरी देख । मोडे ना बैठक । मानसींची ॥८०३॥  
 गाय जरी जाय । चरावया रानीं । तरी ओढ मनीं । वासराची ॥८०४॥  
 सतीचिया मनीं । पती च तो एक । भोग ते आणिक । प्रेमशून्य ॥८०५॥  
 ना तरी कृपण । जाय दूर देशीं । परी ठेव्यापाशीं । जीव त्याचा ॥८०६॥  
 तैमें वरिवरी । हिंडतें शरीर । परी चित्त स्थिर । ज्ञानियाचें ॥८०७॥  
 ग्रहांसवें \*ध्रुव । करी ना भ्रमण । धांवे ना गगन । अभ्रांसवें ॥८०८॥  
 वाटसरूसंगें । वाट चाले काई । येत जात नाहीं । वृक्ष जैसे ॥८०९॥  
 तैसा विकारें तो । ढळे ना अंतरां । पार्था देह जरी । चळे त्याचा ॥८१०॥  
 आपुलिया बळें । वाहे वाहुटळ । परी ती अढळ । पृथ्वी जैसी ॥८११॥  
 तैमे उपद्रव । उसळले नाना । तरी तो ढळे ना । लेशमात्र ॥८१२॥  
 दैन्य-दुःखीं तया । होत नाहीं ताप । भय-शोकीं कंप । पावे ना तो ॥८१३॥  
 जरी महा-मृत्यु । पातळा शरीरा । न होय घाबरा । अंतरां तो ॥८१४॥  
 आशोचिया भरें । पीडा अनिवार । पातली दुर्धर । जरा व्याधि ॥८१५॥  
 तरी तयां पाठ । दाखवी ना चित्त । तैमें अखंडित । स्थैर्य त्याचें ॥८१६॥  
 निंदा अपमान । करोत आघात । येवोनि टाकोत । काम-लोभ ॥८१७॥  
 तरी मनाचिया । केंसाम हि पाहीं । कदा ढका नाहीं । अणुमात्र ॥८१८॥  
 जावो भूमितळ । विरोनि केवळ । होवो अंतराळ । नष्टप्राय ॥८१९॥  
 तरी चित्त-वृत्ति । फिरे ना माघारीं । राहिली अंतरां । जडोनि जी ॥८२०॥  
 जैसा सुकुमार । कुसुमांचा मारा । लोटी ना माघारा । कुंजरातें ॥८२१॥  
 तैसा कुशब्दांचा । झाला भडिमार । तरी तो अस्थिर । नोहे कदा ॥८२२॥  
 क्षीर-सागरांत । उसळोत लाटा । मंदर पर्वता । कंप नोहे ॥८२३॥  
 किंवा वणव्याच्या । भडकल्या ज्वाळा । तरी अंतराळा । जाळिती ना ॥८२४॥  
 तैशा विकारांच्या । आल्या गेल्या ऊर्मीं । तरी मनोधर्मीं । सारिखा च ॥८२५॥  
 असो कल्पांताचा । पातला समय । तरी क्षमा धैर्य । सोडी ना तो ॥८२६॥  
 पार्था बुद्धिमंता । वर्णिलें हें जाण । स्थैर्याचें लक्षण । विशेषत्वे ॥८२७॥

स्थैर्य हे अढळ । लाधले ज्या जीवा । मूर्तिमंत ठेवा । ज्ञानाचा तो ॥८२८॥  
 आतां सांगूं तुज । 'आत्मसंयमन । देई अवधान । धनंजया ॥८२९॥  
 द्रव्यराशीवरी । वेंटाळें करोन । राहतो बैसोन । सर्प जैसा ॥८३०॥  
 नातरी कृपण । विसंबेना धन । किंवा शस्त्र रण-। शूर जैसा ॥८३१॥  
 एकुलत्या एक । बाळकालागोन । करी जीवप्राण । माता जैसी ॥८३२॥  
 किंवा आवडीनें । जैसी मधमाशी । राहे मधापाशीं । गुंतोनियां ॥८३३॥  
 तैसें रात्रंदिन । ठेवितो जपोन । इंद्रियांपासोन । अंतरंग ॥८३४॥  
 म्हणे कामरूप । बागूल ऐकेल । 'डाकीण देखेल । आशारूप ॥८३५॥  
 तरी जीवावरी । बेंतेल म्हणोन । सावध भिवोन । वागे नित्य ॥८३६॥  
 दांडगा 'दाडुला । ठेवितो कोंडोनी । 'ढालगज पत्नी । जैशा रीती ॥८३७॥  
 तैसी मनोवृत्ति । न जावो बाहेर । म्हणोनि नजर । ठेवी नित्य ॥८३८॥  
 देहें मनें प्राणें । झिजे निरंतर । चित्त व्हावें स्थिर । म्हणोनियां ॥८३९॥  
 सर्व इंद्रियांचें । करी नियमन । समज घालोन । नाना परी ॥८४०॥  
 अंतर्मुख वृत्ति-। रूपी चौकीवरी । देहीं महा-द्वारीं । मनाचिया ॥८४१॥  
 यम-नियमांचा । पहारा ठेवोन । राहे रात्रंदिन । सावध जो ॥८४२॥  
 मूलाधारीं तेवीं । नाभि-स्थानीं कंठीं । करोनि घर्टीं । त्रिबंधाचीं ॥८४३॥  
 इडा-पिंगलांच्या । मध्यभागीं चित्त । ठेवी सुषुम्नेंत । रोवोनियां ॥८४४॥  
 मग समाधीच्या । शेजेपाशीं जाण । ठेवितो बांधोन । ध्यानालार्गीं ॥८४५॥  
 चित्त-चैतन्याचें । ऐक्य होतां ऐसें । अखंड 'विलसे । स्व-रूपीं तो ॥८४६॥  
 अंतःकरणाचा । निग्रह तो ऐसा । जाण गुडाकेशा । सांगितला ॥८४७॥  
 आत्मविनिग्रह । ऐसा जेथें होय । तेथें चि विजय । ज्ञानाचा गा ॥८४८॥  
 जयाचें वचन । शिरीं वाहे मन । ज्ञान चि तो जाण । मूर्तिमंत ॥८४९॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ।

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥८॥

विषयांच्या ठायीं । जागती विरक्ति । जयाचिया चित्तीं । दिसे भली ॥८५०॥

१ घन ताब्यांत ठेवणें. २ जखीण; पिशाच्च. ३ नवरा. ४ ताळतंत्र सोडलेली; द्वाड. ५ असतो; राहतो.

ओकिलें तें जैसें । खाववे ना अन्न । प्रेता आलिगन । देववे ना ॥८५१॥  
 जळत्या घरांत । जैसें शिरवे ना । किंवा 'घोटवे' ना । विष जैसें ॥८५२॥  
 किंवा व्याघ्राचिया । दरीमार्जी कोणा । जैसें जाववे ना । रहावया ॥८५३॥  
 घालवे ना उडी । 'तप्त-लोह-रसीं' । करवे ना उशी । अजगराची ॥८५४॥  
 तैशापरी पार्था । विषयांची वार्ता । नावडे सर्वथा । जयालार्गी ॥८५५॥  
 इंद्रियांच्या द्वारा । जाऊं चि देई ना । मनाकडे कोणा । विषयासी ॥८५६॥  
 विषय-सेवन । करावया मन । कंटाळलें पूर्ण । जयाचें गा ॥८५७॥  
 जयाचें शरीर । झालें अति रोड । शम दम गोड । जयालार्गी ॥८५८॥  
 आवडे एकान्त । जयाचिया मना । तपोव्रतें नाना । आचरे जो ॥८५९॥  
 पातला युगान्त । ऐसें जया होय । 'जन-पदीं पाय । ठेवितां च ॥८६०॥  
 योगाभ्यासीं हांव । रानाकडे धांव । साहे ना जो नांव । मंडळीचें ॥८६१॥  
 बाणशय्येवरी । जैसें झोंप घेणें । ना तरी लोळणें । 'पूय-पंकीं ॥८६२॥  
 तैसें लेखी भोग । भोगणें ह्या लोकीं । तेविं तुच्छ लेखी । स्वर्गांतें हि ॥८६३॥  
 कुजलेलें जैसें । घाण श्वान-मांस । स्वर्गींच्या भोगांस । तैसें मानी ॥८६४॥  
 पार्था जें का आत्म-। लाभाचें सद्भाग्य । विषय-वैराग्य । तें हें ऐसें ॥८६५॥  
 येणें योगें जीव । पात्र होती देख । ब्रह्मानंद-सुख । भोगावया ॥८६६॥  
 इह-पर-भोगीं । ऐसा कंटाळला । तो चि ज्ञानी झाला । ओळखतूं ॥८६७॥  
 सकामाचे परी । यज्ञयागादिक । कर्म करी देख । आवडीनें ॥८६८॥  
 परी कर्तृत्वाचा । नाहीं अहंकार । लेश हि साचार । जयालार्गी ॥८६९॥  
 जीं का वर्णाश्रम-। धर्मासी पोषक । नित्य-नैमित्तिक । सर्व कर्म ॥८७०॥  
 तयांमार्जी काहीं । राहूं नेदी न्यून । सर्वांगें संपूर्ण । आचरे तीं ॥८७१॥  
 परी हें मीं केलें । मीं च सिद्धी नेलें । ऐसें ना ठेविलें । वासनेंत ॥८७२॥  
 जैसा वायु वाहे । सर्वत्र सहज । सूर्य देई तेज । स्वभावे चि ॥८७३॥  
 किंवा 'श्रुति' जैसी । स्वभावतां बोले । काजेंविण चाले । गंगा जैसी ॥८७४॥  
 तैसा स्वभावे जो । करी सदाचार । नाहीं अहंकार । लेशमात्र ॥८७५॥

ऋतुकाळीं जैसे । वृक्ष फळा येती । परी ते नेणती । फळा आलों ॥८७६॥  
 तथा वृक्षांचिया । ऐसी वृत्ति साची । सर्व कर्मीं ज्याची । निरंतर ॥८७७॥  
 पाहें धनंजया । एकावळींतून । काढिली ओढून । दोरी जैसी ॥८७८॥  
 तैसा मनीं कर्मीं । बोलीं अहंकारा । उरों नेदी थारा । अल्पमात्र ॥८७९॥  
 संबंधावाचोन । नभीं अभ्रें जैसीं । देहीं कर्में तैसीं । जयालागीं ॥८८०॥  
 मद्यपी जो त्यासी । असे का हें भान । नेसलें वसन । किंवा नाहीं ? ॥८८१॥  
 नातरी साचार । चित्रांतील स्वार । नेणे तलवार । दिली हातीं ॥८८२॥  
 पाठीवरी ग्रंथ । ठेविले रचोन । बैलासी का ज्ञान । असे त्याचें ? ॥८८३॥  
 तैशापरी देहीं । राहतों आपण । ऐसें हि स्मरण । नाहीं ज्यासी ॥८८४॥  
 निरहंकारपण । ऐसें पार्था जाण । बाणलें संपूर्ण । जयाठायीं ॥८८५॥  
 तथाठायीं ज्ञान । नांदे मूर्तिमंत । बोल हे यथार्थ । मानावे गा ॥८८६॥  
 जन्म जरा मृत्यु । दोष व्याधि दुःखें । आधीं च जो देखे । दक्षपणें ॥८८७॥  
 मांत्रिक तो जैसा । राहोनि सावध । करी प्रतिबंध । पिशाच्चासी ॥८८८॥  
 किंवा साधनांत । येऊं नये विघ्न । म्हणोनि जपून । राहे योगी ॥८८९॥  
 ना तरी गवंडी । \*ओळंबा लावोन । साडेतिडेपण । दूर करी ॥८९०॥  
 विसरे ना वैर । जन्मांतरींचें हि । धनंजया पाहीं । सर्प जैसा ॥८९१॥  
 तैसे नाना दोष । पूर्वजन्मांतील । आठवी सखोल । मानसीं जो ॥८९२॥  
 आणि खडा जैसा । विरे ना डोळ्यांत । जिरे ना व्रणांत । शल्य जैसें ॥८९३॥  
 तैसें जन्मकाळीं । भोगिलें जें दुःख । कदापि तें देख । विस्मरेना ॥८९४॥  
 म्हणे हाय ! हाय ! पूय-पंकीं गेलों । बाहेरी निघालों । योनिमागें ॥८९५॥  
 मातेचिया अंकीं । केलें पयःपान । घाम हि चाटोन । स्तनाग्रींचा ॥८९६॥  
 घ्यावयासी लागे । जेणें पुनर्जन्म । आतां तैसें कर्म । नाचरेन ॥८९७॥  
 ह्यापरी जन्माचा । करी तिरस्कार । दुःख वारंवार । आठवोनि ॥८९८॥  
 हार येतां पुन्हां । जिंकावया डाव । जुगारी सदैव । जपे जैसा ॥८९९॥  
 वडिलांचें वैर । उगवायासाठीं । करी आटापिटी । पुत्र जैसा ॥९००॥

मारिलें कोणास । तरी मग रागें । जैसा सूड मागे । पाठीराखा ॥९०१॥  
 तैसें जन्म-दुःख । न व्हावें मागुतीं । म्हणोनि जागृति । ठेवी नित्य ॥९०२॥  
 पाहें धनंजया । संभावित जना । जैसा साहवेना । अपमान ॥९०३॥  
 जन्म-दुःखाची तों । जाण लाज तैसी । धरी जो मानसीं । सर्वकाळ ॥९०४॥  
 कल्पांतापर्यंत । जरी मृत्यु दूर । तरी तो समोर । उभा आहे ॥९०५॥  
 ऐसें निरंतर । मानोनि तत्पर । राहे सारासार-। विचारीं जो ॥९०६॥  
 खोल असे फार । मध्यभर्गीं पाणी । पडतां चि कार्नीं । ऐसे बोल ॥९०७॥  
 नदीकांठीं नीट । कांस बळकट । घाली जैसा धीट । पोहणारा ॥९०८॥  
 किंवा अवमान । आधीं सांभाळावें । मग जैसें जावें । रणांगणीं ॥९०९॥  
 शस्त्राचा आघात । पोंचण्यापूर्वीं च । घालावें 'कवच । अंगावरी ॥९१०॥  
 किंवा पुढें आहे । वाटमारेपण । रहावें जपून । तरी आधीं ॥९११॥  
 तोंवरी करावी । कांहीं धांवाधांव । गेला नाहीं जीव । जोंवरी गा ॥९१२॥  
 पेटत्या घरांत । कोंडला जो जाय । खणूं शके काय । कूपासी तो ? ॥९१३॥  
 खोल डोहातळीं । बुडाला जो जळीं । तयाची आरोळी । कोण एके ॥९१४॥  
 करोनियां काय । मग धडपड । बुडावा दगड । तैसें होय ॥९१५॥  
 म्हणोनि जयाचें । अर्जुना साचार । पडे हाडवैर । बलिघांशीं ॥९१६॥  
 आठ हि प्रहर । असे तो तत्पर । आपुलें हत्यार । परजोनि ॥९१७॥  
 किंवा 'केळवण । होतां चि नोवरी । जावया सासरीं । सज्ज होय ॥९१८॥  
 नातरी मंन्यामी । जैसा का आधीं च । भोगीं राहे साच । उदासीन ॥९१९॥  
 तैसा पुढें मृत्यु । येईल म्हणोन । राहे सावधान । आधीं च तो ॥९२०॥  
 पुनर्जन्माचें जो । करी निवारण । ह्यापरी वर्तोन । ह्या चि जन्मीं ॥९२१॥  
 तेविं मृत्यूनें चि । मृत्यूतें मारून । स्व-रूपें आपण । उरें नित्य ॥९२२॥  
 ऐशापरी जन्म-। मरणाचें दुःख । शिवे चि ना देख । जयालागीं ॥९२३॥  
 तयाचिया धरीं । धनंजया साच । 'सांकडे नाहीं च । ज्ञानाचें गा ॥९२४॥  
 वार्धक्याची विंता । आधीं च जो करी । तारुण्याच्या भरीं । असोनि हि ॥९२५॥

म्हणे आज ऐसा । जरी धष्टपुष्ट । दिसे बळकट । देह माझा ॥९२६॥  
 तरी वाळलेल्या । काचरीसमान । जाईल सुकोन । वृद्धपर्णी ॥९२७॥  
 'दैवहीनाचे तों । जैसे 'व्यवसाय । तैसे हातपाय । थकतील ॥९२८॥  
 शरीराचें बळ । होईल तें क्षीण । प्रधानावांचोन । राज्य जैसें ॥९२९॥  
 घ्यावा मंद मंद । फुलांचा सुगंध । ऐसा साचा वेध । नाकासी ज्या ॥९३०॥  
 होईल तें नाक । सौंदर्या पारखें । गुडघ्यासारखें । उंटाचिया ॥९३१॥  
 गुरें जीं ओढाळ । त्यांचिया 'खुरीं । जागेलागीं बुरी । येईं जैसी ॥९३२॥  
 तैसी मस्तकाची । होईल अवस्था । वृद्धपण येतां । शरीरासी ॥९३३॥  
 पद्म दळासवें । ज्यांची स्पर्धा चाले । ऐसे रम्य डोळे । जरी माझे ॥९३४॥  
 तरी ते वार्धक्यां । होतील दुबळे । जैसीं पडवळें । पिकलेलीं ॥९३५॥  
 भुवयांचीं पातीं । लोंबतील खालीं । जैशा जीर्ण साली । वृक्षांचिया ॥९३६॥  
 डोळियांमधून । थेंबुटे गळोन । जाईल कुजोन । उरोभाग ॥९३७॥  
 जैसें बुळबुळीत । वामळीचें खोड । टाकिती सरड । गिरवडोनि ॥९३८॥  
 तैसीं मुखामार्जीं । सांटोनियां लाळ । तेंणें तें जाईल । बरवडोनि ॥९३९॥  
 सांडपाण्यावरी । जैसे बुडबुडे । येती चुलीपुढें । मोरीमार्जीं ॥९४०॥  
 तैशा त्या येतील । जणूं बिडबिडोनि । नाकपुड्या दोन्ही । शेंबुडानें ॥९४१॥  
 खावोनि तांबूल । रंगवितों ओंठ । दाखवितों दांत । हांसतांना ॥९४२॥  
 ज्या तोंडावाटे । बरवे रसाळ । काढोनियां बोल । मिरवितों ॥९४३॥  
 येईल त्या तोंडा । खांकन्याचा लोंढा । दातांसवें दाढा । उपळोनि ॥९४४॥  
 बहु कर्ज होतां । शेतवाडी जैसी । 'ऊर्जितावस्थेसी । नाहीं येत ॥९४५॥  
 नातरी झडीचा । लागतां पाऊस । बैसल्या गुरांस । उठवे ना ॥९४६॥  
 तैसी मुखीं जीभ । होवोनियां लुळी । नुठेल बैसली । कांहीं केल्या ॥९४७॥  
 वाळलीं कुसळें । मग जैशा रीती । उडोनियां जाती । वाऱ्यावरी ॥९४८॥  
 माझिया दाढीची । दुरवस्था साच । होईल तैसी च । वृद्धपर्णी ॥९४९॥  
 जैसी आषाढांत । पर्जन्याच्या भरें । पर्वत-शिखरें । पाझरती ॥९५०॥



तैसे दाढांचिया । खिंडींतूनि साचे । ओघळ लाळेचे । लोटतील ॥९५१॥  
 मुखांतूनि बोल । येतील बोंबडे । कानाचीं कवाडें । मिटतील ॥९५२॥  
 ऐसा 'यौवनाचा । झडोनि 'उन्माद । दिसेन मी वृद्ध । 'कपि जैसा ॥९५३॥  
 तृणाचें बाहुलें । वारेयानें हाले । कापेल सगळें । अंग तैसें ॥९५४॥  
 मग चालूं जातां । पाय तिडतील । हात हि जातील । आंखडोनि ॥९५५॥  
 देह-सौंदर्याचें । 'नोहेल का हांसें । नाचवावें जैसे । सांग लोकीं ॥९५६॥  
 गळूं लागतील । मळमूत्र-द्वारें । मज जन सारे । त्रासतील ॥९५७॥  
 मरो हा लौकर । नको ह्याचा त्रास । म्हणोनि नवस । करितील ॥९५८॥  
 देखोनियां मज । धिःकारील जग । येईल 'उबग । सोय-न्यांसी ॥९५९॥  
 ऐशा स्थितीमार्जीं । न येतां मरण । राहेन खिळोन । अंधरूणीं ॥९६०॥  
 म्हणतील नारी । बैसलें हें भूत । होतील मूर्च्छित । मुलेंबाळें ॥९६१॥  
 काय सांगूं फार । ह्या परी सर्वास । येईल किळस । मग माझा ॥९६२॥  
 झोंपले शेजारी । होवोनि ते जागे । म्हणतील रागें । चिडोनियां ॥९६३॥  
 खोकून खोकून । म्हातारा हा देखा । शिणवील लोकां । बहुतांसी ॥९६४॥  
 ऐसा वार्धक्याचा । करी जो विचार । आधीं च साचार । तारुण्यांत ॥९६५॥  
 मग भोगांची जो । मनीं वाहे 'खंत । राहे अनासक्त । प्रपंचांत ॥९६६॥  
 म्हणे हें तारुण्य । निघोनि जाईल । वार्धक्य येईल । पुढें जेव्हां ॥९६७॥  
 तेव्हां हितालागीं । उरेल तें काय । अति 'क्षीणकाय । होईन मी ॥९६८॥  
 म्हणोनि बधिर । नाहीं झाले कान । तोंवरी ऐकोन । घेईं सर्व ॥९६९॥  
 जोंवरी दुर्बळ । नाहीं झाले पाय । जावें तेथें जाय । तोंवरी तो ॥९७०॥  
 तोंवरी तो सर्व । पहावें तें पाहे । जंव शक्ति आहे । दृष्टीमार्जीं ॥९७१॥  
 बोलोनियां घेई । सुभाषितें सर्व । जोंवरी मूकत्व । नाहीं आलें ॥९७२॥  
 हात ते हि पुढें । पडतील लुले । ऐसें जंव कळे । थोडें थोडें ॥९७३॥  
 तंव तो आधीं च । सावध होवोन । करी सर्व दान-धर्मादिक ॥९७४॥  
 पुढें दशा ऐसी । वार्धक्यां येईल । होवोनि राहील । मन वेडें ॥९७५॥

म्हणोनि जो आधीं । शुद्ध आत्मज्ञान । ठेवितो चिंतून । तारुण्यां च ॥९७६॥  
 लुटितील चोर । उदईक धन । आधीं च जाणोन । पुढील हें ॥९७७॥  
 तयाचा सर्वथा । सोडावा संबंध । रहावें सावध । जैसें आज ॥९७८॥  
 नातरी करावी । जैसी झांकापाक । नाहीं जो 'दीपक । मालवला ॥९७९॥  
 तैसें 'डुबावें ना । 'वृद्धर्त्वीं म्हणोन । राहे 'उदासीन । आधीं च जो ॥९८०॥  
 गेले हांसळोन । जेथें किल्ले गड । निर्जन ओसाड । स्थान ऐसें ॥९८१॥  
 किंवा जेथें पक्षी । येती परतोन । ऐसें दाट रान । डावलून ॥९८२॥  
 सावध सरळ । वाटेनें जो जाय । लुटतील काय । चोर तया ॥९८३॥  
 तेवीं वृद्धपर्णीं । होऊं नये हानि । म्हणोनि यौवनीं । सावध जो ॥९८४॥  
 प्रपंचीं अलिप्त । राहे निरंतर । वृद्धाहूनि थोर । नव्हे का तो ? ॥९८५॥  
 तिळांचीं जीं बांडें । टाकिलीं झाडोन । काय परतोन । झाडावीं तीं ? ॥९८६॥  
 पाहें जरी अग्नि । धडाडोनि पेटे । तरी राखोंडीतें । जाळील का ? ॥९८७॥  
 जरा-दुःख ऐसें । जाणोनि आधीं च । होय जो का मात्र । जरा-मुक्त ॥९८८॥  
 तयाचिया ठायीं । धनंजया जाण । ज्ञान परिपूर्ण । वास करी ॥९८९॥  
 जडले जो नाहीं । देहा नाना रोग । करी उपयोग । आरोग्याचा ॥९९०॥  
 सापाचिया तोंडीं । पडली जी 'उंडी । सर्वथा ती मांडी । सुज्ञ जैसा ॥९९१॥  
 तैसा जेणें स्नेहें । वियोग विपत्ति । आणिक 'पासती । दुःखशोक ॥९९२॥  
 स्वभावें जो स्नेह । सर्वथा सांडोन । सुखें उदासीन । राहे येथें ॥९९३॥  
 ज्या ज्या इंद्रियांच्या- । द्वारा नाना दोष । शरीरीं प्रवेश । करितील ॥९९४॥  
 त्या त्या इंद्रियांचीं । दारें करी बंद । टोकोगि दगड । निग्रहाचे ॥९९५॥  
 ज्ञान-संपत्तीचा । तो चि स्वामी पाहें । जो का वर्तताहे । ऐशा रीती ॥९९६॥  
 आतां अलौकिक । लक्षण आणिक । सांगेन तें ऐक । धनंजया ॥९९७॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु ।

नित्यं च समाचित्त्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥९॥

धर्मशाळेमार्जी । वाटसरू राही । तैशापरी देहीं । उदास जो ॥९९८॥

चालं जातां वाटे । भेटे वृक्ष-च्छाया । घरावरी माया । तंवढी च ॥१९९॥  
 आपुली माउली । मन्निधीं अमोन । तियेचें तों भान । नमे जैमें ॥१००॥  
 तैमी कामिनीची । लोलुपता नाहीं । तयाचिया ठायीं । लेशमात्र ॥१००१॥  
 आणि वाटमरू । वर्तालागीं आले । मार्गीं धर्मशाळे- । मार्जीं जैमे ॥१००२॥  
 वैमलीं का हारें । वृक्षातळीं जैशीं । मानी मुलें तैमीं । आपुलीं जो ॥१००३॥  
 वाटे वाटमरू । जैमा माक्षीभूत । तैमा अनामक्त । ऐश्वर्यां जो ॥१००४॥  
 वागे वेदाज्ञेमी । भिवोनि तो तैमा । राहे रावू जैमा । पिंजऱ्यांत ॥१००५॥  
 'दारा-सुत-गेहीं । जाई ना गुंतोन । जाण अधिष्ठान । ज्ञानामी तो ॥१००६॥  
 वर्षाकाळीं मिंधु । जाय ना भरोन । नातरी आटोन । ग्रीष्मकाळीं ॥१००७॥  
 तैमी लाभ-हानि । मारखी च मानी । सुस्थिर ठेवोनि । चित्तवृत्ति ॥१००८॥  
 तिन्ही काळीं जैमा । दिन-मणि एक । तैमें सुख-दुःख । जयालागीं ॥१००९॥  
 नभासारिखा जो । सर्वत्र ममान । जाण तथे ज्ञान । मूर्तिमंत ॥१०१०॥

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी ।

विविक्तदेशमेवित्त्वमरतिर्जनसंसादि ॥१०॥

पार्था जयालागीं । मजविण माच । गोमटें नाहीं च । दुजें कांहीं ॥१०११॥  
 काया-वाचा-मनं । शपथ ही एक । वाट जे आणिक । देखती ना ॥१०१२॥  
 काय सांगूं फार । जयाचें गा मन । राहिलें जडोन । माझ्या ठायीं ॥१०१३॥  
 आपुलें आमूचें । एक अंथरूण । तयें केलें जाण । धनंजया ॥१०१४॥  
 कांतापार्शीं जातां । पतिव्रता नारी । अल्प हि अंतरीं । संकोचे ना ॥१०१५॥  
 तैमा एकरूप । काया-वाचा-मनं । एकनिष्ठपणें । माझ्या ठायीं ॥१०१६॥  
 मिळोनि हि जैमें । मिळत चि राहे । गंगा-जळ पाहें । सागरातें ॥१०१७॥  
 माझिया स्वरुपी । तैमा मिसळून । सर्वस्वें भजन । करी माझे ॥१०१८॥  
 सूर्यामवें यावें । सूर्यामवें जावें । साजे हें आर्धवें । प्रभेलागीं ॥१०१९॥  
 जळावरी जळ । कौतुकें लोळतां । तया नांव लाटा । ऐमें देती ॥१०२०॥  
 परी जळाहून । काय लाटा भिन्न । तैसा जो अनन्य । माझ्या ठायीं ॥१०२१॥

होवोनि मद्रूप । करी माझी सेवा । जाण तो पांडवा । ज्ञान-मूर्ति ॥१०२२॥  
 पुण्यतीर्था किंवा । तपोवनीं वाम । आवडे जयाम । गुहेमार्जा ॥१०२३॥  
 गिरिकंदराचा । आश्रय जो करी । किंवा राहे तीरीं । तडागाच्या ॥१०२४॥  
 जयामी एकांत । आवडे बहुत । पाय नगरांत । ठेवी ना जो ॥१०२५॥  
 लोकवस्तीचा तों । जयामी कंटाळा । जाण तो पुतळा । ज्ञानाचा गा ॥१०२६॥  
 ज्ञान-निश्चयार्थ । लक्षणें आणिक । आतां सांगूं एक । बुद्धिमंता ॥१०२७॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तच्चज्ञानार्थदर्शनम् ।

एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥११॥

तरी जेणें ज्ञानें । येई प्रत्ययामी । परमात्मा ऐमी । वस्तु एक ॥१०२८॥  
 तथा शुद्ध-ज्ञाना-। बांचोनि आणिक । भव-स्वर्गादिक । लाभे जेणें ॥१०२९॥  
 तें तरी अज्ञान । वाणली ही खूण । अंतरीं संपूर्ण । जयाचिया ॥१०३०॥  
 म्हणोनियां तुच्छ । लेखी जो स्वर्गाम । प्रपंचाची भाष । नावडे ज्या ॥१०३१॥  
 मद्रावें तो पार्था । नित्य परिपूर्ण । राहिला रंगून । आत्म-ज्ञानीं ॥१०३२॥  
 जेथें वाटेलागीं । फुटतील फांटे । थांबोनियां तेथें । क्षणभरी ॥१०३३॥  
 आडवाटा मर्ध । शोधोनियां मग । नीट राजमार्ग । स्वीकारावा ॥१०३४॥  
 तैमीं मर्व ज्ञानें । शोधोनि बरवीं । ठेवी जो आवर्ची । एकीकडे ॥१०३५॥  
 मग मन-बुद्धी । लार्धी धनेजया । आत्मज्ञानाचिया । मार्गांमी जो ॥१०३६॥  
 म्हणे जें अध्यात्म । तें चि एक मार । ज्ञानें तीं इतर । भ्रांतिमूल ॥१०३७॥  
 हा चि जयाचिया । बुद्धीचा निर्धार । अदृळ माचार । मेरुगेमा ॥१०३८॥  
 जयाचा निश्चय । अध्यात्माच्या दारीं । स्थिरावे अंबरीं । धरुव जेमा ॥१०३९॥  
 तयाचिया ठायीं । शुद्ध ज्ञान पाहीं । पार्था बोल नाहीं । अन्यथा हा ॥१०४०॥  
 स्थिरावले ज्ञानीं । तयाचें गा मन । तेव्हां चि तो जाण । ज्ञानरूप ॥१०४१॥  
 स्थिरावतां मन । कैमी स्थिति होय । तयाचा प्रत्यय । ज्याचा त्यामी ॥१०४२॥  
 स्थिरावले मन । तरी च ती कळे । एव्हवीं आकळे । बोलामी का ॥१०४३॥  
 ज्ञानी आणि ज्ञान । मानी तूं समान । नाहीं ज्ञानाहून । ज्ञानी भिन्न ॥१०४४॥

शुद्ध तत्त्वज्ञानें । लाभतें जें फळ । अर्जुना केवळ । ज्ञेयरूप ॥१०४५॥  
 तया ज्ञेयाकडे । जावोनियां थेट । सुखें घेई भेट । दृष्टि ज्याची ॥१०४६॥  
 ए-हवीं ज्या ज्ञानें । आकळे ना ज्ञेय । घेवोनि तें काय । करावें गा ॥१०४७॥  
 ज्ञानाचा निश्चय । आघवा तो वायां । जैसा अंधाचिया । हातीं दीप ॥१०४८॥  
 ज्ञानें जरी नोहे । ब्रह्माचें दर्शन । तरी तें स्फुरण । आंधळें च ॥१०४९॥  
 म्हणोनियां ज्ञान । दाखवी जें काहीं । तें तें सर्व होई । परब्रह्म ॥१०५०॥  
 परी जरी बुद्धि । असेल निर्मल । तरीच देखेल । ज्ञेयासी त्या ॥१०५१॥  
 असो शुद्ध ज्ञानें । दाविलें जें ज्ञेय । समर्थ जी होय । देखाया तें ॥१०५२॥  
 ऐसी नित्य शुद्ध । ज्ञाली बुद्धि ज्याची । तो चि तो ज्ञानाची । मूर्ति जाण ॥१०५३॥  
 ज्ञानाचा विस्तार । जेवढा साचार । तेवढी च थोर । बुद्धि ज्याची ॥१०५४॥  
 तो चि पार्था जाण । मूर्तिमंत ज्ञान । दावावें बोलोन । कासया हें ॥१०५५॥  
 शुद्ध ज्ञानाचिया । प्रभेसवें साची । ज्ञेयीं पावे ज्याची । शुद्ध बुद्धि ॥१०५६॥  
 तयालागीं भेटी । ब्रह्मस्वरूपाची । होय सव्यसाची । हातोहात ॥१०५७॥  
 होय तो तत्काळ । शुद्ध ज्ञानमय । विस्मय तो काय । असे येथें ॥१०५८॥  
 सूर्यालागीं मूर्य । म्हणावें का लागे । तैसा तो निजांगें । ब्रह्मरूप ॥१०५९॥  
 तंव श्रोतेजन । बोलती साचार । आवरीं विस्तार । ज्ञानाचा हा ॥१०६०॥  
 ज्ञानदेवा आतां । लाविशी कां वेळ । वर्णाया पुढील । कथाभाग ॥१०६१॥  
 येथवरी ऐसैं । विस्तारें करोन । ज्ञानाचें लक्षण । वर्णोनियां ॥१०६२॥  
 तुवां रसपूर्ण । वक्तृत्वाची भली । मेजवानी दिली । आम्हांलागीं ॥१०६३॥  
 व्हावा रसोत्कर्ष । हा जो कवि-मंत्र । तो चि एकमात्र । स्वीकारोनि ॥१०६४॥  
 ज्ञानाची उपेक्षा । करितामी तरी । आम्हालागीं वैरी । आमंत्रूनि ॥१०६५॥  
 काय तरी पाट-। रांगोळीचा थाट । अन्नाशीं तों गांठ । नाहीं जरी ॥१०६६॥  
 काय तरी गाय । असोनि गोजिरी । न दे धार जरी । काढावया ॥१०६७॥  
 तरी तियेलागीं । कोण बाळगील । ऐसी जी लाथाळ । अवगुणी ॥१०६८॥  
 तैसी मति ज्ञानीं । पावे ना विस्तार । तरी जें इतर । पाल्हाळ तो ॥१०६९॥

काय रसोत्कर्ष । धेवोनि केवळ । जरी सुनिर्मळ । ज्ञान नाही ॥१०७०॥  
 परी असो तुवां । तैमें नाहीं केलें । भलें निरूपिलें । शुद्ध ज्ञान ॥१०७१॥  
 जया 'ज्ञानलेशा-। माठीं योगीजनें । अष्टांग साधनें । शिणावें गा ॥१०७२॥  
 तथा ज्ञानाचें त्वां । करोनि व्याख्यान । आकंठ भोजन । दिलें आम्हां ॥१०७३॥  
 अमृताची वृष्टि । संतत होईल । नको म्हणवेल । तरी कोणा ॥१०७४॥  
 मुखाचे लोटोत । कोट्यवधि दिन । मोजीत ते कोण । बैसेल गा ॥१०७५॥  
 असो युग एक । पौर्णिमेची 'राती । तरी नव्हे तृप्ति । चकोरांमी ॥१०७६॥  
 ज्ञानाचें हें भलें । तैमें निरूपण । वरी रसपूर्ण । ऐसें जरी ॥१०७७॥  
 तरी प्रेमभरें । ऐकतां तें मारें । म्हणवेल पुरे । कैसें कोणा ॥१०७८॥  
 भला भाग्यशाली । पाहुणा ये घरीं । वाढी तथा नारी । भाग्यवती ॥१०७९॥  
 तरी स्वयंपाका । येईल का तूट । चाखितां अवीट । गोडी मग ॥१०८०॥  
 तैसी आम्हांलागीं । ज्ञानाची आवडी । तुजसी हि गोडी । असे तेथें ॥१०८१॥  
 म्हणोनियां तुज । ज्ञान-निरूपणीं । स्वभावं 'चौगुणीं । बळ आलें ॥१०८२॥  
 ऐसें बोलावया । वाटे ना संकोच । डोळस तूं साच । होसी ज्ञानीं ॥१०८३॥  
 आतां 'बुद्धीचिया । 'उत्कर्षें यथार्थ । स्पष्ट करीं येथ । श्लोक-पदें ॥१०८४॥  
 संतांचें भाषण । ऐकोनि हें सर्व । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥१०८५॥  
 होतें मनोगत । माझे हि तैसें च । आज्ञा केली तोंच । तुम्हीं मातें ॥१०८६॥  
 तरी वायां वाटूं । न देतां भाषण । गीतार्थ सांगेन । ऐका आतां ॥१०८७॥  
 अठरा हीं ऐसीं । ज्ञानाचीं लक्षणें । बोलिलीं श्रीकृष्णें । पार्थालागीं ॥१०८८॥  
 मग म्हणे देव । धनंजया जाण । ह्यासी म्हणूं ज्ञान । ऐसें आम्हीं ॥१०८९॥  
 आणि आत्मज्ञानी । पंडित जे साच । बोलती ऐसें च । ते हि सर्व ॥१०९०॥  
 तळहातावरी । जैसा का आवळा । दिसावा वाटोळा । डोलतांना ॥१०९१॥  
 तैसें तुज आम्हीं । सर्वांगीं संपूर्ण । दाखविलें ज्ञान । स्पष्टपणें ॥१०९२॥  
 आतां महाबुद्धे । ऐक तें अज्ञान । उघड करोन । सांगूं तुज ॥१०९३॥  
 तरी धनुर्धरा । नव्हे जें का ज्ञान । जाण तें अज्ञान । स्वभावें चि ॥१०९४॥

आकळितां पूर्ण । ज्ञानाचें लक्षण । सहजें अज्ञान । कळों येई ॥१०९५॥  
 संपतां दिवस । मग रात्र उरे । त्याहुनी तिसरें । नाहीं जैसें ॥१०९६॥  
 तैसें धनंजया । नाहीं जेथें ज्ञान । तें चि तें अज्ञान । ओळख तूं ॥१०९७॥  
 तरी तुज सांगूं । आतां लवलाहीं । चिन्हें कांहीं कांहीं । अज्ञानाचीं ॥१०९८॥  
 करोनी सत्कार । दावितां आदर । जयासी अपार । तोष होय ॥१०९९॥  
 प्रतिष्ठेमाठीं च । जयाचें जीवन । सर्वदा सन्मान । अपेक्षी जो ॥११००॥  
 गवें पर्वतांच्या । शिखरांसमान । धरी अभिमान । थोरवीचा ॥११०१॥  
 तयाचिया ठायीं । धनंजया जाण । सर्वथा अज्ञान । वास करी ॥११०२॥  
 पिंपळाची मुंज । झाली ऐमें जगा । दाखविती धागा । गुंडाळोनि ॥११०३॥  
 दान-धर्मादिक । तैसें तो जें करी । जर्गी तें पुकारी । आपण चि ॥११०४॥  
 ठेविती राउळीं । जैसें मोरचेल । सर्वासी दिसेल । ऐशा जागीं ॥११०५॥  
 तैमें करी जें जें । यज्ञ तप दान । स्वयें प्रदर्शन । करी त्याचें ॥११०६॥  
 विद्येचा पसारा । घालोनि जो राही । करी सर्व कांहीं । कीर्तीसाठीं ॥११०७॥  
 टिळे टोपी माळा । करोनि धारण । जर्गी थोरपण । मिरवी जो ॥११०८॥  
 पुण्यकर्मीं ऐसा । दांभिक जो पूर्ण । जाण पां तो खाण । अज्ञानाची ॥११०९॥  
 आणि जैसा अग्नि । संचरतां रानीं । टाकितो जाळोनि । स्थिरचर ॥१११०॥  
 तैसी सर्वासी च । पीडा अनिवार । देतसे आचार । जयाचा गा ॥११११॥  
 बोंचती ते बोल । बोले जे कौतुकें । तीक्ष्ण जैसीं टोकें । पहारीचीं ॥१११२॥  
 आणि करी जो जो । संकल्प तो देख । होतसे घातक । विषाहून ॥१११३॥  
 ऐमें हिंसेलागीं । वाहिलें जीवन । जाण तो निधान । अज्ञानाचें ॥१११४॥  
 आणि कुंकितां च । फुगे जैसा भाता । मग होय रिता । सोडितां च ॥१११५॥  
 तैसा होतां लाभ । चढोनि जो जाय । घेई मार्गें पाय । ह्यानि होतां ॥१११६॥  
 वारेवावटळी-। मार्जी सांपडली । धूळ अंतराळीं । चढे जैसी ॥१११७॥  
 स्तुति होतां तैसा । जाय जो चढोन । आनंदें बेभान । होवोनियां ॥१११८॥  
 निंदा अल्पमात्र । ऐकतां चि कार्नीं । कपाळ धरोनि । राहे मग ॥१११९॥

लागतां झुळूक । खिखल तो वाळे । परी विरघळे । थेंबानें हि ॥११२०॥  
 तैसा अपमानें । होतसे जो खिन्न । लाभतां सन्मान । तोष पावे ॥११२१॥  
 विकाराची उर्मी । साहवे ना ज्यासी । पूर्ण अज्ञानासी । तो चि ठाव ॥११२२॥  
 दर्शन भाषण । वरी दिसे नीट । परी असे गांठ । मनामार्जी ॥११२३॥  
 करी आणिकाचें । पाठीराखेपण । एकासी वचन । देवोनियां ॥११२४॥  
 जैसा मृगालागीं । चारा घाली व्याध । त्याची पारध । करावया ॥११२५॥  
 तैसें दृष्टपण । अंतरीं ठेवून । प्रांजळ वर्तन । वरपांगीं ॥११२६॥  
 शेवाळें वेढिली । गारगोटी भली । नातरी निंबोळी । पक्व जैसी ॥११२७॥  
 तैसें आचरण । भलें वाह्यात्कारीं । परी जो अंतरीं । वांकडा च ॥११२८॥  
 त्याचिया ठायीं । राहिलें अज्ञान । बोल हे प्रमाण । मानीं सत्य ॥११२९॥  
 गुरु-कुळीं लाज । वाटे जया नरा । करी तिठकारा । सेवेचा जो ॥११३०॥  
 धेवोनियां विद्या । होवोनि उन्मत्त । गुरुवरी मात । करूं पाहे ॥११३१॥  
 त्या अभक्ताचें । नको नांव घेणें । शूद्रान्न भक्षणें । द्विजें जैसें ॥११३२॥  
 परी अज्ञानार्ची । लक्षणें साचार । सांगतां उच्चार । झाला त्याचा ॥११३३॥  
 आतां वाचेलागीं । देऊं प्रायश्चित्त । करोनियां भक्त-नामोच्चार ॥११३४॥  
 'गुरुतल्पगाचें । नांव घेतां पाप । घडलें अमाप । वाचेसी जें ॥११३५॥  
 हरेल तें सारें । भक्त-नामोच्चारें । जैसें का अंधारें । सूर्योदयीं ॥११३६॥  
 एवढें सामर्थ्य । भक्त-नामोच्चारिं । जें का दूर सारी । ऐसे दोष ॥११३७॥  
 मग म्हणे देव । धनंजया ऐक । लक्षणें आणिक । अज्ञानार्ची ॥११३८॥  
 शरीरीं आळस । अंतरीं विकल्प । जैसा घाण कूप । रानांतील ॥११३९॥  
 तळीं हाडें वरी । कांटेकुटे गाळ । तैसा अमंगळ । अंतर्बाह्य ॥११४०॥  
 न म्हणे उघडें । न म्हणे झांकलें । अन्नार्थी भुकेलें । श्वान जैसें ॥११४१॥  
 तैसें विचारी ना । मेळवितां लोकीं । द्रव्य आपुलें कीं । पराचें हें ॥११४२॥  
 न पाहे चव्हाटा । न पाहे एकान्त । श्वान होय रत । शुनीं जैसें ॥११४३॥  
 तैसा स्त्रियेठायीं । होय जो आसक्त । विचारी ना उक्त । काळवेळ ॥११४४॥



नाहीं धर्मकर्म । झालें वेळेवरी । टोंचणी अंतरीं । नसे ऐसी ॥११४५॥  
 नित्य-नैमित्तिक । राहिलें म्हणोनि । वाळगी ना मनीं । खेद त्याचा ॥११४६॥  
 पापकर्मीं जो का । निलाजरा झाला । नावडे जयाला । पुण्य-मार्ग ॥११४७॥  
 जयाचिया मनीं । विकल्पाचें वारें । कदापि न सरे । धनलोभ ॥११४८॥  
 ऐसा जो केवळ । द्रव्य-दारासक्त । जाण मूर्तिमंत । अज्ञान तो ॥११४९॥  
 मुंगीचा हि ढका । लागतां चि पाहें । जैमें हालताहे । तृण-बीज ॥११५०॥  
 तैसा अल्पस्वल्प । साधे जरी स्वार्थ । होय विचलित । धैर्य ज्याचें ॥११५१॥  
 किंवा जैमें जळ । हातसे गढळ । थिल्लरीं पाऊल । ठेवितां च ॥११५२॥  
 तैमें भयाचें तों । नांवाचि एकोन । चित्त गोंधळून । जाय ज्याचें ॥११५३॥  
 मनोरथांगमें । वाहे ज्याचें मन । महापूरीं जाण । दुध्या जैसा ॥११५४॥  
 नातरी वायूचें । लाभतां साहाय्य । जैसा धूर जाय । दिगंतरा ॥११५५॥  
 तैसी गजवज । तयाचिया मनीं । पडतां चि कानीं । दुःखवार्ता ॥११५६॥  
 पाहें धनजया । जैसी वावटळ । राहे ना निश्चळ । पळभरी ॥११५७॥  
 ऐसी एकेठायीं । नाहीं जया वस्ती । क्षेत्रीं किंवा तीर्थीं । पुण्य-पुरीं ॥११५८॥  
 मातला सरड । झाडावरीखालीं । जैशा खेपा घाली । वारंवार ॥११५९॥  
 तैसा निरर्थक । हिंडे सर्वकाळ । ठरे ना पाऊल । एके जागीं ॥११६०॥  
 अर्जुना जैसा का । पाण्याचा रांजण । रोविल्यावांचोन । स्थिर नोहे ॥११६१॥  
 तैसा निद्राधीन । तेव्हां चि तो स्वस्थ । एव्हवीं हिंडत । राहे सदा ॥११६२॥  
 चंचलतेमार्जी । ऐशा परी साचें । जणूं मर्कटाचें । भावंड जो ॥११६३॥  
 तयाचिया ठायीं । प्रचंड उदंड । अज्ञान अखंड । वास करी ॥११६४॥  
 पार्था जयाचिया । मनालागीं कांहीं । धरबंध नाहीं । संयमाचा ॥११६५॥  
 ओहोळ्यासी येतां । पाणियाचा लोट । वाळवेचा तट । लेखी ना तो ॥११६६॥  
 तैसा कुकर्मांत । होवोनियां रत । अवेहेरी जो व्रत-। नेम सारे ॥११६७॥  
 पुण्यकर्माचा जो । घेई ना आश्रय । लाथाडोनि जाय । स्वधर्मातें ॥११६८॥  
 लाजलज्जा सर्व । कोळोनि जो प्याला । पापाचा कंटाळा । नसे ज्यासी ॥११६९॥

फिरवी जो पाठ । कुळधर्माकडे । ठेवी एकीकडे । वेदाज्ञेसी ॥११७०॥  
 नेणे चि जो कांहीं । चांगलें वाईट । हिंडतो मोकाट । वसू जैसा ॥११७१॥  
 किंवा रानामार्जी । फुटे जैसा पाट । वाहे कीं अफाट । वारा जैसा ॥११७२॥  
 किंवा अंध हत्ती । मदोन्मत्त व्हावा । लागावा वणवा । डोंगरासी ॥११७३॥  
 विषयाचे ठायीं । तैसें ज्याचें चित्त । सुटलें मोकाट । आवरे ना ॥११७४॥  
 उकिरड्यावरी । फेंकोनियां देती । नको होय ती ती । वस्तु जैसी ॥११७५॥  
 मालकावांचोन । मोकळें जें ढोर । त्या नेई चोर । वाटेचा हि ॥११७६॥  
 कोण ओलांडी ना । सांग धनुर्धरा । वेशीचा उंबर । गांवाचिया ॥११७७॥  
 अपात्रासी प्राप्त । होतां अधिकार । राहे ना विचार । त्या जैसा ॥११७८॥  
 जैसें अन्नसत्रीं । कोणीं हि जेवावें । द्रारीं प्रवेशावें । वेश्येचिया ॥११७९॥  
 तैसें भोगांकडे । ओढे ज्याचें मन । संपूर्ण अज्ञान । वसे तथें ॥११८०॥  
 जगो मरो परी । सोडी ना जो साची । गोडी विषयांची । कदा काळीं ॥११८१॥  
 स्वर्गांत हि भोग । मिळावे म्हणोन । करी जो साधन । ह्या चि लोकीं ॥११८२॥  
 विषयासाठीं च । ज्याचे सर्व श्रम । आवडे सकाम । कर्म एक ॥११८३॥  
 अर्जुना सचैल । करी जो का स्नान । देखोनि वदन । विरक्ताचें ॥११८४॥  
 होय ना सावध । जाय ना थकोन । जरी आला शीण । विषयांसी ॥११८५॥  
 कुष्ठरोगी जैसा । चिघळल्या करे । अन्नोदक सारें । सेवीतसे ॥११८६॥  
 गाढवी निजांगा । टेकूं नेदी उडे । फोडिते नाकाडें । लाथाडोनी ॥११८७॥  
 तरी तियेकडे । फिरवी ना पाठ । लोंचट लंपट । खर जैसा ॥११८८॥  
 तैसा उडी घाली । पेटत्या आर्गांत । भोग व्हावे प्राप्त । म्हणोनि जो ॥११८९॥  
 भोगासक्ति हें तों । मानी ना दूषण । मिरवी भूषण । व्यसनाचें ॥११९०॥  
 होय उरस्फोट । तरी धावूं लागे । मृगजळामार्गे । मृग जैसा ॥११९१॥  
 जन्मापासोनियां । तैसा मृत्युवेरीं । कष्टला संसारीं । भोगांसाठीं ॥११९२॥  
 तरी विषयांचा । घेई ना उबग । धरी अनुराग । आणखीं च ॥११९३॥  
 वाळपणामार्जी । मायबापाचें च । वेड असे साच । त्यालागीं ॥११९४॥

मग तारुण्यांत । स्त्रियेसी भुलोन । जातसे रंगोन । भोगांमार्जी ॥११९५॥  
 लोपतां तारुण्य । येतां वृद्धपण । मानी जीवप्राण । मुलेंबाळें ॥११९६॥  
 अंध अपत्यासी । माता जपे जैसी । तैसा लेंकरासी । विमंबे ना ॥११९७॥  
 ऐसा मायापाशीं । मरे वायां परी । घेई ना शिसारी । विषयांची ॥११९८॥  
 तयाचिया ठायीं । धनंजया जाण । अपार अज्ञान । वाम करी ॥११९९॥  
 असो आतां चित्त । देवोनियां ऐक । लक्षणें आणिक । सांगूं तुज ॥१२००॥  
 देह हा चि आत्मा । ऐमा मनोधर्म । बाळगोनि कर्म । आरंभी जो ॥१२०१॥  
 उणें पुरें कर्म । आचरे जें काहीं । तयाचा जो वाही । हर्ष-खेद ॥१२०२॥  
 गर्वें डोईवरी । आपुलें दैवत । घेवोनि भगत । घुमे जैसा ॥१२०३॥  
 तैसा तारुण्यांत । विद्येनें उन्मत्त । होवोनि चालत । उताणा जो ॥१२०४॥  
 म्हणे मी च एक । संपन्न श्रीमंत । माझी चालरीत । आहे कोणा ? ॥१२०५॥  
 जर्गी मी च एक । सर्वांहून श्रेष्ठ । सर्वज्ञ विख्यात । मी च एक ॥१२०६॥  
 सर्व हि गोष्टींचा । ऐमा गर्व वाहे । गर्व हा चि आहे । रोग जया ॥१२०७॥  
 जैसा कोणी एक । व्याधिग्रस्त झाला । साहे ना तयाला । भोग-वार्ता ॥१२०८॥  
 तैसें जयालागीं । आणिकांचें साच । चांगलें काहीं च । पहावे ना ॥१२०९॥  
 स्नेहामी जाळून-भक्षितसे गुण । काजळी निर्माण । करी ठायीं ॥१२१०॥  
 करी तिडतिड । शिंपितां जीवन । जातसे विज्ञान । विंजण्यानें ॥१२११॥  
 स्पर्श होतां सर्व । जाळोनियां टाकी । तृण तें हि बाकी । उरूं नदी ॥१२१२॥  
 प्रकाश तो अल्प । ताप चि अपार । देतसे साचार । दीप जैसा ॥१२१३॥  
 तैमी विद्या थोडी । परी गर्व फार । दोषां पारावार । नाही ज्याच्या ॥१२१४॥  
 औषध म्हणोनि । दिलें दूध तरी । जैसें नवज्वरीं । मारक तें ॥१२१५॥  
 ना तरी तें दूध । पाजिलें मर्पातें । तरी विष होतें । उलटोनी ॥१२१६॥  
 तैसा सदुणांचा । करी जो मत्सर । जया अहंकार । पांडित्याचा ॥१२१७॥  
 गिळावा धारण । अजरें जैसा । चढे ताठा तैसा । तपोज्ञानें ॥१२१८॥  
 किंवा राज्यपदीं । बैमविला हीन । जातमे चढोन । तैसा गर्वें ॥१२१९॥

ठाउकें नाहीं च । जया नम्र होणें । जैसें कीं लाटणें । तैसा ताठ ॥१२२०॥  
 दगडासी जैसा । फुटे ना पाझर । तैसा जो निण्डुर । दयाहीन ॥१२२१॥  
 गारुड्यासी जैसा । नावरावा सर्प । तैसा जया 'दर्प' । अनिवार ॥१२२२॥  
 तथाचिया ठायीं । वाढलें अज्ञान । सांगतो 'निश्चून' । तुज ऐसें ॥१२२३॥  
 मागील जन्माचें । करी ना स्मरण । जाय जो गुंतून । 'देह-गेहीं' ॥१२२४॥  
 कृतघ्नासी जैसें । केलें उपकृत । किंवा दिलें 'वित्त' । चोराहार्तां ॥१२२५॥  
 वाखाणिलें जरी । निर्लज्जालागोन । तरी विसरोन । जाय जैसा ॥१२२६॥  
 ओढाळ म्हणोन । कापोनियां कान । दिलें घालवोन । श्वानालागीं ॥१२२७॥  
 तरी हालवीत । आपुलें शेंपूट । येई तें लोंचट । परतोनि ॥१२२८॥  
 सापाचिया तोंडीं । जातसे बेडूक । परी इच्छी देख । 'मक्षिकेतें' ॥१२२९॥  
 ओढवलें आतां । आपुलें मरण । नाहीं च हें भान । तयालागीं ॥१२३०॥  
 तैसें आलें कुष्ठ । शरीरीं भरोन । पाझरते घाण । नव-द्वारीं ॥१२३१॥  
 जेणें जन्में ऐसी । प्राप्त झाली स्थिति । तथाची विस्मृति । पडे ज्यासी ॥१२३२॥  
 मातेचिया गर्भीं । नऊ मासवेरीं । उकडला जरी । मळ-मूर्त्रीं ॥१२३३॥  
 तरी नाठवी जो । तेथील ती व्यथा । नाठवी सर्वथा । जन्मदुःख ॥१२३४॥  
 देखे बाळकांतें । मातेचिया अंकीं । मळमूत्र-पंकीं । लोळतांना ॥१२३५॥  
 तरी तें देखोन । येईना चिळस । वाटे चि ना त्रास । जयालागीं ॥१२३६॥  
 मागील तो जन्म । संपोनियां गेला । आतां पुढें आला । नवा जन्म ॥१२३७॥  
 परी मनीं ह्याचा । करी ना विचार । गुंतोनि असार । संसारांत ॥१२३८॥  
 तारुण्याचे भरीं । भरोनियां पाहीं । करी ना जो काहीं । मृत्यु-चिंता ॥१२३९॥  
 आपुलें आयुष्य । टिकेल ऐसें च । ऐसा धरी साच । भरंवसा ॥१२४०॥  
 पुढें आपणांसी । येईल मरण । नाहीं च हें भान । जयालागीं ॥१२४१॥  
 नाहीं च येथील । आटणार पाणी । ऐसी बाळगोनी । दृढ आशा ॥१२४२॥  
 'अल्पोदकांतील' । मासा जैसा मग । शिरे ना अथांग । डोहामार्जी ॥१२४३॥  
 ना तरी एकोन । पारध्याचें गान । जातसे भुलोण । मृग जैसा ॥१२४४॥

किंवा जळीं मासा । न पाहतां गळ । 'आमिष-कवळ । गिळी जैसा ॥१२४५॥  
 ना तरी पतंग । जैसा घाली झेप । जाळील प्रदीप । नेणोनि हें ॥१२४६॥  
 घरा लागे आग । परी तें ना देखे । जैसा निद्रासुखें । महामूर्ख ॥१२४७॥  
 ना तरी विषान्न । नेणोनियां कोणी । खादाड भोजनीं । 'प्रवर्त गा ॥१२४८॥  
 तैसा प्राप्त झाला । मृत्यु चि हा येथ । करोनि निमित्त । जीविताचें ॥१२४९॥  
 परी पार्था हें तों । सर्वथा नेणोन । जाय जो भुलोण । भोग-सुखीं ॥१२५०॥  
 शरीराची वाढ । आयुष्याची जोड । भोग-सुख गोड । साच मानी ॥१२५१॥  
 वारांगना जैसी । सर्वस्वीं आपण । करी समर्पण । वरकांतीं ॥१२५२॥  
 तैसीं भोग-सुखें । नागविती पाहें । परी जाण ना हें । बापुडा जो ॥१२५३॥  
 सावचोर मैत्री । दावी वरीवरी । परी तो अंतरीं । घात चिती ॥१२५४॥  
 किंवा मृत्तिकेच्या । चित्रालागीं जाण । घालणें जें स्नान । तो चि नाश ॥१२५५॥  
 ना तरी शरीर । पंडु-रोंगें पुष्ट । परी जाण वाट । मृत्यूची ती ॥१२५६॥  
 तैसी भोग-वृद्धि । निद्राहारादिक । सर्वथा घातक । होय जीवा ॥१२५७॥  
 परी भुलोनिऱ्यां । नेणे चि हें काहीं । सर्वदा जो राही । भोगासक्त ॥१२५८॥  
 मृत्यु ये समीप । पाउलागणिक । सुळाकडे देख । धांव घेतां ॥१२५९॥  
 तैसा देह जो जों । वाढत हा जाय । वृद्धिंगत होय । आयुष्य हें ॥१२६०॥  
 जो जों भोग-वृद्धि । तों तों पार्था जाण । जिंकील मरण । जीवितामी ॥१२६१॥  
 उदकीं लवण । विरघळे जैमें । नाश पावे तैमें । आयुष्य तें ॥१२६२॥  
 घेवोनि जाईल । काळ हातोहात । परी हें कळत । नाही ज्यासी ॥१२६३॥  
 काय सांगूं फार । भोगांतें भुलोण । देखे ना मरण । नित्य नवें ॥१२६४॥  
 जाण तयाहातीं । आलें अज्ञानाचें । राज्यपद माचें । महाबाहो ॥१२६५॥  
 जीवनाच्या सुखीं । सर्वथा रंगोन । ठेवी ना स्मरण । मरणाचें ॥१२६६॥  
 तेविं तारुण्याच्या । भरामार्जी येतां । करी ना जो चिंता । वार्धभ्याची ॥१२६७॥  
 कड्यावरोनिऱ्यां । लोटला जो गाडा । सुटला कीं धोंडा । शिखरींचा ॥१२६८॥  
 सर्वथा पुढील । देखे ना काहीं च । तैमें नेणे माच । वार्धक्य जो ॥१२६९॥

किंवा धनंजया । ओहळ्यासी रानीं । आलें जैसे पाणी । एकाएकीं ॥१२७०॥  
 मत्त-महिषांचें । मातलें कीं झुज । तैसा चढे माज । तारुण्याचा ॥१२७१॥  
 परी शरीराची । होवोनियां झीज । ओसरेल तेज । वृद्धपर्णी ॥१२७२॥  
 कांपरें सुटेल । क्षीण मस्तकास । पिकतील केंस । दाढीचे हि ॥१२७३॥  
 नन्नाचा च पाढा । गिरवील जाण । हालोनियां मान । लटलटां ॥१२७४॥  
 परी हें आधीं च । चिंती ना जो कांहीं । वाढवीत जाई । मायामोह ॥१२७५॥  
 आदळेल उरीं । पुढील जांवरी । कळे ना तोंवरी । आंधळ्यासी ॥१२७६॥  
 किंवा सुखें जैमा । आळशी तो लोळे । जरी गेले डोळे । चिकटोन ॥१२७७॥  
 तैसा जो पुढील । वार्धक्य न देखे । घेतां भोग-सुखें । तारुण्यांत ॥१२७८॥  
 पार्था मूर्तिमंत । अज्ञान तो साच । संशय नाहीं च । तिळमात्र ॥१२७९॥  
 दुर्बळ अपंग । दृष्टी पडे जरी । गवें त्याचा करी । उपहास ॥१२८०॥  
 परी म्हणे ना जो । माझी हि ऐमी च । पुढें दशा साच । होईल गा ॥१२८१॥  
 मृत्यूची जी खूण । ऐसें वृद्धपण । शरीरीं दर्शन । जरी त्याचें ॥१२८२॥  
 तरी तारुण्याची । फिटे च ना भ्रांति । तो चि साच मूर्ति । अज्ञानाची ॥१२८३॥  
 आतां मुख्य मुख्य । लक्षणें आणिक । धनंजया ऐक । सांगूं तुज ॥१२८४॥  
 आला वाधाचिया । रानांतूनि पोळ । दैवें एकवेळ । चरोनियां ॥१२८५॥  
 म्हणोनियां त्या ठायीं । चरोनि विश्वास । पुन्हां चरायास । धावे जैसा ॥१२८६॥  
 किंवा एकवेळ । सर्प-बिळांतून । काढिली ओढून । धनराशि ॥१२८७॥  
 म्हणोनियां कोणी । होवोनि नास्तिक । ओढाया आणिक । पाहे जैसा ॥१२८८॥  
 तैसें निरंतर । आपुलें शरीर । निरोगी साचार । राहिल हें ॥१२८९॥  
 ऐसा भ्रंवसा । बांधोनियां चिंती । बाळगी ना क्षिती । रोगाची जो ॥१२९०॥  
 शत्रु निद्राधीन । ऐसें विलोकून । म्हणे जो संपून । गेलें वैर ॥१२९१॥  
 तथाचा विनाश । ओढवला निका । पुत्रपौत्रादिकां-न समवेत ॥१२९२॥  
 तैसें खाणें पिणें । झोंपणें समस्त । चाले यथास्थित । जोवरी गा ॥१२९३॥  
 जोवरी आरोग्य । नांदतें शरीरीं । करी ना तोंवरी । व्याधि-चिंता ॥१२९४॥

'दारा पुत्र वित्त। जोडलीं समस्त। म्हणोनि उन्मत। होय जो का ॥१२९५॥  
 'वियोगें तत्काळ। परी जें घडेल। दुःख तें पुढील। देखे ना जो ॥१२९६॥  
 जाण धनुर्धरा। अज्ञानी तो पुरा। ऐसीं चिन्हें घरा। आलीं ज्याच्या ॥१२९७॥  
 आणि तो हि पार्था। अज्ञानी च जाण। जयाचें वर्तन। 'स्वैर असे ॥१२९८॥  
 धन-यौवनाच्या। धुंदीमार्जां पाहीं। सेव्यासेव्य कांहीं। पाहे ना जो ॥१२९९॥  
 करूं नये तें तें। आवडीनें करी। मनीं गोष्टी धरी। 'असंभाव्य ॥१३००॥  
 ज्याची मति चिंती। चिंतूं नये तें तें। रिघूं नये तेथें। 'रिघे जो का ॥१३०१॥  
 अंगें मनें जेथें। स्पर्शू नये साच। भिडोनि तेथें च। राहे जो का ॥१३०२॥  
 आणि मागूं लागे। घेऊं नये तें तें। जाऊं नये तेथें। जाय जो का ॥१३०३॥  
 पाहूं नये तें तें। पाहता जो होय। न खावें तें खाय। आवडीनें ॥१३०४॥  
 नाचरावा तो चि। आचरे जो मार्ग। धरूं नये संग। तो चि धरी ॥१३०५॥  
 आपला संबंध। अमूं नये जेथें। चिकटोनि तेथें। राहे जो का ॥१३०६॥  
 ऐकूं नये कार्णा। तें तें चि जो एके। बोलूं नये मुखें। तें तें बोले ॥१३०७॥  
 परी घडतील। दोष जे साचार। तयांचा विचार। करी ना जो ॥१३०८॥  
 मना-इंद्रियांसी। रुचेल तें घेई। कृत्याकृत्य कांहीं। पाहे ना जो ॥१३०९॥  
 करावें म्हणोन। करी भलतें च। पुढील कांहीं च। देखे ना जो ॥१३१०॥  
 पापाचा विचार। आणी ना जो मना। दुःमह यातना। नरकींच्या ॥१३११॥  
 त्याचा आश्रय। घेवोनि अज्ञान। बलाढ्य होवोन। राहे जर्गी ॥१३१२॥  
 मग मज्जानाच्या। संगें श्रावूं पाहे। परी किरीटी हें। असो आतां ॥१३१३॥  
 लक्षणें आणिक। सांगेन मी येथ। जेणें तें यथार्थ। जाणवेल ॥१३१४॥  
 नव सुगंधित। परागाचे ठायीं। भ्रमरी ती होई। लुब्ध जैसी ॥१३१५॥  
 तैसी गृहादिक। परिवारीं पाहीं। गुंतोनियां राही। माया ज्याची ॥१३१६॥  
 किंवा साखरेच्या। राशीवरी जैसी। बैसली ती माशी। उठे चि ना ॥१३१७॥  
 स्त्रियेचिया ठायीं। तैशापरी चित्त। जाहलें आसक्त। जयाचें गा ॥१३१८॥  
 बेडूक तो जैसा। सोडी ना कूपास। अडकला डांस। शेंबुडांत ॥१३१९॥

किंवा घनदाट । 'कर्दमांत जैसे । रूतोनियां बैसे । गुरूंदोर ॥१३२०॥  
 तैसें घरांतून । जीवें मनें प्राणें । नाहीं च निघणें । जयालागीं ॥१३२१॥  
 गेला जीव तरी । सोडी ना 'सदन । 'भुजंग होवोन । राहे तेंयें ॥१३२२॥  
 प्रियामी आळिंगी । तरुणांगी जैसी । घरावरी तैसी । प्रीति ज्याची ॥१३२३॥  
 मेळवाया मध । जैसी मधमाशी । नाना कष्ट सोशी । दिनरात ॥१३२४॥  
 तैसीं नानाविध । संकटें सोमून । करी संरक्षण । घराचें जो ॥१३२५॥  
 वृद्धपर्णीं झालें । एकुलतें एक । त्याचें कौतुक । मायबापां ॥१३२६॥  
 तैशापरी प्रीति । तैशी च ती आस्था । घरीं दारीं पार्था । असे ज्याची ॥१३२७॥  
 माझी माझी ऐसें । स्त्रियेसी जो म्हणे । तिजविण नेणे । दुजें कांहीं ॥१३२८॥  
 ज्ञानियाचें चित्त । ब्रह्मीं होतां लीन । कर्मी उदासीन । राहे जैसा ॥१३२९॥  
 तैमा जीवेंभावें । स्त्री-देहीं रंगोन । विसरे जो 'भान । कर्तव्याचें ॥१३३०॥  
 नाहीं जया लाज । देखे ना जो हानि । एके ना जो कार्नी । लोकनिंदा ॥१३३१॥  
 काया-वाचा-मनें । स्त्रियेच्या ठायीं । जडोनि जो राहीं । परिपूर्ण ॥१३३२॥  
 स्त्रियेसी आपुलें । मानोनि दैवत । नित्य आराधीत । तियेसी च ॥१३३३॥  
 स्त्रियेच्या छंदें । भुलोनि जो नाचे । जणूं गारुड्याचें । माकड चि ॥१३३४॥  
 शिणोनि कृपण । वाढवितो धन । दुखवोनि जन । इष्ट मित्र ॥१३३५॥  
 तैसी कुटुंबाची । करोनि 'वंचना । कांहीं च करी ना । दान-पुण्य ॥१३३६॥  
 परी स्त्रियेलागीं । सर्वस्व अर्पोन । पडूं नेदी न्यून । कांहींएक ॥१३३७॥  
 वाहोनियां 'नाम-मात्र गंधाक्षत । करी समजूत । देवतांची ॥१३३८॥  
 वंचितो गुरुतें । देवोनियां थापा । दावी मायपाबां । दरिद्रता ॥१३३९॥  
 परी स्त्रियेसाठीं । सर्व भोगैश्वर्य । मेळविता होय । नानापरी ॥१३४०॥  
 दिसेल जी वस्तु । चांगली म्हणोन । देई ती आणोन । स्त्रियेसी च ॥१३४१॥  
 भजे तियेसी च । लावोनियां चित्त । भावें जैसा भक्त । दैवतासी ॥१३४२॥  
 जें जें कांहीं साच । मौल्यवान चोख । तें तें अर्पी देख । स्त्रियेसी च ॥१३४३॥  
 परी आणिकांसी । अन्न वस्त्र तें हि । मिळे किंवा नाहीं । देखे ना हें ॥१३४४॥



वांकडी नजर । करोनि पाहील । तिज विरोधील । कोणी जरी ॥१३४५॥  
 तरी ओढवला । कल्पान्त-समय । ऐसा खेद होय । जयालागीं १३४६॥  
 देवीची शपथ । मोडिती ना कोणी । भय बाळगोनि । नायट्याचें ॥१३४७॥  
 तैसें बाइलेचें । पाळी मनोगत । मानोनि दैवत । तियेसी च ॥१३४८॥  
 काय सांगूं फार । तुज धनंजया । स्त्री चि वाटे जया । सर्वस्व गा ॥१३४९॥  
 आणि तियेलागीं । अपत्यें जीं झालीं । प्रेमें कवटाळी । तयांमी जो ॥१३५०॥  
 आणिक हि जी जी । तियेची संपत्ति । प्रिय मानी ती ती । जीवाहूनि ॥१३५१॥  
 अर्जुना तो जाण । अज्ञानासी मूळ । अज्ञान सबळ । तेणें योगें ॥१३५२॥  
 आतां तुजलागीं । फार सांगूं काय । मूर्ति च तो होय । अज्ञानाची ॥१३५३॥  
 क्षुब्ध सागरांत । सांपडली नौका । घेई जैसी झोंका । लाटांसंगें ॥१३५४॥  
 तैसी इष्ट वस्तु । प्राप्त होतां जाण । जाय फुशारोन । हर्षभरें ॥१३५५॥  
 परी अनिष्टाचें । होतां आगमन । दुःखें आदळोन । पडे खालीं ॥१३५६॥  
 वाहे सुखदुःख-चिंता ऐसी चितीं । अर्जुना तो मूर्ति । अज्ञानाची ॥१३५७॥  
 द्रव्यलाभासाठीं । विरक्तीचें सांग । आणाचें गा चांग । जैशा रीती ॥१३५८॥  
 तैसी फळाकांक्षा । ठेवोनि उत्कट । नटे माझा भक्त । होवोनि जो ॥१३५९॥  
 जाणिणी कीं जैसी । राखे पति-चित्त । व्हावयासी रत । जारासंगें ॥१३६०॥  
 तैसे कामभोग । इच्छूनियां मनीं । माझिया भजनीं । लागला जो ॥१३६१॥  
 मग इष्टभोग । न पावतां जाण । नास्तिक बनोन । सांडी भक्ति ॥१३६२॥  
 नापीक म्हणोन । नित्य नवें शेत । वाहे कुणवट । मतिमंद ॥१३६३॥  
 तैसा रोज रोज । नव्या नव्या देवां । मांडोनियां सेवा । करी त्यांची ॥१३६४॥  
 तो चि संप्रदाय । सुखें अंगीकारी । जेथें देखे भारी । धाटमाट ॥१३६५॥  
 तया गुरूचा च । घेई गुरू-मंत्र । परी इतरत्र । विचारीना ॥१३६६॥  
 पाषाण-पूजनीं । देवोनियां भर । होय जो निष्ठुर । भूतमात्रीं ॥१३६७॥  
 तेविं धनंजया । जयाचिया ठायीं । भाव भक्ति नाहीं । एकनिष्ठ ॥१३६८॥  
 घडवोनि माझी । मूर्ति शोभिवंत । घरीं कोनाड्यांत । ठेवोनि ती ॥१३६९॥

देवदेवतांची । मग भेट घ्याया । निघे जो कराया । तीर्थयात्रा ॥१३७०॥  
 कुळदैवताचें । प्रसंगें पूजन । जरी आराधन । सदा माझे ॥१३७१॥  
 परी \*पर्वकाल । पावतां विशेष । अन्य दैवतांस । पूजी जो का ॥१३७२॥  
 अन्य दैवतांची । करी व्रत सेवा । घरीं मज देवा । स्थापोनियां ॥१३७३॥  
 श्राद्धादिक प्राप्त । होतां पितृ-कार्य । सर्वथैव होय । पितरांचा ॥१३७४॥  
 येतां एकादशी । होय माझा दास । करी पंचमीस । नाग-पूजा ॥१३७५॥  
 परी चतुर्थास । गणेशाचा भक्त । होवोनि दैवत । तें चि पूजी ॥१३७६॥  
 चतुर्दशी येतां । तुझा चि मी दुर्गे । ऐसें म्हणूं लागे । एकाएकीं ॥१३७७॥  
 नित्य नैमित्तिक । कमें सांडोनियां । बैसे करावया । नवचंडी ॥१३७८॥  
 आदित्याच्या वारीं । करोनि खिचडी । भैरवामी वाढी । खापरांत ॥१३७९॥  
 येतां सोमवार । बिल्वदळीं मग । धांवे शिवलिंग । पूजावया ॥१३८०॥  
 ऐशा परी पार्था । पूजी सर्व देव । परी नाहीं भाव । एकनिष्ठ ॥१३८१॥  
 एकला चि परी । उगा नोहे क्षण । अखंड भजन । करी ऐसें ॥१३८२॥  
 बैसे गांव-द्वारीं । वारांगना जैसी । जाण भक्ति तैसी । तयाची गा ॥१३८३॥  
 सर्वथा तो पार्था । अज्ञानाची मूर्ति । व्यभिचारी भक्ति । ऐसी ज्याची ॥१३८४॥  
 तपोवनें तीर्थें । किंवा नदी-तट । निर्मळ एकान्त । देखोनियां ॥१३८५॥  
 जयाचें गा मन । जातसे विट्टन । तो हि तो चि जाण । पंडु-सुता ॥१३८६॥  
 लोकसमाजाची । सर्वथा आवड । गजबज गोड । वाटे जया ॥१३८७॥  
 लौकिक गोष्टींची । गात बैसे स्तुति । तो हि पार्था मूर्ति । अज्ञानाची ॥१३८८॥  
 आणि जेणें होय । आत्म-साक्षात्कार । ऐसी जी साचार । ब्रह्म-विद्या ॥१३८९॥  
 ऐकोनि ती गवें । करी उपहास । दावोनि प्रकर्ष । पांडित्याचा ॥१३९०॥  
 उपनिषदांचा । नाहीं च अभ्यास । नावडे जयास । योग-शास्त्र ॥१३९१॥  
 जयाचें गा मन । धांवे वणवण । अध्यात्माचें ज्ञान । डावलोनि ॥१३९२॥  
 आत्मनिरूपण । म्हणोनि जें कांहीं । तयाचें नांव हि । उच्चारी ना ॥१३९३॥  
 म्हणोनि जयाची । मति बारा वाटे । फुटोनियां फांटे । धांवे स्वै ॥१३९४॥

१ पूर्णपणे; सर्व प्रकारे. २ एकाच ठिकाणीं श्रद्धा नसलेली. ३ चेष्टा; निंदा. ४ उत्कर्ष; आधिक्य; भर.  
 अ. ज्ञा. २७

कर्मकांड जाणे । पढला पुराणें । ज्योतिषी तो म्हणे । तैसें होय ॥१३९५॥  
 कलाकौशल्यांत । अत्यंत निपुण । होय जो प्रवीण । पाकशास्त्रीं ॥१३९६॥  
 जारण-मारण- उच्चाटनादिक । मंत्र तंत्र देख । हार्ती ज्याच्या ॥१३९७॥  
 'कोकशास्त्र पूर्ण । जाणोनि घेतलें । ग्रंथ पाठ केले । भारतादि ॥१३९८॥  
 जयापुढें सर्व । शास्त्रें मूर्तिमंत । जोडोनियां हात । उर्मी ठेलीं ॥१३९९॥  
 जया नीतिशास्त्र । झालें अवगत । जाणे जो समस्त । वैद्यक हि ॥१४००॥  
 धजे ना कोणी हि । धरावया हात । काव्य-नाटकांत । जयाचा गा ॥१४०१॥  
 स्मृतींचा विचार । ठाउका सकळ । जाणे इंद्रजाल-विद्या ती हि ॥१४०२॥  
 'निघंटु म्हणोन । जो का शब्दकोश । तयाचा अभ्यास । पूर्ण ज्याचा ॥१४०३॥  
 न्याय-व्याकरणीं । पांडित्य अगाध । परी जो जन्मांध । आत्मज्ञानी ॥१४०४॥  
 एक आत्मज्ञाना- । वांचोनि इतर । शास्त्रांसी आधार । सकळ जो ॥१४०५॥  
 परी तयाचें तें । जळो शास्त्र-ज्ञान । जन्मलें संतान । मूर्खीं जैसें ॥१४०६॥  
 नको पाहूं पार्था । हुंकोनि हि तेथे । व्यर्थ घेवोनि तें । काय लाभ ॥१४०७॥  
 मोरपिमान्यांत । ठाई ठाई डोळे । परी ते आंधळे । दृष्टीविण ॥१४०८॥  
 तैसें शास्त्र-ज्ञान । तयांचें तें जाण । आत्मज्ञानाविण । आंधळें गा ॥१४०९॥  
 पार्था परमाणु- । एवढें केवळ । 'संजीवनीमूळ । जोडे जरी ॥१४१०॥  
 तरी बहु काय । गाडे भरोनियां । वनस्पती वायां । आणिक त्या ॥१४११॥  
 सर्व सामुद्रिक । लक्षणें सुरेख । परी नाहीं 'रेख । आयुष्याची ॥१४१२॥  
 किंवा धडासी च । घालोनि भूषणें । जैसें शोभविणें । शिराविण ॥१४१३॥  
 वधूवराविण । काढणें वरात । तरी ती निभ्रांत । विटंबना ॥१४१४॥  
 तैसीं अप्रमाण । सर्व शास्त्रें जाण । एक आत्मज्ञान । नाहीं जरी ॥१४१५॥  
 म्हणोनि अध्यात्म- । ज्ञानाचिया ठायीं । जया मूढा नाहीं । नित्यबोध ॥१४१६॥  
 तयाचें शरीर । जाण पार्था भलें । बीज अंकुलें । अज्ञानाचें ॥१४१७॥  
 आणि तयांची ती । विद्वत्ता हि भली । विस्तारली वेलीं । अज्ञानाच्या ॥१४१८॥  
 मुखें जें जें काहीं । शास्त्रवाक्य बोले । अज्ञान तें आलें । फुलोनियां ॥१४१९॥

आणि करी जें जें । पुण्य-कर्म काहीं । अज्ञान तें पाहीं । फळा आलें ॥१४२०॥  
 म्हणोनि जो कोणी । मानी ना अध्यात्म । तथा ज्ञान-वर्म । आकळे ना ॥१४२१॥  
 बोलोनि हें काय । हवें दाखवाया । भलें धनजया । जाणसी तूं ॥१४२२॥  
 'एल तीराआधीं । घेई जो माधार । तथा पैल तीर । भेटे कैसें ॥१४२३॥  
 ना तरी दारीं च । मस्तक तोडोन । ठेविलें पुरोन । जयाचें गा ॥१४२४॥  
 तथासी पांडवा । घरांतील ठेवा । दिसावा केधवां । कैसा सांगें ॥१४२५॥  
 तैसें जया नाहीं । अध्यात्माचें ज्ञान । तत्त्वार्थ गहन । देखे ना तो ॥१४२६॥  
 आतां विशेषें हें । आंकडे मांडोन । द्यावें पटवोन । ऐसें नाहीं ॥१४२७॥  
 गर्भवतीलागीं । वाढितां भोजन । सहजें पोषण । गर्भस्थाचें ॥१४२८॥  
 तैसें मागें केलें । ज्ञान-निरूपण । तेव्हां चि अज्ञान । कळों आलें ॥१४२९॥  
 आंधळ्यासी करूं । जातां आमंत्रण । संगें तो घेवोन । येई दुजा ॥१४३०॥  
 तैसें निरूपितां । ज्ञानाचें लक्षण । कासया व्याख्यान । अज्ञानाचें ॥१४३१॥  
 अमानित्वादिक । लक्षणें मागुतीं । ऐसीं उफराटीं । करोनियां ॥१४३२॥  
 निरोपिलीं येथें । अज्ञान-लक्षणें । ज्ञानदेव म्हणे । निवृत्तीचा ॥१४३३॥  
 ज्ञान-पदें ऐसीं । सांगतां उलट । अज्ञान तें स्पष्ट । स्वभावे चि ॥१४३४॥  
 मागां श्लोक-पादें । बोलिलें मुकुंदें । पार्था ज्ञान-पदें । अठरा हीं ॥१४३५॥  
 करोनि उलट । न्याहाळिलीं जरी । सिद्धि होय तरी । अज्ञानाची ॥१४३६॥  
 म्हणोनि मी ऐमें । विस्तारेंकरोन । केलें निरूपण । अज्ञानाचें ॥१४३७॥  
 मिसळोनि पाणी । वाढविती दूध । तैसी बडबड । नव्हे माझी ॥१४३८॥  
 श्लोकपदें पूर्ण । घेवोनियां ध्यानीं । सीमा नोलांडोनि । लेशमात्र ॥१४३९॥  
 मूळ अभिप्राय । करावया स्पष्ट । केवळ निमित्त । जाहलों मी ॥१४४०॥  
 तंव श्रोतेजन । बोलती साचार । प्रेमें मज धीर । देवोनियां ॥१४४१॥  
 कवि-पोषका तूं । भितोसि कां वायां । नको ऐसा द्याया । परिहार ॥१४४२॥  
 आम्ही गीतारूप । गुहेमार्जी भले । गुप्त जे ठेविले । अभिप्राय ॥१४४३॥  
 ते तुवां यथार्थ । करावे प्रकट । बोलिला श्रीकांत । ऐसें तुज ॥१४४४॥

तें चि मनोगत । तयाचें 'प्रस्तुत । आम्हां मूर्तिमंत । दावितोसी ॥१४४५॥  
 ऐसें म्हणूं तरी । ज्ञानदेवा झण्णीं । येईल दाटोनि । चित्त तुझे ॥१४४६॥  
 म्हणोनि हें राहो । न बोलूं आणिक । संतोषलों देख । स्वभावे चि ॥१४४७॥  
 आजि आम्हांलागीं । श्रवण-सुखाची । ज्ञाननौका साची । जोडली गा ॥१४४८॥  
 तरी ह्यावरी जें । बोलिला श्रीहरी । तें चि झडकरी । सांग आतां ॥१४४९॥  
 संतांचें हें वाक्य । पडतां चि कार्णीं । म्हणे उल्हासोनि । ज्ञानदेव ॥१४५०॥  
 अहो श्रोतेजन । ऐका सावधान । देव तो श्रीकृष्ण । काय बोले ॥१४५१॥  
 म्हणे ऐकलीस । लक्षणें जीं आतां । जाण तीं सर्वथा । अज्ञानाचीं ॥१४५२॥  
 अज्ञान विभाग । सांडोनि हा पाठीं । देई दृढ मिठी । ज्ञानासी च ॥१४५३॥  
 तया शुद्ध ज्ञानें । मग पार्था तुज । भेटेल सहज । ज्ञेय वस्तु ॥१४५४॥  
 एकोनि हें पार्थें । ज्ञेय-स्वरूपाम । जाणावया 'आस । केली जेव्हां ॥१४५५॥  
 तेव्हां तयाचा तो । ओळखोनि भाव । सर्वज्ञांचा राव । काय बोले ॥१४५६॥  
 म्हणे पार्था ऐक । तत्त्वतां जें ज्ञेय । तयाचा 'आशय । सांगूं आतां ॥१४५७॥

ज्ञेयं यत्तन्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते ।

अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥१२॥

एवढ्याचि साठीं । ब्रह्मालागीं पार्था । बोलती सर्वथा । ज्ञेय ऐसें ॥१४५८॥  
 कीं जें ज्ञानाविण । कोणें हि उपायें । माच हाता न ये । कदा कार्ळी ॥१४५९॥  
 जाणतां जें कांहीं । उरें चि ना कार्य । जेथें ज्ञाता होय । ज्ञेयरूप ॥१४६०॥  
 जाणतां जें जीवें । प्रपंच सांडोन । सुखें व्हावें लीन । नित्यानंदीं ॥१४६१॥  
 ज्ञेय तें गा ऐसें । जया नसे आदि । प्रपंच उपाधि- । रहित जें ॥१४६२॥  
 जया स्वभावे चि । परब्रह्म नांव । राहें 'भावाभाव । गिळोनि जें ॥१४६३॥  
 नाहीं म्हणूं तरी । विश्वाकारें तें च । भरोनियां साच । राहिलेंसे ॥१४६४॥  
 परी विश्व चि तें । ऐसें म्हणूं जावें । तरी हें आघवें । मायारूप ॥१४६५॥  
 पाहें धनंजया । रूप वर्ण व्यक्ति । 'दृश्य-द्रष्टा स्थिति । नाहीं जेथें ॥१४६६॥  
 तेथें कोणी कैसें । म्हणावें आहे च । आणि जरी साच । नाहीं म्हणूं ॥१४६७॥

तरी कोठें कैसा । 'महत्तत्त्वादिक । पसारा हा देख । स्फुरतमे ॥१४६८॥  
 तया ज्ञेयाविण । आणिक सहजें । असे काय दुजें । कोठें काहीं ॥१४६९॥  
 विचाराची वाट । खुंटोनियां जाय । वाचा मुकी होय । देखोनी जें ॥१४७०॥  
 डेऱ्या-गाडग्यांत । किंवा नाना घटीं । असे जैसी माती । तदाकारें ॥१४७१॥  
 तैसें सर्वरूपें । नटोनियां राहे । सर्वाठार्यां आहे । ज्ञेय जें का ॥१४७२॥

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।

सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वभाव्युन्य तिष्ठति ॥१३॥

जी का सर्वां देशीं । आणि सर्वां काळीं । न होतां वेगळी । तयाहून ॥१४७३॥  
 होय धनंजया । स्थूल-सूक्ष्मीं क्रिया । ते चि हात जया । ज्ञेयाचे गा ॥१४७४॥  
 म्हणोनि तयातें । \* 'विश्वबाहु' ऐसें । सार्थ नांव असे । लोकांमार्जी ॥१४७५॥  
 कीं जें सर्वकाळ । करी सर्व काहीं । सर्वपणें पाहीं । पंडु-सुता ॥१४७६॥  
 आणि 'विश्व-पाद' । हें हि नांव तया । सदा सर्वां ठायां । म्हणोनियां ॥१४७७॥  
 सूर्यालागीं जैसे । हात पाय डोळे । वेगळे वेगळे । नाहींत कीं ॥१४७८॥  
 सकळ स्वरूपें । तैसें सर्व पाहे । म्हणोनि जें आहे । सर्वदृष्टें ॥१४७९॥  
 ह्या चि लागीं वेद । तया अचक्षुसी । 'विश्वचक्षु' ऐसी । संज्ञा देई ॥१४८०॥  
 आणि सर्वपणें । जें का सर्वांपरी । नांदे शिरावरी । सर्वांचिया ॥१४८१॥  
 म्हणोनि अर्जुना । 'विश्वमूर्धा' हें हि । नांव देती पाहीं । जयालागीं ॥१४८२॥  
 अग्नीचें स्वरूप । तें चि अग्निमुख । अग्नीचिया देख । ठार्यां जैसें ॥१४८३॥  
 तैसें सर्वपणें । सर्वकाळ जाण । करी जें सेवन । सर्व काहीं ॥१४८४॥  
 म्हणोनि 'विश्वतो-मुख' ऐसें श्रुति । बोले जयाप्रति । धनुर्धरा ॥१४८५॥  
 वस्तुमात्रीं जैसें । आकाश संलग्न । तैसे जया कान । शब्दजातीं ॥१४८६॥  
 म्हणोनि सर्वत्र । ऐकतें तें तें च । असे सर्वां साच । आवरोनि ॥१४८७॥  
 ऐसी ज्ञेयाची ह्या । सर्वव्यापकता । कळावी तत्त्वतां । म्हणोनियां ॥१४८८॥  
 तया ज्ञेयालागीं । सर्वत्र हि डोळे । ऐसें श्रुति बोले । धनंजया ॥१४८९॥  
 सर्व शून्यासी तें । टाकितें गिळोन । अपुरें वर्णन । हें हि जेथें ॥१४९०॥

तेथें तयालागीं । नेत्र हात पाय । ऐसें कैसें काय । म्हणावें गा ॥१४९१॥  
 लाट लाटेसी च । 'ग्रासीतसे ऐसें । दृष्टीलागीं दिसे । जरी पार्था ॥१४९२॥  
 तरी ग्रासितें तें । सांगें ग्रासाहन । असे काय भिन्न । स्वरूपें गा ॥१४९३॥  
 तैमें असे जें का । एक चि तत्त्वतां । \*व्याप्यव्यापकता । तेथें कैची ॥१४९४॥  
 परी क्षणभरी । करावें लागे च । शब्दें खूण साच । दाखवाया ॥१४९५॥  
 दाखविती शून्य । 'बिंदुलें काढोन । पार्था तैसी खूण । अद्वैताची ॥१४९६॥  
 जरी शब्दें साच । दाखवाया जावें । तरी स्वीकारावें । लागे द्वैत ॥१४९७॥  
 ऐशा परी जरी । द्वैत स्वीकारून । अद्वैत-वर्णन । नाहीं केलें ॥१४९८॥  
 तरी गुरु-शिष्य- । संप्रदायीं 'खीळ । 'पडोनि खुंटेल । बोल सर्व ॥१४९९॥  
 म्हणोनियां वेदें । द्वैत स्वीकारून । केलें निरूपण । अद्वैताचें ॥१५००॥  
 तरी दृश्यजात । जें जें तया ठायीं । ज्ञेय कैसें राही । व्यापोनियां ॥१५०१॥  
 तें चि सांगूं आतां । तुजलागीं येथ । 'अवधारीं चित्त । देवोनियां ॥१५०२॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।

असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥१४॥

तरी पार्था जाण । ज्ञेय तें गा ऐसें । आकाश का जैसें । 'अवकाशीं ॥१५०३॥  
 किंवा वस्त्रामार्जी । होवोनियां वस्त्र । तंतु चि सर्वत्र । असे जैसा ॥१५०४॥  
 होवोनिया जळ । जळीं जैसा रस । दीपकीं प्रकाश । दीपपणें ॥१५०५॥  
 कापुरामाझारीं । होवोनि कापूर । मुगंध साचार । असे जैसा ॥१५०६॥  
 ना तरी शरीरीं । शरीर होवोन । राहते संपूर्ण । क्रिया जैसी ॥१५०७॥  
 सुवर्ण चि जैसें । सुवर्णाचा रवा । तैमें चि ह्या सर्वा । सर्वागीं जें ॥१५०८॥  
 रवेपणामार्जी । रवा ऐमें भासे । परी साच असे । सुवर्ण चि ॥१५०९॥  
 वांकडा प्रवाह । परी उजू पाणी । तप्त-लोहीं अग्नि । लोह नव्हे ॥१५१०॥  
 घटीं घटाकारें । वाटोळें गगन । करोनि चौकोन । मठीं राहे ॥१५११॥  
 परी घटीं मठीं । आकाश तें एक । आकार मायिक । भासमान ॥१५१२॥  
 तैसें विकारीं जें । विकारलें भासे । परी साच असे । अविकार ॥१५१३॥

मनादि इंद्रिये । सत्त्वादि त्रि-गुण । ह्यांचिया समान । वाटे जरी ॥१५१४॥  
 तरी गुळांतील । गोडीसी साचार । ढेपीचा आकार । नसे जैसा ॥१५१५॥  
 तैसें गुणेंद्रियां । असोनि तें नाहीं । त्याचिया ठायीं । त्रि-गुणादि ॥१५१६॥  
 क्षीरीं क्षीराकारें । असे घृत जरी । क्षीर चि तें परी । घृत नोहे ॥१५१७॥  
 तैसें विकारीं ह्या । असोनि साचार । नव्हे चि विकार । पांडवा जें ॥१५१८॥  
 वरी आकारासी । ' भोकर ' हें नांव । परी सर्वथैव । सोनें चि तें ॥१५१९॥  
 तैसें वेगळें चि । जाण धनंजया । ब्रह्म गुणेंद्रियां-। पासोनि हें ॥१५२०॥  
 आकारासी नाम-। रूपाचा संबंध । जाति क्रिया भेद । त्यासी च ॥१५२१॥  
 बोलणें हें नाहीं । ब्रह्मालागीं कांहीं । उघड हें पाहीं । धनंजया ॥१५२२॥  
 ब्रह्माचा तों नाहीं । गुणांशीं संबंध । ब्रह्म तें अभेद । गुणातीत ॥१५२३॥  
 परी हे त्रि-गुण । जाण धनंजया । ब्रह्माचिया ठायीं । आभासती ॥१५२४॥  
 ह्या चि लागीं ऐसें । वाटे अज्ञ जनां । ब्रह्म चि त्रि-गुणां । धरीतसे ॥१५२५॥  
 परी नभ जैसें । अभ्रासी आधार । आरसा साचार । प्रतिबिंबा ॥१५२६॥  
 किंवा सूर्याचिया । प्रतिमंडलातें । आधार तें होतें । जळ जैसें ॥१५२७॥  
 ना तरी आधार । रोहिणीलागोन । सूर्याचे किरण । होती जैसे ॥१५२८॥  
 तैसें करी जाण । गुणांतें धारण । संबंधावांचोन । निर्गुण हें ॥१५२९॥  
 परी धरी ऐसें । बोलणें हें वायां । अंगीकारोनियां । मिथ्या दृष्टि ॥१५३०॥  
 भगंगासी जैसा । स्वप्नीं राज्य-भोग । तैसा गुण-संग । निर्गुणासी ॥१५३१॥  
 म्हणोनि निर्गुण । ब्रह्मीं गुण-संग । किंवा गुण-भोग । बोलूं नये ॥१५३२॥

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।

सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥१५॥

पार्था चराचर । भूतांमार्जी पाहें । एक चि ती राहे । ब्रह्मवस्तु ॥१५३३॥  
 नाना ब्रह्मींमार्जी । एक चि उष्णता । अभेदें सर्वथा । असे जैसी ॥१५३४॥  
 तैसें सूक्ष्मपणें । व्यापोनि आर्षवें । अविनाश-भावे । राहे ब्रह्म ॥१५३५॥  
 आंत जें बाहेर । समीप जें दूर । एक चि साचार । दुजें नाहीं ॥१५३६॥



क्षीरसागराची । मध्ये फार गोडी । कांठापाशी थोडी । ऐसें नाहीं ॥१५३७॥  
 तयापरी जाण । सर्वांग-संपूर्ण । आघवे व्यापोन । राहिले जें ॥१५३८॥  
 स्वेदजादि भिन्न । जीवांचिया ठायीं । व्याप्तीलागीं नाहीं । न्यून जया ॥१५३९॥  
 नाना घटांमार्जी । चंद्रिका विंबोन । एक चि अभिन्न । राहे जैशी ॥१५४०॥  
 किंवा धनंजया । कोटी इक्षुदंडीं । एक चि ती गोडी । असे जैसी ॥१५४१॥  
 किंबहुना नाना । मिठाचिया कणां-। मार्जी क्षारपणा । एक जैसा ॥१५४२॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।

भूतभर्तुं च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥१६॥

तैसें नाना भूतां । व्यापोनि जें राहे । विश्व-कार्या आहे । कारण जें ॥१५४३॥  
 म्हणोनियां नाना । लाटांसी आधार । एकाचि सागर । होय जैसा ॥१५४४॥  
 तैसें भूताकारा । एक जें आश्रय । होय लोक-त्रय । जेथोनि हें ॥१५४५॥  
 बाल्य-तारुण्यादि । तिन्ही अवस्थांत । एक चि निभ्रांत । देह जैसा ॥१५४६॥  
 तैमें विश्वाचिया । आदि-स्थिति-लया-। मार्जी धनंजया । अखंड जें ॥१५४७॥  
 होतां जातां 'सायं-। प्रातर्मध्य दिन । जैसें का गगन । पालटेना ॥१५४८॥  
 विश्वात्पत्तीचिया-। वेळे 'प्रजापति' । ऐसें नांव देती । जयालागीं ॥१५४९॥  
 स्थितीचिया वेळे । 'विष्णु' ऐसें नांव । लयकार्ळीं 'शिव' । बोलती ज्या ॥१५५०॥  
 सत्त्व रज तम । ऐसे त्रि-गुण हे । गिळोनि जें राहे । शून्यपणें ॥१५५१॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।

ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितम् ॥१७॥

चंद्राचें जीवन । होय जें किराटी । जेणें लाभे दृष्टि । मूर्यासी हि ॥१५५२॥  
 जेणें तेजें चढे । महातेजा तेज । प्रकाश सहज । तारकांसी ॥१५५३॥  
 आदीची जें आदि । वृद्धीची जें वृद्धि । बुद्धीची जें बुद्धि । असे पार्था ॥१५५४॥  
 जीवाचा जें जीव । मनाचें जें मन । नेत्राचे नयन । असे जें का ॥१५५५॥  
 वाचेची कीं वाचा । कानाचे कीं कान । प्राणाचे हि प्राण । असे जें का ॥१५५६॥  
 जेणें क्रियेलागीं । घडे कर्तेपण । गतीचे चरण । असे जें का ॥१५५७॥

'आकारे आकार । विस्तारे विस्तार । संहारे संहार । 'जेणें योगें ॥१५५८॥  
 पृथ्वीची जें पृथ्वी । जळाचें जीवन । तेजाचें हि जाण । तेज जें का ॥१५५९॥  
 असे वायूचा हि । जें का श्वासोच्छ्वास । जें का 'अवकाश । आकाशाचा ॥१५६०॥  
 असो जेणें योगें । 'जगद्भास भासे । सर्वपणें असे । सर्वाठार्यां ॥१५६१॥  
 काय सांगूं फार । एक चि जें सर्व । द्वैतभावा ठाव । नाहीं जेथें ॥१५६२॥  
 देखतां जें आटे । दृश्य-द्रष्टा-भाव । एक होय सर्व । सामरम्यें ॥१५६३॥  
 मग तें चि होय । ज्ञान-ज्ञाता-ज्ञेय । ज्ञानें लाभे सोय । ती हि तें चि ॥१५६४॥  
 हिशेबाचें काम । संपतां चि जाण । अंक होती लीन । एकत्वांत ॥१५६५॥  
 साध्य-साधनादि । तैसें एक होई । जयाचिया ठार्यां । धनुर्धरा ॥१५६६॥  
 जयाचिया ठार्यां । द्वैत-वार्ता नाहीं । असें जें हृदर्यां । सर्वाचिया ॥१५६७॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।

मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥१८॥

असो-पार्था ऐसें । आधीं केलें जाण । क्षेत्र-निरूपण । स्पष्टपणें ॥१५६८॥  
 पाठीं तुज नाना । लक्षणें सांगून । ज्ञानाचें दर्शन । घडविलें ॥१५६९॥  
 मग तुझी बुद्धि । होवोनियां तृप्त । संतोषें म्हणत । पुरे ऐसें ॥१५७०॥  
 तोंवरी कौतुकें । वर्णिलें अज्ञान । विस्तारें करोन । पंडु-सुता ॥१५७१॥  
 आतां तुजपुढें । ज्ञेय सयुक्तिक । मांडिलें हें देख । 'रोकडें चि ॥१५७२॥  
 भरोनियां बुद्धि । विचारें ह्या सर्व । धरोनियां भाव । माझ्या ठार्यां ॥१५७३॥  
 सुनिश्चयें माझ्या । स्वरूपाची प्राप्ति । करोनियां घेती । माझे भक्त ॥१५७४॥  
 देहादि पसारा । सांडोनियां सारा । माझ्या ठार्यां 'थारा । घेती नित्य ॥१५७५॥  
 आपणासकट । सर्वस्व अर्पून । मार्तें मेळवून । राहती जे ॥१५७६॥  
 अर्जुना ते भक्त । जाणिती गा हें च । म्हणोनियां मीच । होती अंती ॥१५७७॥  
 चढावया कडा । बांधोनियां घाट । करावी गा वाट । सोपी जैसी ॥१५७८॥  
 किंवा अंतराळीं । बैसावयासाठीं । बांधावा किरीटी । माच जैसा ॥१५७९॥  
 ना तरी अथांग । तरावया पाणी । नावेंत बैसोनि । जावें जैसें ॥१५८०॥

तैसी सोपी मुख्य । रचिली ही रीत । पावावया भक्त । मद्रूपातें ॥१५८१॥  
 एन्हवीं 'आधवे' । आत्मा चि केवळ । ऐसें एकवेळ । सांगूं जरी ॥१५८२॥  
 तरी बुद्धीसी तें । 'आकळ्याया जड । म्हणोनि उघड । मांडिलें हें ॥१५८३॥  
 घेवोनियां ध्यानीं । तुझे बुद्धिबळ । तुज आकळेल । ऐशा रीती ॥१५८४॥  
 सर्वदा सर्वत्र । एक चि संचलें । तें चि सांगितलें । 'चतुर्विध ॥१५८५॥  
 एक चि तो परी । विसाठार्यां घांस । करोनि बाळास । भरविती ॥१५८६॥  
 तैसें एक चि हें । परी चतुर्विध । करोनि 'विशद' । सांगितलें ॥१५८७॥  
 धनंजया एक । क्षेत्र एक ज्ञान । एक तें अज्ञान । ज्ञेय एक ॥१५८८॥  
 दाविलें हें येथें । ऐसें 'विभागोन । तुझे अवधान । जाणोनियां ॥१५८९॥  
 दावोनि हि ऐसें । जरी तुज पार्था । नाकळे सर्वथा । अभिप्राय ॥१५९०॥  
 तरी दुजी रीत । स्वीकारोनि साच । सांगूं पुन्हा तें च । एकवेळ ॥१५९१॥  
 ऐसें चार भाग । न करितां येथें । किंवा एक चि तें । न म्हणतां ॥१५९२॥  
 आतां आत्मा आणि । अनात्मा हीं दोन । सारखीं मानोना बोलूं आम्ही ॥१५९३॥  
 परी 'गुडाकेशा' । एवढें करावें । मागूं तें त्वां द्यावें । आम्हांलागीं ॥१५९४॥  
 तरी सर्वांगाचे । करोनियां कान । देई अवधान । एकलें चि ॥१५९५॥  
 देवाचे हे बोल । परिसोनि पार्थ । झाला रोमांचित । हर्षभरें ॥१५९६॥  
 तेथ हरी म्हणे । होसी भला चांग । परी हर्षावेग । आवरीं गा ॥१५९७॥  
 असो अर्जुनाचा । ऐसा हर्षावेग । आवरोनि मग । तयालागीं ॥१५९८॥  
 सांगूं ऐक म्हणे । देव हर्षीकेश । प्रकृति-पुरुष- । विभाग हा ॥१५९९॥  
 जया मार्गालागीं । धनंजया जर्गीं । बोलती गा योगी । सांख्य ऐसें ॥१६००॥  
 जयाचें महत्त्व । वर्णावया पूर्ण । कपिल होवोन । आलों येथें ॥१६०१॥  
 तो चि ऐक आतां । प्रकृति-पुरुष- । विवेक निर्दोष । सांगूं आम्ही ॥१६०२॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्वयनादी उभावपि ।

विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥१९॥

अनादि पुरुष । अनादि प्रकृति । ऐसीं दोन्ही होती । सारखीं च ॥१६०३॥

रात्र आणि दिन। जैसीं का संलग्न। तैसीं च हीं जाण। तत्त्वं दोन्ही ॥१६०४॥  
छाया नव्हे देह। परी ती देहासी। जोडोनियां जैसी। राहे नित्य ॥१६०५॥  
किंवा कणसांत। कोंडा आणि कण। वाढती जुडोन। एकमेकां ॥१६०६॥  
तैसी च अनादि-। सिद्ध ऐसी ख्याति। पुरुष-प्रकृति। जोडप्याची ॥१६०७॥  
बोलिलें जें सर्व। क्षेत्र येणें नांवें। येथ तें जाणावें। प्रकृति गा ॥१६०८॥  
आणि जया नांव। क्षेत्र-ज्ञ म्हणोन। पुरुष तो जाण। निःशंदेह ॥१६०९॥  
नांवें भिन्न भिन्न। परी निरूपण। एक चि ही खूण। चुकूं नये ॥१६१०॥  
तरी पंडु-सुता। केवळ जी सत्ता। ओळख तत्त्वतां। पुरुष तो ॥१६११॥  
सत्तायोगें क्रिया। होय जी जी सर्व। प्रकृति हें नांव। तियेसी च ॥१६१२॥  
दहा हि इंद्रियें। मन आणि बुद्धि। अंतःकरणादि। विकार हे ॥१६१३॥  
होती सकळ हि। प्रकृतिपासोन। सत्त्वादि त्रिगुण। धनंजया ॥१६१४॥  
सर्व क्रिया-शक्ति। प्रकृति ती जाण। होय जी कारण। कर्मांलार्गी ॥१६१५॥

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ।

पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥२०॥

तेथें इच्छा आणि। बुद्धि धनंजया। आधीं अहंकारा। जन्म देती ॥१६१६॥  
मग जीवांलार्गी। इच्छा आणि बुद्धि। लाविती त्या नादीं। कारणाच्या ॥१६१७॥  
कारण हें नांव। इष्ट वस्तूमी च। धनंजया साच। ओळख तूं ॥१६१८॥  
आणि इष्ट वस्तु। लाभावी म्हणोन। करणें प्रयत्न। जो जो काहीं ॥१६१९॥  
तया प्रयत्नास। कार्य ऐसें नांव। म्हणे कृष्णदेव। सिद्धराज ॥१६२०॥  
बळावतां इच्छा। मदाचिया बळें। चेतवणी मिळे। मनांलार्गी ॥१६२१॥  
मग तें चि मन। इंद्रियांकडून। व्यापार करून। घेई सर्व ॥१६२२॥  
ऐसी सर्वेंद्रियां। मिळे जी प्रेरणा। कर्तृत्व अर्जुना। जाण तें चि ॥१६२३॥  
म्हणोनियां कार्या-। कारणा-कर्तृत्वा। प्रकृति पांडवा। मूळ होय ॥१६२४॥  
तिहींचा हि ऐसा। होतां समवाय। प्रकृति ती होय। कर्मरूप ॥१६२५॥  
परी वाढे पार्था। गुणाचा ज्या जोर। तैसी च साचार। बने ती हि ॥१६२६॥

जया कर्मा सत्त्व-। गुण-अधिष्ठान । सत्कर्म तें जाण । धनंजया ॥१६२७॥  
 होय रजो-गुणा-। पासोनि जें कर्म । सर्वथा मध्यम । जाणावें तें ॥१६२८॥  
 आणि तमोगुणीं । जयांची उत्पत्ति । निषिद्ध तीं होती । हीन कर्में ॥१६२९॥  
 भलीं बुरीं कर्में । प्रकृतिपासोन । स्वभावे उत्पन्न । होती ऐसीं ॥१६३०॥  
 आणि तयां कर्मा-। पासोनियां देख । पार्था सुख दुःख । जन्म पावे ॥१६३१॥  
 निपजतें दुःख । दुष्कर्मापासोन । सत्कर्मीं निर्माण । होय सुख ॥१६३२॥  
 पुरुष तो भोगी । सुख-दुःखें दोन्ही । पार्था ऐसें जनीं । बोलती गा ॥१६३३॥  
 कर्मापासोनियां । सुख-दुःखें जाण । जोंवरी निर्माण । होती साच ॥१६३४॥  
 तोंवरी प्रकृति । करी व्यवहार । पुरुष साचार । घेई भोग ॥१६३५॥  
 प्रकृति पुरुष-। व्यापाराची मात । असे अधटित । सांगूं जातां ॥१६३६॥  
 करोनि व्यापार । जोडी जें धनीण । खाय तें बैसोन । धनी स्वस्थ ॥१६३७॥  
 नवल हें ऐक । स्वामीसंगाविण । प्रसवे धनीण । त्रैलोक्यामी ॥१६३८॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।

कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥

पुरुष तो जाण । वृद्ध वृद्धाहून । पांगळा निर्धन । अति जीर्ण ॥१६३९॥  
 नाहीं तयालागीं । आकार विकार । असे तो साचार । एकला चि ॥१६४०॥  
 नव्हे नपुंसक । नव्हे च तो नारी । पुरुष हें तरी । आडनांव ॥१६४१॥  
 काय सांगूं फार । अमूक तो एक । वर्णवे ना देख । ऐसें कांहीं ॥१६४२॥  
 नाहीं हात पाय । नाहीं डोळे कान । नाम रूप वर्ण । नाहीं तया ॥१६४३॥  
 कांहीं च हें नाहीं । जयाचिया ठायीं । तोचि भर्ता पाहीं । प्रकृतीचा ॥१६४४॥  
 ऐसा असोनि हि । तयासी आघवीं । लागती भोगावीं । सुख-दुःखें ॥१६४५॥  
 तो तरी अकर्ता । उदास अभोक्ता । परी पतिव्रता । प्रकृति ही ॥१६४६॥  
 तया पुरुषासी । सुख-दुःख-भोग । भोगविते साङ्ग । धनुर्धरा ॥१६४७॥  
 जिये अंगीं होती । रूप-गुण कांहीं । खेळ दावी ती हि । पतीलागीं ॥१६४८॥  
 मग ही तों पार्था । गुणमयी साच । जणूं गुणांची च । ओतिली गा ॥१६४९॥

क्षणोक्षणीं नित्य । नवें रूप घेई । रूप गुणें राही । भरोनियां ॥१६५०॥  
 तेविं स्वभावतां । 'मत्त होतां पाहीं । चालना ही देई । जडातें हि ॥१६५१॥  
 प्रकृतीच्या योगें । नामासी विख्याति । तेविं झाली प्रीति । प्रेमयुक्त ॥१६५२॥  
 प्रकृतीच्या योगें । तत्पर इंद्रियें । करावया कायें । आपुलार्ली ॥१६५३॥  
 नपुंमक मन । असोनि हि जाण । तया त्रि-भुवन । भोगवी ही ॥१६५४॥  
 प्रकृतीची देख । कृति 'अलौकिक । ऐसी एक एक । धनंजया ॥१६५५॥  
 प्रकृति ही जाण । व्याप्तीचें स्वरूप । तेविं 'महा-द्रीप । भ्रांतीचें ही ॥१६५६॥  
 पाहें धनंजया । असंख्य विकार । निर्मिले साचार । प्रकृतीनें ॥१६५७॥  
 मोह-वनांतील । 'माधवी हि साची । काम-लतिकेची । मंडपी ही ॥१६५८॥  
 'दैवी माया' नामें । हिची च प्रमिद्धि । वाङ्मयाची वृद्धि । प्रकृति ही ॥१६५९॥  
 सर्वथा साकार-। पणाची ही जोड । प्रपंचाची धाड । अभंग ही ॥१६६०॥  
 सर्व कला माच । झाल्या येथोनी च । जन्मदात्री ही च । विद्यांची हि ॥१६६१॥  
 इच्छा ज्ञान क्रिया । सर्व हीं निर्माण । हिच्या च पासोन । झालीं पार्था ॥१६६२॥  
 शब्दमात्राची ही । जणू टांकसाळ । सकळ हा खेळ । प्रकृतीचा ॥१६६३॥  
 काय मांगूं फार । सर्व चमत्कारां । ही च देई थारा । ऐसें जाण ॥१६६४॥  
 सृष्टीची उत्पत्ति । ती हिची सकाळ । आणि सायंकाळ । प्रलय तो ॥१६६५॥  
 अमो, मोहिनी हि । ऐसी विलक्षण । जाण सोबतीण । 'अद्रयाची ॥१६६६॥  
 थाटिते संसार । निराकाराघरीं । सोयरीक करी । निःसंगाशीं ॥१६६७॥  
 सौभाग्य-विस्तार । थोर ऐशा परी । म्हणोनि आवरी । अनावरा ॥१६६८॥  
 तया अनावर । पुरुषाच्या ठायीं । विकाराचा नाहीं । लेश जरी ॥१६६९॥  
 तरी तयाचें ही । धनंजया पाहीं । आपण चि होई । सर्व कांहीं ॥१६७०॥  
 स्वयें ही च होय । मूर्ति अमूर्ताची । तया स्वयंभाची । उत्पत्ति ही ॥१६७१॥  
 तेविं स्थिति होय । तयाची आपण । स्थान तें हि जाण । ही च होय ॥१६७२॥  
 इच्छा होय ही च । तया निरिच्छाची । तया संपूर्णाची । तृप्ति ही च ॥१६७३॥  
 तया अकुळाचें । पार्था जात-गोत । सर्वथैव होत । स्वयें ही च ॥१६७४॥

पुरुष तो जाण । असे निराकार । तयाचा आकार । ही च होय ॥१६७५॥  
 पुरुष तो जाण । असे निर्व्यापार । तयाचा व्यापार । ही च होय ॥१६७६॥  
 पुरुषामी कांहीं । अहंकार नाही । तयाचा ही होई । अहंकार ॥१६७७॥  
 होय मन बुद्धि । तयाची आपण । नसोनि हि मन । तयालागीं ॥१६७८॥  
 तया अचर्चाचें । ही च होय चिन्ह । अपाराचें मान । ही च होय ॥१६७९॥  
 तया अजन्माचें । ही च होय जन्म । अनामाचें नाम । ही च होय ॥१६८०॥  
 तया अक्रियाची । सर्व कर्म क्रिया । होय धनंजया । स्वयें ही च ॥१६८१॥  
 पार्था अचरण । पुरुष तो जाण । तयाचे चरण । ही च होय ॥१६८२॥  
 श्रवणरहित । अमतां तो साच । कान होय ही च । तयाचे गा ॥१६८३॥  
 होय ही च गुण । तया निर्गुणाचे । तया अचक्षूचे । चक्षू ही च ॥१६८४॥  
 पुरुष तो नित्य । अमे भावातीत । तयाचे ही होत । भाव सारे ॥१६८५॥  
 काय मांगूं फार । तया पुरुषाचें । सर्व कांहीं साचें । ही च होय ॥१६८६॥  
 प्रकृतीची ऐमी । सर्वव्यापकता । असे पंडु-सुता । म्हणोनियां ॥१६८७॥  
 तया अविकार । पुरुषालागोन । विकार-संपन्न । करी कैसी ॥१६८८॥  
 तया पुरुषाचें । पुरुषत्व पार्था । ऐसे सांपडतां । प्रकृतीत ॥१६८९॥  
 होय तेजोहीन । सर्व हि बाजूनीं । अमावास्या-दिनीं । चंद्र जैसा ॥१६९०॥  
 चोख वालभरी । धेवोनि सुवर्ण । मिसळलें हीण । जरी त्यांत ॥१६९१॥  
 तरी हीणकस । होवोनि तें जैसें । येवोनियां बैसे । पांचावरी ॥१६९२॥  
 भल्याचिया अंगीं । संचरतां भूत । पापकर्मीं रत । होय जैसा ॥१६९३॥  
 किंवा नाना अंग्रें । नभीं उद्भवून । करिती दुर्दिन । सुदिनाचा ॥१६९४॥  
 स्तनीं दुग्ध जैसें । दिसे ना धवल । दिसे ना तेजाळ । अभि कांठीं ॥१६९५॥  
 किंवा वस्त्रीं रत्न । ठेवितां झांकोन । येई ना दिसोन । तेज जैसें ॥१६९६॥  
 ना तरी नृपाळ । पडावा बंदीत । किंवा रोगें ग्रस्त । व्हावा सिंह ॥१६९७॥  
 तैसा पुरुष हा । प्रकृति-आधीन । होतां मुके पूर्ण । स्वतेजातें ॥१६९८॥  
 पाहें धनंजया । जागता जो जन । होतां तो आधीन । निद्रोचिया ॥१६९९॥

स्वप्नामार्जीं हांव । धरोनियां मग । सुख-दुःख-भोग । भोगी जैसा ॥१७००॥  
 तैसे प्रकृतीचे । पडतां चि पाश । घडे पुरुषाम । गुण-भोग ॥१७०१॥  
 स्त्रियेचिया योगें । विरक्त हि जैसा । गुंते भवपाशा- । मार्जीं पार्था ॥१७०२॥  
 तैसा पुरुष हा । 'अज 'अविकार । नित्य निरंतर । असोनि हि ॥१७०३॥  
 जन्म-मरणाचे । तयासी आघात । बैसती निभ्रांत । गुण-संगें ॥१७०४॥  
 परी तप्त-लोहीं । घणाचे 'प्रहार । अग्नीसी का मार । लागे त्याचा ॥१७०५॥  
 हालतां उदक । सरोवरीं देख । भासती अनेक । चंद्र-बिंबें ॥१७०६॥  
 परी चंद्राचिया । ठायीं तेंगें योगें । कल्पावें का सांगें । अनेकत्व ॥१७०७॥  
 ना तरी समोर । धरितां 'दर्पण । येई दुजेपण । मुखालागीं ॥१७०८॥  
 ना तरी स्फटिक । दिसे लालबुंद । कुंकुमामन्त्रिय । ठेवितां तो ॥१७०९॥  
 तैसा गुण-संगें । अजन्मा हा जन्मे । ऐमें जरी गमे । पंडु-सुता ॥१७१०॥  
 तरी 'अंत्यजादि । नाना हीन योनी । संन्यासी तो स्वप्नीं । पावे जैसा ॥१७११॥  
 तैसा उच्च-नीच । योनींचा संबंध । जाण स्वयंसिद्ध । पुरुषासी ॥१७१२॥  
 म्हणोनि केवळ । पुरुषासी देख । जन्मभोगादिक । नसे काहीं ॥१७१३॥  
 गुणांची संगति । हें चि येथें मूळ । भोगांसी सकळ । धनंजया ॥१७१४॥

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।

परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ॥२२॥

खुंटाचा आधार । जुईचिया वेला । तैसा हा राहिला । प्रकृतींत ॥१७१५॥  
 जमीन-अस्मानां- । एवढें अंतर । जाण पां साचार । दोहोंमार्जीं ॥१७१६॥  
 प्रकृतिस्वरूप । 'सरितेच्या तटी । होय हा किरीटी । जणूं मेरू ॥१७१७॥  
 मार्जीं बिंबे परी । प्रवाहाच्या वेगें । सवें वाहूं लागे । ऐमें नाहीं ॥१७१८॥  
 होय आणि जाय । प्रकृति ती पाहें । पुरुष हा आहे । निरंतर ॥१७१९॥  
 पुरुष हा जाण । प्रकृति-जीवन । करी नियमन । आब्रह्माचें ॥१७२०॥  
 ह्याचिया सत्तेनें । करी विश्वोत्पत्ति । म्हणोनि हा पति । प्रकृतीचा ॥१७२१॥  
 अनंतकाळींच्या । अगणित सृष्टि । प्रवेशती अंतीं । पोटीं ह्याच्या ॥१७२२॥



प्रकृतीचा स्वामी । पुरुष साचार । हा चि सूत्रधार । ब्रह्मांडाचा ॥१७२३॥  
 अनादि अनंत । अपार-स्वरूपी । पुरुष हा 'मापी । प्रपंचार्ते ॥१७२४॥  
 देहीं परमात्मा । बोलती जो साच । अर्जुना तो हा च । ऐसें जाण ॥१७२५॥  
 प्रकृतिपरता । एक पंडु-सुता । बोलती तत्त्वतां । पुरुष हा ॥१७२६॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह ।

सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते ॥२३॥

प्रकृतिपामोन । पुरुष हा भिन्न । ऐसें शुद्ध ज्ञान । झालें जया ॥१७२७॥  
 आणि गुण कार्य । प्रकृतीचें होय । ऐसा चि प्रत्यय । जयाचा गा ॥१७२८॥  
 निवडावीं जैसीं । रूप आणि छाया । जळ आणि 'माया । स्पष्टपणें ॥१७२९॥  
 तैसा यथार्थत्वं । प्रकृति पुरुष । भेद हा जयाम । आकळला ॥१७३०॥  
 आचरो तो कमें । देह-संगें सारीं । अमो देहधारी । संसारीं तो ॥१७३१॥  
 परी मळे ना च । धुळीनें गगन । 'अलिप्त तो जाण । तैसा कर्मी ॥१७३२॥  
 अमोनियां 'देही । जयाचिया ठायीं । देह-मोह नाहीं । लेशमात्र ॥१७३३॥  
 जन्म-मरणाचा । संपोनियां फेरा । तयासी संसारा । येणें नाहीं ॥१७३४॥  
 प्रकृति-पुरुष- । विवेक हा थोर । तया उपकार । करी ऐसा ॥१७३५॥  
 परी आतां हा चि । विवेक अंतरीं । सूर्याचिया परी । उगवेल ॥१७३६॥  
 ऐसे नानाविध । उपाय जे होती । सांगूं तुजप्रति । धनुर्धरा ॥१७३७॥

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।

अन्ये सांग्व्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥२४॥

कोणी विवेकाग्नि । पेटवोनि चांग । घालोनियां मग । तयामार्जी ॥१७३८॥  
 आत्मानात्मरूपी । सोनें ह्मिणकस । देवोनि तयास । नाना पुटें ॥१७३९॥  
 जाळोनि अनात्म । छतीस हि भेद । निवडिती शुद्ध । आत्मतत्त्व ॥१७४०॥  
 आत्मतत्त्वाचें त्या । करोनियां ध्यान । आपणा आपण । देखती ते ॥१७४१॥  
 'दैवदर्शं कोणी । सांग्व्ययोगद्वारा । चित्त देती वीरा । आत्मरूपीं ॥१७४२॥  
 कोणी कर्मयोगीं । देवोनियां भर । आत्मरूपीं स्थिर । राहती गा ॥१७४३॥

अन्ये त्वेवमजानन्तःश्रुत्वान्येभ्य उपासते ।

तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥ २५ ॥

आणिक ते कोणी । सात्र ऐशा रीती । तरोनियां जाती । भव-भय ॥१७४४॥  
 सर्व अभिमान । दूर घालवोन । संतांपार्यां 'लीन । होवोनियां ॥१७४५॥  
 तयांचें वचन । मानिती प्रमाण । निष्ठा परिपूर्ण । ठेवोनियां ॥१७४६॥  
 पाहती जे संत । शिष्य-हिताहित । थोर कृपावंत । स्वभावे चि ॥१७४७॥  
 कनवाळुपणें । शिष्यातें 'पुमान । टाकिती हरोन । भव-दुःख ॥१७४८॥  
 शिष्याचा विनाश । न व्हावा म्हणोन । आत्म-सुख-धन । देती जे का ॥१७४९॥  
 तयांचिया सुखें । निघे जें वचन । आदरें श्रवण । करोनि तें ॥१७५०॥  
 कायावाचामनं । तद्रूप जे होती । कर्तव्य मानिती । तें चि एक ॥१७५१॥  
 गुरुमुखांतील । अक्षरांवरून । जीव ओंवाळून । टाकिती जे ॥१७५२॥  
 ऐसे जे भाविक । ते हि सुखें अंतीं । तरोनियां जाती । भवार्णवा ॥१७५३॥  
 एक आत्म-तत्त्व । जाणावया पाहें । ऐमे उपाय हे । 'बहुविध ॥१७५४॥  
 आतां धनंजया । पुरे हा विस्तार । सर्वार्थांचें 'सार । देऊं तुज ॥१७५५॥  
 जेणें स्वानुभूति । आयती लाभोन । होसील तूं पूर्ण । ब्रह्मरूप ॥१७५६॥  
 तरी येथें जे जे । नाना मतवाद । तयांचा 'उच्छेद । करोनियां ॥१७५७॥  
 सर्वसारभूत । मांडोनि सिद्धान्त । शुद्ध मथितार्थ । स्पष्ट सांगूं ॥१७५८॥

यावत्संजायते किंचित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् ।

क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ॥२६॥

क्षेत्रज्ञ हें नांव । देवोनियां आतां । दाविलें तत्त्वतां । स्वरूप जें ॥१७५९॥  
 आणिक विस्तारें । क्षेत्र येणें नावें । अर्जुना आघवें । वर्णिलें जें ॥१७६०॥  
 होतां चि ह्या दोन्ही । तत्त्वांची मिळणी । तेंणें सर्व प्राणी । 'संभवती ॥१७६१॥  
 वा-न्याचिया संगें । सागरीं कळोळ । तैसैं हें सकळ । दिसूं लागे ॥१७६२॥  
 किंवा माळराना । भेटतां भास्कर । दिसे महा-पूर । 'रौहिणीचा ॥१७६३॥  
 ना तरी पर्जन्यें । आर्द्र होतां धरा । विविध अंकुरां । जन्म जैसा ॥१७६४॥

१ नम्र. २ विचारून. ३ नाना प्रकारचे. ४ रहस्य. ५ नाश. ६ निर्माण होतात. ७ मृगजळाचा.

अ. ज्ञा. २८

तैसें जें जें कांहीं । जीव ऐशा नावें । भासतें आघवें । चराचर ॥१७६५॥  
 प्रकृति-पुरुष-। संयोगें तें जाण । होतमे निर्माण । धनंजया ॥१७६६॥  
 म्हणोनि प्रकृति-। पुरुषापासोन । नव्हे चि गा भिन्न । भूतमात्र ॥१७६७॥  
 समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।  
 विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥२७॥

जरी वस्त्रपण । तंतु नव्हे पार्था । तंतु चि तत्त्वतां । परी त्यांत ॥१७६८॥  
 तैसें नानाकारं । नटे एक ब्रह्म । ऐसें पाहें सूक्ष्म । विचारें गा ॥१७६९॥  
 सर्व भूतें होती । एका ब्रह्माचीं च । ब्रह्मीं च तीं साच । राहती गा ॥१७७०॥  
 परी ब्रह्माहून । भासती तीं भिन्न । एक चि असोन । अनेकत्वे ॥१७७१॥  
 भिन्न भिन्न नावें । वेष हि निराळे । तयांचें वेगळें । वर्तन हि ॥१७७२॥  
 देखोनि हें पार्था । आपुल्या मानसीं । जरी थारा देसी । द्वैतभावा ॥१७७३॥  
 तरी ते लोटोत । कोट्यवधि जन्म । परी मोक्ष-धाम । पावसी ना ॥१७७४॥  
 अर्जुना एका चि । वेलीपामोनियां । 'नाना' प्रयोजना-। योग्य जैसीं ॥१७७५॥  
 वाकुडीं वाटोळीं । दीर्घ आकाराचीं । दूधभोपळीचीं । फळें होती ॥१७७६॥  
 वाकुडें सरळ । असो काष्ठ कैमें । परी एका जैसें । बोरीचें च ॥१७७७॥  
 तैसें भूतजात । जरी भिन्न भिन्न । परी आत्मा जाण । एक चि तो ॥१७७८॥  
 किंवा वेगळाले । जरी अग्नि-कण । उष्णता समान । परी जैसी ॥१७७९॥  
 तैशा जीवराशी । भासती अनेक । परी आत्मा एक । तयांमार्जी १७८०॥  
 पर्जन्याच्या धारा । सर्वत्र गगनीं । परी जैसें पाणी । एक चि तें ॥१७८१॥  
 'भूताकाराचिया । सर्वांगीं तैसा च । परमात्मा साच । असे एक ॥१७८२॥  
 भिन्न 'भूतग्राम । परी आत्मा सम । घटीं मठीं 'व्योम । एक जैसें ॥१७८३॥  
 बाहुभूषणादि । नाना अलंकारीं । कस जैशा परी । एक चि तो ॥१७८४॥  
 तैसा सर्वाभूतीं । आत्मा अविनाश । जरी भूताभास । नाशिवंत ॥१७८५॥  
 एवं परमात्मा । जीवधर्महीन । राहिला व्यापोन । सर्वा जीवां ॥१७८६॥  
 ऐसा अनुभव । जयालार्गी आला । डोळस तो भला । ज्ञानियांत ॥१७८७॥





नाना दीप परी । एक चि प्रकाश । सर्वत्र तो ईश । होय तैसा ॥१८०४॥





पार्था ज्ञानदृष्टि-। संपन्न जे ज्ञाले । त्यांमार्जीं आगळें । स्थान तथा ॥१७८८॥  
स्तुति नव्हे साच । सांगतो हें येथ । थोर भाग्यवंत । जाणावा तो ॥१७८९॥

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।

न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥२८॥

गुणेंद्रियां केलें । राहावया घर । पार्था हें शरीर । त्रिधातुक ॥१७९०॥  
हा तो पंचमहा-। भूतांचा अघोर । मेळवा साचार । हानिप्रद ॥१७९१॥  
पांच नांग्यांची ही । जणुं इंगळी च । दंश करी पांच । भिन्न स्थानीं ॥१७९२॥  
जीवरूपी सिंह । तयासी ही भली । जणूं सांपडली । मृग-कुटी ॥१७९३॥  
नवल हें देहीं । ऐसा शुद्ध बुद्ध । जीव स्वयंमिद्ध । असोनि हि ॥१७९४॥  
अनित्य भावाचा । करी ना निःपात । स्मरोनि शाश्वत । निज-पद ॥१७९५॥  
परी ज्ञानी देहां । राहोनि अलिप्त । ब्रह्मस्वरूपांत । मिळे अंतीं ॥१७९६॥  
योगज्ञानबळें । जेथें योगी जन । जन्म ओलांडून । कोट्यवधि ॥१७९७॥  
न निघूं बाहेर । ऐसें निर्धारून । राहती जडून । बुडोनियां ॥१७९८॥  
जें का आकाराचा । असे पैल कांठ । शब्दाचा शेवट । होय जेथें ॥१७९९॥  
तुरीयावस्थेचें । जें का माजघर । ऐसें जें साचार । परब्रह्म ॥१८००॥  
गंगादि सकळ । नद्या जैशा अंतीं । मिळोनियां जाती । सागरातें ॥१८०१॥  
मोक्षा हि सकट । सर्व साध्ये तैसीं । येती विश्रांतीसी । जया ठायीं ॥१८०२॥  
ब्रह्मचें त्या सुख । तया लाभे पूर्ण । नाहीं जया । भन्न-। भाव भूतीं ॥१८०३॥  
नाना दीप परी । एक चि प्रकाश । सर्वत्र तो ईश । होय तैसा ॥१८०४॥  
ऐसी साम्यावस्था । जयालागीं भली । पार्था प्राप्त झाली । जीवनांत ॥१८०५॥  
जन्म-मरणाचें । तयासी बंधन । उरेल कोडून । सांगें मज ॥१८०६॥  
म्हणोनि तो ज्ञानी । सभाग्य आगळा । ऐसें वेळोवेळां । वर्णू आम्ही ॥१८०७॥  
कीं तो साम्यरूपी । शय्येवरी जाण । अखंड निमग्न । निद्रा-सुखीं ॥१८०८॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।

यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥२९॥



मन बुद्धि तैसीं । कमेंद्रियें वीरा । पसारा हा सारा । प्रकृतीचा ॥१८०९॥  
 ऐसें सत्य ज्ञान । जयालागीं झालें । तया आकळलें । आत्मरूप ॥१८१०॥  
 घरांतील सारीं । वावरती घरीं । अलिप्त तें परी । घर राहे ॥१८११॥  
 किंवा मेघ-पंक्ति । धांवती नभांत । परी राहे स्वस्थ । नभ जैसें ॥१८१२॥  
 तैसी प्रकृति ही । आत्मसत्ताघारे । खेळ करी सारे । त्रिगुणाचे ॥१८१३॥  
 परी आत्मा तेथें । राहे उदासीन । आधार असोन । सर्व कर्मा ॥१८१४॥  
 अकर्ता तो आत्मा । ओळखिला तेणें । स्वानुभवे जेणें । जाणिलें हें ॥१८१५॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।

तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥३०॥

येणें ज्ञानें जेव्हां । नाना भूताकार । देखावे साचार । एकरूप ॥१८१६॥  
 तेव्हां चि तत्त्वतां । ब्रह्मसंपन्नता । प्राप्त होय पार्था । ऐसें जाण ॥१८१७॥  
 पृथ्वीवरी जैसे । परमाणुकण । मंडलीं किरण । आदित्याचे ॥१८१८॥  
 ना तरी तरंग । सागराच्या ठायीं । किंवा जैसे देहीं । अवयव ॥१८१९॥  
 एका चि अग्नीचे । विस्फुल्लिंग सर्व । एका मनीं भाव । आववे चि ॥१८२०॥  
 तैसे भूताकार । एका ब्रह्माचे च । ऐसें येई साच । प्रत्ययासी ॥१८२१॥  
 तेव्हां चि संपूर्ण । ब्रह्मसंपत्तीचे । तारूं लाभे साचें । ज्ञानियासी ॥१८२२॥  
 मग पाहे तें तें । दिसे ब्रह्ममय । होतसे अक्षय-। सुख-प्राप्ति ॥१८२३॥  
 प्रकृति-पुरुष-। विवेक हा येथ । कळला यथार्थ । ऐसा तुज ॥१८२४॥  
 भरावया चूळ । लाभावे अमृत । किंवा व्हावा प्राप्त । ठेवा जैसा ॥१८२५॥  
 जाण धनंजया । तैसा चि साचार । विवेक हा थोर । मानावा गा ॥१८२६॥  
 आला अनुभव । ठसावया चिर्ती । एक दोन गोष्टी । सांगूं आतां ॥१८२७॥  
 'ठेवानि ओलीस । आपुलें तें मन । बोल हे गहन । ऐकें पार्था ॥१८२८॥  
 सांगोनियां ऐसें । देव पद्मनाभ । बोलाया आरंभ । करी जेव्हां ॥१८२९॥  
 तेव्हां धनंजय । अवधानमय । सर्वांगें चि होय । एकाएकी ॥१८३०॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।

शरीरस्थोऽपि कौन्नेय न करोति न लिप्यते ॥३१॥

होय ना आदित्य । जळें जैसा ओला । जरी तो बिंबला । जळामार्जी ॥१८३१॥  
 तैसा परमात्मा । निर्मळ अलिप्त । जाण प्रकृतींत । असोनि हि ॥१८३२॥  
 असे सूर्य जैसा । जळाआधीं पाठीं । बिंब तें किरीटी । भाममात्र ॥१८३३॥  
 तैसा आत्मा देहीं । बोलती सकळ । परी तो केवळ । भाम त्याचा ॥१८३४॥  
 नाहीं येत जात । तो तरी कांठें च । जेथीचा तेथें च । असे नित्य ॥१८३५॥  
 'दर्पणीं' दिसावा । मुखाचा आभास । तैसा देहीं वास । आत्मतत्त्वा ॥१८३६॥  
 आत्म्याचा संबंध । बोलती देहाशीं । परी ते 'सर्वाशीं' । बोल फोल ॥१८३७॥  
 सांगें वाऱ्यासांगें । वाळवेची गांठ । मारणें दुर्घट । नव्हे काय ॥१८३८॥  
 एका चि माळेंत । अग्नि आणि पीस । केविं 'गोंवायास' । येतील तीं ॥१८३९॥  
 ना तरी पाषाण । आणिक आकाश । येई जोडायस । एके ठायीं ? ॥१८४०॥  
 एक तो पूर्वस । एक पश्चिमेस । चालतां दोघांस । भेट केंची ॥१८४१॥  
 ना तरी प्रकाश । आणिक अंधार । तैसा चि साचार । संबंध हा ॥१८४२॥  
 मृत आणि उभा । ह्यांत जैसा भेद । तैसा चि संबंध । दोहोंचा ह्या ॥१८४३॥  
 'रजनी-दिवस' । सुवर्ण-कापूस । आत्म्यास देहास । तैसें जाण ॥१८४४॥  
 देह तरी पांचा- । भूतांचा हा झाला । धाग्यांत गुंफिला । कर्मात्रिया ॥१८४५॥  
 तेविं घातला हा । 'भोंवे धनंजया' । जन्म-मृत्यूत्रिया । चक्रावरी ॥१८४६॥  
 देह तंव जाण । लोणियाची 'उंडी' । काळाग्नीच्या तोंडीं । घातलीजी ॥१८४७॥  
 माशीलागीं पंख । झाडावया देख । जैसा क्षण एक । पुरे होय ॥१८४८॥  
 तेवढा चि काळ । पुरे ह्या देहास । नष्ट व्हावयास । एकाएकीं ॥१८४९॥  
 पडे हा आर्गींत । तरी भस्म होय । श्वानामुखीं जाय । तरी विश्वा ॥१८५०॥  
 किंवा चुके अंतीं । ह्या हि दोन्ही काजा । तरी होय पुंजा । कृमींचा हा ॥१८५१॥  
 ऐसा हा वाईट । देहाचा शेवट । सांगितला स्पष्ट । वेई ध्यानीं ॥१८५२॥  
 देहाची ही दशा । दिसे गुडाकेशा । परी आत्मा कैसा । एक आतां ॥१८५३॥  
 नाहीं तया आदि । नाहीं तया अंत । सहज शाश्वत । नित्यसिद्ध ॥१८५४॥

निर्गुण म्हणोनि । नव्हे क्रियाशील । नव्हे तो केवळ । अक्रिय हि ॥१८५५॥  
 नव्हे तो सकळ । नव्हे तो निष्कळ । नव्हे चि तो स्थूल । नव्हे रोड ॥१८५६॥  
 अरूप तो जाण । म्हणोनि साभास । किंवा निराभास । नव्हे आत्मा ॥१८५७॥  
 नव्हे तो प्रकाश । नव्हे तो अंधार । अल्प किंवा फार । नव्हे आत्मा ॥१८५८॥  
 शून्य तो म्हणोन । रहित सहित । ऐसी भाषा तेथ । संभवे ना ॥१८५९॥  
 नव्हे तो साकार । नव्हे निराकार । रिता ना साचार । नव्हे पूर्ण ॥१८६०॥  
 दुःख ना आनंद । एक ना विविध । मुक्त ना तो बद्ध । आत्मपणें ॥१८६१॥  
 अलक्ष्य तो आत्मा । म्हणोनि बोलका । किंवा नव्हे मुका । ऐसा जाण ॥१८६२॥  
 एवढा तेवढा । नव्हे चिं तो पार्था । रचिला आइता । नव्हे ऐसा ॥१८६३॥  
 सृष्टीचा उद्भव । होतां उद्भवे ना । नाश हि पावे ना । सृष्टीसंगें ॥१८६४॥  
 आहे नाहीं दोन्ही । गिळोनि हे भाव । राहे स्वयमेव । स्वभावे जो ॥१८६५॥  
 अव्यय तो आत्मा । म्हणोनि अमाप । तयाचें स्वरूप । शब्दातीत ॥१८६६॥  
 वाढे ना तो खांचे । विटे ना तो वेंचे । स्वरूप तयाचें । ऐसें जाण ॥१८६७॥  
 मटाच्या आकारी । सांपडे आकाश । तया मटाकाश । नाम जैसें ॥१८६८॥  
 तैसा देहीं आत्मा । बोलती हें साच । परी तो ठायीं च । जैसा तैसा ॥१८६९॥  
 पार्था तयाचिया । अखंड आधारे । देहाकार सारे । होती जाती ॥१८७०॥  
 धरी ना सांडी ना । नाना देहाकार । नित्य निरंतर । आत्मसत्ता ॥१८७१॥  
 आत्मसत्ताधारे । देह होती जाती । दिन आणि राती । नर्भी जैसीं ॥१८७२॥  
 म्हणोनि तो आत्मा । करवी ना करी । शरीर व्यापारीं । अनासक्त ॥१८७३॥  
 स्वरूपें तो नाहीं । उणा पुरा काहीं । असोनियां देहीं । लिप्त नोहे ॥१८७४॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।

सर्वत्रावास्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३२॥

जैसें सर्वकाळ । अलिप्त आकाश । सर्वत्र प्रवेश । जरी त्याचा ॥१८७५॥  
 तैसा देहीं आत्मा । सर्वत्र अर्जुना । परी विटाळे ना । संग-दोषें ॥१८७६॥  
 क्षेत्रीं तरी क्षेत्र-संग-विवर्जित । क्षेत्रज्ञ निभ्रान्त । ओळखावा ॥१८७७॥

तुज वारंवार । सांगतसों साच । लक्षण ऐसैं च । क्षेत्रज्ञाचें ॥१८७८॥  
 लोहचुंबकाचे । संसर्गी राहून । चलनवलन । करी लोह ॥१८७९॥  
 परी ना लोहत्व । चुंबकाचे ठायीं । तैसैं जाण देहीं । आत्मतत्त्व ॥१८८०॥  
 जैसे घरांतील । सर्व हि व्यापार । चालवी साचार । दीप जैसा ॥१८८१॥  
 परी वेगळीक । दीपा आणि घरा । जाण धनुर्धरा । कोटिगुणें ॥१८८२॥  
 काष्ठाचिया पोटीं । अग्नि असे पाहीं । परी अग्नि कांहीं । काष्ठ नोहे ॥१८८३॥  
 तैसा आत्मा देहीं । परी नव्हे देह । ऐसैं निःसंदेह । जाण बापा ॥१८८४॥  
 जैसा भेद सूर्या । आणि मृगजळा । किंवा अंतराळा । आणि मेघा ॥१८८५॥  
 तैसा आत्मा जाण । देहाहूनि भिन्न । आधार असोन । देहाभासा ॥१८८६॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।

क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥३३॥

असो नभामार्जी । एकला चि रवि । जैसा प्रकाशवी । नाना लोक ॥१८८७॥  
 क्षेत्रज्ञ तो तैसा । धनंजया देख । होय प्रकाशक । देहाभासा ॥१८८८॥  
 ह्यावरी हा आतां । पुरे उहापोह । अल्प हि संदेह । नको येथें ॥१८८९॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।

भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥३४॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे

क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

नको वारंवार । पुसाया साचार । शब्दतत्त्वसार । जाणिसी तूं ॥१८९०॥  
 क्षेत्र-क्षेत्रज्ञाचा । ऐसा देखे भेद । ती च प्रज्ञा शुद्ध । डोळस गा ॥१८९१॥  
 जाणावया हें च । बुद्धिमंत जन । सेविती चरण । ज्ञानियांचे ॥१८९२॥  
 ह्या चि साठीं शांति । करोनि स्वाधीन । पोषिती गोधन । शास्त्ररूपी ॥१८९३॥  
 ह्या चि साठीं योगी । करिती धाडस । योगाचें आकाश । चढावया ॥१८९४॥  
 ह्या चि साठीं भक्त । देहादि समस्त । तुच्छ तृणवत । लेखोनियां ॥१८९५॥

जीवेंभावें जाती । संतांसी शरण । होवोनि 'वहाण- । धर त्यांचे ॥१८९६॥  
 ऐशापरी ज्ञान- । साधनें करोन । संशय छेदोन । अंतरींचा ॥१८९७॥  
 क्षेत्र-क्षेत्रज्ञाचें । अर्जुना अंतर । सर्वथा साचार । देखती जे ॥१८९८॥  
 तयांचिया ज्ञाना । करूं पंचारति । निजज्ञानज्योति । ओंवाळोनि ॥१८९९॥  
 आणि पंचमहा- । भूतादिक जाण । रूपें भिन्न भिन्न । धरोनियां ॥१९००॥  
 पसरली येथें । मिथ्या प्रकृति च । ऐसें जया साच । कळो आलें ॥१९०१॥  
 शुक नलिकेसी । न बांधितां बद्ध । जीवाशीं संबध । तैसा जिचा ॥१९०२॥  
 मिथ्या सर्पाभास । निरसोनि साच । पहावी माळा च । डोळां जैसी ॥१९०३॥  
 ना तरी रुप्याची । निरसोनि भ्रांति । शिंपीची प्रतीति । यावी जैसी ॥१९०४॥  
 तैसी आत्म्याहून । प्रकृति ही भिन्न । निजांतरीं ज्ञान । ऐसें जयां ॥१९०५॥  
 ब्रह्म चि ते होती । हें माझे वचन । नको अप्रमाण । मानूं पार्था ॥१९०६॥  
 होय जें आकाशा- । पासोनि विशाल । प्रकृतीचें पैल- । तीर जें का ॥१९०७॥  
 जें का साम्यामाम्य । उरूं नेदी कांहीं । नित्य सर्वाठार्या । संचलें जें ॥१९०८॥  
 जीवभाव विरे । आकार हि सर । जेथें दैत नुरे । अद्रय जें ॥१९०९॥  
 तें चि परब्रह्म । सर्वथा ते होती । जे का निवडिती । आत्मानात्म ॥१९१०॥  
 जीवाचिया जीवा । पांडवामी ऐमें । दिलें हृषीकेशें । शुद्ध ज्ञान ॥१९११॥  
 एका घटांतील । दुज्या घटीं जळ । ओतावें सकळ । जैशा रीती ॥१९१२॥  
 तैमें अंतरींचें । निधान आवधें । दिलें कृष्णदेवें । पार्थालागीं ॥१९१३॥  
 अहो देखा येथें । देता घेता कोण । नर-नारायण । एक चि तो ॥१९१४॥  
 पांडवांमाझारीं । अर्जुन तो मी च । बोलिले ऐसें च । हृषीकेश ॥१९१५॥  
 परी असो आतां । न पुमतां बोल । उगाच मागील । बोलावे कां ॥१९१६॥  
 काय सांगूं फार । आपुलें सर्वस्व । अर्जुनासी देव । देता झाला ॥१९१७॥  
 परी मनीं तृप्त । झाला चि न होय । वाढवीत जाय । श्रवणेच्छा ॥१९१८॥  
 पुरवोनि तेल । मारितां च वात । दीप प्रज्वलित । होय जैसा ॥१९१९॥  
 तैसी श्रवणेच्छा । उठे तरारून । ऐकतां भाषण । श्रीहरीचें ॥१९२०॥

जैसी सुगरीण । बाढी मुक्तहस्तें । जरी होती भोक्ते । रसग्राही ॥१९२१॥  
 तैसें अवधान । पार्थीवें देखोन । रंगलें व्याख्यान । चौगुणांनीं ॥१९२२॥  
 लाभतां मेधांसी । वायूचें साहाय्य । जैसी वृष्टि होय । अनावर ॥१९२३॥  
 किंवा उगवतां । पूर्ण सुधाकर । सागर अपार । भरे जैसा ॥१९२४॥  
 तैसा रसरंग । वाढला अद्भुत । श्रोता एकचित्त । देखतां चि ॥१९२५॥  
 आतां सर्व विश्व । आनंदें भरेल । ऐसें चि बोलेल । कृष्णनाथ ॥१९२६॥  
 संजय तो म्हणे । राजा सावधान । ऐकावें भाषण । श्रीहरीचें ॥१९२७॥  
 महा-मति व्यासें । महा-भारतांत । भीष्मपर्वीं मात । वर्णिली जी ॥१९२८॥  
 ती च कथा येथें । सांगूं सविस्तर । काव्यांत सुंदर । ओंवीबद्ध ॥१९२९॥  
 श्रीहरी पार्थीचा । संवाद तो साच । शांतरसाचा च । मूर्तिमंत ॥१९३०॥  
 परी शृंगारातें । स्वभावे जिकील । वर्णिला जाईल । ऐशा बोली ॥१९३१॥  
 सुधेसी हि मागें । सारोनि सहज । चढवील साज । साहित्यासी ॥१९३२॥  
 ऐसी देशी भाषा । योजोनि सुंदर । करूं आविष्कार । गीतार्थाचा ॥१९३३॥  
 चंद्रकलेहून । स्वभावे शीतल । अपूर्व रसाळ । बोल देखा ॥१९३४॥  
 नादब्रह्मातें हि । मोहिनी घालोन । करील तल्लीन । रस-रंग ॥१९३५॥  
 तया रस-रंगें । मूढांच्या हि मना । आणूं प्रेमपान्हा । सात्त्विकाचा ॥१९३६॥  
 मधुर रसाळ । ऐकोनि जे बोल । समाधि जोडेल । निर्मळांसी ॥१९३७॥  
 वाचेचा विलास । ऐसा चि विस्तारूं । सर्व विश्व भरूं । गीतार्थानें ॥१९३८॥  
 आणि आनंदाचें । बांधोनि आवार । सुखाचा संसार । करूं सर्व ॥१९३९॥  
 फिटो आत्मानात्म- । विवेकाचें न्यून । येवो धन्यपण । काना-मना ॥१९४०॥  
 ब्रह्मविद्याखाण । देखावया येथ । बळ होवो प्राप्त । कोणासी हि ॥१९४१॥  
 सुखाचा सोहळा । येवो उदयास । दिमो सकळांस । पर-ब्रह्म ॥१९४२॥  
 महा-बोधें होवो । सदासर्वकाळ । सर्वत्र मुकाळ । स्वानंदाचा ॥१९४३॥  
 श्रीगुरु निवृत्ति । परम दैवत । तणें अंगीकृत । केलें मज ॥१९४४॥  
 म्हणोनि हें सर्व । घडोनि येईल । ऐसे भले बोल । बोलेन मी ॥१९४५॥

'उपमा-दृष्टान्त-। श्लेष-रूपकादि । करोनि समृद्धि । 'भूषणांची ॥१९४६॥  
 गीता-श्लोक-पदें । दावीन 'विशद । मेळवोनि शब्द । यथायोग्य ॥१९४७॥  
 परिपूर्ण विद्या । एवढी ही मज । दिली गुरुराज । निवृत्तीनें ॥१९४८॥  
 तयाचिये कृपें । जें जें मी बोलेन । तें तें 'सामावोन । घ्याल तुम्ही ॥१९४९॥  
 तुम्हां संतांचिया । सभेमार्जी येथ । सांगाया गीतार्थ । 'सिद्ध झालों ॥१९५०॥  
 देखिले म्यां तुम्हां । संतांचे चरण । आतां कांहीं 'न्यून । राहिलें ना ॥१९५१॥  
 देवी शारदेच्या । पोटीं मुकें मूल । काय निपजेल । कौतुकें हि ॥१९५२॥  
 नाहीं 'सामुद्रिक-। चिन्हांची उणीव । जैसी 'स्वयमेव । लक्ष्मीयेसी ॥१९५३॥  
 तैसा तुम्हां संतां- । पार्शीं ज्ञान-राशि । तेंथें अज्ञानासी । टाव केंचा ॥१९५४॥  
 ह्या चि लागीं नव-। रसीं परिपूर्ण । ग्रंथ-निरूपण । करीन मी ॥१९५५॥  
 आतां प्रभो तुम्हां । काय सांगूं फार । द्यावा 'अवसर । मजलागीं ॥१९५६॥  
 सांगेन वरवा । मग गीता-भाव । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥१९५७॥

इति श्री स्वामी स्वरूपानंदविरचित श्रीमत् अभंग - ज्ञानेश्वरी  
 त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः । श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।



१ उपमा, दृष्टान्त, श्लेष, रूपक वगैरे भाषालंकार भरपूर योजून. २ स्पष्ट. ३ मान्य करून घ्याल. ४ तयार. ५ उणीव राहिली नाही. ६ शरीरावरील शुभ लक्षणांची. ७ स्वतः. ८ संधि.

# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय चौदावा

तुझा जयजयकार । गुरुदेवा नित्य । करिसी तूं सत्य । सुखोदय ॥१॥  
आत्मबुद्धिरूप । प्रातःकाळ होय । श्रीगुरो, तूं सूर्य । उगवतां ॥२॥  
सर्व देवांमार्जी । देव तूं महान । विश्रांतीचें स्थान । विश्वालागीं ॥३॥  
मी च ब्रह्म ऐसा । सोऽहंभाव जीवा । भोगविसी देवा । श्रीगुरो तूं ॥४॥  
तूं चि नाना <sup>१</sup>लोक-। लाटांसी सागर । तुझा जयजयकार । असो देवा ॥५॥  
होसी दीन-बंधु । नित्य दया-सिंधु । <sup>२</sup>आत्म-विद्या-वधू-। वल्लभ तूं ॥६॥  
प्रभो जयांसी तूं । राहसी लपोन । तयां विश्व-भान । दाखविसी ॥७॥  
परी तुझे रूप । होतां चि प्रकट । विश्वा हि सकट । सर्व तूं च ॥८॥  
मंत्र-विद्या-बळें । <sup>३</sup>टाकी जादूगार । बांधोनि नजर । आणिकांची ॥९॥  
परी तुझी लीला । <sup>४</sup>लोकविलक्षण । आपणा आपण । चोरिसी तूं ॥१०॥  
सर्व विश्वासी तूं । एक चि आधार । विश्व चि साचार । होसी तूं च ॥११॥  
ऐसें असोनि हि । कोणा तुझे ज्ञान । कोणासी अज्ञान । मायामोह ॥१२॥  
स्वभावे तूं ऐसा । होसी जादूगार । तुज नमस्कार । असो देवा ॥१३॥  
जणूं तुझ्या योगें । पृथ्वी क्षमाशील । रसाळ तें जळ । तुझ्या ओळें ॥१४॥  
तुझ्या तेजें तेज । सूर्यचंद्रादिकां । उजळिती जे का । त्रिलोकासी ॥१५॥  
करी हालचाल । वायु सर्वकाळ । तुझे चि तें बळ । जाणूं आम्ही ॥१६॥  
तुजमार्जी व्योम । खेळे लपंडाव । सामर्थ्य हें सर्व । तुझे देवा ॥१७॥

१ नाना लोकरूपी लाटा ज्याच्या ठिकाणीं भासतात असा. २ आत्मविद्येचा पति. ३ नजरबंदी करतो.  
४ अद्भुत; अलौकिक. ५ तूं आपण आपल्याला चोरून राहतोस; स्वतःस स्वतः विषय होत नाहीस.



अपार मायेसी । जाणतें जें ज्ञान । तयाचे 'नयन । तूं चि होसी ॥१८॥  
 असो गुरुराया । तुज वर्णायास । अपार सायास । वेदांसी हि ॥१९॥  
 जोंवरी दर्शन । नाहीं तुझे ज्ञालें । वेद वर्णी भलें । तोंवरी च ॥२०॥  
 मग तया-आम्हां । दोघांसी हि मौन । घडतां दर्शन । तुझे देवा ॥२१॥  
 होतां चि प्रलय । सर्व जलमय । थेंबुट्याचा काय । पाड तेथें ॥२२॥  
 महानद्या त्या हि । ओळखूं न येती । तैसी होय स्थिति । येथें आम्हां ॥२३॥  
 ना तरी आकाशीं । उगवतां सूर्य । 'खद्योतसा होय । चंद्र तो हि ॥२४॥  
 तैसा तुझा देवा । देखोनि महिमा । वेदांसर्वें आम्हां । मौन पडे ॥२५॥  
 जेथें द्रैत जाय । सर्वथा लोपोनि । जेथें चारी वाणी । हारपती ॥२६॥  
 तो तूं परब्रह्म । श्रीगुरु 'परेश । तुज वर्णायास । वाचा कोठें ॥२७॥  
 म्हणोनि स्तवन । सांडोनियां आतां । पायीं ठेवूं माथा । हें चि भलें ! ॥२८॥  
 तरी होसी जैमा । तैशा तुज येथ । वंदीन निवांत । गुरुराया ॥२९॥  
 व्हावया सफल । ग्रंथ-व्यवहार । धनी सावकार । होई माझा ॥३०॥  
 आतां कृपारूप । देवोनियां धन । पोतडी भरोन । बुद्धिरूप ॥३१॥  
 शुद्ध ज्ञान-काव्य । रचाया रसाळ । द्यावें मज बळ । गुरुराया ॥३२॥  
 मांगाया गीतार्थ । होईन मी 'पात्र । तुझे कृपा-छत्र । लाभतां चि ॥३३॥  
 विवेकाचीं रम्य । भूषणें करोनि । लेववीन कार्नी । संतांचिया ॥३४॥  
 गीतार्थ-निधान । काढो माझे मन । घालीं 'कृपांजन । आपुलें तूं ॥३५॥  
 सर्व शब्द-सृष्टि-। एका चि वेळेस । बुद्धीच्या डोळ्यांस । दृश्य व्हावी ॥३६॥  
 ऐसा शुद्ध कृपा-। विवाचा प्रकाश । देई अहर्निश । गुरुराया ॥३७॥  
 माझी मनोरम । बुद्धिरूप वेली । फळा यावी भली । ज्ञान-काव्यें ॥३८॥  
 म्हणोनि तूं होई । वनंत सर्वथा । श्रीगुरो समर्था । दयानिधे ॥३९॥  
 माझ्या बुद्धिरूप । गंगेसी साचार । यावा महा-पूर । 'प्रमेयाचा ॥४०॥  
 ऐसा करीं थोर । कृपेचा वर्षाव । उदारा सदैव । गुरुराया ॥४१॥  
 सर्व विश्वासी तूं । एक चि आश्रय । होसी गुरुराय । निरंतर ॥४२॥

देवदेवा तुज्ञा । प्रसाद-चंद्रमा । स्फूर्तीची पौर्णिमा । करो मज ॥४३॥  
 उन्मेष-सागर । भरोनि येईल । कृपेनें पहाल । जरी मातें ॥४४॥  
 शांतरसादिक । नवरसीं मग । उसळेल चांग । काव्यस्फूर्ति ॥४५॥  
 तंव गुरुराज । संतोषून बोले । कां गा ऐसें केले । ज्ञानदेवा ॥४६॥  
 स्तुतीच्या मिषे । मांडिले त्वां द्रैत । करोनि निमित्त । विनंतीचे ॥४७॥  
 पुरे व्यर्थ ऐमी । नको बडबड । दाखवीं उघड । ज्ञान आतां ॥४८॥  
 गीतेचा भावार्थ । सांगोनि गोमटा । शांतवीं उत्कंठा । श्रोतयांची ॥४९॥  
 हां जी स्वामी ही च । इच्छा होती येथ । आज्ञा घाल 'ग्रंथ सांग' ऐमी ॥५०॥  
 \*दूर्वेचा अंकुर । स्वभावे अमर । वरी आला पूर । अमृताचा ॥५१॥  
 तरी आतां मूळ । गीताशास्त्रपदे । सद्गुरुप्रसादे । विवरीन ॥५२॥  
 करोनियां ऐसा । चातुर्ये विस्तार । शंका-परिहार । होय जेणे ॥५३॥  
 श्रोतेयांच्या ठायीं । श्रवणाची प्रीति । चढती वाढती । निपजेल ॥५४॥  
 ऐसी रसाळता । येवो निरूपणीं । मागणे चरणीं । हे च माझे ॥५५॥  
 तरी ऐका मागे । त्रयोदशाध्यायीं । बोलिले जें कांहीं । कृष्णदेव ॥५६॥  
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञाच्या । योगे पार्था जाण । होतसे निर्माण । विश्व मारे ॥५७॥  
 आत्मा गुण-संगे । बनोनि संसारी । प्रकृतीच्या घरीं । राहे जेव्हां ॥५८॥  
 सुखदुःख-भोग । तयासी तेव्हां च । एव्हवीं तो साच । गुणातीत ॥५९॥  
 तरी घडे कैसा । असंगासी संग । सुखदुःख-भोग । गुणातीता ॥६०॥  
 क्षेत्र-क्षेत्रज्ञांत । कोणता संबंध । कैसा गुण-बंध । आत्म्यालागीं ॥६१॥  
 कैसे किती गुण । गुणातीत कोण । तयाचे लक्षण । काय कैसे ॥६२॥  
 करावया स्पष्ट । सर्व हा विषय । प्रस्तुत अध्याय । चौदावा हा ॥६३॥  
 तरी ऐका आतां । काय अभिप्राय । देव कृष्णराय । विश्वेशाचा ॥६४॥  
 म्हणे अर्जुना हे । आळखे ज्ञान । करोनि श्रवण । एकचित्ते ॥६५॥  
 आम्हीं मागे हे चि । नाना युक्तिवाद । करोनि विशद । सांगितले ॥६६॥  
 परी अज्ञानि हि । स्वानुभवे भले । नाही आकळले । तुजलागीं ॥६७॥

श्रीभगवानुवाच—

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।

यज्जात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥१॥

म्हणोनि तें पुन्हा । सांगूं तुजप्रति । 'पर' ऐसें श्रुति । बोले जया ॥६८॥  
 एहर्वीं हें ज्ञान । आपुलें च असे । परी 'पर' ऐसें । वाटे जीवा ॥६९॥  
 कीं ते 'भव-स्वर्ग' । आवडती फार । म्हणोनि विसर । पडे ह्याचा ॥७०॥  
 इतर तीं ज्ञानें । तृणासारखीं च । आत्मज्ञान साच । जगूं अग्नि ॥७१॥  
 म्हणोनि हें ज्ञान । सर्वापरी श्रेष्ठ । ऐसें माझे मत । धनंजया ॥७२॥  
 जाणित्ती जीं ज्ञानें । भव आणि स्वर्ग । यज्ञ-याग चांग । वाखाणित्ती ॥७३॥  
 द्वैतभावाशीं च । जयांची ओळख । नेणती आणिक । श्रेष्ठ कांहीं ॥७४॥  
 आघवीं तीं ज्ञानें । मिथ्या 'स्वप्न'वत । होतां चिं उदित । आत्मज्ञान ॥७५॥  
 वायु-लहरीतें । टाकितें गिळोन । सर्वथा गगन । जैसें अंतीं ॥७६॥  
 ना तरी गगनीं । उगवतां 'अर्क' । होती चंद्रादिक । प्रभाहीन ॥७७॥  
 किंवा जळमय । होतां प्रळयान्तीं । लोपोनियां जाती । नदी-नद ॥७८॥  
 तैसें आत्मज्ञान । येतां उदयास । पावती लयास । सर्व ज्ञानें ॥७९॥  
 म्हणोनि हें ज्ञान । पावन उत्तम । जेणें मोक्ष-धाम । हाता येई ॥८०॥  
 आपुली तों मुक्ति । असे अनादि च । 'प्रत्यये' हें साच । होय जेणें ॥८१॥  
 ज्ञानी-जनें हा च । घेवोनि प्रत्यय । माथां दिला पाय । संसाराच्या ॥८२॥  
 मनानें च मन । सारोनियां मार्गें । झाले जे निजागें । शांतिरूप ॥८३॥  
 असोनियां देही । नाहीं देहभाव । तरी स्वयमेव । ब्रह्म चि ते ॥८४॥  
 मिळोनि ते जाती । माझ्या स्वरूपीं च । देहादि प्रपंच । ओलांडोनि ॥८५॥

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः ।

सर्वेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥२॥

माझ्या चि पूर्णत्वे । ते हि परिपूर्ण । नित्यपणें जाण । ते हि नित्य ॥८६॥  
 अनंत आनंद-। स्वरूप साचार । सत्याचा सागर । जैसा मी गा ॥८७॥

तैसे चि ते पार्था । सर्वथैव पार्हीं । मज-तयां नाहीं । भिन्नपण ॥८८॥  
 जेवढा मी जैसा । धनंजया साच । तेवढे तैसे च । ते हि झाले ! ॥८९॥  
 भंगतां चि घट । घटाकाश जैसे । मिळोनि जातसे । महाकाशीं ॥९०॥  
 किंवा मूळ ज्योती-। मार्जी नाना ज्योति । मिळतां चि होती । एकरूप ॥९१॥  
 तैसी येरझारा । दैताची संपोन । नुरे मीतूपण । तयांठार्यां ॥९२॥  
 देव आणि भक्त । नामें जरी दोन । परी अर्थ भिन्न । नोहे साच ॥९३॥  
 म्हणोनि जें मूळ । सृष्टीची उत्पत्ति । तें हि तयांप्रति । नाहीं जन्म ॥९४॥  
 सृष्टीच्या प्रारंभीं । जयां देहाकार । लागे ना साचार । ध्यावयासी ॥९५॥  
 तयां ज्ञानी भक्तां । मृत्यु कैचा काय । होईल प्रळय । जिये वेळीं ॥९६॥  
 जन्मक्षयातीत । म्हणोनि ते साच । पार्थां झाले मी च । येणें ज्ञानें ॥९७॥  
 आवडीनें देवें । बहु ऐशा रीती । ज्ञानाची महती । वाखाणिली ॥९८॥  
 तेविं पार्थासी हि । आवडो हें ज्ञान । हेतु हा धरोन । देव बोले ॥९९॥  
 तंव सर्वांगीं च । अंकुरोनि कान । पार्थ अवधान-। रूप झाला ॥१००॥  
 आतां सर्वज्ञाचें । ऐसें निरूपण । गगन हि सान । जयापुढें ॥१०१॥  
 तयाचें हि पार्थ । करी आकलन । व्यापक होवोन । तेवढा च ॥१०२॥  
 मग प्रेम-भरें । म्हण भगवंत । प्रज्ञेचा तूं कान्त । होसी पार्था ॥१०३॥  
 जेवढें गहन । आमुचें व्याख्यान । तुझे अवधान । तेवढें गा ॥१०४॥  
 म्हणोनि आमुची । वक्तृत्वता भली । आज उजवली । ऐसें वाटे ॥१०५॥  
 तरी धनुर्धरा । एक मी असोन । पारध्याकडोन । त्रिगुणाच्या ॥१०६॥  
 नाना देहपार्शीं । गुंतविला जातो । कैसा तें सांगतो । एक आतां ॥१०७॥  
 आणि कोणे परी । कैसा क्षेत्र-योगें । प्रसवतो जगें । तें हि ऐक ॥१०८॥  
 घडे माझा संग । प्रकृतीशीं जेव्हां । भूतजात तेव्हां । जन्म पावे ॥१०९॥  
 म्हणोनि तियेसी । क्षेत्र ऐसें नाम । पार्था महद्ब्रह्म । ही च जाण ॥११०॥

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।

संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥३॥

महत्तत्त्वादिकां । विश्रांतीचें स्थान । होय ती म्हणोन । महद्ब्रह्म ॥१११॥  
 विकारांची वाढ । करी फार ही च । म्हणोनि हि साच । महद्ब्रह्म ॥११२॥  
 अर्जुना अव्यक्त-वादी जे का कोणी । 'अव्यक्त' म्हणोनि । बोलती ते ॥११३॥  
 सांख्यमतवादी । 'प्रकृति' म्हणोन । संबोधिती जाण । क्षेत्रासी च ॥११४॥  
 ह्या चि प्रकृतीस । 'माया' ऐसी संज्ञा । दिली जाय प्राज्ञा । वेदान्तांत ॥११५॥  
 असो वायां काय । विस्तारं बोलोन । सर्वथा अज्ञान । हें चि पार्था ॥११६॥  
 आपुलें आपणा । पडे विस्मरण । तें चि रूप जाण । अज्ञानाचें ॥११७॥  
 जैसे अंधाराचें । दिसे ना स्वरूप । घेवोनियां दीप । पाहूं जातां ॥११८॥  
 तैसें आत्मरूप । विचारितां निकें । टिके ना लटिकें । अज्ञान हें ॥११९॥  
 स्थिरावतां होय । द्बळितां जाय । दुग्धीं जैसी माय । दुग्धाची ती ॥१२०॥  
 जागृति ना स्वप्न । समाधि नाहीं च । गाढ निद्रा ती च । होय जैसी ॥१२१॥  
 किंवा नभ वांझ । वायुविण रितें । तैसें अज्ञान तें । जाण बापा ॥१२२॥  
 सांज-वेळीं उभा । खांब कीं माणूस । ओळखावयास । येई ना हें ॥१२३॥  
 दिसे ना आकार । कोणता हि नीट । आभास अस्पष्ट । दिसे कांहीं ॥१२४॥  
 तैसें ब्रह्मरूप । सत्यस्वरूपांत । किंवा विपरीत । देखे ना जें ॥१२५॥  
 दिवस ना रात्र । ती च सांजवेळ । तैसें चि केवळ । अज्ञान हें ॥१२६॥  
 ब्रह्मस्वरूपाचें । जेथें नाहीं भान । विपरीत ज्ञान । तें हि नाहीं ॥१२७॥  
 ऐशा दशेलागीं । बोलती अज्ञान । राहे जें वेढोन । चैतन्यातें ॥१२८॥  
 तथा चैतन्यास । 'क्षेत्रज्ञ' हें नांव । अर्जुना स्वभाव । ऐक त्याचा ॥१२९॥  
 आपुलें स्वरूप । नेणोनि साचार । अज्ञानासी थोर । करावें गा ॥१३०॥  
 जाण क्षेत्रज्ञाचा । स्वभाव हा ऐसा । तुज गुडाकेशा । सांगितला ॥१३१॥  
 ऐशापरी क्षेत्र-क्षेत्रज्ञाचा 'योग' । जाणोनि घे चांग । धनुर्धरा ॥१३२॥  
 मायेपार्शीं ऐसा । ठेवणें संबंध । स्वभाव हा सिद्ध । चैतन्याचा ॥१३३॥  
 आपुल्या ठायीं च । अज्ञानासारिखें । चैतन्य तें देखे । नाना रूपें ॥१३४॥  
 जैसा कोणी रंक । होवोनि भ्रमिष्ट । म्हणे मी 'सम्राट' । आलों देखा ॥१३५॥

किंवा जैसा कोणी । होवोनि मूर्च्छित । मानी स्वर्लोकांत । गेलों ऐसैं ॥१३६॥  
 तैसी निज-दृष्टि । स्वरूपावरोन । चळतां दर्शन । मांडे जें जें ॥१३७॥  
 तथा नांव सृष्टि । प्रसवतों मी च । बोळती वःयां च । जर्गी ऐसैं ॥१३८॥  
 आतां पुन्हां हा चि । सिद्धांत गहन । सांगूं विवरून । स्पष्टपणें ॥१३९॥  
 परी धनंजया । तत्त्व हें आधर्वें । करीं स्वानुभवें । आपुलेंसैं ॥१४०॥  
 पुरुष मी पार्था । अविद्या ही पत्नी । अनादि तरुणी । जाण माझी ॥१४१॥  
 न येती वर्णाया । हिचे कोणा गुण । ऐसी विलक्षण । गृहिणी ही ॥१४२॥  
 वस्तुतां अस्तित्व । नसोनि कांहीं च । व्याप्ति हिची साच । अमर्याद ॥१४३॥  
 स्वरूपीं जो जागे । तथासी ही दूर । समीप साचार । निद्रितासी ॥१४४॥  
 मज स्वतांलागीं । लागतां चि ज्ञाप । होय आपोआप । जागृत ही ॥१४५॥  
 माझिया चि सत्ता- । संभोगें साचार । राहें गरोदर । गृहिणी ही ॥१४६॥  
 माया-महदब्रह्म- । आपुल्या उदरीं । आठ हि विकारीं । प्राकृतिक ॥१४७॥  
 जगद्रूप गर्भ । वाढविते कैसा । तें चि गुडाकेशा । एक आतां ॥१४८॥  
 उभयांचा संग । घडतां पहिलें । देख जन्मा आलें । बुद्धि-तत्त्व ॥१४९॥  
 रजोगुणें बुद्धि । भारली जातां च । जन्म होय साच । मनाचा गा ॥१५०॥  
 मनाची अर्धांगी । ममता साचार । रची अहंकार- । तत्त्व मग ॥१५१॥  
 तथात्रिया योगें । पंचमहाभूतें । येती व्यक्तत्वातें । धनंजया ॥१५२॥  
 इंद्रियें विषय । पंचमहाभूती । अंतर्भूत होती । स्वभावतां ॥१५३॥  
 म्हणोनियां महा- । भूतांसमवेत । सर्व होती व्यक्त । तीं हि पार्था ॥१५४॥  
 अष्ट विकारांचा । होवोनियां क्षोभ । त्रिगुणांचा गर्भ- । पिंड जो का ॥१५५॥  
 तो हि होतां व्यक्त । प्रवेशे तथांत । जीव वासनेत । राहिला जो ॥१५६॥  
 सूक्ष्म वृक्षाकार । धरी बीज-कणी । भेटतां चि पाणी । जैशा रीती ॥१५७॥  
 तैसी माझ्या संगें । अविद्या ती देख । प्रकटे अनेक । विश्वांजुरी ॥१५८॥  
 मग तथा गर्भ- । गोलाचा आकार । उमटे साचार । कैसा एक ॥१५९॥  
 अंडज स्वेदज । उद्भिज्ज जारज । अंगें हीं सहज । उमटती ॥१६०॥

१ बेशुद्ध. २ विसूं लागतें. ३ प्रकृतीच्या आठ विकारांनां. ४ स्पष्टपणाला. ५ विध्वरूपी कोंभांनां.  
 अ. ज्ञा. २९

व्योम-वायु-बळें । गर्भरस वाढे । तेव्हां रूप चढे । अंडजासी ॥१६१॥  
 घालोनियां पोटीं । तम आणि रज । तोय आणि तेज । बळावतां ॥१६२॥  
 निश्चयेंकरोन । होतसे उत्पन्न । अवयव जाण । स्वेदज हा ॥१६३॥  
 हीन तमो-गुणें । उद्भिज्ज केवळ । पृथ्वी आणि जळ । वाढतां चि ॥१६४॥  
 व्योम वायु तेज । तोय आणि पृथ्वी । वागती आवर्षीं । सहकार्यें ॥१६५॥  
 तेविं तरारती । बुद्धि आणि मन । जाण हीं कारण । जारजातें ॥१६६॥  
 जारजादि ऐसे । हातपाय चार । अर्जुना साचार । जयाचे गा ॥१६७॥  
 अश्या प्रकृति । हें चि ज्याचें शिर । विशाल उदर । प्रवृत्तीचें ॥१६८॥  
 निवृत्ति ही पाठ । जयाची गा नीट । नाभी-तटीं आठ । सुर-योनी ॥१६९॥  
 रमणीय स्वर्ग । हा चि कंठ चांग । होय मध्यभाग । मृत्युलोक ॥१७०॥  
 पाताळ तें जाण । जयाचें ढुंगण । ऐसें विलक्षण । बाळ एक ॥१७१॥  
 अविद्यामाउली । प्रसवली देख । बाळसें त्रिलोक । जयाचें गा ॥१७२॥  
 लक्ष चौऱ्याऐशीं । होती परें सांधे । ऐसें बाळ वाढे । प्रतिदिन ॥१७३॥  
 तया बाळाचिया । नाना अवयवीं । नामाचे लववी । अलंकार ॥१७४॥  
 मोह-स्तन-पान । तयासी देवान । करिते पोषण । नित्य नवें ॥१७५॥  
 भिन्न भिन्न सृष्टि । हीं च बोटें होती । आंगठ्या शोभती । देहरूपी ॥१७६॥  
 अविचार-कालीं । दिसे जें सुंदर । ऐसें चराचर-रूपी बाळ ॥१७७॥  
 एकुलतें एक । प्रसवोनि भली । कैसी थोरावली । अविद्या ही ॥१७८॥  
 विष्णु हा मध्याह्न । ब्रह्मा प्रातःकाळ । शिव सायंकाळ । धाळाचा ह्या ॥१७९॥  
 तिन्ही कार्ळीं खेळ । खेळोनि सर्वथा । दमतां भागतां । बाळक हें ॥१८०॥  
 महा-प्रळयाच्या । अंथरुणावरी । मग निद्रा करी । शांत गुणें ॥१८१॥  
 पुन्हां कल्पारंभीं । खेळ खेळूं लागे । होवोनियां जागे । भेद-ज्ञानें ॥१८२॥  
 ऐशापरी मिथ्या । दृष्टीचिया घरीं । कैसें क्रीडा करी । कौतुकानें ॥१८३॥  
 युग-मालिकांचीं । पाउलें टाकीत । हिंडे फिरे तेथ । बालक हें ॥१८४॥  
 जयातें संकल्प । आवडे बहुत । खेळगडी होत । अहंकार ॥१८५॥

परी हें सकळ । लोपतें तत्काळ । अर्जुना निर्मळ । आत्मज्ञानें ॥१८६॥  
असो बहु ऐसें । विश्व माया व्याली । तेथ साह्य झाली । माझी 'सत्ता ॥१८७॥

सर्वभोनिषु कौन्नेय मूर्तयः संभवन्ति याः ।

तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥४॥

म्हणोनि मी पिता । महामाया माता । बाळक सर्वथा । विश्व जाण ॥१८८॥  
आतां भिन्न भिन्न । शरीरें देखोन । 'न भंगो ते ज्ञान । एकत्वाचें ॥१८९॥  
मन बुध्दादिक । आठ हि विकार । एक त्रि सात्त्वर । नाना देहीं ॥१९०॥  
नाना अवयव । परी देह एक । विश्व तैसें देख । अभेदत्वे ॥१९१॥  
एका त्रि बीजाच्या । जैसा नाना शाखा । खालीं वरी ज्या का । पसरल्या ॥१९२॥  
तैसा जाण माझा । संबंध केवळ । मृत्तिकेचें बाळ । घट जैसा ॥१९३॥  
किंवा पार्यां जैसें । वस्त्रपण साचें । होय कापसाचें । नातवंड ॥१९४॥  
किंवा 'कल्लोळांची । परंपरा मात्र । होय 'अर्ध्याची च । संतति ती ॥१९५॥  
तैसा माझा जाण । विश्वाशीं संबंध । दोहोंमार्जी भेद । नको मानूं ॥१९६॥  
वह्नि आणि ज्वाळा । एक त्रि तीं जैशीं । तैसा मी विश्वाशीं । एकरूप ॥१९७॥  
मजपासोनियां । विश्वाची उत्पत्ति । नको ऐसी भ्रांति । धरूं वायां ॥१९८॥  
नको मजहून । मानू विश्व भिन्न । सकळ संपूर्ण । मी च एक ! ॥१९९॥  
उद्भवतां विश्व । मीच जरी झांके । तरी कोण फांके । विश्वपणें ? ॥२००॥  
रत्नाचिया तेजें । काय रत्न लोपे ? । भूषणें हारपे । सुवर्णत्व ? ॥२०१॥  
फांकलें कमळ । कमळत्वा मुके ? । अवयवीं झांके । 'अवयवी ? ॥२०२॥  
अवयवीचें त्या । अवयव हें च । नव्हे काय साच । रूप सांगें ॥२०३॥  
किंवा पक्व दशा । पावतां कणीस । पेरिल्याचा नाश । म्हणूं ये का ? ॥२०४॥  
म्हणोनि बाजूस । सारोनियां जग । मातें घ्यावें मग, । तैसा नोहें ॥२०५॥  
विश्वा हि सकट । सर्व कांहीं मी च । निश्चय हा साच । धरीं जीवीं ॥२०६॥  
माझ्या कडोनि च । माझे प्रकाशन । होय भिन्न भिन्न । देहांमार्जी ॥२०७॥  
तेविं त्रिगुणांनीं । बद्ध झालों मी च । ऐसें वाटे साच । धनंजया ॥२०८॥



जैसें स्वप्नामार्जीं । आपुलें मरण । आपण कल्पोन । भोगावें गा ॥२०९॥  
 काविळीनें डोळे । होवोनि पिवळे । देखती सगळें । पिवळें च ॥२१०॥  
 रवि-प्रकाशें च । दिसे मेघजाल । 'आदित्य-मंडल । 'आच्छादी जें ॥२११॥  
 जरी कोणा भय । वाटे धनंजया । आपुली च छाया । देखोनियां ॥२१२॥  
 तरी साउली ती । तया 'भीताहून । होय काय भिन्न । सांगें मज ॥२१३॥  
 जैसा छायेचा त्या । तो चि प्रकाशक । त्याहून आणिक । नोहे च ती ॥२१४॥  
 तैसा मी अनेक । होतसें अर्जुना । प्रकाशोनि नाना । शरीरें हीं ॥२१५॥  
 नाना देहीं मज । गुणांचें बंधन । करीं प्रकाशन । मी च त्याचें ॥२१६॥  
 आपुली आपणा । होतां ओळखण । मोक्षासी कारण । बंधन हि ॥२१७॥  
 परी आत्मज्ञान । नाही जया ठायीं । तथें मोक्ष तो हि । बंध होय ! ॥२१८॥  
 कोण्या गुणें कैसा । बद्ध माझा मी च । भासतसें साच । ऐक आतां ॥२१९॥  
 गुण किती कोठें । जाहले निर्माण । नाम आणि वर्ण । काय त्यांचे ॥२२०॥  
 तैविं धनंजया । काय त्यांचे धर्म । सांगेन तें वर्म । तुज येथें ॥२२१॥

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः ।

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥५॥

सत्त्व रज तम । जाण हे त्रिगुण । प्रकृतिपासोन । निपजती ॥२२२॥  
 सत्त्व तें उत्तम । रज तें मध्यम । कनिष्ठ तें तम । स्वभावे चि ॥२२३॥  
 बाल्य तारुण्यादि । तीन हि अवस्था । एका देहीं पार्था । होती जैसा ॥२२४॥  
 तैसी 'वृत्ति एक । परी ऐसें वाटे । त्रिगुणत्वे नटे । अंतरी ती ॥२२५॥  
 सुवर्णमाझारीं । मिसळतां हीण । तयाचें वजन । वाढे जों जों ॥२२६॥  
 तों तों हीणकम । होवोनि तें 'हेम । पावतें परम । 'निकृष्टता ॥२२७॥  
 ना तरी जागृति । लोपतां आळसें । दृढावोनि बैसे । निद्रा जैसी ॥२२८॥  
 तैसी अज्ञानाचा । करोनि स्वीकार । वृत्ति जी बाहेर । निधे पार्था ॥२२९॥  
 वाढतां वाढतां । होय ती सहज । देख सत्त्व-रज-तमोरूप ॥२३०॥  
 आतां दावूं खूण । कैसे हे त्रिगुण । टाकिती बांधोन । आत्म्यालागीं ॥२३१॥

जीवदशेमार्जी । आत्मा सुनिर्मळ । पार्था अळुमाळ । प्रवेशतां ॥२३२॥  
 देह चि मी ऐसा । धरी अभिमान । विसर पडोन । आत्मत्वाचा ॥२३३॥  
 मग 'यावज्जन्म । देहधर्म जे जे । ते ते सर्व माझे । म्हणू लागे ॥२३४॥  
 माशाच्या तोंडीं । पडेना 'कवळ । तों चि ओढी गळ । 'धीवर तो ॥२३५॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।

सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥६॥

तैसे सुख-ज्ञान-। रूपी पाश ओढी । चतुर पारधी । सत्त्वगुण ॥२३६॥  
 मग 'व्याध-पार्शी । सांपडे हरिणी । तैसा सुख-ज्ञानीं । जीव गुंते ॥२३७॥  
 मग ज्ञान-बळें । करी बडबड । मिरवी उदंड । जाणिवेंतें ॥२३८॥  
 नित्य स्वयंसुख । जें का धनंजया । घालवी तें वायां । आपण चि ॥२३९॥  
 विद्या आणि मान । लाधतां संतोष । होय जया हर्ष । लाभमात्रें ॥२४०॥  
 म्हणे धन्य धन्य । मी च समाधानी । मी च सुखी ज्ञानी । ऐसें बोले ॥२४१॥  
 अष्टसात्विकांसी । मी एक आधार । ऐसा अहंकार । मनीं वाहे ॥२४२॥  
 एवढें बंधन । नाहीं पुरे होत । अंगीं भरे भूत । विद्रत्तेचें ॥२४३॥  
 स्वयें ज्ञानरूप । हें तों विसरला । परी नाहीं त्याला । दुःख त्याचें ॥२४४॥  
 विषयांच्या ज्ञानें । जाय जो फुगोन । म्हणे श्रेष्ठपण । आलें मज ॥२४५॥  
 जैसा राजा एक । स्वप्नमार्जी रंक । होवोनियां भीक । मागूं जातां ॥२४६॥  
 तथा लाभतां च । मूठपसा दाणे । इंद्र झालों म्हणे । स्वर्गाचा मी ॥२४७॥  
 तैसा देहातीत । देहवंत होतां । मानी कृतार्थता । बाह्यज्ञानें ॥२४८॥  
 विज्ञानीं प्रवीण । 'यज्ञविद्यावेत्ता । स्वर्गावरी सत्ता । म्हणे माझी ॥२४९॥  
 नाहीं मजविण । आणिक सज्ञान । ऐसा अभिमान । मनीं वाहे ॥२५०॥  
 चातुर्य-चंद्रासी । जणूं माझे चित्त । जाहलें सांप्रत । नभाऐसें ॥२५१॥  
 सुख-ज्ञानरूपी । घालितो वेसण । ऐसा सत्त्वगुण । जीवालागीं ॥२५२॥  
 मग तथासी तो । नाचवितो तैसें । नाचवावें जैसें । नंदीबैला ॥२५३॥  
 ह्या चि देहीं जीवा । बांधी रजोगुण । कैसा तें सांगेन । ऐक आतां ॥२५४॥

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् ।

तन्निबध्नाति कान्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥७॥

रंजवी जीवामी । म्हणोनियां ह्यासी । रजोगुण ऐमी । संज्ञा देती ॥२५५॥  
 रजोगुणाठार्यां । काम मूर्तिमंत । तारुण्यावस्थंत । राहे सदा ॥२५६॥  
 जीवीं रजोगुण । प्रवेशतां अल्प । चढे आपोआप । कामोन्माद ॥२५७॥  
 मग तृष्णेचिया । वाऱ्यावरी स्वार । होवोनियां स्वैर । जीव धांवे ॥२५८॥  
 अग्निहुंडामार्जीं । ओंतोनियां दृत् । ज्वाळ धगधगीत । पेटवितां ॥२५९॥  
 मग सुकें आलें । ऐसी भाषा काय । सर्व कांहीं जाय । जळोनियां ॥२६०॥  
 तैसी बळावतां । त्रिषयांची चाड । दुःख हि तें गोड । ऐमें वाटे ॥२६१॥  
 इंद्राचें वैभव । उभें ठाके पुढें । तरी तें हि थोडें । वाटूं लागे ॥२६२॥  
 तृष्णा अनिवार । वाढतां चि ऐसी । मेरू हि हातासी । जरी आला ॥२६३॥  
 तरी तयाहून । सहस दाहण । करावें म्हणोन । झटूं लागे ॥२६४॥  
 सांठविलें धन । वेंचिलें आधवें । तरी काय सावें । मग पुढें ॥२६५॥  
 म्हणोनियां व्याप । वाढवी बेफाट । योजना अचाट । आंग्णोनियां ॥२६६॥  
 स्वर्गलोकीं चांग । ध्यावे नाना भोग । करूं धांवे याग । ह्या चि साठीं ॥२६७॥  
 बांधोनि तलाव । धर्मशाळादिक । धार्मिक याज्ञिक । होऊं पाहे ॥२६८॥  
 काम्यकर्माविण । नेणे आणिकार्ते । व्रतापाठीं व्रते । आचरे तो ॥२६९॥  
 ऐसा खटाटोप । वाहे रात्रंदिन । जैसा प्रभंजन । आषाढींचा ॥२७०॥  
 तया पुढें मासा । चंचळ तो कैसा । पुरुष तो ऐसा । रजोगुणी ॥२७१॥  
 कामिनी-कटाक्ष । बोलती चंचळ । परी तो तोलेल । कैसा ह्याशीं ॥२७२॥  
 चंचलतेमार्जीं । विजेतें हि मागें । टाकोनि हा वेगें । धनंजया ॥२७३॥  
 स्वर्ग-संसारची । धरोनियां आशा । उडी घेई कैसा । कर्माशींत ॥२७४॥  
 देहातीत परी । होतां देहवंत । तृष्णेच्या पाशांत । सांपडोनि ॥२७५॥  
 गळां वाहे ऐसा । व्याप व्यापाराचा । रजोगुणें साचा । जीवात्मा हा ॥२७६॥  
 रजाचें बंधन । देहीं देहवंता । दारुण सर्वथा । जाण ऐसें ॥२७७॥

आतां तुज सांगूं । तमाचें कौतुक । धनंजया ऐक । एकचित्तें ॥२७८॥

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।

प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निवध्नाति भारत ॥८॥

तमोगुणाचें तें । येतां चि पडळ । व्यापार सकळ । मंदावती ॥२७९॥

तमोगुण जाण । मेघ काळाभोर । मोहरूपी घोर । रात्रींतील ॥२८०॥

तमातें जीवन । मिळे अज्ञानाचें । भुलोनियां नाचे । विश्व जेणें ॥२८१॥

अविचार हाच । ह्याचा महा-मंत्र । हें तों मद्य-पात्र । मूढतेचें ॥२८२॥

असो हें जीवासी । मोहिनी घालोन । टाकी जखडोन । चौबाजूंनीं ॥२८३॥

देहातें चि आत्मा । मानिती जे कोणी । तयांसी बंधनीं । घाली ऐसें ॥२८४॥

शरीरीं सर्वत्र । माजतां हें एक । राहे ना आणिक । दुजें तेंथें ॥२८५॥

सर्व इंद्रियांसी । येतसे जडत्व । मनासी मूढत्व । तमोगुणें ॥२८६॥

आळसाचा जोर । वाढोनियां फार । येऊं लागे भर । जांभयांसी ॥२८७॥

करूं नये कांहीं । असावें सुस्तीत । आळेपिळे देत । ऐसें वाटे ॥२८८॥

पात्रारिल्याविण । बोले 'ओ' म्हणोन । दृष्टि उघडोन । बैसे जरी ॥२८९॥

तरी देखे ना तो । तमोगुणी कांहीं । पडोनियां राही । सुस्तपणें ॥२९०॥

न बोले ना हाले । मुरकुंडी मारून । बैसे रात्रंदिन । धोंडा जैसा ॥२९१॥

कोसळोनि पडो । वरी नभःप्रांत । किंवा पाताळांत । जावो पृथ्वी ॥२९२॥

परी उठावें हें । येई च ना मनीं । राहतो झोंपोनि । सुस्तपणें ॥२९३॥

ऐसा होतां सुस्त । काय तें उचित । काय अनुचित । हें हि नेणे ॥२९४॥

रहावें लोळत । जेथच्या तेंथें च । ऐसी बुद्धि साच । तयाची गा ॥२९५॥

टेकोनियां गालीं । तळहात दोन्ही । मस्तक घालोनि । गुडघ्यांत ॥२९६॥

झोंपेमाजीं गुंग । आवडीनें होई । मग स्वर्ग तो हि । तुच्छ लेखी ॥२९७॥

होवोनि चिरायु । झोंपोनि रहावें । घेतसे हा जीवें । छंद एक ॥२९८॥

किंवा वाटे जातां । कलंडे तो जेंथें । तया वाटे तेंथें । झोंपावें च ॥२९९॥

अमृत आणोनि । मग दिलें कोणीं । तरी विकारोनि । दूर लोटी ॥३००॥

आंधळ्यानें जैसें । होवोनि संतप्त । आवेशें धांवत । मुटावें गा ॥३०१॥  
 तैसा बलात्कारें । करी जरी कांहीं । तरी तें सर्व हि । ज्ञानशून्य ॥३०२॥  
 कैसें केव्हां काय । कोणाशीं बोलावें । नेणे चि वागावें । कोठें कैसें ॥३०३॥  
 साध्यासाध्याचा हि । करी ना विचार । तमाचा संचार । होतां अंगीं ॥३०४॥  
 सर्व हि वणवा । टाकीन पुसोन । पंख झडपोन । एकदां चि ॥३०५॥  
 ऐसी मनीं हांव । धरोनियां वेडी । पतंग तो उडी । घाली जैसा ॥३०६॥  
 तमोगुणी तैसा । होवोनियां पिसा । अचाट साहसा । प्रवर्ते गा ॥३०७॥  
 करूं नये तें तें । करावया धांवे । त्वेषाचिया हांवे । भरोनियां ॥३०८॥  
 काय सांगूं फार । ऐसा अनिवार । प्रमादीं च भर । असे त्याचा ॥३०९॥  
 एवं निद्रालस्य— प्रमाद हे तीन । पाश आवळोन । जोरदार ॥३१०॥  
 देख तमोगुण । बांधोनियां घेत । उपाधिरहित । शुद्ध जीवा ॥३११॥  
 काष्ठालागीं अग्नि । व्यापोनियां राही । मग दिसे तो हि । काष्ठकार ॥३१२॥  
 किंवा घटामाजीं । राहिलें आकाश । तया घटाकाश । ऐसें नांव ॥३१३॥  
 नातरी भरलें । सरोवर जळें । चंद्रत्व बिंबलें । तेथें जैसें ॥३१४॥  
 तैसें स्वयंसिद्ध । आत्मतत्त्व शुद्ध । गुणाभासीं बद्ध । झालें वाटे ॥३१५॥

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भरत ।

ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ॥९॥

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत ।

रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥१०॥

देहीं कफवात । हरोनियां पित्त । कोपतां संतप्त । देह जैसा ॥३१६॥  
 किंवा ग्रीष्म आणि । वर्षाकाळ—मास । सारोनि बाजूस । दोहोंतें हि ॥३१७॥  
 मग हिम—काल । बळावतो जेव्हां । आकाश हि तेव्हां । थंडगार ॥३१८॥  
 किंवा स्वप्न आणि । जागृती हीं दोन । सर्वथा लोपोन । धनंजया ॥३१९॥  
 गऱ्हा निद्रा येतां । क्षण एक पाहीं । चित्तवृत्ति ती हि । जड होय ॥३२०॥  
 तैसीं रज—तमें । हारपोनि दोन्हीं । सत्त्व बळ्यावोनि । राहे जेव्हां ॥३२१॥

तेव्हां पार्था जाण । सुखी मी सज्जान । ऐसा अभिमान । धरी जीव ॥३२२॥  
 सत्त्व आणि रज । लोपोनि केवळ । वाढतां चि बळ । तमाचें तें ॥३२३॥  
 जीव सर्वथैव । राहे ना सावध । करी नानाविध । प्रमादातें ॥३२४॥  
 तेविं सत्त्व तम । घालोनि पोटांत । होतां बळवंत । रजोगुण ॥३२५॥  
 कर्माविण कांहीं । चांग दुजें नाहीं । ऐसें मानी देहीं । देहराज ॥३२६॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते ।  
 ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ॥११॥  
 लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।  
 रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥१२॥  
 अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।  
 तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥१३॥  
 यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ।  
 तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥१४॥  
 रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते ।  
 तथा प्रलीनस्तमासि मूढयोनिषु जायते ॥१५॥

आतां रजतमा । जिंकोनियां पार्था । सत्त्व वळावतां । ऐसें होय ॥३२७॥  
 रिघतां वसंत । ज्यापरी अर्जुना । सुगंध मावे ना । पद्म-दलीं ॥३२८॥  
 तैसी अंतरांत । प्रज्ञा ओतप्रोत । भरोनि फांकत । चोर्हींकडे ॥३२९॥  
 सर्वेंद्रियांठायीं । विवेक जागृति । डोळस ते होती । हातपाय ॥३३०॥  
 राजहंसाचिया । चोंचीचें जें टोंक । निवडितें देख । क्षीर-नीर ॥३३१॥  
 तेविं दोषादोष- । विवेकीं साचार । इंद्रियें तत्पर । होती त्याचीं ॥३३२॥  
 होवोनि पाईक । तयाचिया धरीं । स्वयें सेवा करी । संयमन ॥३३३॥  
 ऐकूं नये तें तें । वगळिती कान । स्वयें चि आपण । धनंजया ॥३३४॥  
 पाहूं नये जें जें । दृष्टी च तें गाळी । अवाच्य तें टाळी । जीभ चि गा ॥३३५॥  
 ठाके ना निषिद्ध । इंद्रियांसमोर । जैसा का अंधार । दीपापुढें ॥३३६॥

महानदी जैसी । वर्षाकाळीं भरे । तैसी बुद्धि ठरे । सर्वशास्त्रीं ॥३३७॥  
 भरोनियां राहे । सर्वत्र आकाशीं । चंद्रप्रभा जैसी । पौर्णिमेस ॥३३८॥  
 तैसी ज्ञानीं वृत्ति । फांकते सर्वत्र । वासना एकत्र । होवोनियां ॥३३९॥  
 मनालागीं येई । विषयांचा वीट । पडोनि ओहट । प्रवृत्तीसी ॥३४०॥  
 जाण पार्था देहीं । सत्त्वगुण वाढे । तयाचें उघडें । लक्षण हें ॥३४१॥  
 ऐशा स्थितीमार्जीं । जरी देह जाय । तरी गति काय । तें हि सांगूं ॥३४२॥  
 अमोनि ऐश्वर्य । अपार औदार्य । आणिक हि धैर्य । वसे अंगीं ॥३४३॥  
 तरी कां न व्हावी । इहलोकीं कीर्ति । आणि सुख-प्राप्ति । परलोकीं ॥३४४॥  
 सणासुकाळांत । स्वर्गांतून भला । पाहुणा पातला । आवडता ॥३४५॥  
 तरी तयाहून । दुजें भलें चांग । धनंजया सांग । काय अमे ॥३४६॥  
 तैसी होय वृद्धि । सत्त्वाची देहान्तीं । तरी तया गति । दुजी कोठें ? ॥३४७॥  
 शरीर सांडोन । जें का भोग-स्थान । निघे जो आपण । एकाएकीं ॥३४८॥  
 गुणश्रेष्ठ सत्त्व । घेवोनि सांगातीं । तया लाभे गति । सत्त्वाची च ॥३४९॥  
 काय सांगूं फार । जया सत्त्वीं आस्था । तया ज्ञानवंतां- । मार्जीं जन्म ॥३५०॥  
 राजा राजैश्वर्यें । पर्वतीं पातला । तरी तेंथें त्याला । काय उणें ? ॥३५१॥  
 ना तरी येथींचा । दीप तेथें नेला । तरी का मुकला । दीपत्वामी ॥३५२॥  
 तैसी जयाची ती । सत्त्व-गुण-शुद्धि । ज्ञानासर्वें वृद्धि । पावोनियां ॥३५३॥  
 पाहूं लागे बुद्धि । विवेकीं निःशंक । महत्तत्त्वादिक । विचारोनि ॥३५४॥  
 मग होय तया । विचारामकट । जयाचा शेवट । ब्रह्म-पदीं ॥३५५॥  
 वेदान्तीं छत्तीस । वर्णिलीं जीं स्पष्ट । त्याहून जें श्रेष्ठ । सदतिसावें ॥३५६॥  
 नातरी सांख्यांचीं । चोवीस जीं तत्त्वे । त्याहून जें नवें । पंचविसावें ॥३५७॥  
 किंवा सत्त्वादिक । तीन हि लोपोन । स्वभावे जें पूर्ण । उरें चौथें ॥३५८॥  
 तें चि परब्रह्म । सर्व सर्वोत्तम । जाहलें सुगम । जयांलागीं ॥३५९॥  
 तयांचिया कुळीं । तया सत्त्ववंता । लाभे जन्म पार्था । निरुपम ॥३६०॥  
 ह्या च परी जेव्हां । तम आणि सत्त्व । खचोनि महत्त्व । रजामी ये ॥३६१॥

जेव्हां देहीं रज । होवोनि प्रबळ । घाली धुमाकूळ । स्वकृतीचा ॥३६२॥  
 तेव्हां जीं जीं होती । लक्षणें प्रकट । अर्जुना तीं नीट । एक आतां ॥३६३॥  
 सर्व पदार्थासी । वेंटाळोन जैसी । भोंवते आकाशीं । वाहुटळ ॥३६४॥  
 तैसे नाना भोग । भोगावया देख । देई मोकळिक । इंद्रियांसी ॥३६५॥  
 परस्त्रीचा भोग । मानी ना निषिद्ध । रजोगुणें बद्ध । जाहला जो ॥३६६॥  
 मग शेळीलागीं । चरवावें जैसें । यथेच्छ तो तैसे । भोग भोगी ॥३६७॥  
 सर्वथा अप्राप्य । तेवढें च उरें । वेंटाळितां मारें । पर-द्रव्य ॥३६८॥  
 ऐसा अनावर । पोटीं लोभ त्या । जो का धनंजया । रजोबद्ध ॥३६९॥  
 पुढें येई तें तें । करावया धांवे । प्रवृत्तीच्या हांवे । भरोनियां ॥३७०॥  
 वेध लावी ऐसा । बांधावा प्रासाद । किंवा अश्वमेध । करावा गा ॥३७१॥  
 अचाट हा छंद । त्याच्या मना । जो का रजोगुणा- । धीन झाला ॥३७२॥  
 बांधावे तलाव । खणाव्या विहिरी । रचाव्या नगरी । मनोरम ॥३७३॥  
 नाना उपवनें । नाना क्रीडा-स्थानें । नाना महावनें । उभारावीं ॥३७४॥  
 ह्यापरी अफाट । कर्म हातीं घ्यावें । बांधोनियां जीवें । हीच आस ॥३७५॥  
 इहपरलोकीं । नाना भोग घ्यावे । पुरे न म्हणावें । भोगितां ते ॥३७६॥  
 ऐसी अभिलाषा । दुर्भर अपार । सागर हि हार । खाय जेथें ॥३७७॥  
 आणि अग्नीचें हि । दुर्भरत्व जाण । कवडीसमान । ठरे जेथें ॥३७८॥  
 आशा तृष्णा घेती । मनापुढें धांव । इच्छा घाली विश्व । पायांतळीं ॥३७९॥  
 होतां वृद्धिगत । देहीं रजोगुण । लक्षणें दिसोन । येती ऐसीं ॥३८०॥  
 ऐशा स्थितीमार्जीं । जरी देह जाय । तरी गति काय । तें हि सांगूं ॥३८१॥  
 आशा तृष्णा इच्छा । घेवोनि हीं सर्व । रजोगुणी जीव । धनंजया ॥३८२॥  
 मानुषी योनींत । पुन्हां पावे जन्म । करावया कर्म । तैसें चि तें ॥३८३॥  
 राजमंदिरांत । मुखें बैसो रंक । तरी काय भीक । चुके त्यासी ॥३८४॥  
 असो समर्थाच्या । वरातीचें घोंडें । तरी करबाडें । चुकती ना ॥३८५॥  
 म्हणोनियां जेथें । विसावा नाही च । कर्माचा ऐसा च । व्याप ज्यांचा ॥३८६॥



तयांच्या पंक्तीस । जुंपिला तो जाय । फार सांगूं काय । धनुर्धरा ॥३८७॥  
 रजाचिया डोहीं । ऐसा बुडे तया । कर्मासक्तांचिया । कुळीं जन्म ॥३८८॥  
 आतां रज सत्त्व । दोन्ही हि गिळोन । पावे तमोगुण । उत्कर्षातें ॥३८९॥  
 तेव्हां अंतर्बाह्य । लक्षणें जीं देहीं । सांगूं एक तीं हि । एकचित्तें ॥३९०॥  
 अमावास्यारात्रीं । रविचंद्रहीन । जैसें तें गगन । तमोमय ॥३९१॥  
 तैसें सर्वथैव । तयाचें गा मन । अज्ञानें भरोन । जाय पार्था ॥३९२॥  
 लोपे सारासार- । विचाराची शक्ति । अल्प हि ना स्फूर्ति । अंतरांत ॥३९३॥  
 चित्त हि उजाड । मति होय जड । कायसा दगड । तिजपुढें ॥३९४॥  
 माजे अविवेक । अंतर्बाह्य देहीं । होय स्मृतीची हि । वाताहात ॥३९५॥  
 मग सूर्खत्वाची । एक देवधेव । बद्ध होतां जीव । तमोगुणें ॥३९६॥  
 पार्था निरंतर । नाचे अनाचार । इंद्रियांसमोर । तयाचिया ॥३९७॥  
 तयाचिया चित्ता । आवडे दुष्कर्म । उल्हासें आजन्म । तें च करी ॥३९८॥  
 घुबडासी जैसें । अंधारीं च दिसे । तैसें तया पिसें । निषिद्धाचें ॥३९९॥  
 निंद्य कर्मीं ऐसी । उत्कटेच्छा जेथें । धांव घेती तेथें । इंद्रियें हि ॥४००॥  
 बडबडूं लागे । सन्निपाताविना । झिंगे मद्यपाना- । वांचोनि तो ॥४०१॥  
 प्रेमाविण वेडा । भुलोनियां जाय । तैसी स्थिति होय । तयाची गा ॥४०२॥  
 चित्त तरी गेलें । ठिकाणावरोन । परी तें उन्मन । नव्हे साच ॥४०३॥  
 होवोनि उन्मत्त । ऐसा मोहाधीन । करी रात्रंदिन । अनाचार ॥४०४॥  
 काय सांगूं फार । लक्षणें हीं जाण । पोषी तमोगुण । निजबळें ॥४०५॥  
 ऐशा स्थितिमार्जीं । जरी मृत्यु घडे । तरी सर्वें जोडे । सर्व हि तें ॥४०६॥  
 राई राईपण । बीजीं सांठवोन । अंगातें सांडोन । जाय जरी ॥४०७॥  
 तरी तें चि बीज । अंकुरतां साच । होय राईचें च । झाड पुन्हां ॥४०८॥  
 नातरी दीपासी । पाजळोनि अग्नि । सर्वथा विज्ञोनि । गेला जरी ॥४०९॥  
 तरी तया दीपीं । अस्तित्व तयाचें । परिपूर्ण साचें । नसे काय ? ॥४१०॥  
 म्हणोनि संकल्प । तमोगुणें युक्त । आणि देह-पात । घडे जरी ॥४११॥

तरी जीवालागीं । पार्था निःसंदेह । पुन्हां तमोदेह । धेणें पडे ॥४१२॥  
 बहु बोलूं काय । तमोवृद्धि होय । आणि देह जाय । जरी पार्था ॥४१३॥  
 तरी पशु-पक्षी-। कृमि-कीटकांचा । नातरी वृक्षाचा । जन्म जीवा ॥४१४॥

कर्मणः सुकृतस्याऽऽहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम् ।

रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥१६॥

ह्या चि साठीं जें जें । सत्त्वगुणयुक्त । सर्व तें सुकृत । वेदवाक्यें ॥४१५॥  
 म्हणोनि त्या पुण्या । सुखज्ञानफळ । सात्त्विक सरळ । लोकोत्तर ॥४१६॥  
 दिसावया रम्य । कडू वृंदावनें । तैसीं रजोगुणें । होती जीं जीं ॥४१७॥  
 तीं तीं सर्व कर्में । दाखवोनि सुख । दुःखरूप देख । फळ देती ॥४१८॥  
 नातरी निंबोळ्या । दिसाया सुंदर । अंतरीं जहर । परी जैसें ॥४१९॥  
 तैसीं जीं जीं कर्में । रजोगुणोत्पन्न । जाण तीं दारुण । दुःखदायी ॥४२०॥  
 विषांकुरा जैसें । विष हें चि फळ । येतसे केवळ । धनुर्धरा ॥४२१॥  
 तैसें जें जें कर्म । तमोगुणोत्पन्न । तयाचें अज्ञान । हें चि फळ ॥४२२॥

सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च ।

प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥१७॥

जैसा दिनमाना । सूर्यनारायण । सत्त्व चि कारण । तैसें ज्ञाना ॥४२३॥  
 निजस्वरूपाचें । जैसें विस्मरण । होतसे कारण । जीवदशे ॥४२४॥  
 तैसा रजोगुण । धनंजया जाण । होतसे कारण । लोभालागीं ॥४२५॥  
 त्याचपरी मोह । प्रमाद अज्ञान । इत्यादि मलिन । दोष-संघ ॥४२६॥  
 तम हें चि मूळ । तयाचें सर्वथा । जाण बुद्धिमंता । धनंजया ॥४२७॥  
 तळहार्तीं जैसा । आंवाळा घेवोनि । सर्वहि बाचूंनीं । दाखवावा ॥४२८॥  
 विचाराच्या डोळां । तैसे भिन्न भिन्न । येथें तिन्ही गुण । दाखविले ॥४२९॥  
 तंव कळों आलें । रजतमोगुण । सर्वथा कारण । पतनासी ॥४३०॥  
 एक सत्त्वगुण । ज्ञानसुखदाता । जाण पंडु-सुता । मुनिश्रयें ॥४३१॥  
 म्हणोनियां चौथी । जैसी ज्ञानभक्ति । सर्वत्यागें घेती । ज्ञानीलोक ॥४३२॥

तैसी आमरण । सत्त्वगुणवृत्ति । अंगीं बाणविती । कोणी एक ॥४३३॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।

जधन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥१८॥

ऐसा 'सत्त्वोत्कर्ष' । बाणे जयां अंगीं । त्यां तनु-त्यागीं । स्वर्ग-भोग ॥४३४॥

त्या च परी जाण । पार्था रजोगुण । देहीं आमरण । पोषिती जे ॥४३५॥

देहान्तीं ते पुन्हां । मानव होवोनि । येती परतोनि । मृत्युलोकीं ॥४३६॥

मग सुख-दुःख । कालवांनि भात । एकाचि ताटांत । देहाचिया ॥४३७॥

लागे तें चि अन्न । करावें सेवन । चुके ना मरण । जेथें पार्था ॥४३८॥

देहीं तमोगुण । होय वर्धमान । आणिक मरण । आलें जरी ॥४३९॥

तरी त्या जीवा । मुनिश्रयें जाण । दिलें आमंत्रण । दुर्गतीनें ॥४४०॥

एवं आत्म्याचिया । सत्तामात्रें देख । कैमे सत्त्वादिक । तिन्ही गुण ॥४४१॥

ऊर्ध्व-मध्य-अधो- । गतीसी कारण । तें तुज संपूर्ण । सांगितलें ॥४४२॥

आत्मा आत्म्याठायीं । संपूर्णत्वे असे । आत्मपणें वसे । निरंतर ॥४४३॥

परी स्व-रूपाचा । पडतां विसर । करोनि स्वीकार । त्रिगुणांचा ॥४४४॥

जया गुणांचें जें । विशेष लक्षण । तैसें चि वर्तन । करूं लागे ॥४४५॥

निज-राज्यावरी । विपक्षाची स्वारी । आली ऐसें जरी । पाहे स्वर्गीं ॥४४६॥

तरी त्या राजाचें । राजत्व न जाय । हारजीत काय । मग कैची ॥४४७॥

तैसा उर्ध्वादिक । गुणवृत्तिभेद । परी आत्मा शुद्ध । स्वरूपें चि ॥४४८॥

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टाऽनुपश्यति।

गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥१९॥

असो बोलणें हें । आतां 'अप्रस्तुत' । ऐसें नको येथ । मानूं पार्था ॥४४९॥

एक सावधान । तुज सारभूत । मागील सिद्धान्त । पुन्हां सांगूं ॥४५०॥

देहाचें निमित्त । करोनि हे गुण । निपजती जाण । स्वभावं चि ॥४५१॥

जैसा काष्ठाकारें । अग्नि अवतरे । किंवा वृक्षाकारें । भूमिरस ॥४५२॥

किंवा दहाचिया । मिषें दूध जैसें । प्रकटे कीं उरें । गोडी जैसी ॥४५३॥

तैसे स्थूल सूक्ष्म । देहमिधें जाण । अर्जुना त्रिगुण । प्रकटतां ॥४५४॥  
 जीवासी बंधन । घडे ऐसें वाटे । परी ऐक मोठें । नवल हें ॥४५५॥  
 न मोडे जीवाचें । नित्यमुक्तपण । एवढें बंधन । असोनि हि ॥४५६॥  
 स्वभावानुसार । देहीं व्यवहार । करिती साचार । त्रिगुण हे ॥४५७॥  
 तरी आत्मयाची । गुणातीत स्थिति । ढळे ना किरिटी । अणुमात्र ॥४५८॥  
 ऐसें जें सहज । अखंड संपूर्ण । असे मुक्तपण । आत्मयाचें ॥४५९॥  
 तें चि सांगूं आतां । धनंजया तुज । होसी ज्ञानांबुज-नि द्विरेफ तूं ॥४६०॥  
 चैतन्य जें गुणी । नव्हे गुणाजोगें । ऐसें तुज मागें । सांगितलें ॥४६१॥  
 तेवीं चि हें यथें । तुज सांगूं स्पष्ट । देवोनियां चित्त । ऐक आतां ॥४६२॥  
 पावतां जागृति । स्वप्न हा आभास । ऐसें प्रत्ययास । येई जैसें ॥४६३॥  
 तैसें ज्ञान-बोधें । गुणाभासाहून । आत्मतत्त्व भिन्न । ऐसें कळे ॥४६४॥  
 किंवा उभा कोणी । नदी-तटीं राहे । जळीं पाहतहे । आपणातें ॥४६५॥  
 तंव तयालागीं । तरंगागणिक । भासती अनेक । प्रतिबिंबें ॥४६६॥  
 किंवा नट जैसा । घेई सोंगें नाना । परी विसरे ना । आपणासी ॥४६७॥  
 तैसें चि आपण । वेगळें राहोन । पहावे त्रिगुण । साक्षित्वानें ॥४६८॥  
 किंवा राहे जैसें । अलिप्त गगन । धरोनि हि तीन । ऋतूलागीं ॥४६९॥  
 तैसे तिन्ही गुण । करोनि धारण । राहे तयांहून । वेगळें जें ॥४७०॥  
 आपल्या चि ठायीं । स्वयंसिद्ध असे । सोऽहंभावे वसे । अंतरांत ॥४७१॥  
 तेथोनि पाहतां । मग पंडु-सुता । म्हणे मी अकर्ता । साक्षीभूत ॥४७२॥  
 सर्व हि कर्मासी । गुण चि कारण । राहे उदासीन । जाणोनि हें ॥४७३॥  
 सत्त्वादिक भेदी । कर्माचा विस्तार । सर्व तो विकार । गुणांचा च ॥४७४॥  
 वनामार्जी ऋतु । वसंत तो जैसा । वनश्री-विलासा । हेतु होय ॥४७५॥  
 तैसा गुणांचिया । विकारा कारण । असोनि मी पूर्ण । उदासीन ॥४७६॥  
 किंवा तारकांनीं । लोपोनियां जावें । उद्दीपित व्हावें । सूर्यकातें ॥४७७॥  
 पद्मों विकासावें । तमें हारपावें । होय हें आर्घवें । सूर्योदयीं ॥४७८॥

परी त्या सर्वासी । आपण कारण । ऐसें नाहीं भान । सूर्यालार्गीं ॥४७९॥  
 साक्षित्वें मी तैसा । देहीं राहें जाण । अकर्ता होवोन । सत्तारूप ॥४८०॥  
 गुणातें देखें मी । गुण-प्रकाशक । होवोनि पोषक । गुणतेचा ॥४८१॥  
 गुणांचा निरास । होतां चि साचार । उरें जें का सार । तें हि मी च ॥४८२॥  
 उर्ध्वपंथें तया । गुणातीतपण । जयालार्गीं ज्ञान । ऐसें होय ॥४८३॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।

जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥२०॥

ज्ञानाचें माहेर । जाहला म्हणोन । जाणे तो निर्गुण । आणिक जें ॥४८४॥  
 सरितेसी जैसें । येई सिंधुपण । मिळतां चि जाण । सागरातें ॥४८५॥  
 तैसी माझी सत्ता । पावे तो साचार । काय सांगूं फार । धनंजया ॥४८६॥  
 फांदीवरी राघू । राहिला बैसोन । नलिकेवरोन । उठोनियां ॥४८७॥  
 तैसी देहाहंता । सर्वथा सांडोन । राहे तो जडोन । सोऽहंब्रह्मीं ॥४८८॥  
 अज्ञाननिद्रेंत । होता जो घोरत । आतां तो जागृत । स्व-स्वरूपीं ॥४८९॥  
 भेदबुद्धिरूप । आरिसा गळोन । पडला हातोन । तयाचिया ॥४९०॥  
 आतां जीवरूप । प्रतिबिंबाभास । दिसे ना तयास । स्वभावे चि ॥४९१॥  
 शांत होतां वारा । सागराची लाट । जैसी सागरांत । लीन होई ॥४९२॥  
 तैसें जीवेशांचें । ऐक्य तयाठायीं । लुप्त होतां देहीं । देहाहंता ॥४९३॥  
 पावतां वर्षान्त । जैसें घनजात । आटोनियां जात । अंतराळीं ॥४९४॥  
 तैसा चि मद्भाव । तयालार्गीं प्राप्त । होय हातोहात । धनंजया ॥४९५॥  
 पावतां मद्रूप । असोनि तो देहीं । तयालार्गीं नाहीं । गुण-बंध ॥४९६॥  
 भिंगाचिया घरें । दीपाचा प्रकाश । आवरावयास । न ये जैसा ॥४९७॥  
 किंवा वडवाग्नि । सागरीं असोन । जाय ना विज्ञोन । जळें जैसा ॥४९८॥  
 तैसें त्याचें ज्ञान । होय ना मलिन । जरी हे त्रिगुण । आले गेले ॥४९९॥  
 आकाशीचा चंद्र । जळीं जैसा राहे । तैसा देहीं आहे । वास तया ॥५००॥  
 आपुलाल्या बळें । देहीं हे त्रि-गुण । नाचविती जाण । नाना सोंगें ॥५०१॥

परी तयांकडे । पहावयातें हि । धाडी ना केव्हां हि । अहंतेंतें ॥५०२॥  
 ऐसा सर्वांपरी । सुस्थिर अंतरीं । जाणे ना शरीरीं । काय घडे ॥५०३॥  
 आपुल्या अंगींची । टाकोनियां कात । सर्प विळ्या आंत । प्रवेशतां ॥५०४॥  
 त्वचेसी त्या कोण । सांभाळित बैसे । पार्था झालें तैसें । देहाचें त्या ॥५०५॥  
 पद्मगंधालागीं । येतां पक्कदशा । जाय तो आकाशा । मिळोनियां ॥५०६॥  
 मग आकाशीं तो । होतां चि विलीन । न ये परतोन । पद्म-कोषीं ॥५०७॥  
 तसा तो पुरुष । त्यजोनि आभास । होतां समरस । पर-ब्रह्मीं ॥५०८॥  
 देहाची तों वार्ता । तयालागीं नाहीं । नेणें चि तो काहीं । देह-धर्म ॥५०९॥  
 मग जन्म-जरा-। मृत्यु इत्यादिक । साही गुण देख । देहाचे जे ॥५१०॥  
 राहिले देहीं च । सर्व हि ते आतां । ब्रह्मतादात्म्यता । पावतां तो ॥५११॥  
 फुटोनियां घट । अर्जुना साचार । हेतां चकाचूर । खापन्यांचा ॥५१२॥  
 मग घटाकाश । तें तों आपोआप । महाकाशरूप । होय जैसें ॥५१३॥  
 तैसी देहबुद्धि । लोपोनियां जातां । स्वरूपाची होतां । आठवण ॥५१४॥  
 सर्वत्र सर्वदा । स्वरूपावांचोन । मग बुजें कोण । कोठें आहे ॥५१५॥  
 ज्ञानसंपन्नता । ऐसी लाभे थोर । असोनि साचार । देहवारी ॥५१६॥  
 म्हणोनि मी त्यातें । म्हणे गुणातीत । अखंड जाग्रत । स्वरूपीं जो ॥५१७॥  
 एकोनि हे बोल । पार्थ सुखावला । मेधें तृप्त केला । मोर जैसा ॥५१८॥

अर्जुन उवाच —

कैलिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।

किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥२१॥

तेणें सुखें पार्थ । देवालागीं पुसे । गुणातीता कैसें । ओळखावें ॥५१९॥  
 देवा तूं साचार । कृपेचें माहेर । सांगावें सत्वर । मज आतां ॥५२०॥  
 गुणातीताचें त्या । कैसें आचरण । कैसे तिन्ही गुण । निवारी तो ॥५२१॥  
 षड्गुणांचा राणा । देव नारायण । एकोनि हा प्रथ । अर्जुनाचा ॥५२२॥  
 काय तयालागीं । प्रसंगानुसार । देतसे उत्तर । एका आतां ॥५२३॥

१ कमळाच्या सुवासाला. २ कमळाच्या करंड्यांत. ३ मिळून गेल्यावर ४ सावध. ५ दूर करतो.  
 अ. ज्ञा. ३०

म्हणे हें तों काय । पुसमी गा येथें । नवल हें वाटे । तुज्जे मज ॥५२४॥  
 गुणातीत ऐमें । नांव त्रि हें पाहें । खूण दाविताहे । तयाची गा ॥५२५॥  
 गुणातीत नोहे । कदा गुणाधीन । गुणांचें बंधन । नाहीं तया ॥५२६॥  
 परी गुणाधीन । किंवा गुणातीत । कैसें हें निभ्रांत । ओळखावें ॥५२७॥  
 गुणी गुणाहून । वेगळा कीं बद्ध । साच कैसा शोध । घ्यावा ह्याचा ॥५२८॥  
 जरी हा संदेह । वाहे तुज्जे मन । तरी सुखें प्रथ । करीं ऐसा ॥५२९॥  
 सांगूं आतां तुज । कोण गुणातीत । देवोनियां चित्त । ऐक पार्था ॥५३०॥

श्रीभगवानुवाच—

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ।

न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥२२॥

देहीं रजोगुण । होतां बळजोर । कर्मासी अंकुर । फुटोनियां ॥५३१॥  
 तया गुणातीता । सर्व हि बाजूनीं । प्रवृत्ति वेढोनि । घेई जरी ॥५३२॥  
 तरी मी कर्मठ । ऐसा अहंकार । शिवे ना साचार । तयालागीं ॥५३३॥  
 आणि जरी खुंटे । कर्माची प्रवृत्ति । तरी नाहीं मती— लागीं खेद ॥५३४॥  
 नातरी वाढोन । देहीं सत्त्वगुण । मूर्खेदियां ज्ञान । फांके जरी ॥५३५॥  
 तरी मी सुविद्य । ऐसा ज्ञान—मद । नाहीं किंवा खेद । तो हि तैसा ॥५३६॥  
 किंवा तमोगुण । वाढतां अर्जुना । तयासी ग्रासी ना । मोह—भ्रम ॥५३७॥  
 आणि अज्ञानत्वे । होई ना तो कष्टी । स्वीकारी ना दृष्टि । अज्ञानाची ॥५३८॥  
 ज्ञानाची लालसा । धरी ना तो कांहीं । प्राप्त होतां देहीं । तमोगुण ॥५३९॥  
 होतां ज्ञानवंत । वाढोनियां सत्त्व । धरी ना तो हांव । कर्मारंभीं ॥५४०॥  
 रजोगुणें आला । कर्माशीं संबंध । तरी नाहीं खेद । तयालागीं ॥५४१॥  
 होवो सायं प्रातर । ना तरी मध्याह्न । राहे उदासीन । सूर्य जैसा ॥५४२॥  
 तैसा गुणातीत । राहे तो अलिप्त । नित्य त्रिगुणांत । वावरोनि ॥५४३॥  
 काय पर्जन्यें च । मागर तो भरे । ना तरी का उरे । न्यून तेथें ? ॥५४४॥  
 तैसें सत्त्वगुणें । देहीं प्रवेशावें । तेव्हां चि का व्हावें । ज्ञान तया ? ॥५४५॥

किंवा हिमालय । होतां 'हिममय । कांपूं लागि काय । थरथरां ? ॥५४६॥  
 तैसा गुणातीत । प्रवर्ते कर्मांत । म्हणोनि का होत । कर्मठ तो ? ॥५४७॥  
 ना तरी 'प्रखर । झाला 'उष्णकाळ । तरी का जाळील । अग्नीलागीं ? ॥५४८॥  
 तैसा गुणातीता । मोह प्राप्त होय । तरी मुके काय । ज्ञानासी तो ? ॥५४९॥

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।

गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति-नेङ्गते ॥२३॥

धनंजया गुण । आणि गुणकार्यं । आघर्वे चि ह्येय । आपण तो ॥५५०॥  
 म्हणोनियां वाढो । गुण कोणता हि । तयासी तों नाहीं । सुख-दुःख ॥५५१॥  
 धर्मशाळेमार्जीं । वाटसरू यावा । व्यात्रया विसांवा । क्षणभरी ॥५५२॥  
 तैसा गुणातीत । राहे उदासीन । देहीं परिपूर्ण । स्वानुभवे ॥५५३॥  
 युद्धभूमि जैसी । नेणे 'हार-जीत । संग्रामी तटस्थ । राहोनियां ॥५५४॥  
 तैसा गुणातीत । गुणातें जिंकीना । हार हि जाईना । गुणांमी तो ॥५५५॥  
 गुणांकडोनियां । करवीना काहीं । गुण हि तो नाहीं । जाण ऐसें ॥५५६॥  
 मृगजळ्याचिया । उसळोत लाटा । ढळेना सर्वथा । मेरू जैसा ॥५५७॥  
 तैसे तिन्ही गुण । येवोत जावोत । परी तो अस्वस्थ । नोहे कदा ॥५५८॥  
 धनंजया आतां । काय बोलूं फार । गिळी ना अंधार । भास्करासी ॥५५९॥  
 किंवा आकाशासी । लोटीना 'पवन । भुलवीना स्वप्न । जागृतासी ॥५६०॥  
 तैसें गुणातीता । जाण पंडु-सुता । त्रि-गुण सर्वथा । बांधितीना ॥५६१॥  
 प्रेक्षक तो जैसा । बाहुल्यांचा नाच । पाहे दुरोनी च । साक्षित्वानें ॥५६२॥  
 तैसा गुणातीत । सांपडे ना गुणीं । कौतुके दुरोनी । पाहे तयां ॥५६३॥  
 वर्ते सत्कर्मांत । सत्त्वगुण साच । रजोविशेषीं च । रजोगुण ॥५६४॥  
 आणि तमोगुण । करी व्यवहार । सर्वदा साचार । मोहादींचा ॥५६५॥  
 परी नभीं सूर्य । जैसा धनुर्धरा । लोक-व्यवहारा । हेतु होय ॥५६६॥  
 तैसा गुणातीत । जाण पां साचार । कर्मासी आधार । गुणांचिया ॥५६७॥  
 होतां चंद्रोदय । द्रवे सोमकांत । होय विकसित । 'कुमुदिनी ॥५६८॥

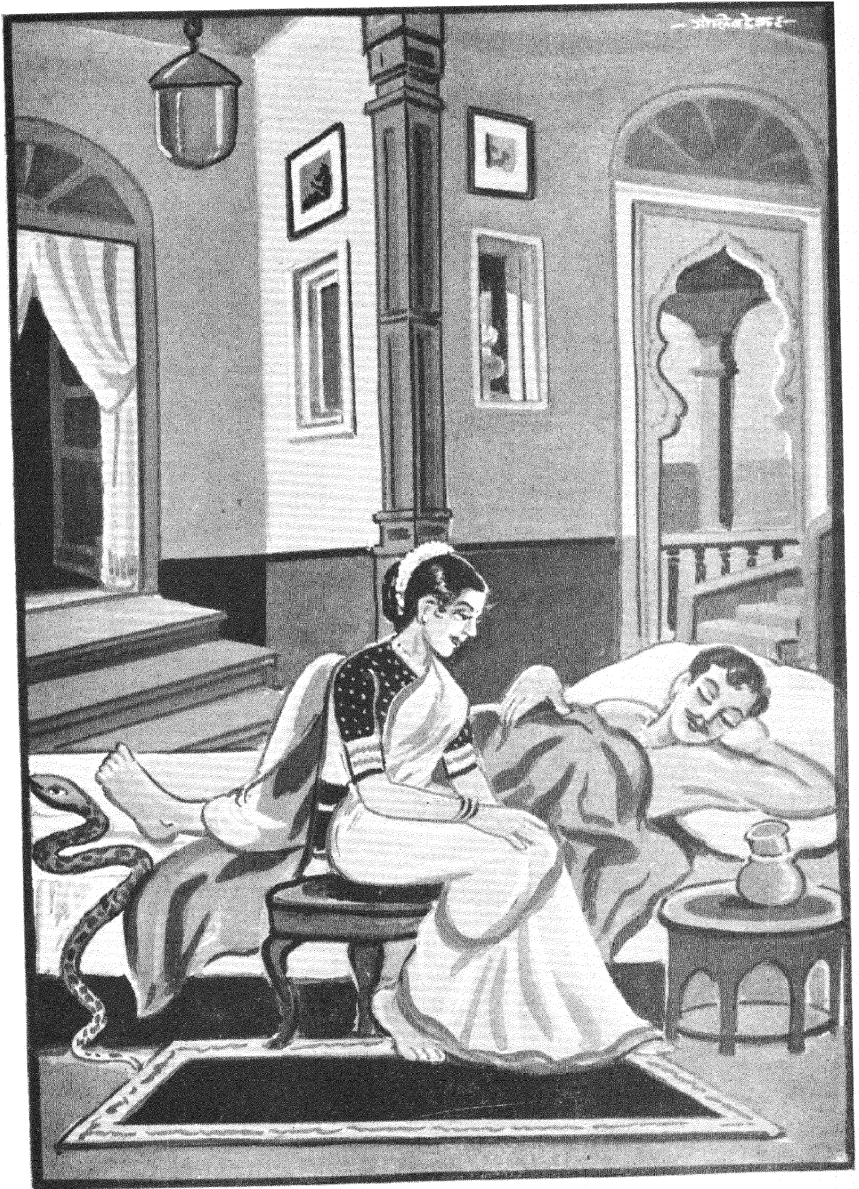


उचंबळे 'अब्धि । परी चंद्र उगा । तैसा गुणी तो गा । गुणातीत ॥५६९॥  
 वाहो कीं न वाहो । नर्भीं प्रभंजन । निश्चळ गगन । राहे जैसें ॥५७०॥  
 तैसा गुणातीत । राहतो निश्चळ । जरी खळबळ । त्रि-गुणांची ॥५७१॥  
 गुणातीताची ही । ऐसी खूण जाण । आतां आचरण । एक त्याचें ॥५७२॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।

तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥२४॥

देखें पंडु-सुता । एक चि तें सूत । वस्त्रीं ओतप्रोत । असे जैसें ॥५७३॥  
 तैसा गुणातीत । विश्व चराचर । पाहे निरंतर । मद्रूप चि ॥५७४॥  
 म्हणोनि देणगी । श्रीहरीची जैसी । भक्तां-वैरियांसी । सारखी च ॥५७५॥  
 तैसें सुखदुःखीं । धनंजया जाण । समान वर्तन । असे त्याचें ॥५७६॥  
 देह-जळीं मत्स्य । होवोनि रहावें । तेव्हां चि भोगावें । सुखदुःख ॥५७७॥  
 परी आतां त्याची । देहतादात्म्यता । खुंटली सर्वथा । आत्मभावे ॥५७८॥  
 सांडोनियां भूस । निवडतां बीज । तैसा तो सहज । स्व-स्वरूपीं ॥५७९॥  
 भेटतां सिंधूसी । जैसें गंगाजळ । थांबे खळबळ । आपोआप ॥५८०॥  
 तैसा आत्म-रूपीं । जयासी आराम । तया देहीं सम । सुख-दुःख ॥५८१॥  
 असो रात्र किंवा । होवो सूर्योदय । एक चि तें होय । धारणासी ॥५८२॥  
 तैसा आत्म-रूपीं । राहिला रंगोन । तया दंद्रभान । कैचें देहीं ॥५८३॥  
 असो अंगापाशीं । सर्प कीं उर्वशी । निद्रितासी जैसीं । सारखीं च ॥५८४॥  
 तैसा निरंतर । स्व-स्वरूपीं राही । तया दंद्रें देहीं । एकरूप ॥५८५॥  
 म्हणोनि तयासी । धोंडा आणि रत्न । सोनें आणि शेण । सारखें च ॥५८६॥  
 घरीं येवो स्वर्ग । किंवा खावो वाघ । तयाची अभंग । आत्म-बुद्धि ॥५८७॥  
 जैसा कोणी मृत । होई ना जाग्रत । नाहीं अंकुरत । दग्ध-बीज ॥५८८॥  
 तैसी साम्यबुद्धि । तयाची मोडेना । गुणातीतपणा । ज्याच्या ठायीं ॥५८९॥  
 विधाता म्हणोन । केली स्तुति साच । निदिला कीं नीच । म्हणोनियां ॥५९०॥  
 परी स्थैर्यामाजीं । अल्प हि ना उणें । जळूं विझूं नेणे । राख जैसी ॥५९१॥



असो अंगापाशी । सर्प की उर्वशी । निद्रितासी जैसी । सारखी च ॥५८१॥



तैसी होवो निंदा । किंवा होवो स्तुति । नाहीं तयाप्रति । हर्ष-खेद ॥५९२॥  
उजेड अंधार । आदित्यालागोनि । निंदा स्तुतिं दोन्ही । तैसीं त्यासी ॥५९३॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।

सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥२५॥

ईश्वर हा ऐसें । म्हणोनि पूजिला । ना तरी 'गांजिला । चोराऐसा ॥५९४॥  
किंवा हत्ती घोडे । चतुरंग सेना । देवोनियां राणा । केला त्यासी ॥५९५॥  
ना तरी समीप । इष्ट मित्र आले । किंवा प्राप्त झाले । दुष्ट वैरी ॥५९६॥  
परी गुणातीत । सर्वथा अलिप्त । नेणे दिन-रात । सूर्य जैसा ॥५९७॥  
साही ऋतूंमार्जी । जैसें का गगन । राहे उदासीन । सर्वकाळ ॥५९८॥  
तैसा गुणातीत । नेणे भेद-भाव । सर्वत्र सदैव । सम पाहे ॥५९९॥  
आणिक हि एक । तयाचा आचार । मावळे 'व्यापार । जणूं सर्व ॥६००॥  
नाहीं कर्मरंभ । तयाचिया ठायीं । गंधवार्ता नाहीं । प्रवृत्तीची ॥६०१॥  
कर्मफळें जेथें । जळोनियां जाती । होय तो ती मूर्ति । ज्ञानाग्नीची ॥६०२॥  
'इह-परलोकीं । ध्यावे भोग नाना । ऐसी उपजेना । इच्छा जीवीं ॥६०३॥  
प्रारब्धाच्या योगें । होय जें जें प्राप्त । जाय तो सेवीत । सुखें तें चि ॥६०४॥  
पाषाणासि जैसा । संतोष ना शीण । तैसा उदासीन । सर्व कर्मी ॥६०५॥  
सांगूं किती ऐसा । जयाचा आचार । जाण तो साचार । गुणातीत ॥६०६॥  
कैसें त्रिगुणासी । जावें ओलांडून । ऐक तें सांगेन । देव म्हणे ॥६०७॥

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।

स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥२६॥

तरी 'व्यभिचार । सांडोनि सर्वथा । मातें उपासितां । भक्ति-योगें ॥६०८॥  
होती तिन्ही गुण । आपुल्या आधीन । निश्चयें हें जाण । धनंजया ॥६०९॥  
कैसी माझी भक्ति । कोण मी अर्जुना । एकनिष्ठपणा । काय कैसा ॥६१०॥  
सर्व हि तें सांगूं । करोनि विशद । होय तुज बोध । जेणें योगें ॥६११॥  
रत्न आणि तेज । एक चि अभिन्न । तैसें विश्व जाण । माझें रूप ॥६१२॥

किंवा द्रवपण । तें चि जैसैं नीर । ना तरी अंबर । आकाश चि ॥६१३॥  
 गोडी आणि गूळ । अग्नि आणि ज्वाळ । पद्म आणि दळ । एकरूप ॥६१४॥  
 किंवा शाखा-फल- । पुष्पादि सकळ । वृक्ष चि केवळ । होय जैसा ॥६१५॥  
 मुरालें जें दूध । तें चि दहीं होय । किंवा हिमालय । हिमाचा चि ॥६१६॥  
 तैसें धनंजया । विश्व येणें नांवें । जाण पां आघवें । मी च आहे ॥६१७॥  
 काय चंद्रबिंब । सोलोनि पहावें । तेव्हां तें दिमावें । ऐसें आहे ? ॥६१८॥  
 जरी सुवर्णाचे । केले अलंकार । न मोडे साचार । सुवर्णत्व ॥६१९॥  
 किंवा जरी तूप । थिजोनि राहिलें । घृतत्व लोपलें । तयाचें का ॥६२०॥  
 काय उकलोनि । पहावें वसन । तेव्हां चि दिमोन । येई धागा ॥६२१॥  
 मृत्तिकेचें रूप । पहावया स्पष्ट । हवा काय घट । फोडावया ॥६२२॥  
 म्हणोनियां आधीं । विश्वपण जावें । मग मातें घ्यावें । तैसा नोहें ॥६२३॥  
 विश्वा हि सकट । सर्व काहीं मी च । मजविण साच । दुजें नाहीं ॥६२४॥  
 ऐशापरी मज । जाणणं किरीटी । तीच जाण भक्ति । एकनिष्ठ ॥६२५॥  
 विश्वांत माझ्यांत । दिसे भेद जरी । तरी व्यभिचारी । भक्ति ती च ॥६२६॥  
 ह्या चि लागीं सर्व । सांडोनियां भेद । जाण तूं अभेद- । चित्तें मज ॥६२७॥  
 एक धनंजया । आतां मजहून । नको मानूं भिन्न । आपणासी ॥६२८॥  
 सुवर्णाची टीक । लागली सौन्यासी । आपणा-देवासी । तैसें ऐक्य ॥६२९॥  
 सूर्या चि पामोन । होवोनि उत्पन्न । सूर्याचा किरण । सूर्यरूप ॥६३०॥  
 तैसा देवाचा तूं । देवरूप भक्त । आपणा विभक्त । नको मानूं ॥६३१॥  
 परमाणु जैसा । भूमीसी अभिन्न । किंवा हिमकण । हिमाचळीं ॥६३२॥  
 तैसें मजमार्जीं । आपुलें मीपण । मद्रूप होवोन । न्याहाळीं तूं ॥६३३॥  
 ना तरी तरंग । असो का लहान । परी सिंधूहून । नाहीं भिन्न ॥६३४॥  
 तैसा देवाहून । नोहें कदा भिन्न । देव चि होवोन । राहिलों मी ॥६३५॥  
 ऐसा एकभावें । दृष्टीचा उल्लास । भक्ति हें तयास । नांव देऊं ॥६३६॥  
 ज्ञानाचें साचार । रहम्य हें थोर । हें चि सर्व सार । योगाचें हि ॥६३७॥

पाहें धनंजया । सिंधु-जळधरा-। मार्जी जैसी धारा । अखंडित ॥६३८॥  
 सर्वदा सर्वत्र । तैसी त्याची वृत्ति । आदि-मध्य-अंती । ब्रह्मरूप ॥६३९॥  
 कूपाचिया तोंडीं । असे जें गगन । महाकाशाहून । भिन्न का तें? ॥६४०॥  
 तैसा मजहून । भक्त नाहीं भिन्न । दोषां एकपण । १ ठायींचें चि ॥६४१॥  
 २ सूर्यबिंबावेरीं । एक चि ती प्रभा । जैसी प्रतिबिंबा-। पासोनियां ॥६४२॥  
 तैसा सोऽहंभाव । धनंजया पाहीं । भक्ताचिया ठायीं । अखंडित ॥६४३॥  
 सोऽहंभावे वृत्ति । होतां तदाकार । मावळे साचार । सोऽहं तें हि ॥६४४॥  
 ३ संधवाचा कण । सिंधूमार्जी विरे । विरवणें नुरे । मग जैसें ॥६४५॥  
 ना तरी संपूर्ण । जाळीनियां तृण । अग्नि हि आपण । विज्ञे जैसा ॥६४६॥  
 तसा भेदभाव । लयासी नेवोन । ज्ञान हि जिरोन । जाय पार्था ॥६४७॥  
 मी तों पलीकडे । अलीकडे भक्त । उरे चि ना द्वैत । ऐमें काहीं ॥६४८॥  
 देव-भक्तांचें जें । अनादि एकत्व । तें चि शुद्धसत्त्व । प्रकटे गा ॥६४९॥  
 काय सांगूं पडे । एकत्वा हि मिठी । सर्व हि खुंटती । बोल जेथें ॥६५०॥  
 तेथें गुणातीत । जिंकितो त्रिगुण । उरेल कोडून । ऐसी भाषा ? ॥६५१॥  
 तुज मर्मज्ञातें । काय सांगूं फार । ब्रह्मत्व साचार । ऐमें जें का ॥६५२॥  
 तें तो पावे भक्त । उपासी जो मातें । ऐशापरी येथें । एकभावे ॥६५३॥  
 एकनिष्ठ साची । ऐशी भक्ति ज्याची । पतिव्रता त्याची । ब्रह्मता ही ॥६५४॥  
 पाहें धनंजया । गंगेचिया ओघें । वाहत जें निघे । खळखळां ॥६५५॥  
 तथा पाणियासी । सागराचें स्थान । निश्चयेंकरोन । मिळे जैसें ॥६५६॥  
 तैसा ज्ञानदृष्टी । सेवी मातें पार्था । ब्रह्मत्वाचा माथा । भूषवी तो ॥६५७॥  
 ह्या चि ब्रह्मत्वासी । नांव सायुज्यता । पुरुषार्थ चौथा । हा चि जाण ॥६५८॥  
 मानिसील जरी । माझें आराधन । होतसे सोपान । पर-ब्रह्मीं ॥६५९॥  
 म्हणोनि साधन । मी तों ब्रह्मत्वाचें । नको कल्पूं साचें । ऐमें पार्था ॥६६०॥  
 मी च मूर्तिमंत । पर-ब्रह्म जाण । ब्रह्म मजविण । दुजें नाहीं ॥६६१॥

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाऽहममृतस्याव्ययस्य च ।

शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥२७॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे  
गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

ब्रह्म ऐसें नांव । जयालार्गी देती । माझी च ती 'मूर्ति' । यथार्थत्वे ॥६६२॥  
मी च गा शाश्वत । अमृत अव्यय । 'संबोधिला' जाय । ऐशा शब्दी ॥६६३॥  
पाहें चंद्र आणि । चंद्राचें मंडल । एक चि केवळ । होय जैसें ॥६६४॥  
तैसें मजहून । ब्रह्म नाहीं भिन्न । मी च परिपूर्ण । ब्रह्मरूप ॥६६५॥  
नित्य जें 'निष्कंप' । पार्था धर्मरूप । सुख जें 'अमूप' । अद्वितीय ॥६६६॥  
आघवें अज्ञान । नाहींसें करोन । ज्ञान तें हि लीन । होय जेथें ॥६६७॥  
सर्व सिद्धान्तांचा । असे जो शेवट । तें चि मी प्रकट । परब्रह्म ॥६६८॥  
अहो अवधारा । भक्तांचा सोयरा । ऐसें धनुर्धरा । सांगतसे ॥६६९॥  
तंव धृतराष्ट्र । संजयालागोनि । म्हणे तुज कोणी । पुसिलें हें ॥६७०॥  
झडकरीं माझी । दूर करीं चिंता । सांगोनियां वार्ता । विजयाची ॥६७१॥  
कुरुश्रेष्ठाचे हे । ऐकोनि उदार । खेद झाला फार । संजयासी ॥६७२॥  
मनीं म्हणे ह्याची । कैसी माया वेडी । परमार्थी गोडी । नाहीं ह्यासी ॥६७३॥  
करी पुत्रस्नेहें । देवाशीं हि वैर । नवल हें थोर । वाटे मज ॥६७४॥  
तरी अपराध । घालोनि पोटांत । देव कृपावंत । तुष्ट होवो ॥६७५॥  
'घोटो' विवेकाची । औषधी ही चांग । मोह-महारोग । फिटो ह्याचा ॥६७६॥  
संजयासी ऐसें । घडतां चिंतन । होतां आठवण । संवादाची ॥६७७॥  
तयाचिया चिंतीं । तेंणें महापूर । उसळला थोर । आनंदाचा ॥६७८॥  
म्हणोनि तो आतां । उत्साहें वर्णील । कृपाळु गोपाळ । बोलिला जें ॥६७९॥  
एका निरूपीन । तयांतील भाव । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥६८०॥

इति श्री स्वामी स्वरूपानंदविरचित श्रीमत् अभंग-ज्ञानेश्वरी  
चतुर्दशोऽध्यायः । हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः ।  
श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय पंधरावा

आतां आपुलिया । हृदयाचा चांग । निर्मळ चौरंग । बनवोनि ॥१॥  
मग तयावरी । भावभक्तिवळें । बैसवूं पाउलें । श्रीगुरूचीं ॥२॥  
सर्वेन्द्रियरूपी । 'पद्म-कलिकांनीं । अंजुळी भरोनि । एकत्वाची ॥३॥  
तेणें ऐक्यभावे । द्रैत ओलांडोनि । श्रीगुरू-चरणीं । अर्घ्य देऊं ॥४॥  
एकनिष्ठतेचें । उदक घेवोन । 'प्रक्षाळूं चरण । श्रीगुरूचे ॥५॥  
श्रीगुरूचरणीं । अनन्य वासना । लाविलें तें जाणा । गंधबोट ॥६॥  
शुद्ध प्रेमरूपी । घागऱ्या सुंदर । घालूं सुकुमार । गुरुपार्यां ॥७॥  
अनन्य निर्मळ । आवड जी मोठी । घालूं 'पदांगुष्ठीं । 'जोडवीं तीं ॥८॥  
आनंदसुगंधें । परिपूर्ण भली । उमलली कळी । 'सात्त्विकाची ॥९॥  
तें चि अष्टदळ । कमळ सुंदर । वाहूं पायांवर । श्रीगुरूच्या ॥१०॥  
अहंतेचा धूप । जाळोनियां तेंथें । ओवाळूं पदातें । सोऽहं दीपें ॥११॥  
नित्य निरंतर । तद्रूप होवोनि । श्रीगुरूचरणीं । देऊं मिठी ॥१२॥  
घालूं निजदेह । आणि निजप्राण । खडावा ह्या दोन । गुरुपार्यां ॥१३॥  
भोग आणि मोक्ष । टाकूं ओंवाळून । चरणावरोन । श्रीगुरूच्या ॥१४॥  
धर्म-अर्थादिक । सर्व पुरुषार्थ । सुखें होती प्राप्त । जेणें योगें ॥१५॥  
पात्र होऊं आम्हीं । ऐशा थोर दैवा । करोनि ही सेवा । श्रीगुरूची ॥१६॥  
जेणें योगें ज्ञान । उत्कर्ष पावून । राहे विसावून । ब्रह्मपदीं ॥१७॥



जेणें योगें होय । वाचा मुरसाळ । सिंधु चि केवळ । अमृताचा ॥१८॥  
 कोटी पूर्णचंद्र । वक्तृत्वावरोन । सुखें ओवाळून । टाकावे कीं ॥१९॥  
 ऐसी मधुरता । अक्षरांमी प्राप्त । करोनि जें देत । थोर दैव ॥२०॥  
 सूर्यें अधिष्ठिली । पूर्व दिशा जैसी । सर्व हि विश्वासी । प्रकाशवी ॥२१॥  
 तैमी जेणें दैवें । करी वाचा भली । ज्ञानाची दिवाळी । श्रोतयांमी ॥२२॥  
 स्फुरे जेणें दैवें । ऐमें चि व्याख्यान । नाद-ब्रह्म सान । जयापुढें ॥२३॥  
 जयापुढें पूर्ण । कैवल्यनिधान । दिसेना साजोन । तें हि तैमें ॥२४॥  
 श्रवण सुखाच्या । मंडपांत चांग । जगें ध्यावा भोग । वासंतिक ॥२५॥  
 ऐसी बहरली । मुरसाळ भली । वाचारूप वेली । जेणें दैवें ॥२६॥  
 सांपडे ना स्थान । जयाचें म्हणोन । मुरडती मन । आणि वाचा ॥२७॥  
 तो चि देव होय । शब्दाचा विषय । थोर नव्हे काय । आश्चर्य हें ॥२८॥  
 कळेना ज्ञानासी । वळेना ध्यानासी । वस्तु जी का ऐसी । अगोचर ॥२९॥  
 ती च बोलांमार्जी । सांपडे सहज । एवढी सतेज । होय वाचा ॥३०॥  
 श्रीगुरुचरण- । पद्म-गंध लाधे । तेव्हां चि हें साधे । वाचेलार्गी ॥३१॥  
 ज्ञानदेव म्हणे । बहु बोळूं काय । आज भाग्यैश्वर्य । मातें चि तें ॥३२॥  
 मी तों श्रीगुरुचें । एकुळतें एक । लाडकें बालक । म्हणोनियां ॥३३॥  
 येथें तयांचिया । कृपेलार्गी पूर्ण । एकलें चि स्थान । ज्ञाळें आतां ॥३४॥  
 आपुलें सर्वस्व । मेघ आती जैसा । जाणोनियां तृपा । चातकार्ची ॥३५॥  
 तैसा निजबोध । ओतिला माझ्यांत । थोर कृपावंत । श्रीगुरूनीं ॥३६॥  
 म्हणोनियां माझें । रिकामें हें तोंड । जरी बडबड । करूं गलें ॥३७॥  
 तरी तया बोलीं । गीतेऐसी भली । गोड सांपडली । ब्रह्मविद्या ॥३८॥  
 रेतीचे हि होती । जैसे हिरे मोती । जरी दैवगति । सानुकूल ॥३९॥  
 आयुष्याची देारी । बळकट जरी । तरी प्रेम करी । मारितें हि ॥४०॥  
 भुकेची कीं वेळ । न्यावी निभावून । ऐसें नारायण । इच्छी जरी ॥४१॥  
 तरी जे आधर्णां । वैरिले हरळ । होती ते तांडुळ । अमृताचे ॥४२॥

तैशापरी जेव्हां । श्रीगुरु 'दातार । करिती स्वीकार । सेवकाचा ॥४३॥  
 तेव्हां आघवा चि । तयाचा संसार । होतसे साचार । मोक्षमय ॥४४॥  
 देखा पांडवांचें । जें जें काहीं न्यून । तें हि सांवरून । विश्वबंधें ॥४५॥  
 तयां न्यूनान्चीं च । पुराणें तीं भलीं । काय नाहीं केलीं । नारायणें ? ॥४६॥  
 तैमें गुरुराजें । माझे अज्ञपण । टाकिलें करोन । ज्ञानतुल्य ॥४७॥  
 परी असो आतां । पुरे हें वर्णन । वाहे ओसंडून । प्रेमभाव ॥४८॥  
 श्रीगुरु-माहात्म्य । वर्णिल संपूर्ण । ऐमें कोठें ज्ञान । असो शके ॥४९॥  
 आतां तयात्रिया । प्रसादें चि येथ । गीतेचें हृदय । सांगोनियां ॥५०॥  
 तुम्हां संतांचिया । पायांची चाकरी । करीन मी तरी । एका आतां ॥५१॥  
 मार्गें चौदाविया । अध्यायाशेवटीं । बोलिले श्रीपति । सिद्धांत हा ॥५२॥  
 होय इंद्रपद । स्वर्गलोकीं प्राप्त । जैमें यज्ञ-शत । आचरितां ॥५३॥  
 तैमें आलें ज्ञान । जयात्रिया हातीं । सायुज्यता मुक्ति । तयासी च ॥५४॥  
 किंवा शतजन्म । करी ब्रह्मकर्मा । तो चि होय ब्रह्म । दुजा नोहे ॥५५॥  
 सूर्याचा प्रकाश । डोळसालागींच । तैमें तें ज्ञानें च । मोक्ष-सुख ॥५६॥  
 पाहूं जातां जर्गी । दिस एकमात्र । असे जो का पात्र । ज्ञानालागीं ॥५७॥  
 दावील अंजन । पाताळींचें धन । जरी ते लोचन । पायाळूचे ॥५८॥  
 तैसी ज्ञानें मुक्ति । लाभेल सर्वथा । सिद्धान्त अन्यथा । नव्हे चि हा ॥५९॥  
 परी तें चि ज्ञान । स्थिरावेल चांग । ऐमें अंतरंग । शुद्ध हवें ॥६०॥  
 तरी काय ज्ञान । विरक्तीवांचून । राहील टिकून । अंतरांत ॥६१॥  
 म्हणानि वैराग्य । हवें धगधगीत । निश्चित हें मत । श्रीहरीचें ॥६२॥  
 तया सर्वज्ञासी । तें हि असे ठवें । कैसें बाणवावें । वैराग्य हें ॥६३॥  
 घालोनियां विष । रांधिलें पकात्र । जरी ऐसें ज्ञान । भोक्त्यालागीं ॥६४॥  
 तरी तो तें अन्न । चाखिल्यावांचोन । ताट चि लोटोन । उठे जैसा ॥६५॥  
 तैसा संसार हा । अनित्य सकळ । होतां चि केवळ । ज्ञान ऐमें ॥६६॥  
 मग वैराग्यामी । दिलें हांकलोन । तरी परतोन । पाठीं लागे ॥६७॥

पंचदशाध्यायीं । आतां जगदीश । वृक्षाकार-मिव । करोनियां ॥६८॥  
 कैसा हा संसार । मायिक नश्वर । ते चि सविस्तर । निरूपील ॥६९॥  
 उन्मूलतां वृक्ष । सहजें साचार । होतां बूड वर । शेंडा खालीं ॥७०॥  
 जाय तो मुकोन । मग वेगें जैसा । भव-वृक्ष तैसा । नव्हे देखा ॥७१॥  
 कौशल्यें रूपक । करोनियां हें चि । वारी संसाराची । येरझार ॥७२॥  
 मिथ्या हा संसार । कदा नव्हे साच । पटवोनि हें च । जीवालागीं ॥७३॥  
 अहंब्रह्म ऐसा । व्हावया निश्चय । असे हा अध्याय । पंधरावा ॥७४॥  
 तरी जीवेंभर्वें । द्यवें अवधान । ऐमें विनवोन । श्रोतेयांसी ॥७५॥  
 गीतेंतील हे चि । सिद्धांत बरवे । सांगेन आघवे । आतां येथें ॥७६॥  
 एका जो का ब्रह्मा-नंदाचा सागर । पूर्णेंदु साचार । सिद्धांचा जो ॥७७॥  
 द्वारकेचा राणा । देव तो श्रीकृष्ण । अर्जुनालागोन । ऐमें बोले ॥७८॥  
 म्हणे हा जो आड । येई विश्वाभास । पार्था स्व-रूपास । गांठूं जातां ॥७९॥  
 नव्हे तो संसार । बळें फोंफावला । महावृक्ष भला । ऐमें कल्पीं ॥८०॥  
 परी पाळेंमुळें । तळीं वरी शाखा । सकळांसारिखा । ऐसा नोहे ॥८१॥  
 म्हणोनियां ह्याचें । पाहूं जातां अंग । लागे चि ना थांग । कोणासी हि ॥८२॥  
 पेटवोनि अग्नि । दग्ध केलें बूड । ना तरी कुन्हाड । चालविली ॥८३॥  
 तरी असो वर । किती हि विस्तार । तयाचा विचार । कोण करी ॥८४॥  
 वृक्षाचें तें बूड । टाकितां तोडोन । पडे उपळोन । शाखांमवें ॥८५॥  
 आणिकामारिखा । परी नव्हे बापा । भव-वृक्ष सोपा । तोडावया ॥८६॥  
 पार्था अलौकिक । सांगतां कौतुक । वाढ अधोमुख । वृक्षाची ह्या ॥८७॥  
 नेणों किती उंच । भानु अंतराळीं । परी फांके तळीं । रश्मि-जाळ ॥८८॥  
 तैसा हा संसार- । वृक्ष लोकोत्तर । लागेना साचार । पार ह्याचा ॥८९॥  
 कल्पान्तीचें जळ । जैमें का मकळ । व्यापी अंतराळ । एकाएकीं ॥९०॥  
 तैसें आहे नाही । तें तें सर्व कांहीं । येणें एकें पाहीं । व्यापिलेंसे ॥९१॥  
 जैसा दिन-मणि । जातां मावळोनि । अंधारें भरोनि । राहे रात्र ॥९२॥

तैसा हा चि एक । देख अंतराळ । व्यापोनि सकळ । राहिलासे ॥९३॥  
 घ्यावा परिमळ । परी नाही फूल । खावें तरी फळ । नाही ह्यासी ॥९४॥  
 अर्जुना जें काहीं । आहे तें सर्व हि । वृक्ष चि हा पाहीं । भवरूप ॥९५॥  
 असे ऊर्ध्वमूळ । परी उन्मूळेना । म्हणोनि सुकेना । कल्पान्तीं हि ॥९६॥  
 वरी मुळें ऐसें । सांगितलें साच । परी तीं तैसीं च । खालतीं हि ॥९७॥  
 वडापिंपळासी । पारंख्यामाझारीं । शाखा जैशापरी । होती देख ॥९८॥  
 विस्तारला तैसा । वृक्ष हा चौफेर । म्हणोनियां फार । बळावला ॥९९॥  
 पसरल्या शाखा । खालीं च सकळ । ऐसें हि केवळ । नाही पार्था ॥१००॥  
 भव-वृक्षाच्या ह्या । उदाव्या अनेक । विस्तारल्या देख । वरतीं हि ॥१०१॥  
 जणूं वृक्षाकारें । विस्तारला वात । किंवा नभःप्रांत । पालवला ॥१०२॥  
 नातरी उत्पात्ति । स्थिति आणि लय । तिहींचा उदय । झाला वाटे ॥१०३॥  
 ऐसा हा प्रचंड । वृक्ष विश्वाकार । जाण पा साचार । ऊर्ध्वमूळ ॥१०४॥  
 भव-वृक्षाचा ह्या । ऊर्ध्वभाग कोण । तेविं काय खूण । मुळाची ती ॥१०५॥  
 कां गा खालीं खालीं । वाढत हा जाय । तेविं कैशा काय । शाखा ह्याच्या ॥१०६॥  
 किंवा कोण कैसीं । खालीं मुळें ह्यासी । शाखांची ती कैसी । ऊर्ध्व गति ॥१०७॥  
 तेविं कां गा ह्यासी । बोलती अश्वत्थ । निर्णय जो यथ । आत्मज्ञांचा ॥१०८॥  
 सर्व तें येईल । प्रत्ययासी नीट । ऐसें सांगूं स्पष्ट । विवरोनि ॥१०९॥  
 ऐक भाग्यवंता । निर्मल तूं साच । पात्रता तुझी च । असे येथें ॥११०॥  
 म्हणोनियां आतां । देई अवधान । सर्वांगाचे कान । करोनियां ॥१११॥  
 प्रेमरसपूर्ण । ऐसें हें भाषण । बोलिले श्रीकृष्ण । यादवेद्र ॥११२॥  
 तों चि पार्थाकारें । सारें अवधान । झालें अवतीर्ण । मूर्तिमंत ॥११३॥  
 एवढें व्यापक । असोनि गगन । टाकित्ती वेदून । दाही दिशा ॥११४॥  
 प्रभु श्रीहरीचें । तैसें निरूपण । व्यापक गहन । असोनि हि ॥११५॥  
 भक्त पार्थाचिया । अवधानापुढें । थोंडें चि तें पडे । ऐसें वाटे ॥११६॥  
 कृष्णोक्ति-सागर । गिळावया साच । जणूं अगस्ति च । झाला तेथ ॥११७॥

म्हणोनि त्या गोष्टी । सर्व एका घोट्टी । कैसा तो किरिटी । भरूं पाहे ॥११८॥  
 श्रवणाची ऐसी । आवडी अपार । देखोनि साचार । पार्थाठायीं ॥११९॥  
 त्याचियावरून । टाकी ओवाळून । झालें समाधान । देवामी जें ॥१२०॥

श्रीभगवानुवाच --

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्रुत्थं प्राहुरव्ययम् ।

छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥

मग म्हणे पार्था । ब्रह्म जें का माचें । तें चि ऊर्ध्व ह्याचें । ऐसें जाण ॥१२१॥  
 जया ब्रह्मालागीं । ऐसें ऊर्ध्वपण । यावया कारण । हा चि वृक्ष ॥१२२॥  
 ए-हवीं ह्या ब्रह्मीं । ऊर्ध्व-मध्य-अध । ऐसा नाहीं भेद । धनुर्धरा ॥१२३॥  
 नित्य जें का होय । अखंड अद्रय । ऐसा अभिप्राय । सर्वांचा हि ॥१२४॥  
 नाकाशीं तो नाहीं । जयाचा संबंध । ऐसा मकरंद । होय जें का ॥१२५॥  
 येई प्रत्ययासी । श्रवणावांचोनि । ऐसा मूळ ध्वनि । होय जें का ॥१२६॥  
 रतिविण प्राप्त । नित्य स्वयंमिद्ध । ऐसा निजानंद । होय जें का ॥१२७॥  
 येथे तेथे किंवा । मार्गे पुढें ऐसी । नाहीं च जयासी । सीमा कांहीं ॥१२८॥  
 पाहत्यावांचोन । पाहणें साचार । असे अगोचर । इंद्रियां जें ॥१२९॥  
 माया-उपाधीचा । कल्पितां संबंध । जया नित्य शुद्ध । ब्रह्माठायीं ॥१३०॥  
 नाम-रूपादिक । प्रपंच-विस्तार । भासे निरंतर । धनुर्धरा ॥१३१॥  
 ज्ञातृ-ज्ञेयाविण । केवळ जें ज्ञान । सूक्ष्म नभाहून । सुखपूर्ण ॥१३२॥  
 कार्य ना कारण । एक ना जें दुजें । जाणें आपणा जें । आपण चि ॥१३३॥  
 ऐसें जें का ब्रह्म । शाश्वत पुराण । तें चि ऊर्ध्व जाण । वृक्षाचें ह्या ॥१३४॥  
 आतां तेथे कैसें । अंकरलें मूळ । सांगूं तें सकळ । तुजलागीं ॥१३५॥  
 माया हें चि मूळ । वृक्षाचें ह्या साच । बोलती उगाच । परी ऐसें ॥१३६॥  
 वांझेचि संतति । वर्णानियां काय । लटकी च होय । तैसी माया ॥१३७॥  
 माया आहे ऐसें । जरी म्हणूं जावें । तरी नाश पावे । ज्ञान-बळें ॥१३८॥  
 नाहीं ऐसें जरी । करूं अनुमान । तरी निर्मी कोण । आघर्वें हें ! ॥१३९॥

सत-असत ऐसा । नाहीं जेथें भाव । साहे ना जी नांव । विचाराचें ॥१४०॥  
 संसार-वृक्षाचें । बीज चि ती जाण । अनादि म्हणोन । वर्णिते जी ॥१४१॥  
 जी का 'विपरीत-। ज्ञानाची 'दीपिका । चित्राची 'भूमिका । भवरूप ॥१४२॥  
 होय जी आकाश । जगद्रूपी 'घना । पेटी च कीं नाना । शक्तीची जी ॥१४३॥  
 किंवा विश्वाकार-। रूपी वस्त्राची च । असे जी का साच । घडी केली ॥१४४॥  
 जगूं ती नाहीं च । ऐसी धनंजया । ब्रह्मवस्तूचिया । ठायीं राहे ॥१४५॥  
 मग जगद्रूपें । प्रकटे प्रकाश । नित्य अविनाश । ब्रह्माचा च ॥१४६॥  
 दीपाचिया ठायीं । काजळी वाढोन । आणि मंदपण । प्रभेसी ती ॥१४७॥  
 ना तरी किरीटी । आली निद्रा गाढ । करी जैसी मूढ । आपणातें ॥१४८॥  
 तैसी आत्मरूपीं । माया झाली जाण । टाकी झांकोळून । आत्मरूपा ॥१४९॥  
 आपुला आपणा । पडे जो विसर । मूळ तें साचार । वृक्षाचें ह्या ॥१५०॥  
 आत्मरूपासी जो । आपुला अबोध । तो चि ऊर्ध्वीं कंद । 'आठुळला ॥१५१॥  
 अर्जुना ह्यासी च । साच 'बीजभाव' । प्रसिद्ध हें नांव । वेदान्तांत ॥१५२॥  
 'बीजांकुरभाव' । तो चि जाण पार्था । गाढ निद्रावस्था । अज्ञानाची ॥१५३॥  
 जागृति आणिक । स्वप्न ऐशा दोन । अवस्थातें जाण । 'फळभाव' ॥१५४॥  
 निरूपणाची ही । परिभाषा गूढ । वेदान्तीं जी रूढ । असे पार्था ॥१५५॥  
 परी असो येथें । अज्ञान हें मूळ । ब्रह्म तें निर्मळ । निरुपाधि ॥१५६॥  
 तथा ब्रह्मीं माया-। संबंध साचार । आळें हें तयार । होवोनियां ॥१५७॥  
 तथा आळ्यांतील । मुळें थोर सान । राहती फांकोन । खालीं वरी ॥१५८॥  
 मग अधोभागीं । वाढती चौफेर । फुटोनि अपार । नाना देह ॥१५९॥  
 ऐशापरी भव-। वृक्षाचें हें मूळ । होतां चि प्रबळ । ऊर्ध्वभागीं ॥१६०॥  
 मग तथाचिया । अग्रांचे जुंवाडे । खालीं चोहोंकडे । पसरती ॥१६१॥  
 असो आदिमाये-। पासोनि पहिलें । निर्माण जाहलें । महत्त्व ॥१६२॥  
 तो चि लुसलुशीत । कोंवळा 'धुमारा । जाण धनुर्धरा । आरंभींचा ॥१६३॥  
 त्यांतून सत्त्व-। रज-तमात्मक । त्रिविध जो एक । अहंकार ॥१६४॥

तो चि अधोमुख । शेंडा तीनपानी । येतसे फुटोनि । एकाएकीं ॥१६५॥  
 वाढवी तो भेद । बुद्धीचिया अग्रें । मनाचा तरारे । मोड तेव्हां ॥१६६॥  
 वृक्षाचें ह्या मूळ । दृढावतां ऐसें । विकल्पाच्या रसें । पोसल्या ज्या ॥१६७॥  
 मन बुद्धि चित्त । आणि अहंकार । ऐशा ढिन्या चार । अंकुरती ॥१६८॥  
 मग नभ वायु । तेज पृथ्वी जळ । फोंक हे सरळ । फोंफावती ॥१६९॥  
 शब्दतन्मात्रादि । \*तन्मात्रा-पंचक । फुटे हें नाजुक । गर्भ-पत्र ॥१७०॥  
 शब्दांकुरावेरीं । \*श्रोत्रेन्द्रिय वाढे । तेव्हां पोसे काडें । आकांक्षेचें ॥१७१॥  
 त्वचेन्द्रियरूपी । सपर्ण वळरी । स्पर्शांकुरावेरीं । घेई धांव ॥१७२॥  
 तेव्हां एकाएकीं । अपार विकार । वाढती साचार । नवोनव ॥१७३॥  
 रूपांकुरावेरीं । वाढे नेत्रेन्द्रिय । तेव्हां वृद्धि होय । व्यामोहाची ॥१७४॥  
 इच्छेचे पळव । फुटती जिह्वेस । लागतां वाढीस । रसांकुर ॥१७५॥  
 घ्राणेन्द्रिया लोभ । सुटे अनिवार । वेगें गंधांकुर । वाढे जेव्हां ॥१७६॥  
 ऐसीं महत् अहं । बुद्धि मन भूतें । दाविती सीमेतें । संसाराच्या ॥१७७॥  
 आठ हि अंगांनीं । वृक्ष हा अपार । काय सांगूं फार । जरी वाढे ॥१७८॥  
 तरी रुपें भासे । शिंपी एवढें च । ब्रह्मीं माया साच । तेवढी च ॥१७९॥  
 किंवा सागराचा । जेवढा विस्तार । तेवढी साचार । तरंगता ॥१८०॥  
 तैसें भ्रांतिमूळ । भववृक्षाकारें । सर्वथा विस्तारे । ब्रह्म चि हें ॥१८१॥  
 आपण चि होय । सर्व परिवार । एकाकी तो नर । स्वप्नीं जैसा ॥१८२॥  
 तैसा ब्रह्माचा च । पसारा हा सारा । विस्तारला वीरा । वृक्षाकारें ॥१८३॥  
 महत्तत्त्वादिक । अंकुरांपासोन । जाहल्या निर्माण । अधोशाखा ॥१८४॥  
 परी असो ऐसा । वृक्ष भ्रमात्मक । वाढतसे देख । धनंजया ॥१८५॥  
 कां गा ह्यासी ज्ञाते । बोलती 'अश्वत्थ' । तें हि सांगूं येथ । ऐक आतां ॥१८६॥  
 गगनीं का जैसा । पाहें प्रतिक्षण । धरी नाना वर्ण । मेघराज ॥१८७॥  
 नातरी चंचल । विद्युत्कृता जैसी । टिके ना आकाशीं । निमिषार्ध ॥१८८॥  
 कांपे पद्म-दळ । त्यावरी जळ । राहे ना निश्चळ । पळभरी ॥१८९॥

ना तरी संत्रस्त । पुरुषाचें चित्त । राहे ना निवांत । क्षण एक ॥१९०॥  
 तैमी उद्यांवेरीं । नाहीं एक स्थिति । म्हणोनि बोलती । अश्वत्थ ह्य ॥१९१॥  
 एकसारिखा हा । टिके ना अक्षय । नासत हा जाय । क्षणोक्षणीं ॥१९२॥  
 अश्वत्थ ह्या नांवें । बोलती पिंपळ । अर्जुना सकळ । स्वभावतां ॥१९३॥  
 परी वृक्षासी ह्या । पिंपळ म्हणावें । आशय हा नव्हे । श्रीहरीचा ॥१९४॥  
 भव-वृक्षासी ह्या । पिंपळ म्हणोनि । जरी चक्रपाणी । संबोधिता ॥१९५॥  
 तरी हांती ती हि । उपमा यथार्थ । रूढ लौकिकार्थ । ध्यानीं घेतां ॥१९६॥  
 परी लौकिकार्थ । घेवोनियां काय । देवाचा आशय । तो चि घ्यावा ॥१९७॥  
 म्हणोनियां भव-वृक्षासंबंधींचा । अलौकिक साचा । ग्रंथ एका ॥१९८॥  
 तरी देखोनियां । ह्याचें क्षणिकत्व । अश्वत्थ हें नांव । देती ह्यासी ॥१९९॥  
 आणिक हि एक । धनंजया जाण । अव्यय म्हणोन । प्रसिद्ध हा ॥२००॥  
 जरी अव्ययत्व । दिसे बाहेरून । परी तें आंतून । ऐसें आहे ॥२०१॥  
 पाहें धनंजया । मेघांचिया मुखें । एके अंगें सुके । महा-सिंधु ॥२०२॥  
 परी दुज्या अंगें । नद्यांचिया पंक्ति । भरोनि टाकिती । तयालागीं ॥२०३॥  
 म्हणोनि तो जैसा । भरे ना ओहटे । जळें नित्य वाटे । परिपूर्ण ॥२०४॥  
 परी तेथें मेघां-नद्यांचा संयोग । पूर्णता अभंग । तांवेरी च ॥२०५॥  
 तैसें वृक्षाचें ह्या । होणें जाणें पाहीं । पार्था होत राही । अतिवेगें ॥२०६॥  
 पांगुळली येथें । तर्काची हि गति । म्हणोनि बोलती । अव्यय हा ॥२०७॥  
 दानशूर साच । करी जरी वेंव । तरी होय ती च । सांठवण ॥२०८॥  
 तैसा क्षणोक्षणीं । पावे हा विनाश । तरी अविनाश । ऐसा भासे ॥२०९॥  
 फिरे रथ-चक्र । अति वेगें तरी । भासे भूमीवरी । स्थिर जैसें ॥२१०॥  
 तैसी काळाचिया । बहु वेगें शुष्क । प्राणिरूप देख । शाखा जी का ॥२११॥  
 गळोनियां जाय । तेथें चि अपार । फुटती अंकुर । वृक्षासी ह्या ॥२१२॥  
 एकापार्ठी एक । नभीं उद्भवती । जैशा मेघ-पंक्ति । आषाढीच्या ॥२१३॥  
 तैसी ती एकैक । गळोनियां फांदी । पुन्हा कोट्यवधि । होती केव्हां ॥२१४॥

१ त्रासलेल्या. २ लोकांची समजूत. ३ रांगा. ४ खुंटली. ५ खर्च. ६ सुकलेली.

अ. जा. ३१



कळेना हें कांहीं । म्हणोनि हा वृक्ष । पार्था अविनाश । ऐसा भासे ॥२१५॥  
 चौदा हि भुवनें । पावती विलय । कल्पान्तसमय । होय जेव्हां ॥२१६॥  
 मग कल्पारंभी । पुन्हां नाना सृष्टि । 'कोंभोनि किरीटी । भरा येती ॥२१७॥  
 महावार्ते जाय । गळोनियां साल । प्रळयाचा काळ । येई जेव्हां ॥२१८॥  
 तों चि कल्पारंभी । सृष्टींचीं जुवाडे । मागुती उदंडें । उद्भवती ॥२१९॥  
 जैसा पुढे पुढे । इक्षुदंड वाढे । कांड्यापाठी कांडें । फुटोनियां ॥२२०॥  
 \*मन्वंतरापाठी । तैसीं मन्वंतरें । येवोनि विस्तारे । वंश-वृद्धि ॥२२१॥  
 चार हि युगांचीं । सालपटें जीर्ण । पडती गळोन । कलीअंती ॥२२२॥  
 तों चि पुन्हां कृत-। युगाची विस्तीर्ण । आरंभापासोन । साल वाढे ॥२२३॥  
 जैसें चालू वर्ष । संपोनियां जाय । तें चि मूळ होय । पुढच्यासी ॥२२४॥  
 किंवा दिवसाचा । होय जों शेवट । तों चि पाटोपाठ । दुजा येई ॥२२५॥  
 वायूचिया पाहें । झुळकांसी जैसा । सांधा कोठें कैसा । कळेना हें ॥२२६॥  
 वृक्षाच्या ह्या तैशा । शाखा नेणों किती । होती आणि जाती । क्षणार्धांत ॥२२७॥  
 भव-तरुची ह्या । देहरूपी जीर्ण । जाय जों गळोन । ढिरी एक ॥२२८॥  
 तों चि तेथें नाना । देहांचे अंकुर । फुटती अपार । धनंजया ॥२२९॥  
 म्हणोनि भंगुर । असोनि हा साच । अव्यय ऐसा च । वाटे लोकां ॥२३०॥  
 वाहतें उदक । जाय जों जों वेगें । तों तों मिळे मागें । आणिक हि ॥२३१॥  
 तैसा हा संसार । असोनि अस्थिर । लोकांलागीं स्थिर । ऐसा वाटे ॥२३२॥  
 किंवा लाट जैसी । कोटी वेळां घडे । कोटी वेळां मोडे । 'निमिषार्धी ॥२३३॥  
 परी जयालागीं । कळे ना हें कांहीं । लाटेसी तो पाहीं । नित्य मानी ॥२३४॥  
 एक चि बुबुळ । फिरवोनि वेगें । काक पाहूं लागे । दोहीं डोळां ॥२३५॥  
 तंव तेथें जैसीं । बुबुळें तीं दोन । होती भासमान । जगालागीं ॥२३६॥  
 भूवरी भिंगोरी । अति वेगें भ्रमे । परी साच गमे । स्थिर ऐसी ॥२३७॥  
 येथें अति वेग । हा चि पार्था जाण । होतसे कारण । भ्रमालागीं ॥२३८॥  
 असो हें बहुत । जैसें का कोलीत । वेगें अंधारांत । भोवंडितां ॥२३९॥

मग तें अखंड । भासे चक्राकार । तैसा हा संसार । महा-वृक्ष ॥२४०॥  
 वेगें मोडे 'मांडे । परी लोक वेडे । मानिती बापुडे । अव्यय हा ॥२४१॥  
 परी ह्याचा वेग । ओळखे जो कोणी । क्षणिक म्हणोनि । जाणे ह्यातें ॥२४२॥  
 जाणे निमिषार्धी । कोटी वेळां होय । तेविं पावे लय । कोटी वेळां ॥२४३॥  
 अज्ञानावांचून । नसे ह्यासी मूळ । अस्तित्व 'टवाळ । असे ह्याचें ॥२४४॥  
 ऐसा भव-वृक्ष । विनाशी हा जीर्ण । ऐसें झालें ज्ञान । जयालागीं ॥२४५॥  
 तो चि ज्ञाता ऐसें । म्हणे मी सर्वज्ञ । वंघ तो वेदज्ञ । वेदांतासी ॥२४६॥  
 सर्व योगाभ्यासें । जोडे जें का साच । तया एकासी च । लाभलें तें ॥२४७॥  
 काय सांगूं फार । ज्ञान तें हि जगे । तयाचिया योगें । धनंजया ॥२४८॥  
 असो हा विस्तार । जाणे जो संसार- । वृक्षासी 'नश्वर । मिथ्या ऐसें ॥२४९॥  
 तयाचें वर्णन । करूं शके कोण । म्हणे जनार्दन । अर्जुनासी ॥२५०॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा  
 गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।

अधश्च मूलान्यनुसंततानि  
 कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥२॥

'अधोशाख भव- । तरूसी ह्या देख । ऊर्धी हि अनेक । उजू शाखा ॥२५१॥  
 आणि अधोभागीं । फांकल्या डाहाळ्या । तयांसी हि मुळ्या । फुटोनियां ॥२५२॥  
 तळीं आल्या वेळी । पोसली पालवी । ऐसें तुज पूर्वी । बोलिलों जें ॥२५३॥  
 तें चि सांगूं आतां । सोपारें करून । एक अवधान । देवोनियां ॥२५४॥  
 तरी अज्ञानाचें । दृढ मूळ देखें । महत्त्वादिकें । भरा येतां ॥२५५॥  
 तया 'छंदोरूपी । मोठमोठीं पानें । फुटोनि वाढणें । घडे ह्याचें ॥२५६॥  
 परी प्रारंभीं तों । स्वेदज जारज । उद्भिज्ज अंडज । ऐसे चार ॥२५७॥  
 मोठमोठे फोंक । बुडापासोनियां । उजू फुटोनियां । घेती वाढ ॥२५८॥  
 तयांपासोनियां । चौ-न्याऐशीं लाख । योनि-शाखा देख । अंकुरती ॥२५९॥  
 मग जीवरूपी । फांद्यांचिया ठायीं । फांटें होती पाहीं । असंख्यात ॥२६०॥

उजू शाखांतून । नाना सृष्टिरूप । डाहाळ्या अमूप । उद्भवती ॥२६१॥  
 मग जातीरूप । आडव्या अनेक । अंकुरती देख । शाखा तेथें ॥२६२॥  
 तंव स्त्री पुरुष । आणि नपुंसक । व्यक्तिभेदात्मक । ऐसे घोंस ॥२६३॥  
 कामादि आंगिक । विकारांच्या भारें । कैसे परस्परें । आंदोळती ॥२६४॥  
 नर्भी वर्षाकाळीं । जैशा पालवती । मेघांचिया पंक्ति । नवोनव ॥२६५॥  
 अज्ञानाच्या ठायीं । तैसी फांके भली । नित्य नवी वळी । आकाराची ॥२६६॥  
 लावोनि गुंफिती । मग परस्परें । शाखा अंगभारें । आपुलिया ॥२६७॥  
 गुणशोभरूपी । तीव्र झंझावातें । तिहीं ठायीं फांटे । ऊर्ध्वमूळ ॥२६८॥  
 रजोगुणरूपी । वायूची झुळूक । झडाडतां देख । अति वेगें ॥२६९॥  
 मानवजातीची । बळावे जी खांदी । वाढे ना ती अर्धी । किंवा ऊर्धी ॥२७०॥  
 चतुर्वर्णरूपी । परीं द्विच्या दाट । फुटती अफाट । मध्यभागीं ॥२७१॥  
 वेदवाक्यरूपी । अपूर्व पालवी । डोलते बरवी । नित्य नवी ॥२७२॥  
 तया पालवीतें । विधिनिषेधाचे । डौलदार साचे । घोंस येती ॥२७३॥  
 क्षणिक ऐहिक । अंकुरती भोग । अर्थ-काम चांग । विस्तारतां ॥२७४॥  
 प्रवृत्तीचा पंथ । व्हावा वृद्धिंगत । लोभ ऐसा तेथ । बाळगोनि ॥२७५॥  
 शुभाशुभ कर्म-। रूपी मोठमोठे । नेणों किती फांटे । उद्भवती ॥२७६॥  
 घडतां मागील । कर्मभोगक्षय । गळोनियां जाय । देहकाष्ठ ॥२७७॥  
 तों चि नवे देह । एकएकापाठीं । देख विस्तारती । दुज्या ठायीं ॥२७८॥  
 सहज सुंदर । शोभे नित्य नवी । विषय-पालवी । शब्दादिक ॥२७९॥  
 रजोगुणरूपी । तीव्र प्रभंजन । प्रबळ होवोन । झडाडतां ॥२८०॥  
 मानवांच्या शाखा । ऐशा घनदाट । पसरती येथ । मर्त्यलोकीं ॥२८१॥  
 थांबोनि क्षणैक । रजाचा व्यापार । वाडूं लागे थोर । तमोवायु ॥२८२॥  
 तों चि मानवांच्या । ह्या च शाखांलागीं । देख अधोभागीं । एकाएकीं ॥२८३॥  
 कुकर्माच्या फांद्या । पसरती दाट । वासना वाईट । उद्भवोनि ॥२८४॥  
 अप्रवृत्तिरूपी । कोंभ बळकट । फुटोनि बेफाट । शाखेसी त्या ॥२८५॥

'प्रमादाचीं पानें । डाहाळ्या पल्लव । वाढती सदैव । नित्य नवीं ॥२८६॥  
 अर्जुना ऋग्वेद । आणि यजुःसाम । निश्चयें जें कर्म । निषेधिती ॥२८७॥  
 त्या चि निषिद्धांचा । पाला मर्वकाळ । वाजे सळसळ । अग्रभार्गी ॥२८८॥  
 जारण-मारण । इत्यादिक क्रिया । बोलती साधाया । 'पर-घात ॥२८९॥  
 ऐसीं शास्त्र-पर्णे । घेवोनि मांगतीं । वेळी विस्तारती । वासनेच्या ॥२९०॥  
 तां चि कुकर्माचीं । पाळें मुळें खोल । रुजोनि प्रबळ । होतां मग ॥२९१॥  
 नाना जन्मशाखा । फोंफावती देख । एकाहुनी एक । हीन ऐशा ॥२९२॥  
 तमोगुणें तेव्हां । भुलोनियां कोणी । हंती जे का प्राणी । कर्म-भ्रष्ट ॥२९३॥  
 चांडालादि हीन । जातींच्या फांद्यांत । झाले अधोगत । गुंतोनि ते ॥२९४॥  
 सर्प विंचू व्याघ्र । पशुपक्ष्यादिक । फांकती अनेक । आडशाखा ॥२९५॥  
 परी नित्य नवी । नरकाची गति । ही च फलप्राप्ति । तयां सर्वा ॥२९६॥  
 जेथें हिंसेलागीं । 'आगळें 'नेतृत्व । तैसें च महत्त्व । कुकर्मासी ॥२९७॥  
 ऐसे हीन जन्म-। रूपी नानांकुर । पावती विस्तार । निरंतर ॥२९८॥  
 ऐशापरी होती । मग तरु तृण । मृत्तिका पाषाण । किंवा लोह ॥२९९॥  
 ह्या चि शाखा तेथे । आणि फळें हीं च । धनंजया माच । जाण ऐसें ॥३००॥  
 मानवापामोन । 'स्थावरापर्यंत । ऐशा वृद्धिंगत । अधोशाखा ॥३०१॥  
 म्हणोनि मानव-। रूपी ज्या डाहाळ्या । त्याचि जाण मुळ्या । अधोभार्गी ॥३०२॥  
 तेथोनी च भव-। तरूचा विस्तार । होतसे अपार । धनंजया ॥३०३॥  
 भव-वृक्षाचें ह्या । ए-हवीं वरील । अज्ञान हें मूळ । 'अग्रगण्य ॥३०४॥  
 तेथोनियां खालीं । पाहूं जावें तरी । शाखा मध्यावरी । मानवाची ॥३०५॥  
 परी ह्या च शाखे-। पासोनियां एक । ऊर्ध्वी पुण्यात्मक । सात्त्विक ती ॥३०६॥  
 आणि अधोभार्गी । शाखा पापात्मक । वाढे दुजी देख । तामसी ती ॥३०७॥  
 विधिविधानासी । मनुष्यावांचोनि । पात्र नाही कोणी । म्हणोनियां ॥३०८॥  
 धनंजया ह्या च । मनुष्यशाखेसी । वेदत्रयांऐसीं । पानें येती ॥३०९॥  
 जरी वाढे शाखा । मनुष्यशरीर । पाहतां साचार । ऊर्ध्वमूळ ॥३१०॥

तरी पार्था जाण । शाखा तें चि मूळ । व्हावया सकळ । कर्म-वृद्धि ॥३११॥  
 झाडाचिया फांद्या । जों जों घेती वाढ । तों तों खालीं दृढ । मुळें जैसीं ॥३१२॥  
 आणि तळीं मुळें । जों जों बळावती । तों तों फ़ैलावती । शाखा जैशा ॥३१३॥  
 मानवी देहाची । तैशी च ती स्थिति । जाण पां किरीटी । सुनिश्चयें ॥३१४॥  
 कर्म तंव देह । देह तंव कर्म । निसर्गाचा धर्म । असे ऐसा ॥३१५॥  
 म्हणोनियां पाहें । मनुष्याचा देह । हीं च निःसंदेह । मुळें होती ॥३१६॥  
 ऐसें जगत्पिता । देव नारायण । अर्जुनालागोन । सांगतसे ॥३१७॥  
 मग तमाचें तें । थांबोनि वादळ । सुटे वावटळ । सत्त्वाची जों ॥३१८॥  
 तों चि ह्या मानवी- । मूळांसी अमूप । सद्रासनारूप । कोंभ येती ॥३१९॥  
 मग घेतां जोर । तयांसी अपार । फ़ुटती अंकुर । सत्कर्माचे ॥३२०॥  
 ज्ञानाचा विकास । होवोनि सत्वर । बुद्धीलार्गीं धार । चढोनियां ॥३२१॥  
 तेंणें चातुर्याचे । सुतीक्ष्ण अंकुर । पावती विस्तार । क्षणामार्जीं ॥३२२॥  
 तेंथें मेधारसें । सर्वथा भरोनि । आस्थारूप पर्णी । शोभती जे ॥३२३॥  
 ऐसे सुकुमार । सरळ सुंदर । फ़ुटती अंकुर । सदवृत्तीचे ॥३२४॥  
 सदाचाररूपी । धुमारे अपार । सहजें साचार । उद्भवोनि ॥३२५॥  
 वेदपद्यांचिया । घोषें धनंजया । लागती गर्जाया । कैसे देख ॥३२६॥  
 शास्त्रोक्त वर्तन । आणि शिष्टाचार । यज्ञांचा विस्तार । नानाविध ॥३२७॥  
 ऐसीं मोठमोठीं । एकापाठीं एक । पानें हि अनेक । उद्भवती ॥३२८॥  
 यमदमरूपी । घोस हे अमूप । येती तपोरूप । डाहाळ्यांसी ॥३२९॥  
 वैराग्याच्या फांद्या । बहु विस्तारोन । घेती कवळोन । तयांलार्गीं ॥३३०॥  
 धैर्यांकुरें तीक्ष्ण- । व्रतरूपी फ़ोंक । वेगें ऊर्ध्वमुख । उंचावती ॥३३१॥  
 सत्त्वगुणरूपी । वाहे प्रभंजन । प्रबळ होवोन । जिये वेळीं ॥३३२॥  
 तिये वेळीं पाला । वेदरूपी दाट । करी झडझडाट । सुविद्येचा ॥३३३॥  
 तेंथें धर्मशाखा । विस्तारतां भली । सरळ वाढली । जन्मशाखा ॥३३४॥  
 तथा शाखेलार्गीं । फ़ुटती अनेक । स्वर्गफळादिक । आडफांटे ॥३३५॥

धर्ममोक्षरूपी । कोंवळी पालवी । फुटे नित्य नवी । जियेलागीं ॥३३६॥  
 ऐसी विरक्तीची । शाखा रक्तवर्ण । होय वर्धमान । मग पुढें ॥३३७॥  
 रवि-चंद्रादिक । ग्रह थोर थोर । आणिक पितर । \*विद्याधर ॥३३८॥  
 ऋष्यादिक आड-। शाखांचे प्रकार । पावती विस्तार । सत्त्वगुणें ॥३३९॥  
 ह्या हि वरी उंच । वाढती अनेक । थोर इंद्रादिक । शाखासंघ ॥३४०॥  
 तयां शाखांलागीं । फळांचा संभार । टाकी निरंतर । झांकोनियां ॥३४१॥  
 ह्या हि वरी ज्या का । तपोज्ञानें थोर । अपार विस्तार । असे ज्यांचा ॥३४२॥  
 ऐशा उंच शाखा । देव स्वयसाची । आणिक \*मरीचि । कश्यपादि ॥३४३॥  
 शाखांतुनी शाखा । फुटोनि अपार । वाढतो विस्तार । ऊर्ध्वभागीं ॥३४४॥  
 बुडीं सान परी । अग्रभागीं थोर । फळांचा संभार । म्हणोनियां ॥३४५॥  
 ह्या हि वरी शिव-। ब्रह्म देवांकुर । देख तीक्ष्णतर । फुटोनियां ॥३४६॥  
 सत्यलोक शिव-। लोक ऐसा थोर । येई फळभार । शाखांसी त्या ॥३४७॥  
 मनुष्याची शाखा । फळभारें ऐसी । मूळ-मायेपासीं । टेंके पुन्हां ॥३४८॥  
 ऐसी च सामान्य । वृक्षांची हि स्थिति । जेव्हां फळें येती । घनदाट ॥३४९॥  
 तेव्हां ओथंबोन । शाखा तयांचिया । पाहती भेटाया । मूळालागीं ॥३५०॥  
 मनुष्यरूपी ही । तैसी शाखा जाण । होतां वर्धमान । सत्त्वगुणें ॥३५१॥  
 जेथोनि हा भव-। तरूचा उद्भव । तयामूळीं ठाव । घेई ज्ञानें ॥३५२॥  
 म्हणोनियां शिवा । आणि ब्रह्मदेवा-। पलीकडे जीवा । वाढ नाहीं ॥३५३॥  
 येथोनियां पुढें । ब्रह्म चि आघवें । राहिलें स्वभावें । ऊर्ध्वभागीं ॥३५४॥  
 परी असो ऐशा । शाखा ब्रह्मादिक । होती च ना देख । ब्रह्मतुल्य ॥३५५॥  
 सनकादि नामें । जयांची विख्याति । ऐशा शाखा होती । आणिक हि ॥३५६॥  
 ब्रह्मस्वरूपी त्या । राहिल्या जडोन । न जातां गुंतोन । फळींमूळीं ॥३५७॥  
 मनुष्यापासोन । ब्रह्मदेवावेरीं । शाखा ऐशा वरी । उंचावती ॥३५८॥  
 ब्रह्मादिक ऊर्ध्व-। शाखांलागीं मूळ । शाखा हि केवळ । मानवाची ॥३५९॥  
 म्हणोनि मानव-। शाखा हीं च यथें । मुळें अधोगत । जाण पार्था ॥३६०॥

असो, जयालार्गी । खालीं वरी शाखा । असे ऐसा जो का । अलौकिक ॥३६१॥  
 तो चि ऊर्ध्व-मूळ । भव-वृक्ष येथें । निवेदिला तूतें । धनंजया ॥३६२॥  
 आणि अधोमुळें । तीं हि सविस्तर । दाविलीं साचार । स्पष्टपणें ॥३६३॥  
 आतां 'उन्मूळे हा । कैसा भव-वृक्ष । एक पार्था लक्ष । देवोनियां ॥३६४॥

न रूपमस्वेह तथोपलभ्यते  
 नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।  
 अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल -  
 मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्वा ॥३॥

परी एवढें हें । झाड उन्मूळील । असेल प्रबळ । ऐसें कोण ॥३६५॥  
 ऐसी क्षुद्र शंका । उद्भवेळ मनीं । तरी ती काढोनि । टाक वेगें ॥३६६॥  
 भव-वृक्षाच्या ह्या । ऊर्ध्व-शाखा जरी । ब्रह्मलोकावेरीं । उंचावती ॥३६७॥  
 आणि मूळ जरी । ऊर्ध्वीं निराकारीं । 'स्थावरादिवेरीं । 'अधोशाखा ॥३६८॥  
 मध्यें मनुष्यांचीं । मुळें जरी दाट । ऐसा बळकट । अमर्याद ॥३६९॥  
 तरी पार्था ह्यास । उन्मूळावयास । कायसे सायास । सांगें मज ॥३७०॥  
 बाळकामी वाटे । बागुलाची भीति । दूर कराया ती । श्रम काय ॥३७१॥  
 घावें लागे काय । तया बागुलामी । सांगें दूर देशीं । हांकलोन ॥३७२॥  
 'अंबरीं मेघांचे । भामती जें 'दुर्ग । लागती का सांग । पाडावे ते ॥३७३॥  
 होईल 'ख-पुष्प । तरी तें तोडावें । सशाचें मोडावें । शिंग जैसें ॥३७४॥  
 तैसा भव-वृक्ष । नाहीं च हा जेथें । भय कैचें तेथें । उन्मूळाय ॥३७५॥  
 खालींवरी शाखा- । मुळांचा विस्तार । वर्णिला साचार । जरी आर्म्हां ॥३७६॥  
 वांझेचीं लेंकरें । व्हावीं घरभर । तैसा चि प्रकार । तरी येथें ॥३७७॥  
 काय जागृतींत । तया सत्यपण । केलें जें भाषण । स्वप्नामार्जी ॥३७८॥  
 संसार-वृक्षाची । कहाणी केवळ । तैसी च पोकळ । जाण पार्था ॥३७९॥  
 \*कासवीचें तूप । बरवें वाढोन । घालावें भोजन । रायालार्गी ॥३८०॥  
 पार्था सर्वथैव । तैसें मिथ्या जाण । केलें जें वर्णन । वृक्षाचें ह्या ॥३८१॥

भव-वृक्षाच्चै ह्या । अज्ञान जें मूळ । 'लटिकें केवळ । तें चि आधीं ॥३८२॥  
 मग सांगें तया । अज्ञानाचें कार्य । होईल तें काय । सत्याऐसें ॥३८३॥  
 म्हणोनि कोडून । ह्यासी सत्यपण । 'मिथ्या च हा जाण । भव-वृक्ष ॥३८४॥  
 अंत नाहीं ह्यासी । बोलती जें ऐमें । तें हि साच असे । एकेपरी ॥३८५॥  
 निद्रेलागीं अंत । असे का तोंवरी । जागृति जोंवरी । नाहीं आली ॥३८६॥  
 ना तरी उदेल । नाहीं 'दिन-मणि । तोंवरी रजनी । ओमरे ना ॥३८७॥  
 तैसा वृक्षासी ह्या । अंत नाहीं देख । जोंवरी विवेक । उठावे ना ॥३८८॥  
 जोंवरी पवन । राहे ना निवांत । तोंवरी ना अंत । तरंगांसी ॥३८९॥  
 म्हणोनियां सूर्य । मावळतां जैसा । मृगजळभासा । ठाव नाहीं ॥३९०॥  
 किंवा पंडुमुता । मालवितां दीप । जाय आपोआप । प्रभा जैसी ॥३९१॥  
 तैसें अविद्येतें । टाकी जें गिळोन । ऐमें सत्य ज्ञान । उठावेल ॥३९२॥  
 तेव्हां चि समूळ । होय ह्याचा अंत । ए-हवीं निभ्रांत । तुटे ना हा ॥३९३॥  
 तेंचि वृक्षाचें ह्या । अनादि म्हणोन । करिती वर्णन । अर्जुना जें ॥३९४॥  
 तें हि तयालागीं । साजेंसें च जाण । नव्हे 'अप्रमाण । भलतैसें ॥३९५॥  
 भव-वृक्षासी ह्या । नाहीं 'साचपण । प्रारंभ कोडून । मग तेंचें ॥३९६॥  
 होतसे जेथून । जयाचा उद्भव । आदि ऐसें नांव । शोभे तेंचें ॥३९७॥  
 परी जयालागीं । अस्तित्व नाहीं च । तेंचें कैचें साच । आदिपण ॥३९८॥  
 जन्म ना अस्तित्व । जयालागीं होय । सांगूं कोण माय । तयाची गा ॥३९९॥  
 ऐसा भव-वृक्ष । नाहींपणानें च । अनादि हा साच । म्हणों येई ॥४००॥  
 'वंध्या-कुमाराची । कुंडली मांडोन । कैचें ग्रहमान । वर्तवावें ॥४०१॥  
 रंगरूपहीन । स्वभावं गगन । तेंचें नील-वर्ण । कल्पूं ये का ॥४०२॥  
 नातरी पांडवा । आकाश-पुष्पांचा । देठ कोणें कैचा । तोडावा गा ॥४०३॥  
 म्हणोनियां जया । नाहीं सत्यपण । आरंभ कोडून । तयालागीं ॥४०४॥  
 केल्याविण असे । जैसा सर्वथैव । घटाचा 'अभाव । घटापूर्वीं ॥४०५॥  
 तैसा भव-वृक्ष । समूळ हा जाण । अनादि म्हणोन । धनंजया ॥४०६॥



भव-वृक्षामी ह्या । ऐशापरी पाहीं । नाहीपणें नाही । आदिअंत ॥४०७॥  
 आणि मध्ये स्थिति । आभासे जी काहीं । सर्वथैव ती हि । मिथ्या जाण ॥४०८॥  
 ब्रह्मगिरींतून । न होय निर्माण । मिळे ना जावोन । सागरातें ॥४०९॥  
 परी माझारीं च । धनंजया जैसें । लटकें च भासे । मृगजळ ॥४१०॥  
 तैसा आदिअंतीं । नसोनियां साच । मध्ये हि नाही च । भव-वृक्ष ॥४११॥  
 परी विलक्षण । ह्याचें खोटेपण । भासे हा नसोन । आहे ऐसा ॥४१२॥  
 भरोनि राहिलें । नाना रंगीं जैसें । इंद्रधनु दिसे । नभामार्जी ॥४१३॥  
 तैसा लटका च । भव-वृक्ष पाहें । नेणत्यासी आहे । ऐसा वाटे ॥४१४॥  
 बहुरूपी जैसा । भुलवितो जनां । धेवोनियां नाना । वेष सोंगें ॥४१५॥  
 तैसा भव-वृक्ष । स्थितीचिया वेळे । भुलवितो डोळे । नेणत्याचे ॥४१६॥  
 नर्भी निळा रंग । नसता च भासे । परी तो हि नासे । क्षणोक्षणीं ॥४१७॥  
 स्वप्नींचे पदार्थ । मानिले कीं साच । तरी होती ना च । निरंतर ॥४१८॥  
 मंसार-वृक्षाचा । तैसा चि क्षणिक । 'निरर्थक देख । आभास हा ॥४१९॥  
 मर्कटानें जैसें । निजप्रतिबिंब । धरावया 'अंभ । कालवाचें ॥४२०॥  
 तैसा देखतां हा । आहे ऐसा वाटे । धरूं जातां कोठें । सांपडे ना ॥४२१॥  
 पाहें धनंजया । उद्रव विलय । अति वेगें होय । तरंगांचा ॥४२२॥  
 नातरी सवेग । 'सौदामिनी जेवीं । चमकोनि जावी । 'निमिषार्ध ॥४२३॥  
 परी तयांसी हि । टाकोनियां मागें । घडे मोडे वेगें । आभास हा ॥४२४॥  
 नेणवे समोर । किंवा पाठमोरा । कैसा वाहे वारा । ग्रीष्मान्तींचा ॥४२५॥  
 भव-वृक्षाचें ह्या । तैसें स्थित्यंतर । होतसे साचार । क्षणोक्षणीं ॥४२६॥  
 नाहीं आदिअंत । नाहीं स्थिति साच । रूप हि तैसें च । नाहीं ह्यासी ॥४२७॥  
 ऐसा हा अश्वत्थ । उन्मूळावयासी । आतां कासयासी । 'कुंथाकुंथी ॥४२८॥  
 नसोनि हा वृक्ष । बळावला साच । अज्ञानामुळें च । आपुलिया ॥४२९॥  
 तरी आत्मज्ञान-। रूपी तीक्ष्ण 'खड्डें । अर्जुना हा वेगें । तोडीं आतां ॥४३०॥  
 नाहीं तरी एक । ज्ञानाविण जे जे । करिशील दुजे । उपाय तूं ॥४३१॥

तेणें ह्या अश्वत्था-। माझारीं सर्वथा । गुंतशील पार्था । अधिक चि ॥४३२॥  
 गुंतोनियां तेंथें । मग फांदोफांदीं । किती 'अधीं-ऊर्धीं । हिंडशील ॥४३३॥  
 म्हणोनि यथार्थ । ज्ञान संपादून । मूळ जें अज्ञान । तें चि 'छेदीं ॥४३४॥  
 दोरीवरी सर्प । भामला साचार । तयालागीं ठार । करावया ॥४३५॥  
 लांब लांब कात्र्या । मेळवोनि काय । वाउगा तो होय । शीण जैसा ॥४३६॥  
 नावेमाठीं कोणी । धांवे रानोमाळ । मिथ्या मृगजळ । तरावया ॥४३७॥  
 तों चि ओढ्यामार्जीं । साच सांपडोन । जावें कीं बुडोन । तेणें जैमें ॥४३८॥  
 तैसा कोणी मिथ्या । प्रपंचाचा नाश । व्हावया मायास । करूं धांवे ॥४३९॥  
 तरी साधनांचा । होवोनियां शीण । जाय तो मरोन । आपण चि ॥४४०॥  
 म्हणोनियां स्वप्नीं । बैसला जो घाय । तयासी उपाय । जाग्रती च ॥४४१॥  
 तैमें जया वृक्षा । अज्ञान हें मूळ । तुटे तो केवळ । ज्ञान-खड्डें ॥४४२॥  
 परी यावी आतां । ती च 'खड्ड-लता । सहज पेलतां । म्हणोनियां ॥४४३॥  
 अभंग सामर्थ्य । बुद्धीलागीं हवें । पार्था नित्य-नवें । वैराग्याचें ॥४४४॥  
 जेणें स्वर्गादिक । त्रि-वर्ग हा जाण । 'श्वानाचें 'वमन । गमे ऐसा ॥४४५॥  
 सर्व भोग्यजातीं । आणील जें वीट । ऐसें बळकट । असावें तें ॥४४६॥  
 देहाभिमानाचें । मग धनंजया । म्यान काढोनियां । एकाएकीं ॥४४७॥  
 अंतर्मुख बुद्धि । ही च कोणी मूठ । तींत खड्ड नीट । धरावें तें ॥४४८॥  
 मग विवेकाची । घेवोनि सहाण । तेथें पाजवोन । नीटपणें ॥४४९॥  
 अहं-ब्रह्म ऐशा । बोधाची साचार । अति तीक्ष्ण धार । काढोनियां ॥४५०॥  
 मग तयालागीं । अद्वैताचें पाणी । द्यावें पाजळोनि । पूर्णबोधें ॥४५१॥  
 बुद्धिनिश्चयाचें । परी मुष्टि-बळ । एक दोन वेळ । परीक्षोनि ॥४५२॥  
 मग अतिशुद्ध । मननापर्यंत । पेलोनियां नीट । धरावें तें ॥४५३॥  
 पार्था ज्ञानरूप । हत्याराशीं ऐसें । होतां निजध्यासें । एकरूप ॥४५४॥  
 मग ज्ञानखड्डें । घालावया धाव । 'भवाचें तों नांव । तें हि 'नुरे ॥४५५॥  
 ऐसी हाता येतां । ज्ञानखड्डलता । प्रकाश फांकतां । अद्वैताचा ॥४५६॥

प्रपंच-वृक्षाचा । होवोनि विनाश । तुटे मायापाश । एकाएकीं ॥४५७॥  
 शरद ऋतूंतली । वारा प्रारंभींचा । केर गगनींचा । झाडी जैसा ॥४५८॥  
 ना तरी उदय । पावला तमारी । जैसा घोंट भरी । अंधाराचा ॥४५९॥  
 किंवा जागृतीस । येतां धनंजया । जाय लोपोनियां । स्वप्न जैसें ॥४६०॥  
 तैसा स्वानुभव- । धारेचा प्रभाव । छेदील ह्या भव- । वृक्षालागीं ॥४६१॥  
 तेव्हां वृक्षाचें त्या । ऊर्ध्वभागीं मूळ । किंवा शाखा-जाल । अधोभागीं ॥४६२॥  
 अर्जुना ह्यांतील । कांहीं च न भासे । मृगजळ जैसें । चांदिण्यांत ॥४६३॥  
 आत्मज्ञान-खड्डें । ऐसा ऊर्ध्वमूळ । अश्वत्थ समूळ । छेदोनि हा ॥४६४॥

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं

यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः ।

तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये

यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥४॥

मग इदं ऐसें । नाहीं च स्फुरण । जेथें अहंपण । तें हि नाहीं ॥४६५॥  
 ऐसें आपणांत । आपण आपुलें । स्वरूप संचलें । पहावें गा ॥४६६॥  
 पाहती दर्पणीं । परी अज्ञ जन । आपुलें वदन । दुजेऐसें ॥४६७॥  
 द्रष्टा-दृश्य-भाव । तैसा चि राखोन । स्व-रूप-दर्शन । नको घेऊं ॥४६८॥  
 विहिरीपूर्वीं च । आपुलिया स्थानीं । असे जैसें पाणी । झऱ्याचें गा ॥४६९॥  
 नातरी कासारिं । आटतां चि अंभ । बिंबीं प्रतिबिंब । एक होय ॥४७०॥  
 किंवा घट-भंगीं । जैसें घटाकाश । पावतें ऐक्यास । महाकाशीं ॥४७१॥  
 नातरी इंधन । संपतां चि अग्नि । येई परतोनि । मूळरूपीं ॥४७२॥  
 तैमें आत्मज्ञानें । स्वरूपीं मिळोन । आपणा आपण । पहावें गा ॥४७३॥  
 जिह्नें आपुली । व्यावी रुचि जैसी । पहावें नेत्रासी । नेत्रानें च ॥४७४॥  
 तैमें चि साचार । धनंजया जाण । देखवें आपण । आपणासी ॥४७५॥  
 नातरी तेजासी । जैसें तेज मिळे । नभावरी लोळे । नभ जैसें ॥४७६॥  
 किंवा जळाची च । करोनियां खोळ । तींत जैसें जळ । भरावें गा ॥४७७॥

तैसैं चि अद्रैतें । सुनिश्रयें जाण । पहावें आपण । आपणातें ॥४७८॥  
 जयाचें दर्शन । द्रष्ट्याविण होय । ज्ञात्याविण ज्ञेय । असे जें का ॥४७९॥  
 आद्य-पुरुष हें । नांव जया ठाया । देती धनंजया । यथार्थत्वे ॥४८०॥  
 परी तयाचें हि । कराया वर्णन । आश्रय घेवोन । उपाधीचा ॥४८१॥  
 पुढें सरे वेद । मग धनंजया । स्वीकारोन वायां । नामरूपें ॥४८२॥  
 'मागुर्ती न पाहों । मागें परतोन । प्रतिज्ञा करोन । ऐसी दृढ ॥४८३॥  
 भव आणि स्वर्ग । ह्यांसी कंटाळून । आश्रय घेवोन । योगज्ञानीं ॥४८४॥  
 जया स्वरूपाचें । ध्यावया दर्शन । 'मोक्षकामी जन । निघाले गा ॥४८५॥  
 जया आत्मरूपा । पहावें म्हणोन । संसार सांडोन । पाठीमागें ॥४८६॥  
 कर्माचा शेवट । जो का सत्यलोक । तो हि 'पैजा देख । ओलांडोन ॥४८७॥  
 विरक्त पुरुष । पुढें घेती धांव । विषयातें सर्व । झुगारोनि ॥४८८॥  
 तेवि पंडु-सुता । अहंतादि सर्व । झाडोनियां भाव । आपुले गा ॥४८९॥  
 जया मूळधरा । पावावयासाठीं । ज्ञानी हातीं घेती । जयपत्र ॥४९०॥  
 नेणतां जी वस्तु । भासे जगद्भान । मिथ्या मीतूंपण । जर्मी नांदे ॥४९१॥  
 पाहें भाग्यहीन । पुरुषाची वायां । वाढे धनंजया । आशा जैसी ॥४९२॥  
 तैसी एवढी ही । विश्व-परंपरा । पावली विस्तारा । जेथोनियां ॥४९३॥  
 तें चि आत्मरूप । आपुलें आपण । त्रिपुटी सांडोन । पहावें गा ॥४९४॥  
 थंडीनें थंडीस । जैसे थंडवावें । तैसैं चि जाणावें । हें हि येंथें ॥४९५॥  
 देखें आणिक हि । एक असे खूण । स्थान तें गहन । ओळखाया ॥४९६॥  
 कीं जें प्राप्त होतां । जीवासी अर्जुना । ध्यावया लागेना । पुनर्जन्म ॥४९७॥  
 परी प्रळयान्तीं । जैसे जळमय । सर्व विश्व होय । धनंजया ॥४९८॥  
 तैसैं आत्मज्ञानें । सर्वत्र समान । आत्मा परिपूर्ण । देखती जे ॥४९९॥  
 ते चि ज्ञानी जन । पावती तें स्थान । जें का 'सच्चिद्घन । ब्रह्मरूप ॥५००॥

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा

अध्यात्मानित्या विनिवृत्तकामाः ।

द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञे

गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

वर्षाकाळाअन्तीं । जैशा मेघ-पंक्ति । सोडोनियां जाती । आकाशातें ॥५०१॥  
 तैशापरी जाण । गेले मोह-मान । सांडोनियां मन । जयांचें गा ॥५०२॥  
 असोनि निर्धन । निष्कुर जे होती । तयां कंटाळती । आप्त जैसे ॥५०३॥  
 तैसे जयांलागीं । सर्व हि विकार । सांडोनि सत्वर । दूर गेले ॥५०४॥  
 केळीलागीं जैसीं । फळें येतां जाण । पडे उन्मळून । आपोआप ॥५०५॥  
 हळूहळू तैसें । गळे ज्यांचें कर्म । होतां चि परम । आत्म-लाभ ॥५०६॥  
 वृक्षालागीं आग । लागली देखोन । पळे पक्षीगण । सैरावैरा ॥५०७॥  
 तैसे जयांलागीं । सर्व हि विकल्प । गेले आपोआप । सांडोनियां ॥५०८॥  
 भेदबुद्धिरूपी । जिये भूमीवर । दोष-तृणांकुर । उद्भवती ॥५०९॥  
 पार्था तिये भेद- । बुद्धीची तों वार्ता । नाहीं च सर्वथा । जयांलागीं ॥५१०॥  
 तेजोनिधि सूर्य । पावतां उदय । पळोनियां जाय । रात्र जैसी ॥५११॥  
 अविद्येसहित । देह-अहंकार । तैसा गेला दूर । पळोनियां ॥५१२॥  
 आयुष्यविहीन । जीव अकस्मात् । टाकोनियां देत । देह जैसा ॥५१३॥  
 तैसें मोहात्मक । द्वैत धनंजया । गेलें सांडोनियां । जयांलागीं ॥५१४॥  
 लाहाचें सांकडें । जैसें परिसामी । जोडे ना सूर्यासी । तम जैसें ॥५१५॥  
 तैसा जयां द्वैत- । बुद्धीचा दुष्काळ । असे सर्वकाळ । स्वभावे चि ॥५१६॥  
 धेवोनियां सुख- । दुःखांचा आकार । होती जीं गोचर । देहीं द्वंद्वें ॥५१७॥  
 धजावती ना तीं । अर्जुना साचार । टाकाया समोर । जयांचिया ॥५१८॥  
 स्वप्नामार्जीं लाभो । राज्य-सिंहासन । नातरी मरण । होवो प्राप्त ॥५१९॥  
 परी जागें होतां । सर्वथा तें जाण । होय ना कारण । हर्षशोकां ॥५२०॥  
 नातरी गरुडा । वेढावया जैसें । अंगीं बळ नसे । सर्पांचिया ॥५२१॥  
 तैसें सुखदुःख- । पुण्यपापादिक । द्वंद्वें जया देख । वेढिती ना ॥५२२॥  
 आणि सारासार- । विचारीं प्रवीण । होवोनि सज्ञान । राजहंस ॥५२३॥

'असद्रस्तुरूपी । सांडोनियां 'नीर । 'आत्तरसक्षीर । सेविती जे ॥५२४॥  
 आपुल्या रसाचा । जैसा सूर्यदेव । करोनि वर्षाव । भूमीवरी ॥५२५॥  
 किरणांच्या द्वारा । तो चि आकर्षून । आणी परतोन । निज-बिंबी ॥५२६॥  
 भ्रांतीमुळें तैसी । आत्मवस्तु भली । जी का विगुरली । बारा वाटे ॥५२७॥  
 ज्ञानदृष्टीनें ती । एकपणें साच । आपुल्या ठायीं च । देवती जे ॥५२८॥  
 गंगेचा प्रवाह । सागरा मिळोन । तद्रूप होवोन । राहे जैसा ॥५२९॥  
 तैसा आत्मयाच्या । निर्धारीं च देख । तद्रूप विवेक । जयांचा गा ॥५३०॥  
 आकाशासी जैसें । येणें जाणें नाहीं । राहे सर्वा ठायीं । व्यापकत्वे ॥५३१॥  
 तैसें आधर्वें चि । जाहले आपण । कामना म्हणोन । नुरे जया ॥५३२॥  
 आगीच्या डोंगरीं । बीज कोणतें हि । अंकुरे ना पाहीं । धनंजया ॥५३३॥  
 तैसा जयांचिया । मानसीं साचार । अल्प हि विकार । उद्भवे ना ॥५३४॥  
 मंदराची रवी । काडोनियां घेतां । आली निश्चळता । क्षीरार्णवीं ॥५३५॥  
 तैसी जयांचिया । शुद्ध अंतरांत । उसळे ना लाट । विषयांची ॥५३६॥  
 अपूर्णता नाहीं । कोणत्या हि अंगीं । जैसी चंद्रालागीं । पौर्णिमेच्या ॥५३७॥  
 तैसे आत्मज्ञानें । झाले पूर्णकाम । म्हणोन निष्काम । स्वभावें जे ॥५३८॥  
 ऐसे विलक्षण । जयांअंगीं गुण । तयातें वर्णोन । किती सांगूं ॥५३९॥  
 जैसा झडाडत्या । वायूपुढें देख । टिके ना क्षणैक । धूलिकण ॥५४०॥  
 तैसें आत्मलाभें । जयासी अर्जुना । नांव हि रुचे ना । विषयांचें ॥५४१॥  
 असो ज्ञानरूप । अभीमार्जी भले । ऐसे शुद्ध झाले । जे जे कोणी ॥५४२॥  
 ते चि एक होती । तया ठायीं तैसे । मिसळलें जैसें । 'हेम 'हेमीं ॥५४३॥  
 तया ठायीं ऐसें । बोलतां तें स्थान । कोणतें म्हणोन । विचारिसी ॥५४४॥  
 तरी कल्पान्तीं हि । नासे ना जें स्थान । तें चि तें ठिकाण । जाण वापा ॥५४५॥  
 परी दृश्यपणें । जयातें पहावें । ना तरी जाणावें । ज्ञेयपणें ॥५४६॥  
 किंवा अमूक हें । म्हणोन दावावें । ऐसें तरी नव्हे । अर्जुना जें ॥५४७॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्गाम परमं मम ॥६॥

झगझगीत दीप । दाखवी जें काहीं । किंवा चंद्रमा हि । उजळी जें ॥५४८॥  
 बहु बोलूं काय । सहस्र-किरण । करी प्रकाशन । विश्वाचें ज्या ॥५४९॥  
 आघवें तें विश्व । होय भासमान । तोंवरी दर्शन । नाही ज्याचें ॥५५०॥  
 विश्वाचा आभाम । भासतसे पाहें । लपोनियां राहे । तोंवरी जें ॥५५१॥  
 जैमें शिंपीपण । सर्वथा हरपे । तंव वाटे रुपें । ऐसें साच ॥५५२॥  
 किंवा दोरीपण । लोपतां साचार । सर्पाचा आकार । दृढ होय ॥५५३॥  
 तैमीं चंद्रसूर्य । इत्यादिक मोठीं । जीं जीं तेजें होती । भासमान ॥५५४॥  
 प्रकाशतो तीं तीं । साच धनंजया । जिये वस्तूचिया । अंधारांत ॥५५५॥  
 ती तों आत्मवस्तु । तेजोराशि देख । सर्वभूतात्मक । एक असे ॥५५६॥  
 सूर्यचंद्राचिया । मानमीं प्रकाशे । सर्वत्र जी असे । सारखी च ॥५५७॥  
 म्हणोनियां आत्म-। वस्तु-प्रकाशांत । तेजोहीन होत । चंद्रसूर्य ॥५५८॥  
 ह्या चि साठीं सर्व । तेजस्व्यांचें तेज । जाण तें सहज । ब्रह्माचें च ॥५५९॥  
 चंद्रासवें लोप । तारकांचा होय । पावतां उदय । दिन-मणि ॥५६०॥  
 तैमें जयाचिया । प्रकाशें आघवें । चंद्रसूर्यासवें । विश्व लोपे ॥५६१॥  
 जाग येतां स्वप्न । मावळे सकळ । नुरे मृगजळ । अस्तमानीं ॥५६२॥  
 तैसा पाहीं जया । वस्तूचिया ठायीं । आभास तों नाही । कोणता च ॥५६३॥  
 तें चि धनंजया । माझें निजधाम । जाण सर्वोत्तम । सुनिश्चयें ॥५६४॥  
 नद्यांचे ते ओघ । न येती परते । महासागरातें । मिळाले जे ॥५६५॥  
 तैसे पावले जे । माझें निजधाम । त्यां नाहीं जन्म । पुनरपि ॥५६६॥  
 मिठाची बाहुली । लवण-सागरीं । घालितां माघारीं । परते ना ॥५६७॥  
 किंवा अग्नि-ज्वाळा । जातां अंतराळीं । न येती भूतळीं । पुन्हां जैशा ॥५६८॥  
 ना तरी संतप्त । लोहालागीं वारी । भेटतां माघारीं । निघे ना तें ॥५६९॥  
 तैस आत्मज्ञानें । पुरुष जे भले । मिळोनियां गेले । माझ्या रूपीं ॥५७०॥  
 त्यांलागीं मिथ्या । जन्ममरणाची । चुके सव्यसाची । येरझार ॥५७१॥

तंव 'प्रज्ञारूपी । पृथ्वीचा तो 'राय । बोले धनंजय । श्रीहरीतें ॥५७२॥  
 म्हणे देवा थोर । पावलों प्रसाद । परी एका शब्द । एक माझा ॥५७३॥  
 देवा तुमचिया । स्वरूपीं जडोनि । मागुते जे कोणी । वळती ना ॥५७४॥  
 तुम्हांपासोनियां । होते का ते भिन्न । किंवा ते अभिन्न । 'ठार्यांचे च ॥५७५॥  
 स्वरूपेंकरोन । जरी ठार्यांचे च । वेगळे ते साच । होती देवा ॥५७६॥  
 तरी परतोन । नाही च ते येत । दिसे विसंगत । बोलणें हें ॥५७७॥  
 पुष्प-गंधीं गुंग । जाहले भ्रमर । होती का साचार । पुष्परूप ॥५७८॥  
 'लक्ष्याहूनि बाण । 'स्वरूपें चि भिन्न । म्हणोनि स्पर्शोनि । परतती ॥५७९॥  
 तैसे तुझ्याहून । ठार्यांचे जे भिन्न । येती परतोन । मागुते ते ॥५८०॥  
 ना तरी स्वरूप । तुझे आणि त्यांचें । जरी एक साचें । ठार्यांचें च ॥५८१॥  
 तरी शस्त्र जैसें । न रूपे आपणा । तैसें कोणी कोणा । मिळवें हो ॥५८२॥  
 म्हणोनियां जैसा । देहा आणि अंगा । संयोग-वियोगा । ठाव नाहीं ॥५८३॥  
 तैसी तयांची हि । स्थिति देवा जाण । होती तुझ्याहून । अभिन्न जे ॥५८४॥  
 आणि तुजहून । वेगळे जे सदा । पावती ना कदा । तुजसी ते ॥५८५॥  
 तरी मागुते ते । येती वा येती ना । वायां 'विवंचना । कासया ही ॥५८६॥  
 आतां कोण गा ते । पावोनियां तूतें । येती ना मागुते । प्रपंचांत ॥५८७॥  
 तें चि उमजेळ । मज ऐशापरी । सांगावें श्रीहरी । सर्वात्मका ॥५८८॥  
 अर्जुनाची ऐसी । ऐकोनि आशंका । शिरोमणि जो का । सर्वज्ञांचा ॥५८९॥  
 देव तो श्रीकृष्ण । बोले संतोषून । शिष्याचें तें ज्ञान । देखोनियां ॥५९०॥  
 म्हणे महाबुद्धे । पावोनियां मातें । येती ना मागुते । माघारीं जे ॥५९१॥  
 तयांच्या स्वरूपा-न संबंधीं साचार । दोन्ही हि प्रकार । संभवती ॥५९२॥  
 तत्त्वतां विचार । करोनि पहावें । तरी ते स्वभावे । मद्रूप चि ॥५९३॥  
 परी वरिवरी । विचारितां जाण । भिन्न मजहून । भासती ते ॥५९४॥  
 जळावरी जैसे । दिसती कळोळ । एन्हवीं केवळ । पाणी च ते ॥५९५॥  
 किंवा सोन्याहून । अलंकार भिन्न । परी सर्व जाण । सोनें चि ते ॥५९६॥

१ अत्यंत बुद्धिमान्. २ मूळचेच. ३ ज्यावर नेम धरावयाचा त्या वस्तूहून. ४ विचार; चर्चा.  
 अ. जा. ३२



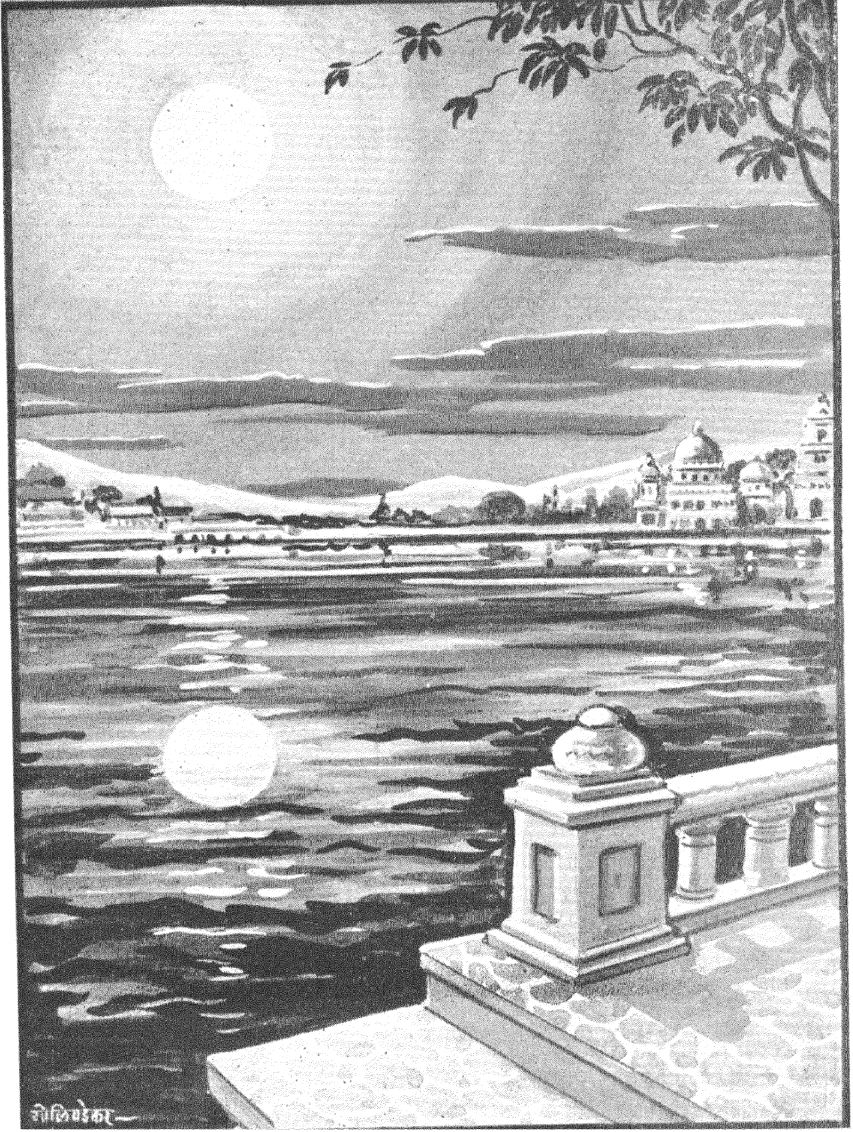
तैसें ज्ञानदृष्ट्या । साच पाहूं जातां । मजसी तत्त्वतां । एक चि ते ॥५९७॥  
 परी भिन्नपण । होय जें निर्माण । त्यासी कारण । अज्ञान चि ॥५९८॥  
 आणि 'आत्मदृष्ट्या । करितां विचार । सर्वत्र साचार । मी च एक ॥५९९॥  
 तेथें भिन्नाभिन्न । ऐसा व्यवहार । व्हावया साचार । दुजें कोठें ? ॥६००॥  
 आघवें आकाश । घालोनियां पोटीं । प्रकाशे किरीटी । सूर्य जेव्हां ॥६०१॥  
 तेव्हां प्रतिबिंब । दिसे कोठें कैचें । होतां सर्व साचें । रश्मिमय ॥६०२॥  
 आघवें कल्पान्तीं । होतां जलमय । नदी नाले काय । घोघावती ॥६०३॥  
 म्हणोनियां जो मी । 'अविक्रिय एक । त्या मज देख । अंश कैचे ॥६०४॥  
 ह्या चि लागीं जीव । भिन्न कीं अभिन्न । सर्वथा हा प्रश्न । संभवे ना ॥६०५॥  
 असोनियां उजू । वांकुडें च होय । पार्था जैसें तोय । पात्रासंगें ॥६०६॥  
 किंवा पाण्यासंगें । नसतें च जाण । येई दुजेपण । सूर्यालागीं ॥६०७॥  
 चौकोनी वाटोळें । असे का गगन । तें तों रूपहीन । जरी साच ॥६०८॥  
 तरी घटीं मटीं । सांपडतां भलें । चौकोनी वाटोळें । होय जैसें ॥६०९॥  
 किंवा निद्रेचिया । आधारें स्वप्नांत । जेव्हां होय प्राप्त । राज्यपद ॥६१०॥  
 तेव्हां तो पुरुष । एकला चि पाहें । होवोनियां राहे । सर्व जैसा ॥६११॥  
 भिसळतां हीण । शुद्ध सुवर्णास । भिन्न भिन्न कस । लागे जैसा ॥६१२॥  
 असोनि मी तैसा । शुद्ध स्वभावतां । वेटाळिला जातां । मायायोगें ॥६१३॥  
 सर्वत्र अज्ञान । फांकोनि साचार । पडोनि विसर । स्वरूपाचा ॥६१४॥  
 कोण मी कोठील । ऐशा विकल्पांत । सांपडोनि भ्रांत । होय जीव ॥६१५॥  
 मग भ्रांतीमार्जीं । करोनि विचार । देह मी साचार । ऐसें मानी ॥६१६॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।

मनः पष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥७॥

देहा चि एवढें । मानोनि आपणा । आणी भिन्नपणा । जीव जेव्हां ॥६१७॥  
 तेव्हां पडोनिियां । मर्यादा त्यास । जीव तो 'मदंश । ऐसें वाटे ॥६१८॥  
 वायूचिया संगें । प्रकटे सागर । धरोनि आकार । तरंगांचा ॥६१९॥





जैसा निशा-नाथ । बिबोनि जळांत । असे जळातीत । स्वभावेँ चि ॥६२५॥

मग सागरांश । म्हणोनि ते जाण । आभासती सान-। पणें जैसे ॥६२०॥  
 तैसा जडालागीं । करीं सचेतन । देह अभिमान । धरीं जेव्हां ॥६२१॥  
 तेव्हां चि मी जीव । ऐसें स्वभावतां । 'गमे पंडु-सुता । जीवलोकीं ॥६२२॥  
 जीवदृष्टीनें हा । दिसे जो 'व्यापार । तो चि गा साचार । जीवलोक ॥६२३॥  
 जन्म-मृत्यु सत्य । ऐसें जें मानणें । तयासी मी म्हणें । जीवलोक ॥६२४॥  
 जैसा निशा-नाथ । बिंबोनि जळांत । असे 'जळातीत । स्वभावे चि ॥६२५॥  
 तैसा जीवलोकीं । येथें प्रपंचांत । देहीं देहातीत । देख मातें ॥६२६॥  
 कुंकुमाच्या संगें । दिसे जैसा लाल । असोनि निर्मळ । स्फटिक तो ॥६२७॥  
 न मोडतां तैमें । माझे अनादित्व । किंवा अक्रियत्व । न खंडतां ॥६२८॥  
 कर्ता भोक्ता ऐसें । गमे जें जें काहीं । तें तें सर्व पाहीं । भ्रांतिरूप ॥६२९॥  
 काय सांगूं फार । आत्मा जो निर्लेप । होतां तो तद्रूप । प्रकृतीशीं ॥६३०॥  
 जन्ममरणादि । देहधर्म पाही । आपुल्या च ठायीं । साच ऐसे ॥६३१॥  
 मग मन आणि । पंच-ज्ञानेंद्रियें । प्रकृतीचीं कार्यें । होती जीं का ॥६३२॥  
 तीं तो आपुलीं च । मानोनि साचार । लागे व्यवहार । करावया ॥६३३॥  
 जैसे संन्याशानें । आपुलें आपण । कुटुंब बनोन । स्वप्नामाजीं ॥६३४॥  
 मग तयाचिया । गुंतोनि मोहांत । रहावे भोगीत । सुखदुःखें ॥६३५॥  
 तैसा आत्मा निज-। रूप विसरोन । 'तद्रूप होवोन । प्रकृतीशीं ॥६३६॥  
 मग प्रकृतीचीं । होती कार्यें जीं जीं । तीं तीं माझीं माझीं । ऐसें मानी ॥६३७॥  
 ऐसा तो जीवात्मा । जाण पां किरीटी । मनाचिया रथीं । आरूढोनि ॥६३८॥  
 श्रवणाच्या द्वारा । निघोनि त्वरित । प्रवेशे रानांत । शब्दाचिया ॥६३९॥  
 खेंचोनि लगाम । प्रकृतीचा वेगें । त्वचेचिया मार्गें । जीवात्मा तो ॥६४०॥  
 एकादिये वेळे । स्पर्शाचिया घोर । अरण्यां संचार । करूं लागे ॥६४१॥  
 रिघोनियां केव्हां । नेत्राचिया दारीं । रूपाच्या डोंगरीं । स्वैर हिंडे ॥६४२॥  
 किंवा जिव्हाद्वारें । निघोनि बाहेरी । रसरूप दरी । भरूं लागे ॥६४३॥  
 'घ्राणाचिया द्वारा । ना तरी सत्वर । पडोनि बाहेर । जीवात्मा तो ॥६४४॥

मग गंधरूपी । घनदाट वन । जाय ओलांडोन । एकाएकीं ॥६४५॥  
 ऐशापरी देह- । इंद्रियांचा स्वामी । पार्था 'अंतर्यामी । जीवात्मा तो ॥६४६॥  
 मनावें सर्वथा । घेवोनि सहाय्य । शब्दादि विषय । भोगीतसे ॥६४७॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।

गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥८॥

परी जेव्हां जीव । प्रवेशतो देहीं । तेव्हां चि तो होई । कर्ता भोक्ता ॥६४८॥  
 जैसा कोणी आला । सहपरिवार । 'प्रासादीं सुंदर । रहावया ॥६४९॥  
 तरी तो 'संपन्न । 'विलासी म्हणोन । येतसे कळोन । सहजे चि ॥६५०॥  
 तैशापरी पार्था । \*स्थूल शरीरांत । येवोनि रहात । जीव जेव्हां ॥६५१॥  
 विषयेंद्रियांची । तेव्हां गडबड । अहंतेची वाढ । दिसूं लागे ॥६५२॥  
 किंवा जीव जेव्हां । एका शरीरास । टाकोनि दुजास । 'अंगीकारी ॥६५३॥  
 तेव्हां इंद्रियांचा । हा चि समुदाय । घेवोनियां जाय । स्वतांसंगे ॥६५४॥  
 जैसा अतिथीचा । झाला अपमान । जाई पुण्य-धन । घेवोनियां ॥६५५॥  
 किंवा कळसूत्री । बाहुल्यांचा नाच । धागा तुटतां च । थांबे जैसा ॥६५६॥  
 किंवा मावळतां । सहस्र-किरण । लोकांचे लोचन । सर्वे नेई ॥६५७॥  
 काय सांगूं फार । जैसा 'प्रभंजन । नेतसे वाहोन । पुष्प-गंध ॥६५८॥  
 तैसा देहराज । जीवात्मा हा जाण । देहातें सोडोन । जाय जेव्हां ॥६५९॥  
 तेव्हां आपुलिया । संगें ऐसीं नेई । मनासह साही । इंद्रियें हीं ॥६६०॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।

अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥९॥

मग इहलोकीं । ना तरी स्वर्गांत । अंगीकारी जेथ । अन्य देह ॥६६१॥  
 तेथ त्याच देहीं । विस्तारितो पाहीं । मनादि सहा हि । इंद्रियांसीं ॥६६२॥  
 मालवितां दीप । प्रभेसवें जाई । पुन्हां तेज देई । लावितां तो ॥६६३॥  
 परी येथें ऐसें । वाटे धनंजया । अज्ञ जनांचिया । दृष्टीलागीं ॥६६४॥  
 कीं हा जीवात्मा च । देहधारी झाला । ह्यानें च भोगिला । विषय हि ॥६६५॥

किंवा हा चि जाय । देहातें सोडून । साच अज्ञ जन । मानिती हें ॥६६६॥  
मृत्यु आणि जन्म । भोग आणि कर्म । सर्वथा हे धर्म । प्रकृतीचे ॥६६७॥  
परी जन्म-मृत्यु । आत्म्यासी च होती । ऐसें मंदमती । मानिती ते ॥६६८॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।

विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।

यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥११॥

एवढीशी अल्प । शरीराची मोट । चेतना प्रकट । होतां त्यांत ॥६६९॥  
आत्मा आला ऐसें । बोलती अज्ञान । चलनबलन । देखोनि तें ॥६७०॥  
तयाचिया संगें । आपुलाल्या 'अर्थी' । इंद्रियें वर्तती । जिथेवेळीं ॥६७१॥  
तिये वेळीं आत्मा । भोग घेतो ऐसें । बोलती ते 'पिसे' । 'मतिमंद' ॥६७२॥  
मग 'भोगक्षीण' । देह पडे जेव्हां । ओरडती तेव्हां । गेला ऐसें ॥६७३॥  
वृक्ष डोलतांना । दिसे तोंवरी च । वारा असे साच । काय तेथें ॥६७४॥  
आणि वृक्षालागीं । जेथें नाहीं ठाव । तेथें का अभाव । असे त्याचा ॥६७५॥  
किंवा आरशांत । पहावें तेव्हां च । आपणासी साच । मानावें का ? ॥६७६॥  
आपुलें अस्तित्व । 'सर्वथैव पाहीं' । नव्हतें च काई । तयाआधीं ॥६७७॥  
मग तो 'दर्पण' । सारितां बाजूस । लोपतां आभास । स्वरूपाचा ॥६७८॥  
आपुलें अस्तित्व । संपलें ऐसें च । मानावें का साच । सुनिश्चये ॥६७९॥  
बोलती गा ऐसें । झाला मेघनाद । जरी गुण शब्द । आकाशाचा ॥६८०॥  
धावती सवेग । मेघ परी जैसें । धांवे चंद्र ऐसें । आरोपिती ॥६८१॥  
तैसे जन्म मृत्यु । देहासी च होती । परी मंदमती । आंधळे जे ॥६८२॥  
तयां अविक्रिय । आत्मा मरे जन्मे । ऐसें वाटे भ्रमें । सुनिश्चये ॥६८३॥  
आत्मा आत्म्याठायीं । देह-धर्म देहीं । देखती ते पाहीं । वेगळे च ॥६८४॥  
ज्ञानदृष्टीनें ते । देखोनि हें सर्व । देहीं आत्मतत्त्व । ओळखिती ॥६८५॥  
ग्रीष्मकाळीं जैसे । रवीचे किरण । ढगांसी भेदोन । पार जाती ॥६८६॥

तैसी विवेकाची । वाढोनियां व्याप्ति । स्वरूपीं च स्फूर्ति । बैसे ज्यांची ॥६८७॥  
 देखती ते ज्ञानी । आत्मतत्त्व कैसें । तें चि मांगतसें । ऐक आतां ॥६८८॥  
 जैसें तरांगणीं । भरलें गगन । सागरीं बिंबोन । राहे जरी ॥६८९॥  
 तरी तें तुटोन । पडलें नाहीं च । कळों येई साच । बुद्धीसी हें ॥६९०॥  
 सागरीं आभास । भासतो तो वायां । गगनाचे ठायां । गगन तें ॥६९१॥  
 जाणती ते तैसा । आत्मा आत्म्याठायीं । असोनियां देहीं । देहातीत ॥६९२॥  
 ओहळ्याचें जळ । वाहे खळखळ । चंद्रिका केवळ । विंवे तथें ॥६९३॥  
 परी चंचळ तें । जळ चि साचार । चंद्रिका ती स्थिर । चंद्राठायीं ॥६९४॥  
 किंवा भरे आटे । सरोवरीं नीर । परी तो भास्कर । स्वस्थानीं च ॥६९५॥  
 तैसा होय जाय । देह परी मातें । जाणती ते ज्ञाते । अविनाश ॥६९६॥  
 घडले मोडले । घट मठ जरी । राहे व्योम तरी । तैसें चि तें ॥६९७॥  
 तैसे अखंडित । आत्ममत्तेवरी । देह नाना परी । अज्ञानें जे ॥६९८॥  
 कल्पिले तयांस । उत्पत्ति-विनाश । कळे ज्ञानियांस । ऐसें स्पष्ट ॥६९९॥  
 करी ना करवी । काहीं हि व्यापार । चढे ना साचार । ओहटे ना ॥७००॥  
 ऐशा चैतन्याच्या । सत्य स्वरूपातें । जाणती ते ज्ञाते । आत्मज्ञानें ॥७०१॥  
 पार्था जरी ज्ञान । होईल स्वाधीन । \*अणु-संशोधन । बुद्धीलार्गी ॥७०२॥  
 सकल शास्त्रांचें । सर्वस्व निधान । येईल संपूर्ण । जरी हातीं ॥७०३॥  
 शास्त्रविज्ञानाची । ऐसी प्राप्ति परी । विरक्ति जोंवरी । नाहीं चिर्ती ॥७०४॥  
 तोंवरी मी देख । सर्वात्मक एक । न भेटें निःशंक । तयांलार्गी ॥७०५॥  
 ज्ञानाचा विचार । जिह्वेवरी नाचे । परी विषयांचें । ध्यान मर्नी ॥७०६॥  
 तरी तयांसी मी । न भेटें साचार । सत्य हें त्रिवार । जाण बापा ॥७०७॥  
 सांगें निद्रेमार्जी । बरळोनि ज्ञान । संसार-बंधन । तुटे काई ? ॥७०८॥  
 ना तरी पोथीसी । करोनियां स्पर्श । होय का प्रवेश । विद्येमार्जी ? ॥७०९॥  
 किंवा सांजवेळे । बांधोनियां डोळे । प्राणीं मुक्ताफळें । लाविलीं गा ॥७१०॥  
 तरी कळे काय । त्यांचें मोल-मान । नाकाशीं धरोन । ठेवितां तीं ॥७११॥

तैसा जिह्वे सर्व । शास्त्रांचा सराव । आणि चितीं ठाव । अहंतेसी ॥७१२॥  
लक्षावधि जन्म । ऐसे गेले जरी । नाहीं तयां तरी । माझी प्राप्ति ॥७१३॥  
भूतमात्रीं एक । कैसा मी व्यापक । तें चि सांगूं एक । पार्था आतां ॥७१४॥

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।

यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नी तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥

आदित्यासकट । विश्व हें समस्त । होय प्रकाशित । प्रकाशें ज्या ॥७१५॥  
जाण धनंजया । माझी च ती दीप्ति । असे जी आद्यन्तीं । विश्वाचिया ॥७१६॥  
शोषोनियां जळ । मावळतां रवि । मागुतीं पुरवी । ओलांश जो ॥७१७॥  
शीतल प्रकाश । चंद्राचा तो पार्था । माझा चि तत्त्वतां । जाण ऐसें ॥७१८॥  
आणि जें अपार । दाहक पाचक । अभि-तेज देख । तें हि माझे ॥७१९॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।

पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥१३॥

रिघोनि भू-तळीं । भूमीसी आधार । झालों मी साचार । म्हणोनियां ॥७२०॥  
विरवी ना तिज । सागरींचें जळ । मातीचें डेकूळ । असोनी ती ॥७२१॥  
आणि चराचर । भूतांसी अपार । धरी निरंतर । धरित्री जी ॥७२२॥  
तया धरित्रींत । सर्वथा रिघोन । भूतांसी धारण । करीं मी च ॥७२३॥  
नभीं चंद्ररूपें । चालतें साचार । झालों सरोवर । अमृताचें ॥७२४॥  
तया चंद्राचिया । किरणांचे झोत । येथें असंख्यात । फांकती जे ॥७२५॥  
अर्जुना तयांसी । करोनि धारण । औषधी-भरण । करीं मी च ॥७२६॥  
कंद मूळ फळ । आणिक सकळ । धान्यांचा सुकाळ । करोनियां ॥७२७॥  
ऐशापरी नाना । अन्नं पुरवोन । देतसें जीवन । प्राणिमात्रां ॥७२८॥  
निर्मिलें जें अन्न । पचोनि तें पूर्ण । व्हावें समाधान । जीवांलागीं ॥७२९॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।

प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥१४॥

म्हणोनियां सर्व । प्राण्यांच्या देहीं । नाभि-स्थानीं पाहीं । राहोनियां ॥७३०॥



झालों जठराभि । मी च पार्था तेथ । आगटी संतत । पेटवोनि ॥७३१॥  
 प्राणापानरूपी । जोडभाता जाण । तयातें फुंकोन । अहोरात्र ॥७३२॥  
 नेणों किती अन्न । टाकितों आटोन । पोटीं प्रतिक्षण । धनंजया ॥७३३॥  
 शुष्क किंवा स्निग्ध । सुपक्व विदग्ध । अन्नं चतुर्विध । पचवीं मी ॥७३४॥  
 एशोपरी मी च । सर्व प्राणिगण । तयांचें जें अन्न । तें हि मी च ॥७३५॥  
 जिराया तें अन्न । मुख्य जें साधन । जठराभि जाण । तो हि मी च ॥७३६॥  
 माझिया व्याप्तीची । आणिक ती आतां । तुज अपूर्वता । काय सांगूं ॥७३७॥  
 विश्वीं मजविण । दुजें नसे कांहीं । असें सर्वांठारीं । मी च एक ॥७३८॥  
 तरी विश्वीं प्राणी । कोणी सदा सुखी । कोणी अति दुःखी । ऐसें कैसें ॥७३९॥  
 एका चि प्रदीपें । पट्टणीं अमूप । लाविले प्रदीप । जागोजागीं ॥७४०॥  
 तरी तयांतील । कांहीं प्रभाहीन । ऐसें का घडोन । येई कोठें ? ॥७४१॥  
 तर्कवितर्कानीं । ऐशापरी मन । गेलें आशंकोन । जरी तुजें ॥७४२॥  
 तरी टाकूं ती हि । आशंका फेडोन । ऐक सावधान । धनंजया ॥७४३॥  
 आघवें हे मी च । एक असें साच । अन्यथा नाही च । येथें कांहीं ॥७४४॥  
 परी जैसें ज्याचें । मन बुद्धि चित्त । होतसें मी व्यक्त । तैसा तेथें ॥७४५॥  
 जैसे नाना वादीं । नाना नाद-भेद । जरी एक शब्द । आकाशाचा ॥७४६॥  
 लोकव्यवहारा । उपयोगी होय । जैसा एक सूर्य । नाना रीती ॥७४७॥  
 बीजधर्मांऐसें । भिन्नरस होय । एक चि तें तोय । नाना वृक्षीं ॥७४८॥  
 तैसें माझे एक । स्वरूप साचार । दिसे नानाकार । नाना जीवां ॥७४९॥  
 दुपदरी भला । नीलमणि-हार । देखिला समोर । नेणत्यानें ॥७५०॥  
 तरी सर्पत्वे तो । होय भयभीत । परी सुख तेथ । जाणत्यासी ॥७५१॥  
 स्वातीचें उदक । शिंपीमार्जी पडे । तरी तेथें घडे । मोती जैसें ॥७५२॥  
 परी तें चि पार्था । सर्पमुखीं जातां । तयाचें सर्वथा । विष होय ॥७५३॥  
 तैसा जाणत्यासी । मी तों सुखालागीं । नेणत्याच्या भागीं । दुःस्वरूप ॥७५४॥

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो

मत्तः स्मृतिज्ञानमपोहनं च ।  
 वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो  
 वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥१५॥

‘अमुका मी’ ऐसें । बुद्धीचें स्फुरण । होय रात्रंदिन । सर्वांतरिं ॥७५५॥  
 तें तों पार्था जाण । पाहतां तत्त्वतां । स्वरूप सर्वथा । माझे चि गा ॥७५६॥  
 परी घडोनियां । संतांची संगति । रिघोनियां मति । योग-ज्ञानीं ॥७५७॥  
 सद्गुरु-चरण । उपासितां जाण । वैराग्य बाणोन । अंतरांत ॥७५८॥  
 ह्या चि सत्कर्माच्या । योगें हारपोन । अशेष अज्ञान । धनंजया ॥७५९॥  
 जयांची अहंता । आत्मस्वरूपांत । राहिली निवांत । स्थिरावोनि ॥७६०॥  
 ते तों स्वरूपीं च । ठेवोनियां दृष्टि । देखोनि किरीटी । मज तेंथें ॥७६१॥  
 नित्य महानंदीं । जाहले तल्लीन । तयासी कारण । मी च एक ॥७६२॥  
 होतां सूर्योदय । पहावें गा साच । जैसें सूर्यानें च । सूर्यालागीं ॥७६३॥  
 तैशापरी जाण । माझे मज ज्ञान । व्हावया कारण । मी च असें ॥७६४॥  
 ना तरी गुंतोन । देहाच्या सेवेंत । देहीं च आसक्त । जाहले जे ॥७६५॥  
 त्यांच्या संगतींत । सर्वदा राहोन । थोरवी ऐकोन । संसाराची ॥७६६॥  
 जयांची अहंता । देहाचिया ठायीं । जडोनियां राही । सर्वकाळ ॥७६७॥  
 ते तों धनंजया । स्वर्गसंसारार्थ । आचरोनि येथ । कर्मकांड ॥७६८॥  
 होती सर्वथैव । दुःखाचे च धनी । साच विसरोनि । आत्मरूप ॥७६९॥  
 जागता चि जैसा । होतसे कारण । निद्रा आणि स्वप्न । भोगावया ॥७७०॥  
 तैसें नेणत्यांसी । होय हें जें दुःख । तें हि पार्था देख । मजमुळें ॥७७१॥  
 ना तरी मेघानें । झांकिलें सूर्यातें । हें हि कळें येतें । सूर्यानें च ॥७७२॥  
 माझ्या चि सत्तेनें । मातें नेणोनियां । देखती विषयां । तैसें प्राणी ॥७७३॥  
 झोपेलागीं किंवा । व्हावया जागृत । जागृति च होत । हेतु जैसी ॥७७४॥  
 तैसा प्राण्यांच्या । ज्ञाना-अज्ञानासी । असें गा सर्वांशीं । मी च मूळ ॥७७५॥  
 माझे सत्स्वरूप । नेणोनि सर्वथा । वेद मातें पार्था । जाणों गेला ॥७७६॥

तंव तेथें शाखा । ऋग्वेदादि तीन । जाहल्या निर्माण । भिन्न भिन्न ॥७७७॥  
 परी नदी वाहो । पूर्व-पश्चिमेस । एका सागरास । मिळे जैसी ॥७७८॥  
 तैशा भिन्न भिन्न । जरी तीन शाखा । तरी मज एका । जाणों जाती ॥७७९॥  
 परी एकमेव । 'अद्वितीयं ब्रह्म । सिद्धान्त परम । ऐसा जो का ॥७८०॥  
 तेथें शब्दासर्वें । हारपती 'श्रुती । वायूसर्वें 'द्रुति । नभीं जैसी ॥७८१॥  
 तैसैं सकळ हि । जेव्हां श्रुतिजात । लाजोनि निवांत । राहे ऐसैं ॥७८२॥  
 प्रकटोनि तेव्हां । तेथें यथातथ्य । वर्णाया सामर्थ्य । देई मी च ॥७८३॥  
 वेदांसमवेत । अशेष हि जग । हारपतें मग । जिये ठायीं ॥७८४॥  
 तें गा निजज्ञान । निर्मल पवित्र । जाणावया 'पात्र । माझा मी च ॥७८५॥  
 जैसैं झोंपेंतून । जाग येतां पूर्ण । लोपे दुजेपण । स्वभांतील ॥७८६॥  
 मग आपुलें जें । साच एकपण । येतसे दिसोन । तें हि स्पष्ट ॥७८७॥  
 तैसैं द्वैताचिया । संबंधावांचोन । माझें एकपण । ठायींचें जें ॥७८८॥  
 तें हि एकपण । जाणें माझा मी च । हेतु हि मी साच । तथा ज्ञाना ॥७८९॥  
 काजळी वा अग्नि । उरे ना कांहीं च । पेटोनि जातांच । कापूर तो ॥७९०॥  
 तैसैं अविद्येतें । समूळ गिळोन । ज्ञान हि बुडोन । जाय जेथें ॥७९१॥  
 तेथें आहे नाहीं । बोल हे खुंटोन । उरे स्थिति जाण । शब्दातीत ॥७९२॥  
 मार्गासर्वें गेला । विश्व जो घेवोन । तथा चोरा कोण । कोठें शोधी ॥७९३॥  
 ऐसी कोणीएक । जी का शुद्धावस्था । मी च ती सर्वथा । जाण पार्था ॥७९४॥  
 चराचरांतील । आपुल्या 'व्याप्तीतें । वर्णितां श्रीकांतें । ऐशा रीती ॥७९५॥  
 आपुलें स्वरूप । उपाधिरहित । हें चि तथा स्पष्ट । सांगितलें ॥७९६॥  
 क्षीराब्धींत जैसा । प्रतिबिंबताहे । चंद्रोदय पाहें । आकाशींचा ॥७९७॥  
 पार्थाचिया ठायीं । ज्ञानाचा त्या ठसा । उमटला तैसा । एकाएकीं ॥७९८॥  
 आरशासारखी । होय जरी भित । स्वच्छ चकचकीत । रूपदर्शी ॥७९९॥  
 तरी तींत चित्रें । जैसीं समोरील । भिताडावरील । उमटती ॥८००॥  
 तैसा कृष्णार्जुनां- । माझारीं सारिखा । नांदतसे देखा । एक बोध ॥८०१॥

परब्रह्मरूप । कैसे विलक्षण । जों जों 'आकलन । होय त्याचें ॥८०२॥  
 तों तों तेंथें गोडी । वाढत चि जाय । म्हणोनियां राय । साधकांचा ॥८०३॥  
 अर्जुन तो म्हणे । देवा निजव्याप्ति । वर्णितां श्रीपति । तुम्ही आतां ॥८०४॥  
 आपुलें स्वरूप । उपाधिरहित । म्हणोनि जें येथ । सांगितलें ॥८०५॥  
 तें चि पुनरपि । न ठेवितां न्यून । सांगा विवरोन । मजलागीं ॥८०६॥  
 तवं देव म्हणे । भलें केलें पार्था । तें चि पुन्हां आतां । सांगूं तुज ॥८०७॥  
 अगा आम्हांसी हि । अखंड ह्या गोष्टी । बोलायाची मोठी । गोडी वाटे ॥८०८॥  
 परी करूं काय । विचारितें देख । भेटे ना आणिक । तुजएमें ॥८०९॥  
 माझे मनोरथ । व्हावया सफळ । आज तूं केवळ । भेटलासी ॥८१०॥  
 कीं तूं माझें येथ । उपाधिरहित । स्वरूप अद्भुत । 'पुसों येसी ॥८११॥  
 अद्वैतावरी हि । भोगावया सुख । होसी सहाय्यक । तूं च मातें ॥८१२॥  
 कीं हें सत्स्वरूप । पुसोनि सहज । सुख माझें मज । देसी येथें ॥८१३॥  
 पाहतां दर्पण । ठेवोनि समीप । आपुलें स्वरूप । दिसे त्यांत ॥८१४॥  
 तैसा सुनिर्मळ । संवादियांमाजीं । वाटसी तूं आजी । सर्वश्रेष्ठ ॥८१५॥  
 प्रिय पार्था तुवां । नेणोनि पुसावें । मग ऐकवावें । तुज आम्हीं ॥८१६॥  
 ऐसा तरी येथें । नव्हे चि प्रकार । एक चि साचार । आम्ही-तुम्ही ॥८१७॥  
 बोलोनियां ऐसें । मग जगजेठी । प्रेमें देई मिठी । अर्जुनासी ॥८१८॥  
 करोनियां पूर्ण । 'कृपावलोकन । देव नारायण । काय बोले ॥८१९॥  
 म्हणे दोहीं ओठीं । एक चि बोलणें । एक चि चालणें । दोहीं पार्यीं ॥८२०॥  
 तैसें तुझें-माझें । पुसणें-सांगणें । होय एकपणें । धनंजया ॥८२१॥  
 आतां भोगूं येथें । एक स्वरूपातें । सांगतें पुसतें । दोन्ही एक ॥८२२॥  
 बोलतां हें प्रेमें । श्रीहरी भुलोनि । राहे आर्लिगोनि । पार्थालागीं ॥८२३॥  
 मग सांवरोनि । म्हणे ह्या प्रसंगीं । नोहे उपयोगी । ऐक्यप्रेम ॥८२४॥  
 गुळाच्या ढेपांत । रुचीसाठीं क्षार । घालणें साचार । इष्ट नोहे ॥८२५॥  
 तैसी ऐक्यप्रेमें । संवादसुखाची । रसाळता साची । विघडेल ॥८२६॥

\*नर-नारायणां । आम्हां दोघां कांहीं । भिन्नभाव नाहीं । ठर्यांचा चि ॥८२७॥  
 परी जिरूं दे हा । आतां लवलाहीं । माझा माझ्याठर्यां । प्रेमावेग ॥८२८॥  
 म्हणोनि तो देव । एकाएकीं बोले । काय तूं पुसिलें । सांग पार्था ॥८२९॥  
 कृष्णरूपीं लीन । व्हावया पहात । होता जो का पार्थ । तिये वेळीं ॥८३०॥  
 मागुता तो आला । देहभानावरी । एकाया वैखरी । श्रीहरीची ॥८३१॥  
 म्हणे मग तेथें । सद्गदित कंठें । वैकुंठाधिपते । नारायणा ॥८३२॥  
 उपाधिरहित । स्वरूप आपुलें । मज सांगा भलें । विवरोनि ॥८३३॥  
 एकोनि ते बोल । देव तो श्रीकांत । उपाधिरहित । स्वरूपातें ॥८३४॥  
 सांगावयाआधीं । तथा विवरोन । दावी भाग दोन । उपाधीचे ॥८३५॥  
 पुसिलें स्वरूप । उपाधिरहित । तरी वर्णी येथ । उपाधी कां ॥८३६॥  
 ऐसी जरी कोणी । घेतली आशंका । परिहार देखा । तरी ऐसा ॥८३७॥  
 ताकाचा कीं अंश । फेडितां निःशेष । नवनीत शेष । उरे जैसें ॥८३८॥  
 ना तरी तें हीण । काढितां बाजूस । राहे शुद्धकस । सोनें जैसें ॥८३९॥  
 ना तरी बाजूस । सारितां शेवाळ । उरे जैसें जळ । आपोआप ॥८४०॥  
 किंवा मेघ-जाल । लोपतां सकळ । नभ सुनिर्मळ । स्वभावे चि ॥८४१॥  
 झाडोनियां कोंडा । काढितां बाजूस । दाण्याची कीं रास । उरे जैसी ॥८४२॥  
 तैसें सारासार- । विचारेंकरोन । होतां निरसन । उपाधीचे ॥८४३॥  
 उरे तें स्वरूप । उपाधिरहित । ऐसें कळों येत । आपोआप ॥८४४॥  
 नवोढेसी कोणी । पति-नाम पुसे । तरी सांगे जैसें । मूकपणें ॥८४५॥  
 तैसें 'नेति' 'नेति' । ऐसें चि म्हणोन । स्वीकारिती मौन । श्रुती जेथें ॥८४६॥  
 तें माझें स्वरूप । उपाधिरहित । जाण तूं निभ्रांत । धनंजया ॥८४७॥  
 अनिर्वचनीय । स्वभावे जें होय । कोणें कैसें काय । सांगावे तें ॥८४८॥  
 तथा अचर्चातें । वर्णाया साचार । ऐसा चि प्रकार । असे एक ॥८४९॥  
 म्हणोनियां आधीं । देव नारायण । उपाधिवर्णन । करी येथें ॥८५०॥  
 शाखेचिया द्वारा । दाविती साचार । जैसी चंद्रकोर । पाडव्याची ॥८५१॥

तसें चि हें जाण । उपाधि-वर्णन । कळावया खूण । स्वरूपाची ॥८५२॥

द्वाविर्मा पुरुषो लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।

क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥ १६ ॥

मग देव म्हणे । ऐक धनुर्धरा । संसार-नगरा-। माझारीं ह्या ॥८५३॥

दोन चि पुरुष । नांदती बरवे । होती जे स्वभावे । अल्प ऐसे ॥८५४॥

अवध्या आकाशीं । रात्र आणि दिन । हीं च जैशीं दोन । नांदती गा ॥८५५॥

तैसे संसाराच्या । राजमंदिरांत । वस्तीलागीं येत । दोन चि हे ॥८५६॥

आणिक हि तिजा । पुरुष जो आहे । नांव तो न साहे । दोहोंचें हि ॥८५७॥

होतां तो प्रकट । गांवा हि सकट । गिळोनि टाकीत । दोघांसी ह्या ॥८५८॥

परी तयाची तों । नको आधीं वार्ता । ऐक येथें कथा । दोघांची च ॥८५९॥

रहावया आले । भव-ग्रामीं पाहें । दोन्ही पुरुष हे । धनंजया ॥८६०॥

एक तो आंधळा । पांगळा अज्ञान । सर्वांगसंपूर्ण । दुजा चांग ॥८६१॥

परी दोघांची हि । एका गांवीं वस्ती । म्हणोनि संगति । एकमेकां ॥८६२॥

एका नाम क्षर । एक तो अक्षर । कोंदला संसार । दोघांनीं च ॥८६३॥

तरी येथें क्षर । पुरुष तो कोण । कोणतें लक्षण । अक्षराचें ॥८६४॥

तो चि अभिप्राय । विस्तारें संपूर्ण । सांगूं विवरोन । ऐक आतां ॥८६५॥

तरी जें जें काहीं । येथें धनुर्धरा । महत्-अहंकारा-। पासोनियां ॥८६६॥

तृणाग्रापर्यंत । जंगमस्थावर । असे सान थोर । विस्तारलें ॥८६७॥

मन-बुद्धीलागीं । काय सांगूं फार । होतसे गोचर । जें जें काहीं ॥८६८॥

जें जें काहीं होय । पंचभूतात्मक । सांपडतें देख । नानारूपीं ॥८६९॥

सत्त्वादि गुणांची । टांकसाळ थोर । त्यांतून बाहेर । पडे जें जें ॥८७०॥

भूताकाररूपी । नानाविध नाणें । घडावया सोनें । होय जें का ॥८७१॥

धेवोनि जें धन । काळ तो साचार । खेळतो जुगार । निरंतर ॥८७२॥

विपरीतज्ञानें । जाणिलें जें जाय । जया जन्म-क्षय । क्षणोक्षणीं ॥८७३॥

भ्रांतिरूपी वन । तयांत हिंडोन । सृष्टीचें भुवन । घडिलें जें ॥८७४॥

परी असो आतां । बोलणें हें सर्व । 'जग' ऐसें नांव । जयालागीं ॥८७५॥  
 प्रकृतीच्या रूपें । अष्टधा म्हणोन । मार्गें विवरोन । दाविलें जें ॥८७६॥  
 तेविं छत्तीस हि । भागीं विभागोन । 'क्षेत्र' हें म्हणोन । बोलिलों जें ॥८७७॥  
 असो हें मागील । आतां च मी येथ । वर्णिलें 'अश्वत्थ' । म्हणोनि जें ॥८७८॥  
 सर्व तें साकार । जग स्थूल सूक्ष्म । रहावया ग्राम । कल्पोनियां ॥८७९॥  
 तयाचिसारिग्वें । जाहलें चैतन्य । स्वयें विमरोन । आपणासी ॥८८०॥  
 कूर्पीं प्रतिबिंब । आपुलें पाहोन । सिंह खवळोन । उडी घाली ॥८८१॥  
 किंवा जळांतील । नभावरी जैसें । बिंब 'प्रतिभासे । नभाचें चि ॥८८२॥  
 चैतन्य तें तैसें । असोनियां एक । होय द्वैतात्मक । मायायोगें ॥८८३॥  
 ह्यापरी 'साकार । कल्पोनि नगरी । आत्मा निद्रा करी । विस्मृतीची ॥८८४॥  
 स्वप्नामार्जीं शेज । देखोनियां चांग । पड्डावें मग । तथें जैसें ॥८८५॥  
 पार्था तैशापरी । साकार शरीरीं । देख निद्रा करी । आत्मराज ॥८८६॥  
 मग मी मी माझें । ऐसें चि उच्चारी । बरळतां तरी । उंच स्वरें ॥८८७॥  
 मी सुखी मी दुःखी । ऐसें घोरावया । लागे निद्रेचिया । भ्रामार्जीं ॥८८८॥  
 हा तों माझा बाप । ही तों माझी आई । असें कैसा मी हि । गौरापान ॥८८९॥  
 ना तरी मी हीन । किंवा सुलक्षण । कांता पुत्र धन । माझें हें ना ? ॥८९०॥  
 ऐशा स्वभावरी । होवोनियां स्वार । चैतन्य साचार । धनंजया ॥८९१॥  
 स्वर्ग-संमाराच्या । रानामार्जीं धांवें । तयासी म्हणावें । 'क्षर' ऐसें ॥८९२॥  
 क्षेत्रज्ञ ऐसें च । जया देती नांव । जिये दशे जीव । ऐसी 'संज्ञा ॥८९३॥  
 जयासी आपुला । पडोनि विसर । सर्व भूताकार । झाला जो का ॥८९४॥  
 तया जीवात्म्यातें । धनंजया पाहें । 'क्षरपुरुष' हें । नांव देती ॥८९५॥  
 स्वरूपें तो पूर्ण । म्हणोनि तत्त्वतां । आली पुरुषता । तयालागीं ॥८९६॥  
 देहपुरीमार्जीं । करितो शयन । म्हणोनि हि जाण । 'पुरुष' तो ॥८९७॥  
 आणि उपाधीशीं । तादात्म्यता त्याची । झाली असे साची । म्हणोनियां ॥८९८॥  
 तयावरी मिथ्या । 'क्षरत्वाचा आळ । जरी तो केवळ । नित्यसिद्ध ॥८९९॥

हालतां चि जळ । जैमें तयासंगें । उचंबळूं लागे । चंद्रबिंब ॥९००॥  
 तैसा उपाधीच्या । विकारें हा साच । विनाशी ऐसा च । भासतसे ॥९०१॥  
 परी तें उदक । आटतां चि जैमें । होय दिसेनामें । बिंब तें हि ॥९०२॥  
 तैसा शरीराचा । होतां चि विनाश । चैतन्य लयास । गेलें वाटे ॥९०३॥  
 उपाधीच्या योगें । जीवचैतन्यातें । ऐशापरी येतें । 'क्षणिकत्व ॥९०४॥  
 ह्या चि क्षणिकत्वा-। साठीं सर्वथैव । 'क्षर' ऐसे नांव । जीवात्म्यासी ॥९०५॥  
 ऐशापरी सर्व । जीव-चैतन्यासी । जाण 'क्षर' ऐसी । संज्ञा देती ॥९०६॥  
 आतां धनंजया । ऐक सावधान । बरवें वर्णन । 'अक्षराचें' ॥९०७॥  
 सर्व पर्वतांच्या । पंक्तीमार्जी खासा । मेरु असे जैसा । मध्यमार्गी ॥९०८॥  
 तैसा चि अक्षर । पुरुष जो दुजा । जाण कपि-ध्वजा । मध्यस्थ तो ॥९०९॥  
 असो पृथ्वी किंवा । पाताळ वा स्वर्ग । होती ना त्रिभाग । मेरूचे कीं ॥९१०॥  
 तैसा धनंजया । पुरुष तो जाण । राहे उदासीन । ज्ञानाज्ञानीं ॥९११॥  
 ब्रह्म चि मी ऐसें । जेथें नाहीं ज्ञान । तादात्म्य म्हणोन । नाहीं ब्रह्मीं ॥९१२॥  
 किंवा विपरीत । ज्ञानें ध्यावें दैत । हें हि पार्था जेथ । संभवे ना ॥९१३॥  
 ज्ञानाज्ञानहीन । केवळ अज्ञान । तें चि रूप जाण । अक्षराचें ॥९१४॥  
 जाय मृत्तिकेचा । धूळपणा पूर्ण । घट हि होवोन । राहेना ती ॥९१५॥  
 मग पार्था तया । मृत्पिंडासमान । असे उदासीन । सर्वथा जें ॥९१६॥  
 आटतां सागर । न लाटा ना नीर । तैसी अनाकार । दशा जी का ॥९१७॥  
 जागृतीचा लोप । जाहला संपूर्ण । आणि पडे स्वप्न । हें हि नाहीं ॥९१८॥  
 तैसी जी का पार्था । गाढ निद्रावस्था । तैसी च सर्वथा । अक्षराची ॥९१९॥  
 सर्व विश्वाभास । जातसे लयास । दिसे ना प्रकाश । आत्म्याचा हि ॥९२०॥  
 ऐसी जी केवळ । अज्ञान-अवस्था । तया नांव पार्था । 'अक्षर' हें ॥९२१॥  
 अमावास्यादिनीं । सर्व कळाहीन । मूळ चंद्रपण । उरें जैसें ॥९२२॥  
 तैसें धनंजया । रूप तें साचार । जाणावें अक्षर । पुरुषाचें ॥९२३॥  
 पक होतां फळ । मग वृक्षपण । बीर्जी सामावोन । राहे जैसें ॥९२४॥



तैसा होतां नाश । उपाधीचा सर्व । प्रवेशते जीव-। दशा जेथें ॥९२५॥  
 जेथें देहादिक । उपाधि आणिक । जीव तो हि देख । लीन होय ॥९२६॥  
 जया अव्यक्तातें । साच बीजभाव । ऐसें असे नांव । वेदान्तांत ॥९२७॥  
 तें चि त्या अक्षर । पुरुषाचें स्थान । सुनिश्चयें जाण । धनंजया ॥९२८॥  
 जेथोनि हें पार्था । विपरीत ज्ञान । विस्तारोनि स्वप्न-। जागृतीतें ॥९२९॥  
 नाना बुद्धींचिया । रानामार्जी शिरे । ऐसी एक उरे । अवस्था जी ॥९३०॥  
 जेथोनियां जीव-। दशेची कल्पना । उपजोनि नाना । विश्वासवें ॥९३१॥  
 मग दोन्ही हि तीं । होती जेथें लीन । पुरुष तो जाण । अक्षर गा ॥९३२॥  
 क्षर पुरुष तो । खेळे रात्रंदिन । जगामार्जी स्वप्न-। जागृतींनीं ॥९३३॥  
 त्या चि स्वप्न आणि । जागृति ह्या दोन । अवस्था जेथोन । उद्रवती ॥९३४॥  
 जयालार्गीं धन-। अज्ञान-सुष्ठुमि । ऐसें नांव देती । सुविख्यात ॥९३५॥  
 जयामार्जी एक । न राहतें न्यून । तरी तो चि पूर्ण । ब्रह्मलाभ ॥९३६॥  
 स्वप्न-जागृतीस । पुन्हा न तो घेता । तरी म्हणूं येता । ब्रह्मभाव ॥९३७॥  
 प्रकृति-पुरुष । ऐसे मेघ दोन । जाहले निर्माण । आकाशीं ज्या ॥९३८॥  
 क्षेत्र-क्षेत्रज्ञाचें । पडे जेथें स्वप्न । पुरुष तो जाण । अक्षर गा ॥९३९॥  
 काय सांगूं फार । भव-वृक्ष देख । जो का अधोशाख । असे पार्था ॥९४०॥  
 तथा अश्वत्थाचें । मूळ जें साचार । रूप तें अक्षर । पुरुषाचें ॥९४१॥  
 पुरुष हा ऐसें । म्हणूं ह्यालागोन । स्वरूपें संपूर्ण । म्हणोनियां ॥९४२॥  
 मायापुरीमार्जी । करितो शयन । म्हणोनि हि जाण । पुरुष हा ॥९४३॥  
 जो का विपरीत । ज्ञानाचा प्रकार । दावी येरझार । विकारांची ॥९४४॥  
 तयालार्गीं नेणे । जी का निद्रावस्था । तो चि जाण पार्था । पुरुष हा ॥९४५॥  
 स्वभावे क्षरत्व । ठाउकें ना ह्यास । ज्ञानाविण नाश । पावेना हा ॥९४६॥  
 म्हणोनि 'अक्षर' । ऐसी ह्याची ख्याति । वेदान्त सिद्धान्तीं । देखसी तूं ॥९४७॥  
 ऐसें जीव-कार्या । कारक जें होय । मायेचा आश्रय । घेवोनियां ॥९४८॥  
 धनंजया जाण । तथा चैतन्यास । अक्षर पुरुष । ऐसें नांव ॥९४९॥

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।

यो लोकत्रयमाविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

अन्यथाज्ञानाच्या । अवस्था त्या <sup>१</sup>दोन । लोपती ज्या घन । अज्ञानत्वीं ॥९५०॥  
 अज्ञान तें ज्ञानीं । बुडोनियां जाय । ज्ञान तें हि होय । लीन जेथें ॥९५१॥  
 जाळोनियां काष्ठ । स्वयें जळे अग्नि । अज्ञाना गिळोनि । तैशा रीती ॥९५२॥  
 स्वयें ज्ञान तें हि । हारपे साचार । आत्मसाक्षात्कार । देवोनियां ॥९५३॥  
 जाणण्यावांचून । ऐसें जाणतें जें । राहिलें सहजें । धनंजया ॥९५४॥  
 तें चि तो उत्तम । पुरुष तूं जाण । क्षराक्षराहून । आणिक जो ॥९५५॥  
 तिजा अखेरीचा । असे तो चि एक । धनंजया देख । सुनिश्चयें ॥९५६॥  
 निद्रे आणि स्वप्ना- । पासोनियां भिन्न । जागृतीचें ज्ञान । विशेषत्वे ॥९५७॥  
 मृगजळ आणि । रश्मीहून फार । वेगळें साचार । सूर्यविंब ॥९५८॥  
 काष्ठांतील अग्नि । काष्ठाहून भिन्न । क्षराक्षराहून । तैसा चि तो ॥९५९॥  
 नदीनदां सर्वा । एकत्र करोन । सर्वथा होवोन । अमर्याद ॥९६०॥  
 कल्पान्तीं सर्वत्र । एक चि सागर । प्रकटे साचार । संपूर्णत्वे ॥९६१॥  
 किंवा दिन-रात्री । गिळावीं सहजें । कल्पान्तींच्या तेजें । जैशा रीती ॥९६२॥  
 तैसी निद्रा-स्वप्न- । जागृतींची वार्ता । नाही च सर्वथा । तयाठायीं ॥९६३॥  
 मग आहे नाही । कळे ना हें जेथें । संपूर्ण लोपतें । द्वैताद्वैत ॥९६४॥  
 स्वानुभव तो हि । जातसे जिरून । सर्वथा दिपून । जयाठायीं ॥९६५॥  
 ऐसें स्वयंसिद्ध । अर्जुना जें कांहीं । पुरुष तो पाहीं । उत्तम गा ॥९६६॥  
 तया पुरुषातें । परमात्मा नांव । परी तें हि <sup>२</sup>जीव- । सापेक्षत्वे ॥९६७॥  
 कांठीं उभा तो चि । सांगूं शके पार्था । बुडाल्याची वार्ता । जैशा रीती ॥९६८॥  
 तैसें विवेकाच्या । राहोनियां तीरी । वेद चर्चा करी । तयाची गा ॥९६९॥  
 ह्यालागीं पुरुष । क्षराक्षर दोन्ही । सर्वथा देखोनि । सोपाधिक ॥९७०॥  
 पलीकडे आत्म- । रूप तें म्हणोन । नाम त्यालागोन । परमात्मा ॥९७१॥  
 परमात्मा शब्दें । ऐशा परी साच । पुरुषोत्तमासी च । ओळखावें ॥९७२॥

१ खोट्यालाच खरें असें भासवणाच्या ज्ञानाच्या. २ स्वप्न आणि जागृति. ३ जीवाच्या दृष्टीनें विचार करताना.

नाही तरी पार्था । मौनें चि वर्णन । होतसे संपूर्ण । जयाचें गा ॥९७३॥  
 न जाणतां कांहीं । होय ज्याचें ज्ञान । ऐसें विलक्षण । स्वरूप जें ॥९७४॥  
 न होतां चि कांहीं । ब्रह्म जीव शिव । असे स्वयमेव । वस्तु जी का ॥९७५॥  
 जेथें सांगतें तें । सांगणें होवोन । गेलें मावळोन । सोऽहं तें हि ॥९७६॥  
 द्रष्टा-दृश्य-भाव । हारपला सर्व । दर्शनासी ठाव । मग कोठें ॥९७७॥  
 परी बिंबा आणि । प्रतिबिंबामार्जीं । स्वभावे प्रभा जी । असे नित्य ॥९७८॥  
 न लाभे ती हातीं । म्हणोनि नाहीं च । ऐसें तरी साच । म्हणूं ये का ॥९७९॥  
 नाका फुलामार्जीं । असे जो सुवास । जरी लोचनास । दिसे ना तो ॥९८०॥  
 तरी नाहीं ऐसें । म्हणूं नये जैसें । तैसें चि हें असे । धनंजया ॥९८१॥  
 तरी द्रष्टा-दृश्य । जातां हारपोन । उरें स्वयंपूर्ण । परमात्मा ॥९८२॥  
 परी जो का हें चि । स्वानुभवे पाहे । तें चि त्या आहे । रूप जाण ॥९८३॥  
 प्रकाश्यावांचोन । असे जो प्रकाश । भरी अवकाश । स्वरूपें जो ॥९८४॥  
 करावा श्रवण । नादें चि जो नाद । स्वादें चि जो स्वाद । चाखावा गा ॥९८५॥  
 आनंदें आनंद । भोगावा जो देख । सुखालागीं सुख- । लाभ जेथें ॥९८६॥  
 तेजासी हि तेज । प्राप्त जेथें झालें । शून्य हि बुडालें । महा-शून्यां ॥९८७॥  
 जो का पूर्णत्वाचा । होय परिणाम । पुरुष उत्तम । होय जो का ॥९८८॥  
 तेविं विश्रांतीचा । विसावा जो झाला । व्यापोनि उरला । विश्वासी हि ॥९८९॥  
 धनंजया जेथें । लयाचा हि लय । ऐसा जो का होय । परिपूर्ण ॥९९०॥  
 बहुतांपासोन । असे जो बहुत । सर्वांपरी श्रेष्ठ । ऐसा जो का ॥९९१॥  
 न होवोनि रुपें । दावी रुपेपण । नेणत्यासी जाण । शिंप जैसी ॥९९२॥  
 किंवा सोनें जैसें । नाना अलंकारीं । न लपतां तरी । गुप्त राहे ॥९९३॥  
 तैशापरी विश्व । न होतां आपण । करी जो धारण । विश्वालागीं ॥९९४॥  
 असो जळा आणि । तरंगांलागोन । पार्था भिन्नपण । नसे जैसें ॥९९५॥  
 तैसा आपुलिया । अस्तित्व-प्रकाशें । आपण चि भासे । जगत्वे जो ॥९९६॥  
 जळींचिया बिंबा । चंद्र हाचि जाण । होतसे कारण । जैशा रीती ॥९९७॥

तैसा विश्वाचिया । संकोच-विकासें । सर्वथा हा भासे । आपण चि ॥९९८॥  
 असो रात्र किंवा । असो दिनमान । 'द्विधा नव्हे जाण । भानु जैसा ॥९९९॥  
 तैसें होवो किंवा । लय पावो जग । स्वभावे अंभंग । असे जो का ॥१०००॥  
 तयाच्या सारिखा । असे तो चि एक । न दुजें आणिक । धनंजया ॥१००१॥

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।

अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

'प्रकाशी जो नित्य । आपणा आपण । नाहीं दुजेपण । जया ठायीं ॥१००२॥  
 तो एक उत्तम । क्षराक्षरातीत । उपाधिरहित । पुरुष मी ॥१००३॥  
 म्हणोनियां वेद । आणि लोक सर्व । मज देती नांव । पुरुषोत्तम ॥१००४॥

यो मामेवमसंभूतो जानाति पुरुषोत्तमम् ।

स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ॥१९॥

ज्ञान-सूर्योदयें । ऐशापरी मातें । पुरुषोत्तमातें । ओळखे जो ॥१००५॥  
 जैसें झोपेंतून । येतां जागेपण । मावळतें स्वप्न । एकाएकीं ॥१००६॥  
 तैसें जयालागीं । होतां आत्मज्ञान । विश्व हें संपूर्ण । मिथ्या झालें ॥१००७॥  
 नातरी दोरीची । येतां चि प्रतीती । सर्पत्वाची भ्रांति । फिट्टे जैसी ॥१००८॥  
 तैसें माझे ज्ञान । होतां चि जयास । मिथ्या विश्वाभास । मावळे गा ॥१००९॥  
 अलंकारीं साच । जाणे जो सुवर्ण । अलंकारपण । तया मिथ्या ॥१०१०॥  
 तैसें जेणें मज । जाणोनि तत्त्वतां । सांडिली सर्वथा । भेद-बुद्धि ॥१०११॥  
 आपणासकट । सर्व हि तें मी च । जाणोनि हें साच । म्हणे जो का ॥१०१२॥  
 स्वयंसिद्ध सत-चित्त- । आनंद-निधान । सर्वत्र संपूर्ण । मी च एक ॥१०१३॥  
 तयालागीं ज्ञान । झालें सर्व काहीं । ऐसें बोलणें हि । तोकडे च ॥१०१४॥  
 कीं तो ब्रह्मरूप । जाहला म्हणोन । तया द्वैतभान । नाहीं कोठें ॥१०१५॥  
 मिठी द्यावी जैसी । आकाशें आकाशा । योग्य तो चि तैसा । मद्भक्तीसी ॥१०१६॥  
 'क्षीरार्णवपणें । क्षीरसागरासी । 'पाहुणे' जैसी । करावी गा ॥१०१७॥  
 किंवा अमृत चि । होवोनि आपण । अमृतीं मिळोन । जावें जैसें ॥१०१८॥

शुद्ध सुवर्णाशीं । जावया मिळोन । शुद्ध चि सुवर्ण । हवें जैसैं ॥१०१९॥  
 तैसी प्राप्त झाली । मद्रूपता साच । संभवे तरी च । भक्ति माझी ॥१०२०॥  
 होती सिंधूहून । गंगा जरी भिन्न । सिंधूसी मिळोन । जाती कैसी ॥१०२१॥  
 म्हणोनि मद्रूप । जाहल्यावांचून । रिघणें कोठून । मद्गर्कींत ॥१०२२॥  
 सर्वांपरी लाट । सागरीं अभिन्न । तैसा जो भजन । करी माझें ॥१०२३॥  
 सूर्य आणि प्रभा । होती जैसीं एक । तैसी च ती देख । त्याची भक्ति ॥१०२४॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।

एतदबुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तमयोगो नाम

पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

असो येथवरी । आरंभापासोन । तत्त्व जें गहन । सांगितलें ॥१०२५॥  
 उपनिषद्रूपी । कमल-पराग- । परिमळ चांग । असे जें का ॥१०२६॥  
 सर्व हि शास्त्रांचा । करोनि अभ्यास । योग्य गांठयास । एक चि जें ॥१०२७॥  
 व्यासबुद्धिद्वारा । वेदांतें मंथोनि । काढिलें जें लोणी । नित्य सिद्ध ॥१०२८॥  
 ती ही ज्ञानरूपी । अमृताची गंगा । लाभलीसे जगा । गीतारूपें ॥१०२९॥  
 आनंदचंद्राची । सतरावी कला । असे ही निर्मला । जीवदात्री ॥१०३०॥  
 मंथोनि विवेक- । रूपी क्षीरार्णव । लक्ष्मी अभिनव । काढिली ही ॥१०३१॥  
 म्हणोनि आपुल्या । पदें आणि वणें । तेविं जीवें-प्राणें । अर्थाचिया ॥१०३२॥  
 पार्था गीतारूपी । पद्मजा ही नेणे । दुजें काहीं होणें । मजविण ॥१०३३॥  
 ठाकले समोर । क्षराक्षर दोन्ही । तयांचें वाळोनि । पुरुषत्व ॥१०३४॥  
 आपुलें सर्वस्व । मग तिनें मातें । पुरुषोत्तमातें । समर्पिलें ॥१०३५॥  
 म्हणोनि प्रस्तुत । तुवां पंडु-सुता । ऐकिलीस आतां । गीता ही जी ॥१०३६॥  
 मज आत्म्याठार्यां । राहोनि अनन्य । पतिव्रता धन्य । जर्गी झाली ॥१०३७॥  
 अर्जुना केवळ । शब्दपांडित्याचें । नव्हे चि हें साचें । गीताशास्त्र ॥१०३८॥

१ निर्माण होऊं शकते. २ उपनिषदें होंच कोणी जीं कमळें त्यांतील ज्ञानरूपी परागांचा सुगंध. ३ घुसळून.

जाण हें संसार । जिकितें हत्यार । काय सांगूं फार । तुज आतां ॥१०३९॥  
 अक्षरें हीं साक्षात् । आत्म्याचें दर्शन । घडविते पूर्ण । मंत्र होती ॥१०४०॥  
 तुज गीताशास्त्र । सांगितलें हें जें । गुप्तधन माझे । काढिलें तूं ॥१०४१॥  
 \* गौतमानें जैशी । शिव-जटेंतून । आणिली पावन । गंगा खालीं ॥१०४२॥  
 तैसा मज आत्म-। शंभूचिया माथां । होता ठेवा पार्था । गीतेचा जो ॥१०४३॥  
 काढाया तो आज । झालासी गौतम । तूं चि सर्वोत्तम । श्रद्धावंता ॥१०४४॥  
 साच सुनिर्मळ । आरसा होऊन । तुवां मज पूर्ण । आकळिलें ॥१०४५॥  
 नातरी सचंद्र । तारकांचा प्रांत । आणी आपणांत । सिंधु जैसा ॥१०४६॥  
 तैसें ठेविलेंसी । गीतेसमवेत । मातें हृदयांत । आपुलिया ॥१०४७॥  
 कायावाचादिक । त्रिविध ते मळ । सांडोनि निर्मळ । झालासी तूं ॥१०४८॥  
 म्हणोनियां माझे । गीतेसर्वे जाण । विश्रांतीचें स्थान । होसी आतां ॥१०४९॥  
 काय सांगूं पार्था । माझी ज्ञान-लता । ऐसी जी ही गीता । आकळी जो ॥१०५०॥  
 होय तो विमुक्त । सर्व मोहांतून । सर्वथा पावोन । मद्रूपतें ॥१०५१॥  
 नदी अमृताची । सेवितां साचार । रोग-परिहार । होवोनियां ॥१०५२॥  
 त्या हि वरी योग्य । ऐसी अमरता । होय पंडुसुता । प्राप्त जैसी ॥१०५३॥  
 तैसा गीता-ज्ञानें । मोह लया जाय । नवल तें काय । असे यथे ॥१०५४॥  
 परी सुखें जावें । स्व-रूपीं मिळोन । येणें आत्मज्ञान । होवोनियां ॥१०५५॥  
 जया आत्म-ज्ञानीं । कर्माचें सार्थक । होवोनियां देख । मावळे तें ॥१०५६॥  
 हरपली वस्तु । दाखवोनि चांग । लय पावे मग । माग जैसा ॥१०५७॥  
 तैसा कर्मरूपी । भव्य प्रासादास । ज्ञान हा कळस । जाण पार्था ॥१०५८॥  
 म्हणोनियां पाहीं । ज्ञानियाच्या ठायीं । संभवे ना कांहीं । कर्मलेश ॥१०५९॥  
 ऐसें अर्जुनासी । बोलिला तो देखा । अनाथांचा सखा । कृष्णनाथ ॥१०६०॥  
 कृष्णनाथाचें तें । दिव्य बोधामृत । भरोनि वहात । पार्थाठायीं ॥१०६१॥  
 व्यासांचिये कृपें । तें चि ज्ञानामृत । मग झालें प्राप्त । संजयासी ॥१०६२॥  
 तेणें संजयें तें । ज्ञानामृत भलें । प्यावयासी दिलें । रायालागीं ॥१०६३॥

म्हणोनियां तया । रायाचें जीवित । सुखावह होत । अंतकालीं ॥१०६४॥  
 एन्हीं तो जरी । श्रवणावसरीं । वाटे अधिकारी । नव्हे ऐसा ॥१०६५॥  
 तरी हि तयास । अंतकालीं भला । प्रकाश लाभला । श्रीगीतेचा ॥१०६६॥  
 द्राक्षलता-मूर्ळीं । दुग्ध जें ओतिलें । तें तों वायां गेलें । जरी वाटे ॥१०६७॥  
 परी तें पिक । दुणावतां चांग । दिसे उपयोग । तयाचा हि ॥१०६८॥  
 तैसीं श्रीहरीच्या । मुखींचीं अक्षरे । संजये आदरे । सांगितलीं ॥१०६९॥  
 म्हणोनियां अंध । धृतराष्ट्र तो हि । तें मुखी होई । अंतकाळीं ॥१०७०॥  
 ती च गीता वेड्या-वांकुड्या शब्दांत । मराठी भाषेंत । गुंफोनियां ॥१०७१॥  
 यथामती येथें । जाणें नेणें तैसी । तुम्हां सज्जनांसी । निरूपिली ॥१०७२॥  
 अरसिकांलागीं । शेवंतीचें अंग । दिसे ना तें चांग । विशेषत्वं ॥१०७३॥  
 परी सुगंधित । सेवितां तें फूल । जैसी पडे भूल । भ्रमरांसी ॥१०७४॥  
 तैसैं गीतेचिया । प्रतिपादनांत । योग्य जे सिद्धांत । ते चि घ्यावे ॥१०७५॥  
 न्यून तें तें मज । टाकावें देवोन । स्वभावे अज्ञान । बालकासी ॥१०७६॥  
 असो मति-मंद । नेणतें बालक । करिती कौतुक । मायबाप ॥१०७७॥  
 तयामी देखोन । जाती आनंदून । डोलविती मान । प्रेम-भरें ॥१०७८॥  
 तैसे तुम्ही संत । मायबाप माझे । भेटलां सहजें । म्हणोनियां ॥१०७९॥  
 करीं येथें गीता-ग्रंथ निरूपण । लडिवाळपण । तें चि जाणा ॥१०८०॥  
 आतां विश्वात्मक । जो का स्वामी माझा । श्रीनिवृत्तिराजा । गुरुदेव ॥१०८१॥  
 तो हें वाक्पूजन । धेवो आवडीनें । ज्ञानदेव म्हणे । निवृत्तीचा ॥१०८२॥

इति श्रीस्वामी स्वरूपानंदविरचित श्रीमत् अभंग-ज्ञानेश्वरी

पंचदशोऽध्यायः ।

हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः ।

श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय सोळावा

सर्व विश्वाभास । नेतसे अस्तास । अद्भुत प्रकाश । ऐसा ज्याचा ॥१॥  
तो हा सूर्यदेव । श्रीगुरु निवृत्ति । भावें तयाप्रति । वंहूं आतां ॥२॥  
अविद्या-रजनी । दूर घालवोनि । अद्रय-पद्मिनी । फुलवी जो ॥३॥  
करी ज्ञानाज्ञान-। चांदण्या गिळोन । ज्ञानियां सुदिन । स्व-बोधाचा ॥४॥  
जयाचा उदय । होतां सुप्रभातीं । आत्मज्ञानदृष्टि । लाभोनियां ॥५॥  
जीवरूपी पक्षी । देह-अभिमान-। घरटीं सांडोन । दूर जाती ॥६॥  
लिंगदेहरूपी । सरोर्जा साचार । जीवात्मा-भ्रमर । कांडला जो ॥७॥  
सुटे तो तत्काळ । मुखें आपोआप । श्रीगुरु-स्वरूप । सूर्योदयीं ॥८॥  
भेद-नदीचिया । दोन्ही तीरांवरी । पडोनि जोजारीं । शास्त्राचिया ॥९॥  
बुद्धि आणि बोध । चक्रवाक-जोडी । वियोगें जी वेडी । हांका देई ॥१०॥  
तया चक्रवाक-। जोडप्यालागोन । ऐक्य-समाधान । भोगवी जो ॥११॥  
चिद्रूप-गगन-। भुवनींचा दीप । श्रीगुरुस्वरूप-। सूर्योदय ॥१२॥  
जयाच्या उदयें । पहाटेच्या वेळीं । फिटोनि आंधळी । चोरवेळ ॥१३॥  
आक्रमूं लागती । आत्मज्ञान-पंथ । साधकपांथस्थ । अत्यानंदें ॥१४॥  
उद्दीपे ज्ञानाचा । सूर्यकांत मणि । विवेक-किरणीं । जयाचिया ॥१५॥  
तया मण्यांतून । ठिणग्या उडोन । टाकिती जाळोन । भवारण्यें ॥१६॥  
आत्मरूपाचिया । माळभूमीवर । ज्याचे तीक्ष्ण कर । स्थिरावतां ॥१७॥

\* परिशिष्ट पहा. १ अद्वैतबोधाचें कमळ. २ कमळांत. ३ जंजाळांत. ४ चालूं. ५ किरण.



अष्टमहासिद्धी-। रूपी अनावर । मृगजळपूर । लोटतसे ॥१८॥  
 देखा अंतर्मुख-। वृत्तीचिया माथां । मध्याह्नीं जो येतां । सोऽहंतेच्या ॥१९॥  
 आत्मपदतळीं । राहे लपोनियां । आत्मभ्रांतिछाया । आपोआप ॥२०॥  
 मायारूप रात्र । पावतां विनाश । मग विश्वाभास-। स्वप्नासर्वे ॥२१॥  
 विपरीतज्ञान-। निद्रेलागीं कोण । ठेवितो जपोन । तिये वेळीं ॥२२॥  
 म्हणोनि अद्वैत-। बोधाचें <sup>१</sup>पट्टण । जातसे भरोन । महानंदें ॥२३॥  
 सुखानुभूतीचीं । जीं का देणींघेणीं । मग तीं हि झणीं । मंदावती ॥२४॥  
 काय सांगूं फार । ऐशापरी साचा । <sup>२</sup>मुक्तकैवल्याचा । शुभ-दिन ॥२५॥  
 लाभतो सत्वर । नित्य निरंतर । प्रकाशें अपार । ज्याचिया ॥२६॥  
 परंधामरूपी । गगनाचा नाथ । सर्वदा <sup>३</sup>उदित । स्वरूपें जो ॥२७॥  
 तो श्रीगुरुसूर्य । प्रकटतां जेथ । फेडी उदयास्त । दिशांसर्वे ॥२८॥  
 नेवोनि अस्तास । ज्ञानाज्ञान दोन्ही । झांकलें तयांनीं । स्वरूप जें ॥२९॥  
 ज्ञानाज्ञानातीत । करी तें प्रकट । नित्य जें उदित । सर्वांठारीं ॥३०॥  
 बहु बोलूं काय । ऐसा उषःकाल । आघवा केवळ । आगळा चि ॥३१॥  
 दिन-रात्र दोन्ही । जाय ओलांडूनि । पहावा तो कोणीं । ज्ञानसूर्य ॥३२॥  
 प्रकाश्यावांचोन । स्वरूपें केवळ । असे जो सुकाळ । प्रकाशाचा ॥३३॥  
 तया चित्सूर्यातें । वर्णाया यथार्थ । वाणी असमर्थ । म्हणोनियां ॥३४॥  
 निवृत्ति-चित्सूर्या । तया नमस्कार । असो वारंवार । म्हणूं ऐसें ॥३५॥  
 एक होय <sup>४</sup>स्तव्य । स्तवन स्तविता । तरी च तत्त्वतां । स्तुति साजे ॥३६॥  
 श्रीगुरु-माहात्म्य । ऐसें अत्यद्भुत । त्रिपुटीचा अंत । होय जेथें ॥३७॥  
 नेणोनियां मर्व । जाणिला जो जाय । मौनानें चि होय । स्तुति ज्याची ॥३८॥  
 जीव शिव ब्रह्म । न होवोनि कांहीं । पहावा जो ठारीं । आपुलिया ॥३९॥  
 ऐशा तुज्जे देवा । करावें स्तवन । हेतु हा धरोन । बोलूं जातां ॥४०॥  
 मध्यमा पश्यंती । घालोनियां पोटीं । विरे वैखरी ती । <sup>५</sup>परेसंगें ॥४१॥  
 ऐशा तुज देवा । बोलक्या स्तुतीचें । लेवविलें साचें । लेणें येथ ॥४२॥

सहावें तें आतां । ऐसैं सेवकत्वं । जरी विनवावें । पूर्णानंदा ॥४३॥  
 तरी तें हि तुज । उणें आणणें च । ऐसैं वाटे साच । मजलागीं ॥४४॥  
 देखोनि अपार । अमृत-सागर । येवोनियां भर । आनंदाचा ॥४५॥  
 कैशा रीती मग । तयाचें उचित । करावें स्वागत । नेणोनि हें ॥४६॥  
 रंकें तयालागीं । भाजीपाल्याची च । दिली जरी साच । मेजवानी ॥४७॥  
 तरी भाजीतें हि । मानावें पक्कान्न । तयाचा देखोन । हर्षावेग ॥४८॥  
 ओंवाळिती दीप । जरी भास्करातें । भक्ति च ती तेथें । ध्यानीं ध्यावी ॥४९॥  
 कळे बाळकासी । योग्यायोग्य जरी । बाळकत्व तरी । उरे कोठें ॥५०॥  
 परी जी का होय । बाळकाची माय । पावे ना ती काय । समाधान ॥५१॥  
 अहो ओढ्यांतील । गढूळ जें तोय । पाठीं देत पाय । आलें जरी ॥५२॥  
 तरी हो बाजूस । ऐसैं बोलोनियां । काय गंगा तया । अवेहेरील ? ॥५३॥  
 वक्षःस्थलीं जरी । भृगु मारी लाथ । प्रेमाची ती भेट । मानोनियां ॥५४॥  
 प्रभु नारायण । तेणें संतोषून । मिरवी भूषण । तयाचें चि ॥५५॥  
 अंधारें गगन । भरोनि जें गेलें । भेटाया तें आलें । सूर्यालागीं ॥५६॥  
 तरी अवेहेरुनि । तया होई दूर । ऐसैं तो भास्कर । बोलें काय ? ॥५७॥  
 भेद-बुद्धीचिया । तराजंत तुम्हां । सूर्याची उपमा । देवोनियां ॥५८॥  
 तोलिलें तें तैसैं । करावें सहन । कृपाळु होवोन । गुरुराया ॥५९॥  
 देखिलें जयांनीं । ध्यानाचिया डोळां । सद्गुरो दयाळा । तुजलागीं ॥६०॥  
 वर्णिलें वेदांनीं । तुज शब्दांनीं च । सर्व हि तें साच । साहिलें तूं ॥६१॥  
 तैसी आम्हांसी हि । करोनियां क्षमा । सोसावी उपमा । एक वेळ ॥६२॥  
 परी झालों आज । तुझ्या गुणीं लुब्ध । झाला अपराध । तरी होवो ॥६३॥  
 करा काहीं परी । करीन स्तवन । जोंवरी हो पूर्ण । तृप्ति माझी ॥६४॥  
 आतां अर्धपोटीं । नाहीं उठणार । हा माझा निर्धार । गुरुराया ॥६५॥  
 गीतेचिया मिषें । तुझे निर्विशेष । प्रसाद-पीयूष । सेवावें हें ॥६६॥  
 इच्छूनियां ऐसैं । वर्णू जातां भलें । भाग्य दुणावलें । निःसंदेह ॥६७॥

माझिया वाचेनें । सत्य बोलायाचें । तप केलें साचें । बहु कल्प ॥६८॥  
 म्हणोनि हें गीता-। रूपी 'महा-द्वीप । लाधलें 'अमूप । फळ तीतें ॥६९॥  
 अहो असामान्य । पुण्यकमें जीं जीं । नाना जन्मांमार्जीं । जोडिलीं तीं ॥७०॥  
 तुझ्या गुण-गानीं । आवडी देवोन । आज ऋणांतून । मुक्त झालीं ॥७१॥  
 जीवदशेचिया । घोर महारण्यां । होतों मी मरणीं । सांपडलों ॥७२॥  
 आघवी ती माझी । दुर्दशा दारुण । नाहींशी करोन । टाकिलीस ॥७३॥  
 गीता येणें नावें । तुझी सर्वश्रेष्ठ । कीर्ति जी बलिष्ठ । सुविख्यात ॥७४॥  
 अविद्येचा नाश । करोनि ती जर्गीं । वानावयाजोगी । झाली आम्हां ॥७५॥  
 कौतुकें सहजें । रंकाचिया घरीं । बैसां आली जरी । महालक्ष्मी ॥७६॥  
 तरी तयालागीं । निर्धन म्हणोनि । म्हणेल का कोणी । सांगा बरें ॥७७॥  
 नातरी सुदैवें । तमाचिया स्थानीं । बैसला येवोनि । चण्ड-रश्मि ॥७८॥  
 तरी मग तें च । होय तेजोमय । विस्मय तो काय । असे येथें ॥७९॥  
 परमाग्रहून । विश्व गमे सान । ज्याचें थोरपण । देखोनियां ॥८०॥  
 देव तो प्रकट । न होई का साच । भावासारिखा च । भक्तांचियां ॥८१॥  
 तैसं चि हें माझें । गीतेचें व्याख्यान । जैसं 'अवत्राण । 'ख-पुष्पांचें ॥८२॥  
 परी ती हि हौस । पुरविली माझी । समर्था अहो जी । गुरुराया ॥८३॥  
 म्हणोनि मी आतां । आपुल्या प्रसादें । अगाध जीं पदें । गीतेंतील ॥८४॥  
 विवरोन स्पष्ट । सांगेन तीं सर्व । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥८५॥  
 तरी पंधराव्या । अध्यायामाझारीं । ह्यापरी मुरारी । श्रीहरीनें ॥८६॥  
 शास्त्रसिद्धान्ताचें । विस्तारें संपूर्ण । केलें विवरण । अर्जुनासी ॥८७॥  
 वैद्यराजें जैसे । दाखवावे स्पष्ट । असती जे गुप्त । दोष देहीं ॥८८॥  
 वृक्षाकारमिषें । तैसं उपाधीतें । विवरिलें तेथें । साङ्गोपाङ्ग ॥८९॥  
 मायोपाधित जें । चैतन्य साचार । कूटस्थ अक्षर । पुरुष तो ॥९०॥  
 जीवचैतन्यातें । संबोधूनि क्षर । दोन्ही हि प्रकार । सांगितले ॥९१॥  
 उपाधिरहित । मग जें केवळ । राहिलें निर्मळ । आत्मतत्त्व ॥९२॥

उत्तम पुरुष । ऐसैं तथा नांव । देवोनियां सर्व । स्पष्ट केलें ॥९३॥  
 तेंथें शुद्ध ज्ञान । हें चि एक जाण । प्रभावी साधन । अंतरंग ॥९४॥  
 ऐसा तथा आत्म-। तत्त्वाचा प्रत्यय । ध्यावया उपाय । सांगितला ॥९५॥  
 सांगावयाजोगें । म्हणोनियां आतां । नुरे चि तत्त्वतां । अध्यार्यां ह्या ॥९६॥  
 परी गुरु-शिष्यां । प्रेमाचा चि भर । लाधला साचार । अखंडित ॥९७॥  
 असो आधवें हें । तत्त्व असामान्य । जाणोनियां धन्य । ज्ञाले ज्ञाते ॥९८॥  
 परी जे इतर । मुमुक्षु साचार । उत्कंठित फार । जया ठार्यां ॥९९॥  
 पार्था तथा मज । पुरुषोत्तमाते । अनन्य जो भेटे । शुद्ध ज्ञानें ॥१००॥  
 सर्वज्ञ तो जाण । धन्य त्याचा प्रेमा । भक्तीची हि सीमा । तो चि एक ॥१०१॥  
 ऐशापरी देखा । अध्यायाशेवटीं । त्रैलोक्याचा पति । बोलिला तो ॥१०२॥  
 आणि संतोषून । तेणें वारंवार । ज्ञान चि साचार । वाखाणिलें ॥१०३॥  
 जें का संसाराचा । करोनि निरास । पाहत्या जीवास । एकाएकीं ॥१०४॥  
 पाहतां पाहतां । देई स्वरूपाची । करोनियां साची । ओळखण ॥१०५॥  
 मग तथा जीवा । बैमवी निदानीं । राज-सिंहासनीं । स्वानंदाच्या ॥१०६॥  
 पाहें धनुर्धरा । जीवामी साचार । ब्रह्मसाक्षात्कार । व्हावयासी ॥१०७॥  
 शुद्ध ज्ञानाविण । सामर्थ्यसंपन्न । नाहीं च साधन । दुजें ऐसैं ॥१०८॥  
 म्हणोनि निभ्रांत । सर्व साधनांत । ज्ञान चि हें श्रेष्ठ । देव म्हणे ॥१०९॥  
 आत्म-जिज्ञासू जे । ऐसे होते थोर । त्यांनीं साचार । संतोषून ॥११०॥  
 वाहिलें ज्ञानासी । आदरें सर्वस्व । ओवाळूनि जीव-। भाव तो हि ॥१११॥  
 घुसूं लागे वेगें । मनीं वस्तु ती च । जडे प्रेम साच । जिये ठार्यां ॥११२॥  
 प्रेमाची हि रीत । ऐसी च निभ्रांत । म्हणोनियां येथ । जिज्ञासु जे ॥११३॥  
 त्यां मुमुक्षूस । ज्ञानाचें दर्शन । जोंवरी संपूर्ण । नाहीं ज्ञालें ॥११४॥  
 तोंवरी तें कैसें । घडेल म्हणोन । उत्कंठा लागोन । राहे त्यांसी ॥११५॥  
 घडतां हि कैसें । लाभेल अखंड । म्हणोनि उदंड । झटती ते ॥११६॥  
 तरी सम्यक् ज्ञान । व्हावया स्वाधीन । करावे प्रयत्न । कैशा रीती ॥११७॥

झालें तरी कैसें । व्हांवें वृद्धिंगत । लागे हें यथार्थ । जाणावया ॥११८॥  
 नातरी घालोन । मोह-आवरण । ज्ञानाचें दर्शन । 'घडों नेदी ॥११९॥  
 घडतां चि तेथें । आणीतसे विघ्न । नाना दाखवोन । आडमार्ग ॥१२०॥  
 ऐसें ज्ञानासी ह्या । विरोधी जें काहीं । येथें लागे तें हि । पहावया ॥१२१॥  
 मग ज्ञानालागीं । विरोधी साचार । तथा देऊं दूर । घालवोनि ॥१२२॥  
 प्रवेश करोनि । देईल जें ज्ञानीं । तें चि घेऊं ध्यानीं । सर्वभावे ॥१२३॥  
 ऐसी इच्छा सर्व । ज्ञानजिज्ञासूनीं । धरिली जी मनीं । तुम्हीं येथें ॥१२४॥  
 ती च इच्छा पूर्ण । करावया आतां । बोलिल तो 'भर्ता । 'पद्मजेचा ॥१२५॥  
 जेणें योगें ज्ञान । लाभोनि त्वरित । होय वृद्धिंगत । विश्रांति हि ॥१२६॥  
 देव येथें त्याच । 'दैवी संपत्तीचें । करितील साचें । निरूपण ॥१२७॥  
 आणि शुद्ध ज्ञाना । ठेवोनियां दूर । होय जी माहेर । प्रीति-द्रेषां ॥१२८॥  
 ऐसी आसुरी जी । संपत्ति अघोर । ती हि सविस्तर । सांगतील ॥१२९॥  
 दैवासुर ऐशा । संपत्ती ह्या दोन । स्वभावे कारण । 'इष्टानिष्टां ॥१३०॥  
 नवमाध्यायीं च । संक्षेपें तयांची । उभारणी साची । केली होती ॥१३१॥  
 तेथें चि तयांचा । संपूर्ण विचार । करणें साचार । होतें योग्य ॥१३२॥  
 परीं दुजें तेव्हां । बोलणें निघोन । गेलें तें राहोन । तिये वेळीं ॥१३३॥  
 म्हणोनि तें येथें । प्रसंगानुसार । देव सविस्तर । बोलतील ॥१३४॥  
 तो चि हा जाणावा । सोळावा अध्याय । अनुक्रमें होय । ग्रंथाचा ह्या ॥१३५॥  
 असो ह्या चि दोन्ही । 'समर्थ संपत्ति । हिताहितीं होती । ज्ञानाचिया ॥१३६॥  
 तरी मोहरूपी । रात्रीमार्जीं भली । धर्मार्थ लाविली । दिवटी जी ॥१३७॥  
 तेविं मुमुक्षूस । मार्ग दावी जी का । संपत्ति ती एका । दैवी आधीं ॥१३८॥  
 मिळविले जाती । ज्या ठायीं अनेक । पदार्थ पोषक । एकमेकां ॥१३९॥  
 तथा पदार्थांच्या । समूहा संपत्ति । ऐसें नांव देती । जगामार्जीं ॥१४०॥  
 दैवी संपत्ति ती । एक चि आश्रय । दैवी गुणां होय । म्हणोनियां ॥१४१॥  
 तियेलागीं दैवी । संपत्ति हें नांव । सुखाचा उद्भव । असे जेथें ॥१४२॥

## श्रीभगवानुवाच—

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जेवम् ॥१॥

तरी दैवीगुणां—। माझारीं प्रमुख । अभय तो देख । आरंभीचा ॥१४३॥  
ठेविला चि नाहीं । महापुरीं पाय । तरी भय काय । बुडायार्चें ॥१४४॥  
ना तरी जो राहे । पथ्य संभाळून । तयासी कोठून । रोग—चिंता ॥१४५॥  
तैसें धनंजया । कर्माकर्मीं जाण । सांडोनि मीपण । वागणें जे ॥१४६॥  
प्रपंचार्चें भय । जेणें पावे 'लय' । तयासी 'अभय' । ऐसें नांव ॥१४७॥  
किंवा ऐक्यभाव । वाढवेनि साच । 'दुजे' हि आत्मा च । मानोनियां ॥१४८॥  
तेणें भय—वार्ता । दडवणें दूर । अभय साचार । तया नांव ॥१४९॥  
बुडवाया पाहे । मिठालागीं तोय । तंव पाणी होय । मिठाचें चि ॥१५०॥  
तैसें आपण चि । अद्रय—स्वरूप । होतां आपोआप । नासे भय ॥१५१॥  
यथार्थ—ज्ञानार्चें । पाठीराखेपण । करी दैवी गुण । हा चि पार्था ॥१५२॥  
'अभय' म्हणोन । जया देती नांव । तो चि सर्वथैव । जाण ऐसा ॥१५३॥  
आतां 'सत्त्व—शुद्धि' । हा जो दुजा गुण । तयार्चें लक्षण । सांगों ऐकें ॥१५४॥  
राखोंडी ती जैसी । जळूं विझूं नेणें । तैसी स्थिति होणें । बुद्धीची जी ॥१५५॥  
किंवा टाकोनियां । अंभसेची 'खूट' । न चालतां वाट । पाडव्याची ॥१५६॥  
स्वरूपें चंद्रार्चें । अति सूक्ष्मपणें । मध्यें च राहणें । असे जैसें ॥१५७॥  
किंवा वर्षाकाळें । घातली ना भर । नाहीं ग्रीष्मं नीर । आटविलें ॥१५८॥  
मार्जी गंगा वाहे । स्वरूपेंकरोन । 'न्यूनाधिकपण' । सांडोनियां ॥१५९॥  
त्यापरी संकल्प—। विकल्प सांडोनि । रजतम दोन्ही । ओलांडोनि ॥१६०॥  
निज—स्वरूपाची । आवडी धरोन । तेथें चि जडोन । राहे बुद्धि ॥१६१॥  
भले बुरे भोग । इंद्रियें दावोत । परी राहे चित्त । निर्विकार ॥१६२॥  
आपुला वल्लभ । दूर—देशीं जातां । जैसी पतिव्रता । 'विरहिणी ॥१६३॥  
लाभ आणि हानि । दोन्ही 'उपेक्षून' । राहे उदासीन । सर्वकाळ ॥१६४॥

आत्मरूपीं बुद्धि । तैसी लाचावून । राहिली जडोन । अनन्यत्वे ॥१६५॥  
 ते चि जाण सत्त्व-। शुद्धीचें लक्षण । म्हणे नारायण । \*केशिहन्ता ॥१६६॥  
 आतां आत्मलाभा-। साठीं जें का चांग । ज्ञान किंवा योग । आवडेल ॥१६७॥  
 तेथें समर्पिली । सर्व चित्तवृत्ति । जैसी पूर्णाहुति । अग्नीमार्जी ॥१६८॥  
 नातरी कुलीन । घराणें पाहोन । केलें कन्यादान । कुलवंतें ॥१६९॥  
 असो हा दृष्टांत । पद्मजा ती साच । जैसी मुकुंदीं च । स्थिरावली ॥१७०॥  
 तैमें अनन्यत्वे । राहणें जें देख । होवोनि स्थायिक । योगज्ञानीं ॥१७१॥  
 ती च 'योगज्ञान-। व्यवस्थिति' जाण । तो हा तिजा गुण । देव म्हणे ॥१७२॥  
 आतां असो वैरी । परी तयासी हि । दुःस्वाचिया डोहीं । देवोनियां ॥१७३॥  
 कायावाचामनें । न वंचितां धनें । माहाय्य अर्पिणें । यथाशक्ति ॥१७४॥  
 आक्रमितां वाट । वाटसरू कोणी । बैसला येवोनि । वृक्षातळीं ॥१७५॥  
 मग वृक्ष तया । पत्र पुष्प छाया । फुलादि घावया । मिद्ध जैसा ॥१७६॥  
 तैमें तन-मन-। धनादि ममस्त । अगेल जें प्राप्त । देवयोगीं ॥१७७॥  
 तेणें निवारोन । पीडितांचें दुःख । तया देणें सुख । प्रसंगें जें ॥१७८॥  
 तया नांव 'दान' । ऐमें पार्थी जाण । मोक्षाचें 'निधान । दिसे जेणें ॥१७९॥  
 असो दानगुण । झाला विवरोन । आतां एक खूण । दमाची ती ॥१८०॥  
 होतां चि इंद्रियां-। विषयांची भेट । करी ताटातूट । तयांची जो ॥१८१॥  
 जैसा शस्त्रधारी । शत्रूतें संहारी । तैसा जो निवारी । विषयांतें ॥१८२॥  
 घालोनि निर्वंध । सर्व हि इंद्रियां । प्रत्याहाराचिया । हातीं देई ॥१८३॥  
 देई घालवोनि । 'प्रवृत्तीसी दूर । चित्तालार्गीं स्थिर । करोनियां ॥१८४॥  
 पेटवी दहा हि । इंद्रिय-द्वारांत । अभि धगधगीत । वैराग्याचा ॥१८५॥  
 श्वासोच्छ्वासाहून । बहु व्रतें तीक्ष्ण । नित्य रात्रंदिन । आचरितां ॥१८६॥  
 क्षण हि विश्रांति । धेई ना तो जाण । 'दम' दैवी गुण । पांचवा हा ॥१८७॥  
 आतां यज्ञाची हि । 'संक्षेपेंकरोन । सांगतसें खूण । एक पार्थी ॥१८८॥  
 तरी आर्थी मुख्य । ब्राह्मणांपासोन । स्त्रियादिक जन । सर्व जे जे ॥१८९॥

१त्यांहीं अधिकार । आपुला पाहोन । कर्तव्य म्हणोन । करणें जें ॥१९०॥  
 जयालागीं जे जे । होती सर्वात्तम । ऐसे देवधर्म । पूजनीय ॥१९१॥  
 ते ते यथाशास्त्र । तयें अनुष्ठाने । लक्षण जाणावें । यज्ञाचें हें ॥१९२॥  
 ब्राह्मण तो जैसा । षट्कमें आचरी । शूद्र नमस्कारी । तयालागीं ॥१९३॥  
 तेंणें दोघांसी हि । लाभे सारखें च । एक चि तें साच । यज्ञ-फल ॥१९४॥  
 तैसा अधिकार । आपुला पाहोन । करावें यजन । सर्वांनीं च ॥१९५॥  
 परी फलाशेचें । विष वगळोन । अहंता सांडोन । देह-धर्मी ॥१९६॥  
 सुखें वेदाज्ञेचें । करावें पालन । तो चि 'यज्ञ' जाण । शास्त्रयुक्त ॥१९७॥  
 'कैवल्यमार्गी'चा । जाणता साचार । सोबती 'तो थोर । धनुर्धरा ॥१९८॥  
 भूमीवरी जैसा । चेंडू हापटावा । वेगें हातीं यावा । म्हणोनियां ॥१९९॥  
 नातरी देवोन । पिकाकडे चित्त । पेरवें भूमींत । बीज जैसें ॥२००॥  
 किंवा ठेविलें तें । देखावयासाठीं । पार्थी जैसा हातीं । घ्यावा दीप ॥२०१॥  
 नातरी यावया । पत्र पुष्प फळ । वृक्ष-मूळीं जळ । शिंपावें गा ॥२०२॥  
 बहु बोलूं काय । धनंजया देख । आपुलें चि मुख । पहावया ॥२०३॥  
 जैसें आवडीनें । आरशाचें भिंग । 'चोखाळावें चांग । वेळोवेळां ॥२०४॥  
 तैसा वेदांसी जो । प्रतिपाद्य एक । ईश्वर तो देख । प्राप्त व्हावा ॥२०५॥  
 म्हणोनि वेदांचें । नित्य निरंतर । करावें साचार । अध्ययन ॥२०६॥  
 पावावयासाठीं । तत्त्व तें पवित्र । द्विर्जां ब्रह्मसूत्र । अभ्यासावें ॥२०७॥  
 परी जे इतर । तयांलागीं स्तोत्र । किंवा नाम-मंत्र । उक्त होय ॥२०८॥  
 दैवी गुणासी ह्या । 'स्वाध्याय' हें नांव । ऐसें म्हणे देव । पद्मनाम ॥२०९॥  
 आतां सांगूं तुज । तपाचें लक्षण । ऐक सावधान । धनंजया ॥२१०॥  
 तरी दान-पुण्य । जोडावें म्हणोन । जैसें समर्पण । सर्वस्वाचें ॥२११॥  
 किंवा पत्र-पुष्प-।फलादि देवोन । औषधी वाळोन । जाय जैसी ॥२१२॥  
 किंवा जैसा धूप । आपणा जाळोन । सुगंधें भरोन । टाकी विश्व ॥२१३॥  
 घालितां अग्नींत । कमी भरे 'तोल । परी चढे मोल । सुवर्णासी ॥२१४॥



किंवा जैसा चंद्र । होवोनियां क्षीण । 'करी' वर्धमान । कृष्ण-पक्ष ॥२१५॥  
 तैसां देह-प्राण-। इंद्रियें सकळ । सदासर्वकाळ । झिजवोनि ॥२१६॥  
 स्वरूप-विकास । साधणें संपूर्ण । तें चि तप जाण । धनंजया ॥२१७॥  
 आतां तपाची च । आणिक हि एक । खूण असे ऐक । सांगूं तुज ॥२१८॥  
 घालोनियां चोंच । दुग्धीं राजहंसें । निवडावें जैसें । क्षीर-नीर ॥२१९॥  
 तैसें नाशिवंत । सर्व देहादिक । अविनाश एक । आत्मतत्त्व ॥२२०॥  
 दावी जन्मतां च । ऐसें जो विवेक । अंतरीं तो देख । जागविणें ॥२२१॥  
 जैसें एकाएकीं । निद्रेसवें स्वप्न । जातसे बुडोन । जागृतींत ॥२२२॥  
 तैसें स्वरूपाचें । घडतां दर्शन । तेथें चि विलीन । होय बुद्धि ॥२२३॥  
 स्वरूपाचें ऐसें । देखणें जें साच । जाण 'तप' तें च । धनुर्धरा ॥२२४॥  
 जैसें हितकारी । बालकांसी 'स्तन्य' । सारिखें चैतन्य । नाना भूर्ती ॥२२५॥  
 तैसी प्राणिमात्रीं । भली वागणूक । 'आर्जव' तें देख । पंडु-सुता ॥२२६॥

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।

दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥२२॥

कायावाचामनै । विश्वकल्याणार्थ । वर्तणें यथार्थ । 'अहिंसा' ती ॥२२७॥  
 तीक्ष्णपणें टाकी । भेदोनि जळ्यासी । तरी मृदु जैसी । पद्मकळी ॥२२८॥  
 नातरी चंद्राचे । 'रश्मी' जरी झाले । तरी जैसे भले । शीतल ते ॥२२९॥  
 कडू नव्हे जिह्वे । गोड तरी चांग । दावितां चि रोग । फेडूं शके ॥२३०॥  
 असे कोठें ऐसी । वनस्पती साची । तरी घेऊं कैची । उपमेसी ॥२३१॥  
 बुबुळ्यातें जळ । घांसोनियां जाय । परी खुपे काय । लोचनांसी ॥२३२॥  
 ए-हवीं तें जैसें । पाषाणालागोन । टाकितें भेदोन । तीक्ष्णपणें ॥२३३॥  
 तैसें 'संदेहातें । तोडावया जाण । 'खड्गापरी तीक्ष्ण । असे जें का ॥२३४॥  
 परी ऐकूं जातां । रसाळता ऐसी । कीं जी माधुरीसी । लाजविते ॥२३५॥  
 ऐकूं जातां जें का । सहज कौतुकें । अंकुरती मुखें । कानासी च ॥२३६॥  
 परी ब्रह्मासी हि । जातसे भेदोन । ऐसें खरेपण । थोर ज्याचें ॥२३७॥

काय सांगूं फार । प्रियत्वे जें थोर । वंची ना साचार । कोणातें हि ॥२३८॥  
 असोनि यथार्थ । खुपे ना जें कोणा । जाण तें अर्जुना । 'सत्य' ऐसें ॥२३९॥  
 एन्हवीं मधुर । पारध्याचें गीत । परी करी घात । सावजाचा ॥२४०॥  
 जरी जाळी अग्नि । उघड सांगोन । जळो साचपण । त्याचें तें ॥२४१॥  
 वाटे अति गोड । ऐकावया तरी । परी जी 'जिव्हारीं' । झोंबे साच ॥२४२॥  
 तियेलागीं वाचा । ऐसें म्हणे कोण । जणूं ती जखीण । रूपवती ॥२४३॥  
 टाळाया अहित । माता वरिवरी । जैसा बाळावरी । दावी राग ॥२४४॥  
 परी पुष्पापरी । कोमल राहोन । लालनपालन । करी त्याचें ॥२४५॥  
 तैसें ऐकतां जें । होय सुखावह । साच निःसंदेह । परिणामीं ॥२४६॥  
 द्वेषादि विकार । 'नुपजवी चित्तीं' । 'सत्य' तें किरीटी । जाण येथें ॥२४७॥  
 आतां पाषाणासी । घालितां हि पाणी । येती ना फुटोनि । कोंब जैसे ॥२४८॥  
 नातरी 'कांजीवें' । केलें घुसळण । निघे ना त्यांतून । लोणी जैसें ॥२४९॥  
 फडा करी काय । भुजंगाची कात । बळें शिरीं लाथ । हाणितां हि ॥२५०॥  
 किंवा येती काय । फुलें 'अंबराला' । जरी प्राप्त झाला । 'ऋतुराज' ॥२५१॥  
 किंवा \*शुकाठार्यां । नुठावा 'कंदर्प' । देखोनियां रूप । रंभेचें हि ॥२५२॥  
 नातरी राखेंत । ओतिलिया घृत । होय ना प्रदीप्त । अग्नि जैसा ॥२५३॥  
 तैसें बाळासी हि । जेणें चढे कोप । ऐसे शिब्या शाप । आले कार्नीं ॥२५४॥  
 तरी ब्रह्मयाचे हि । धरितां चरण । आयुष्यविहीन । नुठे जैसा ॥२५५॥  
 तैसा क्रोधावेग । आणूं पाहतां हि । ज्याचिया ठार्यां । उठे ना तो ॥२५६॥  
 'अक्रोधत्व' ऐसें । स्थितीसी त्या नांव । सांगतसे देव । श्रीनिवास ॥२५७॥  
 आतां मृत्तिकेच्या । त्यागें जैसा घट । तंतु-त्यागें पट । त्यजावा गा ॥२५८॥  
 नातरी बीजाचा । करोनियां त्याग । जैसा सांगोपांग । वटवृक्ष ॥२५९॥  
 त्यजोनियां भित । त्यजावें गा चित्र । स्वप्न हि विचित्र । निद्रात्यागें ॥२६०॥  
 जलत्यागें जैसे । त्यजावे तरंग । किंवा जैसे मेघ । वर्षात्यागें ॥२६१॥  
 नातरी धनाचा । करोनियां त्याग । जैसे सर्व भोग । त्यजावे गा ॥२६२॥

१ मर्मां. २ उत्पन्न करीत नाहीं. ३ पेजेचें ४ आकाशाला. ५ वसंत ऋतु. ६ कामविकार.  
 अ. जा. ३४

तैसी देहाहंता । सांडोनि साचार । त्यजावा संसार । बुद्धिमंतीं ॥२६३॥  
 'त्यागाचें' लक्षण । ऐसें पार्था जाण । म्हणे नारायण । यज्ञभोक्ता ॥२६४॥  
 तयाचे ते बोल । मानले म्हणोन । पुसे तो अर्जुन । भाग्यवंत ॥२६५॥  
 म्हणे देवा आतां । 'शांतीचें' लक्षण । उघड करोन । सांगा मज ॥२६६॥  
 तंव जनार्दन । बोले संतोषून । भलें अवधान । देई यथें ॥२६७॥  
 ज्ञेयातें गिळोन । लोपे ज्ञाता-ज्ञान । ती च 'शांति' जाण । धनंजया ॥२६८॥  
 विश्वाचा पसारा । आपुल्या च ठायीं । बुडवोनि पाहीं । जैशा रीती ॥२६९॥  
 प्रळयोदकाचा । उसळता लोट । राहे घनदाट । भरोनियां ॥२७०॥  
 मग नदी ओघ । आणिक सागर । नुरे व्यवहार । भेदाचा हा ॥२७१॥  
 तेथें जळाचिया । एकरसतेचा । बोध तरी साचा । कवणासी ॥२७२॥  
 तैसा होतां ज्ञेय- । ज्ञातृत्वाचा लोप । उरे तें चि रूप । शांतीचें गा ॥२७३॥  
 आतां देखोनियां । रोगी पीडाग्रस्त । तया रोग-मुक्त । करावया ॥२७४॥  
 'सद्द्वैद्य पाहे ना । जैसा 'आपपर । वाहतां अपार । चिंता त्याची ॥२७५॥  
 किंवा पंकीं गाय । रुतली देखोनि । होय जो का मनीं । कासावीस ॥२७६॥  
 घड कीं भाकड । ऐसें का तो पाहे । तिज काढिताहे । पंकांतूनि ॥२७७॥  
 नातरी देखोन । बुडत्यालागोन । मांग कीं ब्राह्मण । असे कोण ? ॥२७८॥  
 विचारी ना ऐसें । 'कनवाळू' जन । राखूं जाणे प्राण । तयाचे गा ॥२७९॥  
 किंवा वर्नीं 'माय । पापियानें कोणी । उघडी करोनि । टाकितांच ॥२८०॥  
 तिजलागीं वस्त्र । नेसविल्याविण । घेईना दर्शन । सभ्य जैसा ॥२८१॥  
 तैसें अज्ञानीं वा । प्रमादीं वा कोणी । राहिले बुडोनि । दैवहीन ॥२८२॥  
 म्हणोनि जे झाले । निंदेलागीं पात्र । सर्वदा सर्वत्र । जगामार्जी ॥२८३॥  
 तयांलागीं गुण । आपुले देवोन । टाकिती काढोन । 'शल्यें त्यांचीं ॥२८४॥  
 आणिकांचे दोष । भले चोखाळून । तयांचें दर्शन । घ्यावें जैसें ॥२८५॥  
 पूजोनियां जैसें । पहावें दैवत । परोनियां शेत । घ्यावें पीक ॥२८६॥  
 किंवा अतिथीस । तोषवोनि चांग । जैसा घ्यावा मग । आशीर्वाद ॥२८७॥

तैसैं आपुलिया । सदगुणेंकरोन । आणिकांचें न्यून । 'फेडोनियां ॥२८८॥  
 भलेपणें घ्यावें । तयाचें दर्शन । 'अपैशून्य' जाण । तें चि पार्था ॥२८९॥  
 तेविं कोणासी हि । नये बोलूं वर्मी । नये घालूं कर्मी । पापात्मक ॥२९०॥  
 नये हांका मारूं । कोणासी साचार । दोषांचा उच्चार । करोनियां ॥२९१॥  
 पडत्यासी कांहीं । शोधोनि उपाय । उठता तो होय । ऐसैं 'कीजे ॥२९२॥  
 करोनि उघड । परी त्याचें व्यंग । वर्मावरी डाग । देऊं नये ॥२९३॥  
 उचमासारिखा । नीच हि मानावा । दोष न पहावा । निजदृष्टी ॥२९४॥  
 धनंजया जाण । तो हा दैवी गुण । जया 'अपैशुन' । ऐसैं नांव ॥२९५॥  
 हें चि असे एक । मोक्षमार्गीं देख । साधन प्रमुख । सुखाचें गा ॥२९६॥  
 आतां 'दया' नावें । जो का दैवी गुण । तयाचें लक्षण । एक सांगूं ॥२९७॥  
 शांतवितां सर्वा । सानथोर नेणे । जैसे का चांदिणें । 'पूर्णंदूचें ॥२९८॥  
 तैसैं दयालुत्वें । नेणे-श्रेष्ठ हीन । निवारितां शीण । दुःखितांचा ॥२९९॥  
 किंवा जैसे जळ । अपोनि सर्वस्व । राखे जाता जीव । तृणाचा हि ॥३००॥  
 तैसी परपीडा । देखोनियां डोळां । मनीं कळवळा । उपजोनि ॥३०१॥  
 प्राणसर्वस्वाचें । दान केलें साच । तरी तें थोडें च । ऐसैं मानी ॥३०२॥  
 मार्गातील 'फोंड' । भरल्यावांचोनि । पुढें जैसे पाणी । जाऊं नेणे ॥३०३॥  
 तैसैं पीडितासी । करोनि संतुष्ट । मग घेई भेट । सुखें त्याची ॥३०४॥  
 अगा तीक्ष्ण कांटा । बोंचतां पायांत । उठे अंतरांत । व्यथा जैसी ॥३०५॥  
 तैसैं आणिकांतें । देखोनि दुःखित । कळवळे चित्त । 'कारुण्यानें ॥३०६॥  
 किंवा शीतलता । लाभतां पायांसी । गारवा डोळ्यांसी । येई जैसा ॥३०७॥  
 तैसैं आणिकांचें । सुख विलोकून । स्वभावे आपण । सुखावे जो ॥३०८॥  
 बहु बोलूं काय । पार्था जैसे तोय । 'तृभार्तासी होय । जगामार्जी ॥३०९॥  
 तैसैं दुःखितांचें । करावें सान्त्वन । म्हणोनि जीवन । जयाचें गा ॥३१०॥  
 मूर्तिमंत दया । तो चि तो म्हणोनि । तयाचा मी ऋणी । जन्मतां च ॥३११॥  
 'पद्मिनी सर्वस्व । अर्पी भास्करातें । परी सुगंधातें । शिवे ना तो ॥३१२॥

किंवा ऋतुराज । जातसे मांडोनि । आल्या अक्षौहिणी । वनश्रीच्या ॥३१३॥  
 ऋद्धिसिद्धीसह । रमा येती होय । परी गणी काय । महाविष्णु ॥३१४॥  
 इहपर भोग । तैसे झाले प्राप्त । तरी जो अलिप्त । मनामार्जी ॥३१५॥  
 काय सांगूं फार । रमावें विषयीं । ऐसें कौतुकें हि । इच्छी ना जो ॥३१६॥  
 ऐसी गुडाकेशा । गळे अभिलाषा । 'अलोलुपत्व' दशा । ती च जाण ॥३१७॥  
 मधमाशियांसी । आवडे मोहोळ । किंवा जैसें जळ । जळचरां ॥३१८॥  
 किंवा पक्षियांसी । सदासर्वकाळ । जैसें अंतराळ । मोकळें हें ॥३१९॥  
 नातरी मातेची । बाळावरी माया । तैसें धनंजया । 'मार्दव' तें ॥३२०॥  
 'मलय-वायूची । वसंत-लहरी । हळुवार करी । स्पर्श जैसा ॥३२१॥  
 नातरी 'प्रियाचें । होतां चि दर्शन । जैसें समाधान । डोळेयांसी ॥३२२॥  
 किंवा 'कांसवीची । पिलावरी दृष्टि । तैसी चिचवृत्ति । भूतमात्रां ॥३२३॥  
 सुगंधी स्वादिष्ट । निर्मळ कापूर । खातां पथ्यकर । जरी होता ॥३२४॥  
 तरी उपमा ती । शोभती तयाची । मृदुलत्वे साची । मार्दवासी ॥३२५॥  
 वायुतेजादिक । पोटीं सांठवून । सामावे गगन । अणूमार्जी ॥३२६॥  
 आणि विश्वाकारा- । सारिखा आकार । धरोनि साचार । राहे जैसें ॥३२७॥  
 काय सांगूं ऐसें । जयाचें जीवित । होय विश्व-हित । साधावया ॥३२८॥  
 तें चि मार्दवाचें । लक्षण निभ्रांत । ऐसें माझे मत । जाण पार्था ॥३२९॥  
 आतां भूपतीचा । होतां पराजय । लाजेनें तो होय । कष्टी जैसा ॥३३०॥  
 किंवा मानी जन । दशा पावे हीन । तरी खालीं मान । घाली जैसा ॥३३१॥  
 अंत्यजाच्या दारीं । पातला चुकोन । संन्यासी लाजोन । जाय जैसा ॥३३२॥  
 किंवा रणांतून । पळोनियां जाणें । होय लाजिरवाणें । क्षत्रियासी ॥३३३॥  
 पाति होतां मृत । मुख दावायासी । लाज वाटे जैसी । सतीलागीं ॥३३४॥  
 सज्जना निंदेचें । लागे गालबोट । किंवा उठे कुष्ठ । रूपवंता ॥३३५॥  
 मग तें तयातें । लाज आणी जैसें । प्राणसंकटसें । वाटोनियां ॥३३६॥  
 तैसें आपणातें । देह चि मानोनि । रहावें होवोनि । भूमिभार ॥३३७॥

पुन्हां पुन्हां जन्म । घेवोनि मागुतें । जावें मृत्यु-पंथें । वारंवार ॥३३८॥  
 ऐसा गर्भवास । सोसावया पुन्हां । जयाचिया मना । वाटे लाज ॥३३९॥  
 बहु बोलूं काय । देह चि आपण । ऐसें समजोन । दृढपणें ॥३४०॥  
 नाम आणि रूप । मोहें स्वीकारणें । नसे लाजिरवाणें । तयाहूनि ॥३४१॥  
 दुर्दशा ही ऐसी । देखोनियां साची । घेती शरीराची । शिसारी जे ॥३४२॥  
 तयां साधुजनां । देहीं अनावडी । परी तेथें गोडी । कोडग्यासी ॥३४३॥  
 आतां धनंजया । दोरी तुटतां च । बाहुलीचा नाच । थांबे जैसा ॥३४४॥  
 तैसा 'सदभ्यासें' । होतां 'प्राणजय' । मग कर्मेंद्रिय- । गति खुंटे ॥३४५॥  
 किंवा मावळतां । जैसा दिनकर । लोपतो विस्तार । किरणांचा ॥३४६॥  
 तैसे ज्ञानेंद्रिय- । व्यापार सर्वथा । बंद होती पार्था । मनोजयें ॥३४७॥  
 मन-पवनातें । 'नियमितां पाहीं' । इंद्रियें दहा हि । होती पंगु ॥३४८॥  
 'अत्रापल्य' ऐसें । गुणातें ह्या नाम । धनंजया वर्म । ध्यानीं घेई ॥३४९॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।

भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥३॥

पतीसाठीं साध्वी । गणी ना मृत्यूसी । उडी घाली जैसी । चितेमार्जी ॥३५०॥  
 तैसें विषयातें । लोटोनियां दूर । भेटाया साचार । आत्मनाथा ॥३५१॥  
 जे का 'आक्रमिती' । अरुंद बिकट । आकाशाचा पंथ । आवडीनें ॥३५२॥  
 विधि-निषेधाचा । बंध जयां नाहीं । महासिद्धी त्या हि । नावडती ॥३५३॥  
 ऐशापरी पार्था । सर्वेश्वराकडे । स्वभावतां ओढे । चित्त जेव्हां ॥३५४॥  
 तें चि आध्यात्मिक । तेजाचें लक्षण । तुज विवरोन । सांगितलें ॥३५५॥  
 आतां असंख्यात । 'रोमां देह' वाहे । परी वाहतों हें । नेणे जैसा ॥३५६॥  
 तैसें सर्वकाहीं । करोनि सहन । नाहीं अभिमान । श्रेष्ठत्वाचा ॥३५७॥  
 धनंजया ती च । 'क्षमा' ऐसें जाण । धृतीचें लक्षण । ऐक सांगों ॥३५८॥  
 आले उसळोन । विकारांचे वेग । खवळले रोग । पूर्वकर्में ॥३५९॥  
 प्रियाचा वियोग । अप्रियाचा योग । प्राप्त झाला भोग । कोणता हि ॥३६०॥

किंवा आघवीं हीं । जरी एका वेळीं । घोघावत आलीं । महापूरें ॥३६१॥  
 तरी जो खंबीर । जणूं अगस्ती च । ती च 'धृति' साच । जाण पार्था ॥३६२॥  
 नातरी धूमाचा । उसळला लोट । जरी आकाशांत । एकाएकीं ॥३६३॥  
 तरी वारेयाची । एक चि झुळूक । तयालागीं देख । गिळी जैसी ॥३६४॥  
 तैसे तिन्ही ताप । येतां उसळोन । टाकी जो गिळोन । तयांलागीं ॥३६५॥  
 चित्तशोभावेळीं । टिके ऐसें धैर्य । ती च 'धृति' होय । धनंजया ॥३६६॥  
 शुद्ध सुवर्णाचा । ठेविला 'कलश' । गंगेचें 'पीयूष' । भरोनियां ॥३६७॥  
 तयासारिखी च । 'सबाह्य' शुद्धता । 'शौच' तें चि पार्था । जाण ऐसें ॥३६८॥  
 शरीरें निष्काम । कर्म-व्यवहार । विवेक साचार । अंतरांत ॥३६९॥  
 तरी तो निभ्रांत । जाण पां किरीटी । शुचित्वाची मूर्ति । अंतर्बाह्य ॥३७०॥  
 आतां पाप ताप । फेडोनि टाकीत । झाडांसी पोषीत । तीरींचिया ॥३७१॥  
 जैसें धनंजया । भागीरथी-तोय । भेटावया जाय । सागरातें ॥३७२॥  
 नातरी जगाचें । 'तिमिर' फेडीत । प्रफुल्ल करीत । पद्मिनीतें ॥३७३॥  
 नित्य प्रदक्षिणा । करावया जाण । सूर्यनारायण । निघे जैसा ॥३७४॥  
 तैसीं बांधिलीं जीं । तयांलागीं सोडी । बुडालीं तीं काढी । बाहेरी जो ॥३७५॥  
 ऐसे जाहले जे । 'भवपीडाप्रस्त' । तयांचें संकट । निवारी जो ॥३७६॥  
 काय सांगूं फार । ऐसें रात्रंदिन । सुख-संवर्धन । 'आणिकांचें ॥३७७॥  
 करीत करीत । नित्य अखंडित । साधी आत्महित । स्वभावे जो ॥३७८॥  
 परी साधावया । आपुला कार्यार्थ । चिंती ना अहित । कोणाचें हि ॥३७९॥  
 'अद्रोहत्व' ऐसें । देख मूर्तिमंत । सांगितलें येथ । तुजलागीं ॥३८०॥  
 शिवाचिया माथां । येवोनियां साच । पावली संकोच । गंगा जैसी ॥३८१॥  
 मान्यपणें तैसें । सन्मानितां कोणी । लज्जित होवोनि । राहणें जें ॥३८२॥  
 तें चि 'अमानित्व' । कितो वर्णू आतां । मागें जें सर्वथा । सांगितलें ॥३८३॥  
 ऐशापरी पार्था । सव्वीस हे गुण । मूर्तिमंत जाण । ब्रह्मैश्वर्य ॥३८४॥  
 आणि मोक्षरूपी । राजा सार्वभौम । जणूं हें इनाम । तयाचें गा ॥३८५॥

किंवा सव्वीस हि । गुणरूपी तीर्थी । परिपूर्ण जी ती । नित्य नवी ॥३८६॥  
 दैवी संपत्तीची । जणू ही गंगा च । भाग्ये आली साच । विरक्तांच्या ॥३८७॥  
 किंवा मुक्ति-बाला । शोधी विरक्ताला । गुण-पुष्प-माला । धेवोनि ही ॥३८८॥  
 ना तरी सव्वीस । गुणरूपी ज्योती । आरती ती हातीं । धरोनियां ॥३८९॥  
 जणू ओंवाळया । गमे आली गीता । प्रेमें निज-नाथा । आत्मराजा ॥३९०॥  
 किंवा जी का दैवी । संपत्तीची शिंप । होती गीतारूप । सागरांत ॥३९१॥  
 तया शिंपींतून । निघाली बाहेर । मोत्ये हीं सुंदर । गुणरूपी ॥३९२॥  
 काय सांगूं फार । जयांचा साचार । व्हावा आविष्कार । आपोआप ॥३९३॥  
 ऐशापरी दैवी । संपत्तीचे गुण । येथें विवरोन । सांगितले ॥३९४॥  
 आतां जी आसुरी । संपत्तीची वेली । असे बळावली । नाना दुःखीं ॥३९५॥  
 जरी दोषरूपी । कंटकांनीं युक्त । तरी ती हि येथ । निरूपीन ॥३९६॥  
 जरी उपयोगी । नव्हे चि ती पार्था । त्याज्य चि सर्वथा । होय जरी ॥३९७॥  
 त्यजावयालागीं । तरी ती हि जाण । भलें अवधान । देई आतां ॥३९८॥  
 तरी नरकींचें । वाढवाया दुःख । जेथें झाले एक । सर्व दोष ॥३९९॥  
 ती ही महा-घोर । आसुरी संपत्ति । येथें तुजप्रति । निवेदीन ॥४००॥  
 किंवा विषवर्ग । होतां एकत्रित । तया कालकूट । ऐसें नांव ॥४०१॥  
 तैसी च ही सर्व । दोषांची लगड । करोनि उघड । दावूं तुज ॥४०२॥

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।

अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ॥४॥

तरी तयां दोषां । आसुरांमाझारीं । मुख्य तो निर्धारिं । दंभ ऐसा ॥४०३॥  
 तीर्थ चि तें परी । करी अधःपात । निदितां जनांत । निजमाता ॥४०४॥  
 किंवा ब्रह्मविद्या । श्रीगुरूपदिष्ट । परी चव्हाड्यांत । मांडितां ती ॥४०५॥  
 हितपरिणामी । असोनि हि जाण । होतसे कारण । अहितासी ॥४०६॥  
 ना तरी जी वेगें । काढी पैल तटा । गटंगळ्या खातां । महापूरीं ॥४०७॥  
 बांधितां ती नाव । शिरीं आपुल्या च । बुडविते साच । जैशा रीती ॥४०८॥



किंवा जीवितासी । कारण जें अन्न । जरी वाखाणून । सेविलें तें ॥४०९॥  
 तरी अजीर्णांशें । तें चि जैसें देख । होतसे मारक । विषाणेंसें ॥४१०॥  
 तैसा दानधर्म । घडला हातून । दाविला बोलून । 'लौकिकार्थ ॥४११॥  
 इहपरलोकां । तारक तो साच । तरी दोषासी च । हेतु होय ॥४१२॥  
 म्हणोनियां धर्म । केला जो आपण । जर्गीं 'फोकारून । वाखाणिला ॥४१३॥  
 तरी नव्हे धर्म । अधर्म तो जाण । 'दंभाची' ही खूण । सांगितली ॥४१४॥  
 आतां येतां ट फ । मूर्खांचिया जिभे । जैसा ब्रह्मसभे । तुच्छ लेखी ॥४१५॥  
 किंवा ठाणबंदी । घोडा जैसा पाहीं । ऐरावतातें हि । जुमानी ना ॥४१६॥  
 किंवा स्वर्ग तो हि । ठेंगणा च वाटे । जैसा सरडातें । कुंपणींच्या ॥४१७॥  
 किंवा तृणाचें हि । लाभतां 'इंधन । अग्नि उफाळून । नर्भीं धांवे ॥४१८॥  
 ना तरी 'थिल्लरीं । राहिला जो मासा । गणी ना तो जैसा । सागरातें ॥४१९॥  
 किंवा एक दिन । लाभतां परान्न । जाय फुशारून । रंक जैसा ॥४२०॥  
 तैसा दारा धन । स्तुति विद्या मान । लाभतां माजोन । जाय जो का ॥४२१॥  
 आपुलें मंदिर । मोडी भाग्यहीन । साउली देखोन । आभाळाची ॥४२२॥  
 किंवा मृग-जळ । देखोनि 'आगळें । फोडी जैसें तळें । मति-मंद ॥४२३॥  
 बहु बोलूं काय । प्राप्त होतां 'वित्त । होणें जें उन्मत्त । ऐशापरी ॥४२४॥  
 तो चि 'दर्प' ऐसें । जाण धनंजया । वेगळें सांगाया । नको कांहीं ॥४२५॥  
 आतां वेदांठायीं । जगासी विश्वास । 'विश्वासी तो ईश । पूज्य होय ॥४२६॥  
 तेजें परिपूर्ण । आदित्यासमान । असे दुजा कोण । जगामार्जी ॥४२७॥  
 सार्वभौमपद । हें चि एक जाण । जगासी ठिकाण । आकांक्षेचें ॥४२८॥  
 कल्पान्तीं हि मृत्यु । आपणां न यावा । आवडे हें सर्वा । निर्विवाद ॥४२९॥  
 म्हणोनि उत्साहें । वेदा-ईश्वरातें । लागे वानायातें । विश्वजन ॥४३०॥  
 तरी तें ऐकोन । मत्सर जो वाहे । गर्वें बोलताहे । फुणोनियां ॥४३१॥  
 म्हणे एका घांशीं । भक्षीन तो ईश । घालीन मी विष । वेदांलार्गीं ॥४३२॥  
 ऐसी मिरवोनि । आपुली प्रतिष्ठा । निज-बळ वृथा । घालवी जो ॥४३३॥

नावडे पतंगा । जैसी दीपज्योति । आदित्याची खंती । काजव्यासी ॥४३४॥  
 किंवा टिटवीनें । मांडिलें साचार । जैशापरी वैर । सागराशीं ॥४३५॥  
 तैसा अहंतेच्या । भुलीमार्जी पाहीं । नाम ईशाचें हि । साहेना जो ॥४३६॥  
 आणि श्रुतीलार्गीं । म्हणे मज कैसी । आली छळायसी । सवत ही ॥४३७॥  
 ऐसा मान्यतेचा । ताठा बळवंत । झाला जो उन्मत्त । अहंतेनें ॥४३८॥  
 रौरवाचा रूढ । मार्ग चि तो जाण । तथा अभिमान । नांव ऐसें ॥४३९॥  
 आतां आणिकांचा । देखोनि संतोष । चढे क्रोध-विष । वृत्तीलार्गीं ॥४४०॥  
 तापल्या तेलांत । उठे जैसा जाळ । थंडगार जळ । टाकितां चि ॥४४१॥  
 नातरी जंबूक । जळे जैसा पोटीं । पडतां चि दृष्टी । निशानाथ ॥४४२॥  
 विश्वाचें आयुष्य । उजळिता सूर्य । पावतां उदय । प्रातःकाळीं ॥४४३॥  
 देखोनि तें जैसे । पापी बुबडाचे । डोळें जाती साचे । फुटोनियां ॥४४४॥  
 देखोनि प्रभात । जगा होय सुख । परी चोरां दुःख । मृत्यूहून ॥४४५॥  
 सर्पालार्गीं दूध । पाजिलें केवळ । तरी तो गरळ । ओकी जैसा ॥४४६॥  
 प्राशोनि अगाध । सागराचें जळ । होतसे प्रबळ । वडवाभि ॥४४७॥  
 तथाची तों भूक । वाढे चि अधिक । शमे ना ती देख । कदाकाळीं ॥४४८॥  
 तैसें देखे विद्या । विनोद वैभव । इत्यादिक दैव । आणिकांचें ॥४४९॥  
 तों तों दुणें वाढे । रोषाचें प्रमाण । क्रोधाचें लक्षण । जाण ऐसें ॥४५०॥  
 आतां ज्याचें मन । पाहतां केवळ । सर्पांचें चि बीळ । ऐसें वाटे ॥४५१॥  
 जणूं तीक्ष्ण बाण । सोडी ज्याची दृष्टि । बोलणें ती वृष्टि । निखाज्यांची ॥४५२॥  
 आणि इतर हि । ज्या ज्या क्रिया होती । जणूं त्या कर्वती । पोलादाच्या ॥४५३॥  
 ह्यापरी कठोर । जयाचा आचार । देखसी साचार । अंतर्बाह्य ॥४५४॥  
 मनुष्यांमाझारीं । अधम तो साच । जाण पां मूर्तीं च । काठिण्याची ॥४५५॥  
 आतां तुज सांगूं । अज्ञानाची खूण । देई अवधान । धनंजया ॥४५६॥  
 तरी पाहें जैसें । शीत उष्ण काहीं । स्पर्शज्ञान नाहीं । पाषाणातें ॥४५७॥  
 किंवा जन्मांधातें । रात्रि आणि दिन । ऐसें भेद-ज्ञान । नसे जैसें ॥४५८॥

किंवा खाद्याखाद्य । नेणोनियां अग्नि । मिळे तें गिळोनि । टाकी जैसें ॥४५९॥  
 ना तरी हें सोनें । आणि हें लोखंड । ऐसा नाही भेद । परिसासी ॥४६०॥  
 किंवा रिघोनि हि । रसीं नानाविध । चाखूं नेणे स्वाद । पळी जैसी ॥४६१॥  
 किंवा मार्गामार्ग । न पाहतां वीरा । वाहे जैसा वारा । स्वच्छदानें ॥४६२॥  
 तैसा कार्याकार्य- । विवेकीं आंधळ्य । जाण तो पुतळ्य । अज्ञानाचा ॥४६३॥  
 किंवा चोख मैळ । ऐसें नेणे बाळ । देखे तें केवळ । मुखीं घाली ॥४६४॥  
 तैशापरी पाप- । पुण्याची खिचडी । खातां नेणे गोडी । बुद्धि ज्याची ॥४६५॥  
 ऐशी दशा जी का । अज्ञान तें जाण । नाही अप्रमाण । बोलणें हें ॥४६६॥  
 ऐशापरी साही । दोषांचें लक्षण । येथें विवरून । सांगितलें ॥४६७॥  
 ह्या चि साही दोषीं । सर्वथा किरिटी । बळावे संपत्ति । आसुरी ही ॥४६८॥  
 सुंदरीचा बांधा । दिसो किरकोळ । विषयीं प्रबळ । परी जैसी ॥४६९॥  
 \*अग्नि तरी तीन । तरी तयां पाहीं । पुरे ना विश्व हि । भक्षावया ॥४७०॥  
 नातरी \*त्रिदोषीं । चुके ना मरण । जातां हि शरण । विधात्यासी ॥४७१॥  
 तैसे चि हे दोष । वरी द्विगुणित । म्हणोनि अत्यंत । दुःखकारी ॥४७२॥  
 आसुरी संपत्ति । उभारली पाहीं । ह्या चि दोषीं साही । संपूर्णत्वे ॥४७३॥  
 म्हणोनि ही उणी । लेखावी ना कोणी । घालिते दारुणीं । नरकीं जी ॥४७४॥  
 \*पाप-ग्रह-पंक्ति । यावी एके राशी । किंवा निंदकाशीं । सर्व पापें ॥४७५॥  
 किंवा सर्व रोगीं । व्यापावें शरीर । येतांचि साचार । मृत्यु-काळ ॥४७६॥  
 नातरी कुयोग । मिळोनियां यावे । जैसे का स्वभावे । \*कुमुहूर्ती ॥४७७॥  
 किंवा शेळियेसी । \*डंखी मृत्युकाळीं । जैसी का इंगळी । सातनांगी ॥४७८॥  
 तैसे हे हि साही । होती एकत्रित । साधावया घात । मानवाचा ॥४७९॥  
 विश्वासला त्यासी । चोराहातीं द्यावें । श्रान्तासी लोटवें । महापूर्ती ॥४८०॥  
 तैसा मानवाचा । करिती विनाश । हे चि साही दोष । दंभादिक ॥४८१॥  
 मोक्षमार्गीं ह्यांचा । होतां \*शिडकाव । मोहें बुडे जीव । संसारांत ॥४८२॥  
 मग अंतीं बैसे । स्थावराच्या तळीं । उतरोनि खालीं । जन्मोजन्मीं ॥४८३॥

असो साही दोष । हे चि वाढविती । आसुरी संपत्ति । जीवाठार्यी ॥४८४॥  
ह्यापरी प्रसिद्ध । संपदा ह्या दोन्ही । येथें विभागोनि । दाखविल्या ॥४८५॥

दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ।

मा शुचः संपदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥५॥

दोहींमार्जी दैवी । संपदा जी श्रेष्ठ । जाण सुप्रभात । मोक्षाची ती ॥४८६॥  
दुजी संपत्ति जी । आसुरी ती साच । लोह-श्रृंखला च । मोहरूपी ॥४८७॥  
परी आसुरी ही । देखोनि संपत्ति । नको धरूं चिर्ती । भय कांही ॥४८८॥  
सांगें धनंजया । दिनालागीं काय । वाटतसे भय । 'रजनीचें ॥४८९॥  
येती आश्रयास । जयाचिया ठार्यी । दंभादिक साही । दोष ऐसे ॥४९०॥  
आसुरी संपत्ति । तयासी च जाण । घालिते बंधन । महा-घोर ॥४९१॥  
परी अर्जुना तूं । दैवी-गुण-ठेवा । घेवोनि बरवा । जन्मलासी ॥४९२॥  
ह्या चि संपत्तीचा । होवोनियां धनी । सार्धीं तूं 'निदानीं । मोक्ष-सुख ॥४९३॥

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।

दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे श्रृणु ॥६॥

आतां दैवी किंवा । आसुरी संपत्ति । येथें जयाप्रति । जोडली जी ॥४९४॥  
तयांची तैसी ती । 'रहाटी हि भिन्न । स्वभावतां जाण । धनंजया ॥४९५॥  
'निशाचरें जैसीं । निज-व्यवहार । करिती साचार । 'निशाकालीं ॥४९६॥  
परी सूर्योदर्यी । मानवादिकांचा । सुरू होय साचा । सुव्यापार ॥४९७॥  
तैसे दैवी किंवा । आसुरी जे होती । आपुलाल्या रीती । वागती ते ॥४९८॥  
त्रयोदशाध्यायीं । ज्ञान-लक्षणांचा । 'उहापोह साचा । केला जेव्हां ॥४९९॥  
तेव्हां तुज दैवी । आचाराची रीत । सांगितली तेथ । विस्तारोनि ॥५००॥  
आसुरी सृष्टीची । येथें बोलूं मात । भला दत्तचित्त । होई आतां ॥५०१॥  
तरी वाद्याविण । जैसा नाहीं नाद । नातरी सुगंध । पुष्पाविण ॥५०२॥  
देहाश्रयाविण । तैसी ही आसुर । एकली गोचर । नोहे पार्था ॥५०३॥  
शुष्क काष्ठमार्जी । 'होतां चि 'प्रविष्ट । दिसूं लागे स्पष्ट । अग्नि जैसा ॥५०४॥

तैसी प्राणियाच्या । देहीं सामावली । येतसे ही भली । प्रत्ययासी ॥५०५॥  
 उसासवें वाढ । रसाची हि जैसी । देहासवें तैसी । ही हि वाढे ॥५०६॥  
 आतां ऐशा दोषीं । जे का परिपूर्ण । त्यांचें वर्णन । करूं येथें ॥५०७॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ।

न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥७॥

पुण्य तें करावें । पाप नाचरावें । नाहीं च हें ठावें । त्यांलागीं ॥५०८॥  
 येण्याजाण्यासाठीं । न ठेवितां द्वार । बांधूं लागे घर । कोशकीट ॥५०९॥  
 मग आवेशें तें । बांधितां बांधितां । कांडोनि घे स्वतां । आपणासी ॥५१०॥  
 किंवा जैसा मूर्ख । आपुलें सकळ । देई भांडवल । चोरांलागीं ॥५११॥  
 मागुतें तें हातीं । येईल का नाहीं । विचार हा काहीं । न पाहतां ॥५१२॥  
 तैसा चि प्रवृत्ति- । निवृत्ति-विवेक । नेणती ते लोक । आसुरी जे ॥५१३॥  
 आणि त्यांलागीं । शुचित्वाची काहीं । स्वभांत हि नाहीं । ओळखण ॥५१४॥  
 अगा कोळसा हि । काळिमा सांडील । होईल धवल । कावळा हि ॥५१५॥  
 राक्षसालागीं हि । उपजेल त्रास । देखोनियां मांस । एकवेळ ॥५१६॥  
 परी आसुरी जे । त्यांचिया ठायीं । शुचित्व तें नाहीं । लेशमात्र ॥५१७॥  
 धनंजया जाण । नित्य अपवित्र । जैसें मद्यपात्र । तैसे ते हि ॥५१८॥  
 करावें सुकृत । शास्त्रविधानोक्त । किंवा घ्यावी रीत । वडिलांची ॥५१९॥  
 स्वधर्मानुसार । ठेवावा आचार । ऐसा सद्विचार । नेणती ते ॥५२०॥  
 शेळीचें चरणें । वाऱ्याचें धावणें । आगीचें जाळणें । स्वैर जैसें ॥५२१॥  
 तैसे स्वैराचारी । आसुरी ते नर । सत्यासवें वैर । सदा ज्यांचें ॥५२२॥  
 मारोनियां नांगी । जरी विंचवासी । येती करायामी । गुदगुल्या ॥५२३॥  
 तरी सत्य-वाचा । निघे मुखांतून । आसुरी जे जन । त्यांचिया ॥५२४॥  
 मुटेल सुगंध । जरी गुद-द्वारा । जोडेल आसुरां । तरी सत्य ॥५२५॥  
 ऐसे आसुरी ते । काहीं केल्याविण । स्वभावतां जाण । अमंगळ ॥५२६॥  
 आतां बोलणें हि । कैसें विलक्षण । प्रसंगें सांगेन । एक पार्था ॥५२७॥

वांकडे सर्वांगी । उंटाचें शरीर । तैसी च साचार । स्थिति ह्यांची ॥५२८॥  
 किंवा घुरांब्याच्या । तोंडांतुनी साच । निघे घुराचा च । लोट जैसा ॥५२९॥  
 तैसें चि भाषण । आसुरांचें जाण । सांगूं विवरून । तें चि आतां ॥५३०॥

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।

अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ॥८॥

तरी विश्वाचें हें । अनादि ठिकाण । 'नियंता तो जाण । परमेश ॥५३१॥  
 न्याय-अन्यायाचा । द्यावया निर्णय । येथ वेद होय । न्यायाधीश ॥५३२॥  
 तयाचिया दृष्टी । अन्यायी जे होती । शिक्षा ते भोगिती । नरकाची ॥५३३॥  
 परी नीति-न्यायें । वागती तयांस । सुखें स्वर्गी वास । घडे पार्था ॥५३४॥  
 ऐसी अनादि जी । विश्वाची व्यवस्था । सर्वथा ती वृथा । बोलती ते ॥५३५॥  
 याज्ञिक ते वेडे । फसोनियां गेले । आचरोनि भले । यज्ञयाग ॥५३६॥  
 'देवपिसे ते हि । लिंग-प्रतिमांनीं । सर्वथा भुलोनि । 'नागवले ॥५३७॥  
 समाधीच्या छंदें । जाहले भ्रमिष्ट । होवोनि विरक्त । योगीजन ॥५३८॥  
 आपुलिया बळें । मेळवोनि भोग । भोगावे ते चांग । जगामार्जी ॥५३९॥  
 ह्याविण आणिक । नसे पुण्य साच । बोलती ऐसें च । आसुरी ते ॥५४०॥  
 नातरी आपण । दुर्बळ म्हणोन । न होती स्वाधीन । भोग-सुखें ॥५४१॥  
 मग तयांविण । तडफडे जीव । पाप सर्वथैव । नव्हे का तें ॥५४२॥  
 धनिकांचे प्राण । हिरोनियां ध्यावे । पाप हें मानावें । जरी साच ॥५४३॥  
 तरी हातीं येतां । तयांचें सकळ । सांगा पुण्य-फळ । नव्हे का तें ॥५४४॥  
 देखा दुर्बळते । भक्षी बळवंत । बाधक तें होत । जरी साच ॥५४५॥  
 तरी थोर मासा । गिळी लहानातें । तयाचें का होतें । 'निसंतान ? ॥५४६॥  
 आणि प्रजोत्पत्ति । व्हावी म्हणोनियां । भलीं शोधोनियां । कुळें दोन्ही ॥५४७॥  
 कुंडली पाहोन । जरी सुमहूर्ती । मेळविलीं जाती । वधूवरें ॥५४८॥  
 तरी देखा जे का । पशु-पक्ष्यादिक । प्रजा असंख्याक । असे ज्यांची ॥५४९॥  
 तयांचे विवाह । होती काय येथें । विधिविधानातें । पाहोनियां ॥५५०॥

चोरीचें तें धन । जरी हातीं आलें । तरी काय झालें । विष कोणा ? ॥५५१॥  
 केला व्यभिचार । आवडीनें कोणी । होय तो म्हणोनि । कुशी काय ? ॥५५२॥  
 म्हणोनियां एक । नियंता ईश्वर । भोगवी साचार । धर्माधर्म ॥५५३॥  
 आणि इहलोकीं । जें जें करी जीव । भोगितो तें सर्व । परलोकीं ॥५५४॥  
 ऐसें बोलती जें । थोतांड तें सर्व । दिसे कोठें देव । परलोक ॥५५५॥  
 जातां कर्ता जीव । देहातें सोडून । मग उरे कोण । भोगाया तें ॥५५६॥  
 भोगीं देवेन्द्रातें । उर्वशीच्या संगें । जैसें सुख लाभे । स्वर्गलोकीं ॥५५७॥  
 तैसा कीटक हि । लोळतां नरकीं । मानीतसे सुखी । आपणातें ॥५५८॥  
 म्हणोनि जो स्वर्ग- । नरकाचा भोग । पापपुण्यभाग । नाहीं तेथें ॥५५९॥  
 तयां दोहीं ठायीं । प्राप्त होय साच । देखा कामाचा च । सुखभोग ॥५६०॥  
 म्हणोनियां जेथ । नर मादी दोन्ही । मिळती होवोनि । कामवश ॥५६१॥  
 तेथ जन्म पावे । आघवें हें जग । लय पावे मग । कैसें ऐका ॥५६२॥  
 आपुला चि स्वार्थ । साधावा म्हणोन । जगाचें पोषण । करूं जातां ॥५६३॥  
 परस्परांमार्जीं । माजोनि विद्वेष । होतसे विनाश । सृष्टीचा ह्या ॥५६४॥  
 कामाविण मूळ । जगा दुजें नाहीं । बोलती हें पाहीं । आसुर ते ॥५६५॥  
 असो ऐसे हीन । शब्द उच्चारोन । द्यावा वायां शीण । वाचेसी कां ? ॥५६६॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।

प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ८ ॥

ऐसा तिटकारा । देवाचा अंतरीं । म्हणोनि ह्या परी । जल्पती ते ॥५६७॥  
 हें तों नव्हे काहीं । परी देव नाहीं । निश्चय हा पाहीं । तयांचा गा ॥५६८॥  
 काय सांगूं ऐसी । पाखांडाची खूण । ठेविते रोवून । अंतरीं ते ॥५६९॥  
 स्वर्ग-नरकाची । तयांचिया चित्तीं । कोठोनियां क्षिती । उरे मग ॥५७०॥  
 अशुद्धोदकाचा । जणूं बुडबुडा । ऐसा जो हा खोडा । शरीराचा ॥५७१॥  
 तया खोड्यामार्जीं । सांपडोनि भले । बुडोनियां गेले । भोग-पंकीं ॥५७२॥  
 विनाशाच्या वेळीं । बद्ध होय मासा । जाळ्यामार्जीं जैसा । धीवराच्या ॥५७३॥

ना तरी देहाचा । येतां अंतकाळ । होतसे प्रबळ । रोग जैसा ॥५७४॥  
 जगाचें अनिष्ट । करावया पाहीं । नर्भीं जैसा येई । \*धूमकेतु ॥५७५॥  
 तैसे आसुरी ते । पावती जन्मास । करावया नाश । जगताचा ॥५७६॥  
 जणूं अशुभाचे । अंकुर ते साचे । चालते पापाचे । कीर्तिस्तंभ ॥५७७॥  
 जें जें सांपडे तें । जाळण्यावांचोनि । जैसें नेणे अग्नि । दुजें कांहीं ॥५७८॥  
 करावें विश्वाचें । तैसें अकल्याण । स्वभाव हा जाण । आसुरांचा ॥५७९॥  
 तया कर्मीं कैसा । तयांचा आवेश । म्हणे हृषीकेश । ऐक पार्था ॥५८०॥

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।

मोहाद् गृहीत्वाऽसद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः ॥१०॥

जाळ्यामार्जीं पाणी । राहे ना सांठोन । पुरे ना इंधन । अग्नीलार्गीं ॥५८१॥  
 ऐसे बुभुक्षित । दुर्भर जे कोणी । तयांचा अग्रणी । काम जो का ॥५८२॥  
 तया कामासी ते । जीवीं बाळगोन । दंभ-अभिमान । मेळविती ॥५८३॥  
 \*मत्त कुंजरातें । पाजितां वारुणी । मग तो झिंगोनि । नाचे जैसा ॥५८४॥  
 तैसी मदाची हि । धुंदी आगळी च । चढूं लागे साच । तयांअंगीं ॥५८५॥  
 तयांअंगीं जाण । वसे मूर्खपण । दुराग्रहा स्थान । तें चि एक ॥५८६॥  
 मग काय सांगूं । कैसी विपरीत । निश्चयाची रीत । असे त्यांची ॥५८७॥  
 जेणें परपीडा । घडे परघात । ऐशा कर्मीं रत । होवोनियां ॥५८८॥  
 गाजावें जगांत । आपुलें चि नांव । ऐसी एक हांव । बाळगिती ॥५८९॥  
 आपुला डांगोरा । सर्वत्र पिटोन । लेखिती ते हीन । त्रिलोकासी ॥५९०॥  
 धर्माचिया नावें । सोडिली जी गाय । हवें तें तें खाय । मुक्तपणें ॥५९१॥  
 तैसे महादोषां । न घालितां बंध । वागती स्वच्छंद । आसुरी ते ॥५९२॥

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।

कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥११॥

वाढवोनि ऐसा । दुष्कर्मांचा व्याप । वाहती अमाप । चिंताभार ॥५९३॥  
 काय सांगूं तया । चिंतेचें वर्णन । मानिती जीवन । तें हि थोडें ॥५९४॥

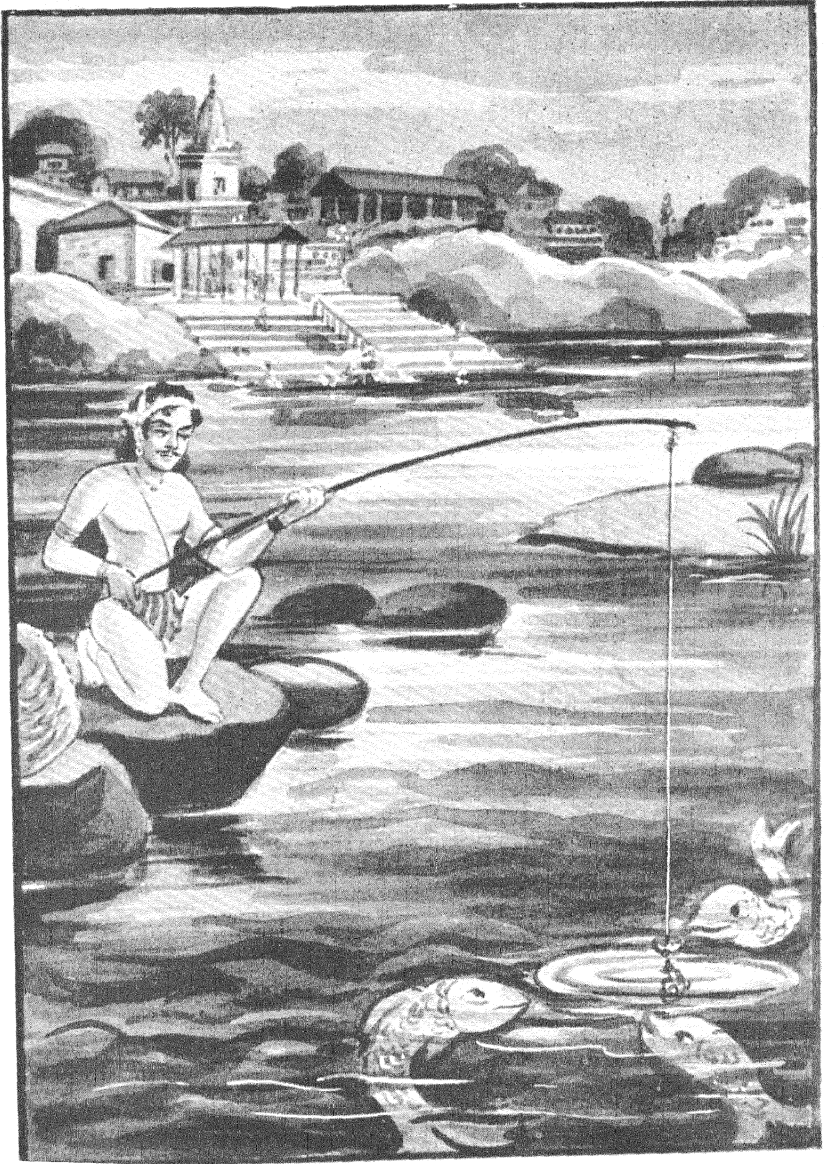


तया चिंतेपुढें । जें का त्रिभुवन । तें हि अणूहून । सान दिसे ॥५९५॥  
 पाताळापासोन । खोल ती गहन । असे नभाहून । अति उंच ॥५९६॥  
 यम-नियमांची । विवंचना जैसी । असे योगियासी । निरंतर ॥५९७॥  
 तैसी धनंजया । तयांचिया मनीं । चिंतेची टोंचणी । अहर्निश ॥५९८॥  
 किंवा पतिलागीं । येतां हि मरण । जाय ना सोडोन । सती जैसी ॥५९९॥  
 तैसा चिंताभर । वाहती अपार । इच्छुनी असार । भोग-सुखें ॥६००॥  
 स्त्रियेचें गायन । ऐकावें श्रवणीं । पहावें नयनीं । स्त्रियेसी च ॥६०१॥  
 स्त्रियेसी च प्राण-। सर्वस्व मानोन । द्यावें आलिंगन । सर्वेन्द्रियां ॥६०२॥  
 टाकावें अमृत । तें हि ओंवाळून । स्त्रीसुखावरून । सर्वथैव ॥६०३॥  
 स्त्रीसुखावांचून । दुजें नाहीं सुख । निश्चय हा देख । आसुरांचा ॥६०४॥  
 धांवती तदर्थ । स्वर्गपाताळांत । दाहीदिशाप्रांत । ओलांडोनि ॥६०५॥

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।

ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥१२॥

३आमिषाचा धांस । गिळी जैसा मासा । मोहें बळी आशा । बाळगोनि ॥६०६॥  
 विषयांच्या ठायीं । ठेवितां आसक्ति । तैसी होय स्थिति । आसुरांची ॥६०७॥  
 वांछिलें तें प्राप्त । न होतां हि साच । आशा कोरडी च । वाढविती ॥६०८॥  
 मग जणूं कोश-। कीटकांसमान । घेती ते कोंडोन । आपणांसी ॥६०९॥  
 वाढविली आशा । राहणें अपूर्ण । तो चि द्वेष जाण । धनंजया ॥६१०॥  
 कामक्रोधाविण । ऐशापरी कांहीं । तयां दुजा नाहीं । पुरुषार्थ ॥६११॥  
 दासालागीं जैसी । सदा स्वामीसेवा । नाहीं च विसांवा । क्षणभरी ॥६१२॥  
 तैसें कामक्रोधें । तयां केलें दास । तरी प्रीति-द्वेष । वाढविती ॥६१३॥  
 वाढविती आशा । वाढविती तृष्णा । विषय-वासना । नानापरी ॥६१४॥  
 परी अर्थाविण । कैसे नाना भोग । भोगावे ते चांग । म्हणोनियां ॥६१५॥  
 मना माने तैसें । जगासी लुटोन । मेळविती धन । अगणित ॥६१६॥  
 कोणा आडरानीं । मारिती गांठोन । कोणाचें हिरोन । घेती सर्व ॥६१७॥



आमिषाचा घांस । गिली जैसा मासा । मोहें बळी आशा । बाळगोनि ॥६०६॥



कोणा एकालागीं । कराया अपाय । अघोरी उपाय । योजिती ते ॥६१८॥  
 १फांसक्या १चिकाटे । पातीं भाले जाळीं । घेवोनि जवळी । श्वानादिक ॥६१९॥  
 ऐशा रीती पूर्ण । सुसज्ज होवोन । रानां वनांतून । हिंडोनियां ॥६२०॥  
 पारधी ते जैसे । साधिती शिकार । आपुलें उदर । भरावया ॥६२१॥  
 तैसा तो हि कमें । आचरितो हीन । आसुर जो जन । धनंजया ॥६२२॥  
 पर-प्राण-घातें । मेळवोनि धन । मग संतोषोन । काय बोले ॥६२३॥

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।

इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥

म्हणे नव्हे का मी । जाहळों कृतार्थ । लुटोनियां वित्त । बहुतांचें ॥६२४॥  
 ऐसा धन्यतेचा । जों जों चढे गर्व । तों तों वाढे हांव । आणिक हि ॥६२५॥  
 मग म्हणे आतां । आणिक हि धन । आणीन लुटोन । आणिकांचें ॥६२६॥  
 जें जें मेळविलें । त्या चि भांडवलें । जिंकीन उरलें । चराचर ॥६२७॥  
 ऐसा विश्वाचिया । घनाचा मी धनी । होईन निदानीं । एकला च ॥६२८॥  
 मग वक्रदृष्टी । पाहेन मी ज्यासी । रसातळीं त्यासी । पांचवीन ॥६२९॥

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ।

ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्मुखी ॥१४॥

आजवरी वैरी । मारिले ते थोडे । मारीन मी गाढे । आणिक हि ॥६३०॥  
 मग जेथें तेथें । प्रभुपणें साच । जर्गी एकला च । नादेन मी ॥६३१॥  
 झाले माझे दास । तयां वगळून । १करीन १वंदन । आणिकांचें ॥६३२॥  
 काय सांगूं फार । चराचरीं थोर । ईश्वर साचार । मी च एक ॥६३३॥  
 भोग-साम्राज्याचा । मी च एक राव । सर्व सुखा ठाव । मी च एक ॥६३४॥  
 म्हणोनियां माझे । पाहतां ऐश्वर्य । तुच्छ नव्हे काय । इंद्र तो हि ॥६३५॥  
 मनें वाचा देहें । करीन जें काहीं । नेईन सर्व हि । सिद्धीस तें ॥६३६॥  
 मज एकाविण । दुज्या कोणालागीं । असे ऐसी जर्गी । आज्ञासिद्धी ॥६३७॥  
 मज १महा-बळा । देखिलें ना साच । काळ तोंवरी च । बळवंत ॥६३८॥

१ शिकारीसाठीं दोराचे फांस. २ चिकाटा लावलेल्या काठ्या. ३ फडशा पाडीन. ४ बलिष्ठाला.

जगामार्जी एक । मी च सुख-राशि । तुळेल माझ्यार्शी । ऐसा कोण ॥६३९॥

आढयोऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया ।

यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥

वर्णिती कुवेर । संपन्न म्हणोन । परी तो निर्धन । मजपुढें ॥६४०॥

रमापतीची हि । संपत्ति थोडी च । धन माझे साच । पाहूं जातां ॥६४१॥

पाहूं जातां माझे । कुळ जात गोत । उणा शुचित्वांत । ब्रह्मा तो हि ॥६४२॥

भिरविती वायां । ईश्वरादि नावें । माझी सरी पावे । ऐसें कोण ॥६४३॥

आतां लोपलें जें । जारण-मारण । तयाचा करीन । जीर्णोद्धार ॥६४४॥

मग आणिकांचा । काढावया कांटा । यज्ञाची प्रतिष्ठा । आरंभीन ॥६४५॥

माझीं स्तुतिस्तोत्रें । गातील जे कोणी । मातें रंजवोनि । नटनावें ॥६४६॥

मागतील तें तें । तयातें देवोन । दाता मी म्हणोन । भिरवीन ॥६४७॥

मना माने तैसें । करीन भोजन । आकंठ सेवीन । मद्य-मांस ॥६४८॥

कामिनींच्या गळां । घालोनियां मिठी । धन्य त्रिजगतीं । होईन मी ॥६४९॥

असो किती ऐसें । करावें वर्णन । वांया गेले जाण । आसुर ते ॥६५०॥

जणूं ख-पुष्पांचा । हुंगावा सुगंध । तैसा चि हा छंद । आसुरांचा ॥६५१॥

अनेकचित्चिभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।

प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥१६॥

हवें तें तें जैसें । बडबडे रोगी । कोपे जेव्हां अंगीं । सन्निपात ॥६५२॥

तैसे ते उन्मत्त । करिती वल्गना । रचोनियां नाना । मनोरथ ॥६५३॥

जाण अज्ञानाचे । जणूं धूलि-कण । होती ते म्हणोन । धनंजया ॥६५४॥

आशा वावटळ । तयां भोवंडीत । ऐसी गगनांत । संकल्पांच्या ॥६५५॥

जैसे अनावर । आषाढींचे मेव । नातरी तरंग । सागराचे ॥६५६॥

तैशा अखंडित । कामना अनेक । आसुरी जे लोक । तयां लागीं ॥६५७॥

मग धनंजया । काटेऱ्यावरून । काढावी ओढून । पद्में जैसीं ॥६५८॥

तैसें त्या वासना-। वेर्लींच्या जाळ्यांनीं । जातसे फाटोनि । चित्त त्यांचें ॥६५९॥

ना तरी पाषाणीं । हापटतां घडा । तयाचा चुराडा । होय जैसा ॥६६०॥  
 तैसें चुरडोन । जाय त्यांचें चित्त । वासनांनीं भ्रांत । होय जेव्हां ॥६६१॥  
 तेव्हां जैसा रीती । वाढतां चि रात्र । अंधार सर्वत्र । भरूं लागे ॥६६२॥  
 तैसा तयांचिया । अंतरीं अपार । मोहाचा विस्तार । होऊं लागे ॥६६३॥  
 वाढतां चि मोह । वाढती विषय । विषयीं आश्रय । पातकांसी ॥६६४॥  
 बळावतां पापें । नरकींची व्यथा । जितेपणीं पार्था । पावती ते ॥६६५॥  
 म्हणोनि दुर्मती । आसुर जे होती । घडे तयां वस्ती । नरकीं च ॥६६६॥  
 जेथें अति तीक्ष्ण । जणू खडग-पार्ती । ऐसीं पानें येती । वृक्षालागीं ॥६६७॥  
 तापल्या तेलाचे । उतती सागर । पेटती डोंगर । निखाऱ्यांचि ॥६६८॥  
 यातनांचा नाच । तो च यम-जाच । होय जेथें साच । नित्य नवा ॥६६९॥  
 ऐशा महा-धोर । रौरवीं साचार । पडती सत्वर । आसुर ते ॥६७०॥  
 ऐसा नरकाचा । शेलका च वांटा । घेवोनि सर्वथा । जन्मले जे ॥६७१॥  
 ते हि धनंजया । भुलोनियां वायां । यज्ञयाग क्रिया । आचरती ॥६७२॥  
 सर्व तो देखावा । नाटकी म्हणोन । विफल ते जाण । यज्ञयाग ॥६७३॥  
 वारांगना साच । पाहें जैसा रीती । मानोनियां पाति । वल्लभातें ॥६७४॥  
 अहेव म्हणोनि । लोकीं भिरवती । तैसी च ती कृति । आसुरांची ॥६७५॥

आत्मसंभाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ।

यजन्ते नाम यज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥१७॥

आपणा आपण । मानोनि महंत । फुगती अद्भुत । गर्वें तें ॥६७६॥  
 लोखंडाचे खांब । जैसे सदा ताठ । तैसे ते गर्विष्ठ । वांकती ना ॥६७७॥  
 नातरी पर्वत । जैसे नभीं उंच । लीनता तैसे च । नेणती ते ॥६७८॥  
 मग थोरपण । आपुलें आपण । मुखें वाखाणून । आनंदती ॥६७९॥  
 तया आनंदाच्या । भरीं तृणाहून । लेखिती ते हीन । जगालागीं ॥६८०॥  
 धनाचिया मद्यें । माजोनियां पाहीं । नेणती ते कांहीं । कार्याकार्य ॥६८१॥  
 पार्था ज्यांपासीं । सामुग्री ही ऐसी । काय ते तयांसी । यज्ञयाग ! ॥६८२॥

परी काय नोहे । त्यांच्या हातून । वेडे पिसे जन । जाहले जे ॥६८३॥  
 म्हणोनि ते मूर्ख । 'बलोन्मार्दे' मग । यज्ञाचें हि सोंग । आचरिती ॥६८४॥  
 कुंड ना मंडप । नको त्यां वेदी । साधन-समृद्धि । यथायोग्य ॥६८५॥  
 विधि-विधानार्शी । सदा ज्यांचें वैर । ऐशा परी स्वैर । यज्ञ त्यांचे ॥६८६॥  
 देवा-ब्राह्मणांचें । नांव हि तें कार्नी । न यावें म्हणोनि । इच्छिती जे ॥६८७॥  
 तेथें त्यां देवां । पाचारितो कोण । यावें हो म्हणोन । यज्ञयागीं ॥६८८॥  
 मृत वासराचें । कातडें काढून । तयामार्जी तृण । भरोनियां ॥६८९॥  
 मग धेनूपुढें । वत्स तें ठेवोन । करिती 'दोहन । युक्तिमंत ॥६९०॥  
 दाखवोनि तैसें । यज्ञाचें निमित्त । सर्व आप्त इष्ट । बोलावोनि ॥६९१॥  
 \*आहेराच्या नांवें । आसुर ते जन । सर्वस्व हिरोन । घेती त्यांचें ॥६९२॥  
 साधावयालागीं । आपुला उत्कर्ष । इतरांचा नाश । इच्छूनियां ॥६९३॥  
 ऐशा परी जाण । करोनि यजन । जगा नागवून । टाकिती ते ॥६९४॥

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।

मामात्मपरदेहेषु प्रद्विपन्तोऽभ्यस्यकाः ॥१८॥

मग 'भेरी-डंके' । पुढें झडवोनि । 'दीक्षित म्हणोनि । मिरविती ॥६९५॥  
 त्यां अधर्मातें । चढे अभिमान । व्यर्थ मोटेपण । येतां ऐसें ॥६९६॥  
 काजळें अंधार । काढावा लिंपोन । तैसें मूर्खपण । दृढ होय ॥६९७॥  
 भरे अंगीं ताठा । दुणावे अहंता । बळावे सर्वथा । अविचार ॥६९८॥  
 मग चढे त्यांच्या । बळासी हि बळ । आणिकां समूळ । उच्छेदाया ॥६९९॥  
 अहंकार आणि । सामर्थ्य हीं दोन्ही । एकत्र मिळोनि । येतां ऐसीं ॥७००॥  
 तेणें दर्पाचिया । सागरालागोन । अमर्यादपण । प्राप्त होय ॥७०१॥  
 कामाचें हि पित्त । खवळोनि जाय । दर्प जेव्हां होय । अमर्याद ॥७०२॥  
 लागतां चि मग । कामाची ती धग । भडकते आग । क्रोधाची हि ॥७०३॥  
 जैसें तुपाचें वा । तेलाचें कोठार । पेटावें प्रखर । ग्रीष्म-काळीं ॥७०४॥  
 तों चि तया भर । द्यावया साचार । भेटावा 'अधोर । वारा तेथें ॥७०५॥

तैसीं जयांठायीं । अहंकार बळ । 'दर्पादि सकळ । वस्ती आलीं ॥७०६॥  
 तयां आसुरांची । हिंसावृत्ति स्वैर । कोणासी हि ठार । करूं धावे ॥७०७॥  
 आपुलें चि रक्त-। मांस आटवोन । जारण-मारण । साधिती ते ॥७०८॥  
 ऐशा कर्मीं जो मी । अंतर्यामी देव । तयासी च धाव । लागती ते ॥७०९॥  
 \* अभिचारादिक । कर्म आचरोन । टाकिती पिळोन । ज्या ज्या जीवां ॥७१०॥  
 तयां जीवांठायीं । जो मी सच्चिद्रन । तया मज शीण । होय त्याचा ॥७११॥  
 जारण मारण । इत्यादिकांतून । गेले जे सुटून । जीव कोणी ॥७१२॥  
 तयांचिया वर्मीं । घालिती ते धाव । मनीं दुष्ट भाव । बाळगोनि ॥७१३॥  
 सती साधुसंत । उदार याज्ञिक । किंवा अलौकिक । तपोधन ॥७१४॥  
 एकनिष्ठ भक्त । संन्यासी महंत । आणि शुद्धचित्त । वेदवेत्ते ॥७१५॥  
 ऐसीं हीं जीं माझीं । विश्रांतीचीं स्थानें । शुद्धसत्त्वगुणें । चोखाळलीं ॥७१६॥  
 तयांवरी द्वेष-। विष-लिप्त तीक्ष्ण । सोडिती ते बाण । कुशब्दांचे ॥७१७॥

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।

क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥१९॥

ऐशा रीती माझें । करावया वैर । सिद्ध झाले नर । आसुर जे ॥७१८॥  
 आपुलें कर्तव्य । जाती विसरोन । करोनि धारण । नर-देह ॥७१९॥  
 तयां पापियातें । दंडितो मी कैसें । ऐक सांगतसें । धनंजया ॥७२०॥  
 नर-देहाची ती । हिरोनि पदवी । तयांलागीं ठेवीं । ऐशा रीती ॥७२१॥  
 भव-नगरीचा । पाणवठा साचा । यातना-ग्रामीचा । उकिरडा ॥७२२॥  
 ऐसी तमोयोनि । जी का धनंजया । ती च देई तयां । मूढांलागीं ॥७२३॥  
 तृण हि मिळेना । खावयासी जेथें । महावनीं तेथें । ऐशा घोर ॥७२४॥  
 'व्याघ्र-वृश्चिकादि । योनीमार्जी हीन । घालितो मी जाण । तयांलागीं ॥७२५॥  
 मग क्षुधेनें ते । होतां कासावीस । बोकाणिती मांस । आपुलें चि ॥७२६॥  
 त्या चि योनीमार्जी । जन्मती फिरून । जातां ते मरून । ऐशा रीती ॥७२७॥  
 किंवा आपुल्या च । गरळाच्या दाहें । सदा जळताहे । अंग ज्यांचें ॥७२८॥



ऐसे तयां सर्प । ठेवितों करून । बिळांत कोंडून । राहती जे ॥७२९॥  
 घेतला तो श्वास । मोडाया बाहेर । जेवढा साचार । वेळ लागे ॥७३०॥  
 तेवढा हि तयां । दुर्जनांसी साच । विसांवा नाही च । धनंजया ॥७३१॥  
 ऐशापरी गेले । जरी कल्प कोटि । तरी नाहीं मुक्ति । कुशांतून ॥७३२॥  
 ह्यापरी अधम । योनीमार्जीं जन्म । 'पेणें हें प्रथम । तयांचें गा ॥७३३॥  
 मग ह्याहून हि । आणिक 'दुर्गति । तुज सांगूं किती । धनंजया ॥७३४॥

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मानि जन्मानि ।

मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥२०॥

एक पावती ते । कैसी अधोगति । जोडोनि संपत्ति । आसुरी ही ॥७३५॥  
 मिळे व्याघ्रादिक । तमोयोनीमार्जीं । अल्प विश्रांती जी । देहाधारें ॥७३६॥  
 ती हि तयांची मी । घेतां हिरावून । तम चि होवोन । राहती ते ॥७३७॥  
 ज्याचा किळस । वाटे पातकातें । अंधार हि जेथें । काळवंडे ॥७३८॥  
 शीणातें हि शीण । ज्यातें पाहोन । जाय शिसारून । नरक हि ॥७३९॥  
 महाभयाचा हि । होय थरकांप । जेणें योगें ताप । तो हि 'पोळे ॥७४०॥  
 घाणीतें हि घाण । वाटे ऐसें स्थान । हीनाहून हीन । विश्वीं जें का ॥७४१॥  
 तें चि लाभे तयां । आसुरांतें देख । भोगोनि अनेक । 'तमोयोनी ॥७४२॥  
 ऐसी सांगूं जातां । आसुरांची कथा । वाचेसी सर्वथा । कष्ट होती ॥७४३॥  
 तयांचें स्मरण । करावया जाण । धजे ना हें मन । हटे मार्गें ॥७४४॥  
 हाय ! हाय ! मूर्ख । आसुर हे लोक । केवढे नरक । जोडिती गा ॥७४५॥  
 जेणें योगें ऐसा । घोर अधःपात । होतसे निभ्रांत । धनंजया ॥७४६॥  
 ती ही नेणों हीन । आसुरी संपत्ति । कां गा वाढविती । मतिमंद ! ॥७४७॥  
 परी अर्जुना तो । नको धरूं पंथ । आसुर हे जेथ । राहती गा ॥७४८॥  
 दंभादिक साही । दोष ज्यांठार्यां । वस्ती आले पाहीं । संपूर्णत्वे ॥७४९॥  
 तया आसुरांची । संगति नको च । हवें का हें साच । सांगावया ॥७५०॥

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।

कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥२१॥

काम-क्रोध-लोभ । त्रिकुटाचें बंड । तेथें तों उदंड । पाप पिके ॥७५१॥  
 सर्व दुःखांची हे । करविती भेट । दाखवोनि वाट । कोणासी हि ॥७५२॥  
 किंवा पातकांची । सभा च ही देख । दावाया नरक । पापियासी ॥७५३॥  
 नाहीं त्रिकुटें ह्या । व्यापिलें अंतर । तोंवरी च दूर । रौरव तो ॥७५४॥  
 पार्था तिघांची ह्या । घडतां संगति । अपायांची प्राप्ति । अनायासें ॥७५५॥  
 ह्या चि काम-क्रोध-लोभामुळें पाहीं । होतसे स्वस्ताई । यातनांची ॥७५६॥  
 वेगळी ती हानि । नसे ह्यांच्याहून । हानि च हे जाण । मूर्तिमंत ॥७५७॥  
 हीन नरकाचा । हा चि दारवंठा । बहु सांगूं आतां । काय तुज ॥७५८॥  
 काम-क्रोध-लोभ । त्रिवर्गीं साचार । वागती जे स्वैर । जीवेंभावे ॥७५९॥  
 तयां आसुरांतें । नरकीं च जाण । लाभतो सन्मान । धनंजया ॥७६०॥  
 म्हणोनियां काम-क्रोधादि दोषांची । त्रिपुटी जी साची । दुःखदायी ॥७६१॥  
 त्याज्य ती सर्वथा । ऐसें तुज पार्था । किती सांगूं आतां । वारंवार ॥७६२॥

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्धारैस्त्रिभिर्नरः ।

आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥२२॥

कामक्रोधादिक । दोष हे आघवे । सांडोनि रहावें । स्वस्थ जेव्हां ॥७६३॥  
 तेव्हां चि बोलावी । जोडयाची मात । चारी पुरुषार्थ । धर्मादिक ॥७६४॥  
 देखा काम-क्रोध-लोभाचें त्रिकूट । अंतरीं जागृत । जोंवरी हें ॥७६५॥  
 तोंवरी कल्याण । नाहीं च निभ्रांत । ऐसें रमाकांत । तो हि म्हणे ॥७६६॥  
 आत्म-विनाशाची । जया वाटे भीति । आत्म्यावरी प्रीति । जयाची गा ॥७६७॥  
 तयें सांडोनि हे । लोभ काम क्रोध । असावें सावध । निरंतर ॥७६८॥  
 बाहुबळें पोटीं । बांधोनि पाषाण । समुद्र तरोन । जावें जैसें ॥७६९॥  
 नातरी जीवन । लाभावें म्हणोन । टाकावें पिवोन । कालकूट ॥७७०॥  
 काम-क्रोध-लोभ । त्रिकूट हें जाण । तैसें चि कारण । विनाशासी ॥७७१॥  
 म्हणोनियां पार्था । निजान्तरांतून । ठाव चि पुसोन । टाकीं ह्याचा ॥७७२॥

तीन कड्यांची ही । बेडी पायांतील । तुटोनि जाईल । एकाएकीं ॥७७३॥  
 तेव्हां चि येईल । चालावया सुखें । राजमार्ग देखें । स्वहिताचा ॥७७४॥  
 देहातें 'त्रि-दोष । सांडोनियां जातां । आरोग्य सर्वथा । लाभे जैसें ॥७७५॥  
 किंवा जैसें चोर । चहाड 'शिनळ । ह्यांविण निर्मळ । गांव नांदे ॥७७६॥  
 नातरी अंतरीं । मिळे समाधान । त्रि-ताप निघोन । जातां जैसें ॥७७७॥  
 तैसे कामादिक । लोपतां साचार । जीवासी अपार । सुख होय ॥७७८॥  
 मोक्षमार्गीं मग । सज्जनांचा संग । लाभतसे चांग । तयालागीं ॥७७९॥  
 ह्यापरी सत्संग । लाभतां प्रबळ । मिळतां चि बळ । सच्छास्त्रांचें ॥७८०॥  
 तेणें योगें जाय । ओलांडूनि सार्चीं । जन्म-मरणाचीं । माळरानें ॥७८१॥  
 मग गुरु-कृपा-न रूपी जें 'पट्टण । सदा परिपूर्ण । आत्मानंदें ॥७८२॥  
 तया पट्टणीं तो । नित्य करी वास । श्रीगुरुचा दास । हेवोनियां ॥७८३॥  
 तेथें सर्वांमार्जीं । अत्यंत जी प्रिय । भेटे च ती माय । आत्मरूप ॥७८४॥  
 आत्मरूप माय । भेटतां तत्काळ । आटे हा जंजाळ । संसाराचा ॥७८५॥  
 ह्यापरी जो काम- । क्रोध-लोभांतून । मोकळा होवोन । राहे स्व-स्थ ॥७८६॥  
 तयासी च लाभे । एवढें गहन । आत्मप्राप्तिधन । धनंजया ॥७८७॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।

न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

असो नावडोनि । ऐसी आत्मप्राप्ति । कामादिकीं प्रीति । ठेवी जो का ॥७८८॥  
 सर्वां हिताहित । दाविता जो दीप । समान 'सकृप । जगामार्जीं ॥७८९॥  
 तया मायबाप । वेदाचा साचार । सर्वथा धिःकार । करी जो का ॥७९०॥  
 विधिनिषेधाची । धरी ना जो भीड । जया नाहीं चाड । स्वहिताची ॥७९१॥  
 ऐसें माजवोनि । विषयांचें बंड । पुरवी जो लाड । इंद्रियांचे ॥७९२॥  
 काम-क्रोध-लोभां । मानोनि दैवत । पाळिली शपथ । मोडी ना जो ॥७९३॥  
 मग स्वैर/चार । हें चि महावन । तेथें पदार्पण । करी जो का ॥७९४॥  
 तया आत्मचोरा । मुक्तेची वार्ता । स्वर्गीं हि सर्वथा । ऐकूं ये ना ॥७९५॥

तया पर-लोकीं । सद्गति नाहीं च । हें तों असे साच । धनंजया ॥७९६॥  
 परी ऐहिक हि । भोगतो त्यास । सुखें भोगायास । सांपडे ना ॥७९७॥  
 कोळ्यांचिया जाती-। मारीं शिरूं पाहे । माशांचिया मोहें । ब्राह्मण जो ॥७९८॥  
 तयामी तेथें हि । पाखंडी म्हणोन । दूर घालवोन । देती जैसें ॥७९९॥  
 तैमें विषयांतें । भुलोनि ऐहिक । जेणें परलोक । लाथाडिला ॥८००॥  
 तया ऐहिक हि । भोग तो कोठून । टाकितां गिळून । यमराजें ॥८०१॥  
 एवं परलोक । नाहीं तया स्वर्ग । ऐहिक जो भोग । तो हि नाहीं ॥८०२॥  
 मग मोक्षाचें तों । नांव हि त्यास । नको ध्यावयास । धनंजया ॥८०३॥  
 कामाचिया बळें । म्हणोनि जो देख । भोगूं पाहे सुख । विषयांचें ॥८०४॥  
 तया भोग स्वर्ग । मिळे ना साचार । होय ना उद्धार । तयाचा गा ॥८०५॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।

ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहाहंसि ॥२४॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णाजुनसंवादे देवासुरसंपद्विभागयोगो नाम

षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

म्हणोनियां वाटे । स्व-हित तें व्हावें । तरी नोलांडावें । वेदाज्ञेतें ॥८०६॥  
 स्वभावे ती साध्वी । साधी आत्महिता । पतीचिया व्रता । आदरोनि ॥८०७॥  
 नातरी पाळोन । श्रीगुरु - वचन । गांठी आत्मधन । शिष्य जैसा ॥८०८॥  
 असो निजठेवा । जरी हातीं यावा । तरी पुढें दिवा । करावा गा ॥८०९॥  
 तैसे जरी पार्था । चारी पुरुषार्थ । साधावे यथार्थ । ऐसें वाटे ॥८१०॥  
 तरी तेणें श्रुति-। स्मृतीतें मानोन । करावें पालन । तदाज्ञेचें ॥८११॥  
 शास्त्र जें सांगेल । सोडावें म्हणोनि । राज्य हि तें मानीं । तृणाऐसें ॥८१२॥  
 तेविं विषातें हि । मानूं नको वैरी । ध्यावें ऐसें जरी । म्हणे शास्त्र ॥८१३॥  
 ऐसा वेदीं होय । एकनिष्ठ भाव । तरी कोठें ठाव । अहितासी ॥८१४॥  
 अहितापासोन । करोनि रक्षण । देवोनि कल्याण । पोषिते जी ॥८१५॥

ऐसी धनंजया । दुजी माता कोण । अमे श्रुतीहून । जगालागीं ॥८१६॥  
 म्हणोनियां ऐमी । माय जी पांडवा । मेळविते जीवा । परब्रह्मीं ॥८१७॥  
 तिज अन्हेरोनि । न जावें कुणी हि । भजावी ती तूं हि । विशेषत्वे ॥८१८॥  
 स्वधर्माचरण । सर्वथा मानोन । बळ-संपादन । करोनियां ॥८१९॥  
 सत्य सत्य येथें । जन्मलासी पार्था । शास्त्रां सार्थकता । आणावया ॥८२०॥  
 धर्मानुज ऐमें । नांव हें सहज । ओघें आलें तुज । धनंजया ॥८२१॥  
 म्हणोनि त्वां येथें । विशेषेकरोन । धर्मातें सांडोन । वर्तीवें ना ॥८२२॥  
 आणि कार्याकार्य- विवेकीं तूं जाण । शास्त्र तें प्रमाण । मानावें गा ॥८२३॥  
 अकार्य तें पार्था । सर्वथा वाईट । म्हणोनि तें येथ । नाचरावें ॥८२४॥  
 स्वयें सत्कार्याचा । करावा आचार । भावें पुरस्कार । करोनियां ॥८२५॥  
 आज तुझ्या हातीं । विश्व-प्रामाण्याची । मुद्रा असे साची । बुद्धिमंता ॥८२६॥  
 म्हणोनि त्रिवार । अर्जुना तूं होमी । लोकसंग्रहासी । पात्र जगीं ॥८२७॥  
 ह्यापरी आसुरी । दोषांचें लक्षण । देवें परिपूर्ण । विवरोनि ॥८२८॥  
 तयां दोषांतून । कैमें व्हावें मुक्त । तें हि सर्व येथ । सांगितलें ॥८२९॥  
 देवामी पुमेल । पार्थ धनुर्धर । आतां सद्विचार । अंतरींचा ॥८३०॥  
 तुम्हां संतजनां । ऐमी विनवणी । एकावा तो कार्नी । चैतन्याच्या ॥८३१॥  
 धृतराष्ट्रालागीं । व्यामाज्ञेनुसार । संजयें साचार । सांगितलें ॥८३२॥  
 तैमें मी हि तुम्हां । संतांमी सांगेन । प्रसादेकरोन । श्रीगुरूच्या ॥८३३॥  
 तुम्हां संतांचिया । कृपेचा वर्षाव । होईल सदैव । मजवरी ॥८३४॥  
 तरी संतोषून । डोलवाल मान । एवढा होईन । व्याख्याता मी ॥८३५॥  
 घावें अवधान -। रूपी कृपादान । गोड ही मानोन । सेवा माझी ॥८३६॥  
 होईन सनाथ । मग सर्वथैव । म्हणे ज्ञानदेव । निवृत्तीचा ॥८३७॥

इति श्रीस्वामी स्वरूपानंदविरचित श्रीमत् अभंग-ज्ञानेश्वरी  
 पौडशोऽध्यायः ।

हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः । श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय सतरावा

विश्वाचा पसारा । दाखविते स्पष्ट । ज्या तुझी अव्यक्त । योगनिद्रा ॥१॥  
त्या तुज श्रीगुरु— गणेशालागोन । करितां वंदन । भक्तिभावे ॥२॥  
सत्त्वादि त्रिगुण— \*त्रिपुरीं वेढिला । 'दुर्गा' अडकला । जीवत्वाच्या ॥३॥  
तया आत्मशंभू— लागीं लाधे मुक्ति । होतां तुझी स्मृति । गणाधीशा ॥४॥  
म्हणोनि गुरुत्वे । तोळूं जातां साच । थोर होसी तूं च । शंभूहून ॥५॥  
तरी मुमुक्षुंसी । मायाजळांतून । 'लघुत्वे'करोन । तारिसी तूं ॥६॥  
तयां वक्रतुण्ड । भाससी तूं पूर्ण । नाहीं तुझे ज्ञान । जयां मूढां ॥७॥  
परी ज्ञानियांसी । नित्य निरंतर । सरळ साचार । मन्मुख तूं ॥८॥  
सद्गुरु—गणेशा । जरी तुझे सान । दिसती लोचन । पाहूं जातां ॥९॥  
तरी कौतुकें ते । मिटोनियां घेसी । तेव्हां प्रकटिसी । विश्व सारें ॥१०॥  
मग जगद्भास । 'हार'विसी तूं च । उघडोनि साच । निज—नेत्र ॥११॥  
प्रवृत्ति हा कान । हालवितां तेथ । मंद सुगंधित । सुटे वायु ॥१२॥  
तयातें भुलोण । जीव—भृंग—पंक्ति । येवोनि बैसती । गंडस्थळीं ॥१३॥  
तेव्हां जणूं नील— कमलांनीं भला । जासी तूं पूजिला । ऐसें वाटे ॥१४॥  
मग हालतां च । निवृत्ति हा कान । पूजा—विसर्जन । होय जेव्हां ॥१५॥  
तेव्हां तूं आपुलें । मोकळें शरीर । हा चि अलंकार । मिरविसी ॥१६॥  
माया—अर्धांगीच्या । नृत्याचा 'विलास' । ऐसा जो हा भास । जगदूपी ॥१७॥

\*परिशिष्ट पाहा. १ किल्ल्यांत. २ हलकेपणानें; (तरंगण्याच्या गुणानें) ३ नाहीसा करतोस. ४ खेळ.

दाविसी तो देवा । कौशल्यें करोन । पाय नाचवोन । आपुला तूं ॥१८॥  
 असो काय सांगूं । विस्मय दातारा । होसी तूं सोयरा । जयाचा गा ॥१९॥  
 तथाचा हिरोन । घेमी द्वैत-भाव । देवोनियां ठाव । निज-पदीं ॥२०॥  
 भव-बंधनाचें । मूळ जें अज्ञान । टाकिसी फेडोन । म्हणोनियां ॥२१॥  
 जगद्वधु ऐसें । जें का नांव तुझे । यथार्थ तें साजे । तुजलागीं ॥२२॥  
 आपुला आत्मा च । ऐसें तुज मानी । भाविक जो कोणी । देवराया ॥२३॥  
 देहा हि सकट । होय तो त्वद्रूप । द्वैत आपोआप । लोपोनियां ॥२४॥  
 परी दुजाभाव । ठेवोनियां मनीं । इच्छिती जे कोणी । तुझी प्राप्ति ॥२५॥  
 त्यांलागीं व्यर्थ । साधनांचे कष्ट । नाहीं तुझी भेट । कदाकार्ळीं ॥२६॥  
 किंवा तुझे ध्यान । करूं पाहे कोणी । वेगळा कल्पोनि । तुजलागीं ॥२७॥  
 तरी होसी ना तूं । ध्यानाचा विषय । म्हणोनि तें होय । ध्यान वृथा ॥२८॥  
 परी ऐक्यबोधें । विस्मरे जो ध्यान । तथावरी पूर्ण । प्रेम तुझे ॥२९॥  
 नित्य निरंतर । सावध असोन । ज्ञानाचें हि भान । नाहीं जया ॥३०॥  
 तो चि खरा ज्ञाता । तुज वर्णू जातां । वेद हि तत्त्वतां । मुके झाले ॥३१॥  
 मौन हें चि देवा । तुझे राशिनांव । आतां स्तोत्रीं हांव । धरूं कोठें ॥३२॥  
 दिसे जें जें रूप । ती ती तुझी माया । तुज देवराया । भजूं केवीं ॥३३॥  
 व्हावें तुझे दास । ऐसें म्हणूं तरी । तो हि एके परी । द्रोह तुझा ॥३४॥  
 सेव्य-सेवक हा । दास्यत्वीं संबंध । जडोनि अभेद-भाव लोपे ॥३५॥  
 म्हणोनि मी आतां । अहंता सांडोन । सर्वथा विलीन । तुझ्या ठायीं ॥३६॥  
 तुज अद्रयातें । तेव्हां चि पावावें । सांडोनि रहावें । सर्व भेद ॥३७॥  
 हें तुझे इंगित । जाणें मी यथार्थ । तूं माझे दैवत । गुरुनाथा ॥३८॥  
 ज्यापरी लवण । वेगळें नुरोन । गेलें मिसळोन । जळामार्जी ॥३९॥  
 त्या परी साचार । माझा नमस्कार । काय सांगूं फार । गुरुराया ॥४०॥  
 आतां रिता कुंभ । सागरीं रिघोन । उदकें भरोन । निघे जैसा ॥४१॥  
 किंवा जैसी वात । दीपाचें स्वरूप । पावे आपोआप । दीपसंगें ॥४२॥

तैसैं तुजलागीं । करोनि वंदन । जाहलों मी पूर्ण । गुरु-देवा ॥४३॥  
 तुझ्या कृपें आतां । गीतेचा भावार्थ । सांगेन मी येथ । विवरोनि ॥४४॥  
 तरी सोळाविया । अध्यायाशेवटीं । सांगे 'जगजेठी । सिद्धान्त हा ॥४५॥  
 कीं तें कार्याकार्य । कळावया जाण । शास्त्र चि प्रमाण । सर्वथैष ॥४६॥  
 देवाचें निश्चित । ऐकोनि तें मत । मनीं म्हणे पार्थ । तिये वेळीं ॥४७॥  
 नाचरावें कर्म । शास्त्राधाराविण । ऐसें हें बंधन । कासयासी ? ॥४८॥  
 तरी \*तक्षकाच्या । फणींतील मणी । सहजें काढोनि । कैसा घ्यावा ? ॥४९॥  
 आणि सिंहाच्या । नाकपुडींतील । केंस तो येईल । कैसा हाता ? ॥५०॥  
 मग तयामार्जी । मणि तो ओवून । घालावें भूषण । केविं कंठीं ? ॥५१॥  
 जरी घडे ना हें । तरी तो आपुला । ठेवावा का गळा । मोकळा च ! ॥५२॥  
 तैसैं शास्त्रजात । पाहोनि समस्त । कैसें एकमत । आकळावें ? ॥५३॥  
 आकळलें तरी । तयाचा आचार । घडावा साचार । कैसा येथें ? ॥५४॥  
 आणि पाहूं जातां । आयुष्य हि थोडें । शोधाया एवढें । शास्त्रजात ॥५५॥  
 शास्त्राचा अभ्यास । सामुग्रीचें बळ । स्थळ आणि काळ । तीं हि योग्य ॥५६॥  
 जुळोनि ह्या चारी । साधनांचा 'योग । कर्म यथासाङ्ग । व्हावें जरी ॥५७॥  
 तरी सर्वासी च । साधनांची ऐसी । संपन्नता कैसी । लाभूं शके ? ॥५८॥  
 म्हणोनि शास्त्रोक्त । घडणें वर्तन । ह्या परी कठिण । होय जरी ॥५९॥  
 तरी भोळेभाळे । मुमुक्षू जे होती । तयांलागीं गति । काय येथें ? ॥६०॥  
 हा चि अभिप्राय । धरोनि मानसीं । पार्थ श्रीहरीसी । पुमेल जें ॥६१॥  
 तो हा सतराविया । अध्यायाचा होय । सर्वथा विषय । ऐसें जाणा ॥६२॥  
 विषयांच्या ठायीं । जो का 'तृष्णाहीन । सर्व हि प्रवीण । कलांमार्जी ॥६३॥  
 अर्जुनस्वरूपी । जणूं दुजा कृष्ण । ज्याचें आकर्षण । कृष्णासी हि ॥६४॥  
 होय जो भूषण । सोमवंशालागीं । आधार जो जर्गी । शूरत्वासी ॥६५॥  
 पर-उपकारें । जगा सुख द्यावें । होय ही स्वभावे । क्रीडा ज्याची ॥६६॥  
 सर्व सुखें ज्यासी । स्वभावतां प्राप्त । असे प्रिय 'कांत । 'प्रज्ञेचा जो ॥६७॥



ब्रह्मविद्या जेथें । आली विश्रांतीसी । जो का श्रीहरीसी । जीव-प्राण ॥६८॥

अर्जुन उवाच -

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।

तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः ॥१॥

तो 'पृथा-नंदन । म्हणे घनश्यामा । पूर्ण परब्रह्मा । यादवेंद्रा ॥६९॥  
 आपुलें वचन । ठसलें अंतरीं । अमे एक परी । आशंका ती ॥७०॥  
 प्राणियासी येथें । शास्त्रज्ञानाविण । मोक्षाचें साधन । दुजें नाहीं ॥७१॥  
 'एकपक्षी ऐसें । बोलसी का येथें । सर्वथा शास्त्रातें । गौरवोनि ॥७२॥  
 योग्य स्थळ काळ । जयांपाशीं नाहीं । शिकविता तो हि । दूर राहे ॥७३॥  
 अभ्यासीं पोषक । मामुग्री सकळ । ती हि अनुकूल । नाहीं जयां ॥७४॥  
 पूर्वकर्म तें हि । जयां प्रतिकूल । बुद्धीचें हि बळ । अति अल्प ॥७५॥  
 म्हणोनियां शास्त्र-। विद्या-संपादन । सर्वथा खुंटोन । गेलें ज्यांचें ॥७६॥  
 काय सांगूं फार । ह्यापरी साचार । उरे ना आधार । शास्त्राभ्यासीं ॥७७॥  
 म्हणोनि जे कोणी । सोडोनि तो पंथ । राहिले निवांत । न बोलतां ॥७८॥  
 परी शास्त्राधारें । करोनि विचार । 'विहित आचार । पाळोनियां ॥७९॥  
 इहलोकीं ऐसें । करोनि वर्तन । 'परत्र-साधन । केलें ज्यांनीं ॥८०॥  
 तयां सारिखें च । आपण हि व्हावें । ऐसें जीवेंभावें । इच्छोनियां ॥८१॥  
 आपण हि तैसें । करिती वर्तन । मानोनि प्रमाण । तयांलागीं ॥८२॥  
 अक्षरें पाहोन । बाळ लिही तैसीं । दाखविलीं जैसीं । पंतोजीनें ॥८३॥  
 किंवा डोळसाचा । धरोनियां हात । तयामागें जात । अंध जैसा ॥८४॥  
 तैसें सर्वशास्त्रीं । झाले जे प्रवीण । तयांचें वर्तन । पाहोनियां ॥८५॥  
 आपण हि तैसा । करिती आचार । ठेवोनि साचार । निश्च तैथें ॥८६॥  
 मग शंकरादि । देवता-पूजन । करिती यजन । अभिहोत्र ॥८७॥  
 भूम्यादिक दानें । देती भक्तिभावें । जरी नाहीं ठावें । शास्त्र तयां ॥८८॥  
 तया मुमुक्षुंस । सत्त्व-रज-तमा-। मार्जी पुरुषोत्तमा । गति कोण ॥८९॥

अर्जुनाची ऐसी । ऐकोनि आशंका । जो का भक्तसखा । परब्रह्म ॥९०॥  
 जो का वेदरूपी । पद्माचा पराग । ईश जो श्रीरंग । वैकुण्ठीचा ॥९१॥  
 सर्व विश्वासी ह्या । जीववी जी माया । ती तों अंगच्छाया । होय ज्याची ॥९२॥  
 'आनंदघनत्व । प्रौढत्व गूढत्व । काळप्रबळत्व । स्वाभाविक ॥९३॥  
 अद्रयत्व आणि । अलौकिकपणा । महत्त्व ह्या गुणां । जेणें बळें ॥९४॥  
 तें बळ संपूर्ण । जयाचिया अंगीं । तो चि पार्था लागीं । स्वयें बोले ॥९५॥

श्रीभगवानुवाच -

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।

सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥२॥

म्हणे पार्था जाणूं । तुझी तळमळ । शास्त्राभ्यासीं बळ । नाहीं ज्यां ॥९६॥  
 तयां नाहीं काय । श्रद्धेनें च मुक्ति । कां गा आडकाठी । शास्त्रांची ही ॥९७॥  
 ऐसी जरी घेसी । आशंका साचार । तरी परिहार । ऐक आतां ॥९८॥  
 पाहसी केवळ । बाळगोनि श्रद्धा । जरी मोक्ष-पदा । गांठायसी ॥९९॥  
 तरी प्रज्ञावंता । तुज गमे तैसें । सोपें तें हि नसे । साधन गा ॥१००॥  
 श्रद्धा ती हि जरी । शुद्ध सत्त्वगुणी । तरी च निदानीं । मोक्षलाभ ॥१०१॥  
 म्हणोनि ती लागे । चोखाळवी चांग । नाहीं कार्यभाग । एन्हवीं तो ॥१०२॥  
 जैसें अंत्यजाच्या । संगतीं राहोन । येई भ्रष्टपण । द्विजासी हि ॥१०३॥  
 गंगोदक परी । मद्यपार्त्रीं आलें । निषिद्ध मानिलें । सेवाया तें ॥१०४॥  
 शीतल चंदन । परी अग्नीसंगें । तें हि जाळूं लागे । एकाएकीं ॥१०५॥  
 शुद्ध सोनियाचा । हीणार्शीं संयोग । होय तरी भंग । शुचित्वाचा ॥१०६॥  
 शुद्ध तें म्हणोन । मग जरी घ्यावें । तरी तें स्वभावं । नागवील ॥१०७॥  
 तैसी श्रद्धा मूर्ळीं । जरी असे शुद्ध । होतसे अशुद्ध । जीव-संगें ॥१०८॥  
 जीव तरी होती । स्वभावं त्रिविध । त्रिगुणीं संबद्ध । मायायोगें ॥१०९॥  
 तशांत हि दोन्ही । होवोनि दुर्बल । एकाचें चि बळ । वाढे जेव्हां ॥११०॥  
 तेव्हां जीवांचिया । अंतरीं तैशाच । पार्था वृत्ति माच । उद्भवती ॥१११॥

मग तथा वृत्ती-। सारिखे अमूप । रचिती संकल्प । स्वभावे ते ॥११२॥  
 संकल्पानुसार । करिती ते कर्म । आणि देवधर्म । आचरिती ॥११३॥  
 संपतां आयुष्य । मग निःसंदेह । कर्म तैसा देह । घेती पुन्हां ॥११४॥  
 बीजांतूनि झाड । होतसे स्वभावे । झाड ते सामावे । पुन्हां बीजीं ॥११५॥  
 पार्था ऐशा रीती । कल्प कोटी जाती । परी राहे जाति । जैसी तैसी ॥११६॥  
 तैसीं जन्मांतरें । जीवांचीं साचार । जरी तीं अपार । होती जाती ॥११७॥  
 तरी सत्त्व - रज - । तमोवृत्ति साच । राहते तैसी च । तयांची ती ॥११८॥  
 म्हणोनि जीवांची । श्रद्धा हि साचार । त्रिगुणानुसार । त्रिधा होय ॥११९॥  
 यदाकदा वाढे । शुद्धसत्त्वगुण । तदा ओढे मन । ज्ञानाकडे ॥१२०॥  
 परी तयापार्शीं । रज तम दोन्ही । विरोधी म्हणोनि । वागती ते ॥१२१॥  
 सत्त्वाचा आश्रय । घेवोनियां श्रद्धा । जंव मोक्षपदा । रिघूं पाहे ॥१२२॥  
 तंव रज-तमां । राहवे ना स्वस्थ । माजविती प्रस्थ । आपुलें ते ॥१२३॥  
 सत्त्वाचें सामर्थ्य । नाहीसें करोन । वाढे रजोगुण । बळें जेव्हां ॥१२४॥  
 तेव्हां ती च श्रद्धा । जीवासी संतत । गुंतवी फेऱ्यांत । कर्माचिया ॥१२५॥  
 तमाचा विस्तव । भडकतां मग । श्रद्धेचा हि भाग । तैसा होय ॥१२६॥  
 निषिद्ध भोगांचें । करावें सेवन । ऐसें इच्छी मन । तिये वेळीं ॥१२७॥

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥३॥

ऐसी सत्त्व-रज-। तमाविरहित । श्रद्धा नाही येथ । जीवमात्रीं ॥१२८॥  
 म्हणोनि स्वभावे । सत्त्वरजादिक । त्रिगुणीं ही देख । नटे कैसी ॥१२९॥  
 उदक ते जैसें । स्वभावतां जाण । होतसे कारण । जीवनासी ॥१३०॥  
 परी विषामार्जीं । जातां मिसळोन । घातासी कारण । ते चि होय ॥१३१॥  
 ते चि मिऱ्यामार्जीं । होतसे तिखट । सर्वथा स्वादिष्ट । उसामार्जीं ॥१३२॥  
 तैसी तमोगुणी । जीवाचिया ठायीं । श्रद्धा ती हि होई । तमोमय ॥१३३॥  
 ज्यापरी काजळ । आणि शाई देख । सर्वथा तीं एक । धनंजया ॥१३४॥

तैसी तामसी ती । श्रद्धा नाहीं भिन्न । तमोगुणाहून । जाण ऐसें ॥१३५॥  
 तेविं रजोगुणी । जीव जरी होय । तरी रजोमय । श्रद्धा त्याची ॥१३६॥  
 आणि होय कोणी । सत्त्वगुणी साच । तेथें सत्त्वाची च । आघवी ती ॥१३७॥  
 ऐशापरी पार्था । जग हें सकळ । ओतलें केवळ । श्रद्धेचें च ॥१३८॥  
 परी ती हि श्रद्धा । त्रिविध तूं जाण । गुणत्रयाधीन । प्राणिमात्रीं ॥१३९॥  
 बोलण्यावरून । जाणूं येतें मन । फुलातें पाहोन । कळे झाड ॥१४०॥  
 किंवा देखोनियां । सुखदुःखभोग । ओळखूं ये चांग । पूर्वकर्म ॥१४१॥  
 तैसीं श्रद्धेचीं जीं । सत्त्वादिक तिन्ही । रूपें ज्या ज्या चिन्हीं । जाणूं येती ॥१४२॥  
 तीं च ऐक आतां । लक्षणें साचार । सांगूं सविस्तर । कुंतिसुता ॥१४३॥

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः ।

प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥४॥

सात्त्विक ती श्रद्धा । ज्यांचिया ठायां । वांछिती ते प्रायः । स्वर्गलोक ॥१४४॥  
 विद्या-अध्ययन । करोनि संपूर्ण । होती ते प्रवीण । यज्ञकर्मीं ॥१४५॥  
 काय सांगूं फार । तयां सात्त्विकांस । घडतसे वास । देवलोकीं ॥१४६॥  
 राजसी ती श्रद्धा । होय ज्यांपासीं । यक्षराक्षसांसी । भजती ते ॥१४७॥  
 आणि नाना जीवां । देवोनियां बळी । मध्यरात्र-काळीं । स्मशानांत ॥१४८॥  
 संध वेताळ । प्रेतादि सकळ । अमंगळ कुळ । पूजिती जे ॥१४९॥  
 तामसी श्रद्धेचें । जणूं ते माहेर । ओतले साचार । तमाचे च ॥१५०॥  
 ऐशापरी तिन्ही । लक्षणीं संयुक्त । त्रिविध ही होत । श्रद्धा जर्गी ॥१५१॥  
 सर्वथा सांडोन । विरोधी त्या दोन । करावी जतन । सात्त्विक ती ॥१५२॥  
 त्रिविध श्रद्धेचें । येथ पार्था जाण । केले विवरण । ह्या चि सार्ठीं ॥१५३॥  
 सात्त्विक बुद्धीचें । करी जोपासन । कैवल्य कठिण । नाहीं तया ॥१५४॥  
 ब्रह्मसूत्राचा तो । न करो अभ्यास । न कळो तयास । वेदशास्त्र ॥१५५॥  
 स्वयंप्रज्ञेनें जे । स्थापिले सिद्धांत । पार्था ते नसोत । तयाहार्तीं ॥१५६॥  
 परी होती वेद- । स्मृतींची जे मूर्ति । सर्वथा वागती । सदाचारें ॥१५७॥

१ पूर्वोक्त्या जन्मांतिल पापपुण्य. २ बहुधा. ३ पिशान्चें. ४ पोषण; वाढ. ५ स्वतःच्या बुद्धीनें.

तयां श्रेष्ठांचें तें । पाहोनि वर्तन । तैसें चि आपण । वर्ते जो का ॥१५८॥  
 तया श्रद्धावंता । लाभे तें चि फळ । अर्जुना प्रवळ । सत्त्वगुणें ॥१५९॥  
 सायासें प्रदीप । ठेविला लावोनि । तेथें दुजा कोणी । लावूं बैसे ॥१६०॥  
 तरी तयातें हि । तैसें चि तें तेज । लाभतें सहज । अनायासें ॥१६१॥  
 किंवा कोणी धन । अपार वेंचोन । बांधिलें भुवन । मनोरम ॥१६२॥  
 मग प्रवासी हि । करो तेथें वस्ति । सुख तयाप्रति । लाभे जैसें ॥१६३॥  
 नातरी जो कोणी । तळें बांधी साच । काय तयाची च । तृषा भागे ? ॥१६४॥  
 स्वयंपाक्यासी च । घरीं मिळे अन्न । काय उपोषण । आणिकांसी ? ॥१६५॥  
 बहु बोलूं काय । गोदावरी साच । \*गौतमालागीं च । उद्धरी का ? ॥१६६॥  
 इतरांसी क्षुद्र । वहाळ होवोन । करी ना पावन । ऐसें आहे ? ॥१६७॥  
 म्हणोनियां जो का । शास्त्राज्ञेनुसार । करी सदाचार । जाणपणें ॥१६८॥  
 तया ज्ञानियासी । भावें जो शरण । जातसे तरोन । मूढ तो हि ॥१६९॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।

दम्भाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥५॥

परी शास्त्राभ्यास । नेणती साचार । ठेविती जे दूर । ज्ञानियांसी ॥१७०॥  
 थोर सज्जनांचें । पाहोनि वर्तन । तयां वेडावून । दाविती जे ॥१७१॥  
 पिद्योनियां टाळी । जे का निरंतर । करिती धिःकार । पंडितांचा ॥१७२॥  
 मग आपुली च । मिरविती प्रौढी । उभारोनि गुढी । वैभवाची ॥१७३॥  
 तेविं आचरिती । तपश्चर्या घोर । करोनि स्वीकार । पाखांडाचा ॥१७४॥  
 आपुलें आणिक । इतरांचें तेथ । शस्त्रें मांस-रक्त । काढोनियां ॥१७५॥  
 तेणें यज्ञपात्रें । भरोनि समस्त । पेटत्या आर्गांत । ओतिते ते ॥१७६॥  
 चैड्याचिया तोंडीं । लाविती तें रक्त । करोनियां घात । बाळकांचा ॥१७७॥  
 म्हसोबादि नाना । दैवतें मानोन । बहारीं तीं प्रसन्न । म्हणोनियां ॥१७८॥  
 सप्तदिन अन्न । सर्वथा वर्जून । घोर अनुष्ठान । आरंभिती ॥१७९॥  
 साहोनियां ऐसे । नाना देहदंड । आणिकां उदंड । पीडा देती ॥१८०॥

तमोरूप क्षेत्रीं । पेरिती हें बीज । पीक हि सहज । तें चि घेती ॥१८१॥  
 नाही आपुलिया । बाहूमाजीं बळ । तरावया जळ । सागराचें ॥१८२॥  
 आणि नावेचा हि । करी ना आश्रय । तरी त्याची होय । गति जैसी ॥१८३॥  
 नातरी मानोन । वैद्यालागीं वैरी । पायें दूर सारी । औषधातें ॥१८४॥  
 तया रोगियासी । यातना दारुण । भोगण्यावांचोन । गति नाही ॥१८५॥  
 साहवे ना दृष्टि । दुजाची म्हणोन । टाकी जो काढोन । निज-नेत्र ॥१८६॥  
 तया अंधालागीं । चार भिंती आंत । राहणें निभ्रांत । घडे जैसें ॥१८७॥  
 तैसी होय तयां । आसुरांची स्थिति । मोहें जे धांवती । भवारण्यां ॥१८८॥  
 सोडोनि सन्मार्ग । वागती ते स्वैर । निंदोनि साचार । वेदशास्त्रें ॥१८९॥  
 तयां कामक्रोध । सांगतील साच । सर्वथा तैसें च । वागती ते ॥१९०॥  
 काय सांगूं मातें । टाकिती पुरून । घालोनि पाषाण । दुःस्वरूप ॥१९१॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।

मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्निध्यासुरनिश्चयान् ॥ ६ ॥

ऐशापरी पीडा । आपुल्या देहासी । किंवा आणिकांसी । देती जी जी ॥१९२॥  
 तो तो सर्व शीण । मज आत्म्यासी च । जाण ऐसे साच । धनंजया ॥१९३॥  
 तया पापियांचें । नांव उच्चारून । वाचेमी मलिन । करूं नये ॥१९४॥  
 परी सर्वथा ते । त्यजावे निभ्रांत । ह्या चि साठीं येथ । बोलिलों हें ॥१९५॥  
 जैसें प्रेतालागीं । शिवावे लागे च । काढावया साच । बाहेरी तें ॥१९६॥  
 किंवा अंत्यजाशीं । दूर हो म्हणोन । करावे भाषण । लागे जैसें ॥१९७॥  
 हस्तें लागे मळ । टाकावा धुवोन । करायालागोन । देहशुद्धि ॥१९८॥  
 शुद्धीसाठीं झाला । अमंगळ-स्पर्श । तरी त्याचा दोष । मानूं नये ॥१९९॥  
 तैसें पापियांतें । त्यजावे म्हणोन । केलें विवरण । विस्तारें हें ॥२००॥  
 देखतां चि पार्था । ऐसे पापीजन । करावे स्मरण । तुवां माझे ॥२०१॥  
 नाही च निभ्रांत । दुजे प्रायश्चित्त । येथें दोषमुक्त । व्हावयासी ॥२०२॥  
 म्हणोनि सात्त्विक । श्रद्धा सर्वा परी । ठेवावी अंतरीं । जपोनियां ॥२०३॥

पार्था जेणें योगें । वाढे सत्त्ववृत्ति । ऐसी च संगति । धरावी गा ॥२०४॥  
 सत्त्वाचा उत्कर्ष । होईल साचार । ऐसा चि आहार । स्वीकारावा ॥२०५॥  
 स्वीकारावा जैसा । आहार आपण । तैसी च घडण । स्वभावाची ॥२०६॥  
 स्वभावाची वाढ । व्हावया कारण । आहार चि जाण । प्रमुखत्वे ॥२०७॥  
 सावध हि परि । करी सुरा-पान । तरी तो झिंगोन । जाय जैसा ॥२०८॥  
 ना तरी अमृत । सेवितां निभ्रांत । अमरता प्राप्त । होय जैसी ॥२०९॥  
 किंवा जैसें विष । करावें प्राशन । तरी आमंत्रण । मृत्यूसी तें ॥२१०॥  
 भलतैसें अन्न । सेवितां स्वच्छंदें । जैसी देहा बाधे । वात-व्याधि ॥२११॥  
 किंवा दाहक तें । जाळितें देहातें । तेवि शांतवितें । पथ्यादिक ॥२१२॥  
 तैसा होय सप्त-धातूंचा आकार । आहारानुसार । देहमात्री ॥२१३॥  
 मग जैसी धातु । तैसा सर्वथैव । पोसतसे भाव । अंतरींचा ॥२१४॥  
 तप्त होतां पात्र । आंतील जें तोय । तें हि जैसें जाय । तापोनियां ॥२१५॥  
 तैसी धातूचिया । अनुरोधें जाण । होतसे घडण । स्वभावाची ॥२१६॥  
 म्हणोनि सात्त्विक । सेवितां तो रस । पावते उत्कर्ष । सत्त्ववृत्ति ॥२१७॥  
 अन्य जो आहार । सेवितां तो जाण । रजतमोगुण । वाढती गा ॥२१८॥  
 आतां सांगूं ऐक । आहार सात्त्विक । रजतमात्मक । तो हि सांगूं ॥२१९॥

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ।

यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु ॥ ७ ॥

तरी कैसे झाले । प्रकार हे तीन । रोकडें दावीन । तें हि येथें ॥२२०॥  
 अर्जुना भोक्त्याची । जैसी रुचि होय । तैसें केलें जाय । अन्न तें हि ॥२२१॥  
 आणि पाहूं जातां । जर्गी जीव भोक्ता । स्वाधीन सर्वथा । त्रिगुणांच्या ॥२२२॥  
 कर्ता भोक्ता जीव । त्रि-विधता पावे । होवोनि स्वभावे । गुणाधीन ॥२२३॥  
 म्हणोनि त्याचा । कर्म-व्यवहार । तो हि त्रि-प्रकार । धनंजया ॥२२४॥  
 त्रिविध आहार । यज्ञादि व्यापार । त्रिविध साचार । तपदान ॥२२५॥  
 तरी आतां ऐक । सांगूं विवरून । त्रिविध लक्षण । आहाराचें ॥२२६॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥८॥

भोक्त्याचिया ठायीं । सुदैवेंकरोन । जेव्हां सत्त्वगुण । वृद्धि पावे ॥२२७॥  
 तेव्हां तयालागीं । आवडे आहार । स्वभावे साचार । मधुर जो ॥२२८॥  
 स्वभावे रसाळ । पदार्थ जे गोड । स्वभावे जे 'स्निग्ध । परिपक्व ॥२२९॥  
 पाहतां सुंदर । जयांचा आकार । अति हळुवार । स्पर्शासी जे ॥२३०॥  
 जिह्वेलागीं तरी । स्नेहाळ स्वादिष्ट । रसाळ अवीट । गोडी ज्यांची ॥२३१॥  
 जळोनि कडक । नाहीत जे झाले । होती मऊ भले । द्रवयुक्त ॥२३२॥  
 जैसी गुरुखूण । दिसावया सान । परी 'हरी' शीण । संसाराचा ॥२३३॥  
 दिसावया तैसे । अल्प चि साचार । परी जे अपार । तृप्ति देती ॥२३४॥  
 ऐसे सुमधुर । रसाळ रुचिर । आणि हितकर । परिणामीं ॥२३५॥  
 पदार्थ ते जाण । स्वभावेकरोन । सात्त्विकांलागोन । आवडती ॥२३६॥  
 आयुष्य-वर्धन । करी निरंतर । सात्त्विक आहार । ऐसा पार्था ॥२३७॥  
 सात्त्विक आहार । हा चि कोणी मेघ । वृष्टि करी चांग । देहीं जेव्हां ॥२३८॥  
 तेव्हां आयुष्याच्या । 'तटिनीचे' तोय । वाढत चि जाय । 'दिसंदीस ॥२३९॥  
 देहीं सत्त्वगुण । वाढवी हें अन्न । दिनासी कारण । भानु जैसा ॥२४०॥  
 देहासवे वाढे । मनाचे हि बळ । सात्त्विक रसाळ । अन्न घेतां ॥२४१॥  
 मग उद्भवेल । रोग तो कौटून । आरोग्य संपूर्ण । नांदे तेथें ॥२४२॥  
 सात्त्विक आहार । 'उदेलें' हें भाग्य । देहासी आरोग्य । भोगावया ॥२४३॥  
 आनंदाशीं सख्य । वाढोनियां तें । घडे देणेंघेणें । सुखाचे चि ॥२४४॥  
 ऐसा अंतर्बाह्य । उपकारी थोर । सात्त्विक आहार । परिणामीं ॥२४५॥  
 देहीं रजोगुण । पावतां उत्कर्ष । जे जे अन्नरस । आवडती ॥२४६॥  
 ते हि आतां येथें । प्रसंगानुसार । सांगूं सविस्तर । ऐक पार्था ॥२४७॥

कटुभललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।

आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥९॥



तरी कडुवट । जणूं काळकूट । ना तरी आंवट । अन्न जें का ॥२४८॥  
 जेणेंयोगें जीभ । जातसे भाजून । ऐसें चुन्याहून । दाहक जें ॥२४९॥  
 जेवढें उदक । मळावया पीठ । तेवढें च मीठ । घालोनियां ॥२५०॥  
 केले नाना रस । खारट जे अति । तेथें जडे प्रीति । राजसाची ॥२५१॥  
 जणूं वाटे अग्नि । ओतितो घशांत । भक्षितां पदार्थ । अति उष्ण ॥२५२॥  
 निधे अन्नांतून । वाफ जी बाहेरी । पेटेल त्यावरी । वात ती हि ॥२५३॥  
 ऐसें अति उष्ण । रुचे त्या अन्न । पार्था रजोगुण-। संपन्न जो ॥२५४॥  
 देखोनि लज्जित । होय झंझावात । ऐसें झणझणीत । अन्न भक्षी ॥२५५॥  
 जें का घावाविण । होतसे बोंचक । रुते जैसें टोंक । पहारीचें ॥२५६॥  
 रुचे तें चि अन्न । जें का राखेहून । कोरडें कठिण । अंतर्बाह्य ॥२५७॥  
 दांतीं कडाकड । फोडोनियां खावें । आवडे स्वभावें । ऐसें अन्न ॥२५८॥  
 असोनि तिखट । केलें झणझणीत । मिसळोनि कूट । मोहरीचें ॥२५९॥  
 येती झिणझिण्या । नाकातोंडांतून । सेवितां जें अन्न । 'दर्पयुक्त ॥२६०॥  
 ज्यापुढें 'फिकें । पेटतें कोलीत । ऐसें जळजळीत । \*रायतें जें ॥२६१॥  
 तें चि प्राणाहून । आवडे त्यास । 'रजोगुणोत्कर्ष । ज्या ठायीं ॥२६२॥  
 ऐशापरी जिह्वा-। लोलुपता त्याची । तरी आहाराची । तृप्ति नाही ॥२६३॥  
 जणूं तो अन्नाचें । निमित्त करोनि । भरी पोटीं अग्नि । भडभडां ॥२६४॥  
 सुंठ लवंगादि । आवडीनें खाय । तेणें दाह होय । सर्वांगाचा ॥२६५॥  
 मग भूमीवरी । किंवा अंथरुणीं । लोळत राहोनि । गडबडां ॥२६६॥  
 घटघटां घोट । घेई उदकाचे । काढी ना तोंडाचें । 'जळ-पात्र ॥२६७॥  
 अन्न नव्हे पार्था । जणूं व्याधिरूप । निद्रित जे सर्प । देहामार्जी ॥२६८॥  
 तयांसी जाग्रत । करावयासाठीं । 'माजवण पोटीं । घातलें तें ॥२६९॥  
 मग देहीं रोग । उठती अनेक । एकाहूनि एक । दुःखदायी ॥२७०॥  
 म्हणोनि राजस । आहाराचें फळ । दुःख चि केवळ । जाण पार्था ॥२७१॥  
 ऐशापरी तुज । राजस आहार । येथें सविस्तर । सांगितला ॥२७२॥

होतसे जो अंतीं । कैसा दुःखप्रद । सर्वथा विशद । तें हि केलें ॥२७३॥  
 आतां तामसासी । रुचे जो आहार । तो हि सविस्तर । सांगूं तुज ॥२७४॥  
 मागें पुढें पाहूं । नको ऐकायाम । येईल किळम । जरी तेंथें ॥२७५॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युपितं च यत् ।

उच्छिष्टमपि चामेध्वं भोजनं तामसप्रियम् ॥१०॥

कृजलें उच्छिष्ट । भक्षितां यथेष्ट । नेणे अनहित । आपुलें तो ॥२७६॥  
 आवडीनें सेवी । शिलेंपाकें अन्न । खातसे आंबोण । म्हेंस जैसी ॥२७७॥  
 किंवा अर्थेकचें । राहिलें शिजोन । गेलें करपोन । ना तरी तें ॥२७८॥  
 ऐसें रसहीन । राखोंडीसमान । तया रुचे अन्न । तामसासी ॥२७९॥  
 परी परिपक्व । रसाळ जें साच । अन्न तें नव्हे च । ऐसें मानी ॥२८०॥  
 यदाकदा देवें । लाभलें सदन्न । होय तें आंबोन । दुर्गाधित ॥२८१॥  
 तोंवरी करोन । ठेवितो जतन । सावजा मारोन । व्यात्र जैसा ॥२८२॥  
 ना तरी होवोन । गेले बहु दिन । म्हणोनि सडोन । गेलें जें का ॥२८३॥  
 शुष्क स्वादहीन । किंवा बदबदीत । झाले कृमी ज्यांत । ऐसें अन्न ॥२८४॥  
 तें हि जैसें बाळ । टाकी कालवोन । तैसें चिवडोन । निजहातें ॥२८५॥  
 मग गोतांबील । तयाची करोन । सर्वें बैसवोन । बाइलेसी ॥२८६॥  
 तैसें दुर्गाधित । एकाताटीं खाय । तेव्हां सुख होय । तयालार्गी ॥२८७॥  
 परी नाहीं तृप्ति । तेणें हि म्हणोन । सेवी निषिद्धान्न । पातकी तो ॥२८८॥  
 पाहें चमत्कार । अन्न जें सदोष । आवडे विशेष । तें चि तया ॥२८९॥  
 अपेय तें प्यावें । अभक्ष्य भक्षावें । धरी जीवेंभावें । ऐसी हांव ॥२९०॥  
 जयाची आवड । ऐसी च केवळ । त्या च क्षणीं फळ । मिळे त्याचें ॥२९१॥  
 तत्काळ तो होय । पातकाचा धनी । घालितां वदनीं । निषिद्धान्न ॥२९२॥  
 नव्हे तें भोजन । अन्नमिषें जाण । होतसे सेवन । यातनाचें ॥२९३॥  
 होतां शिरच्छेद । कैसी व्यथा जीवा । उडी घेतां किंवा । अग्नीमार्जी ॥२९४॥  
 स्वयें कोणी ह्याची । प्रचीती का पाहे । परी हें हि साहे । तामस तो ॥२९५॥

म्हणोनियां आतां । तामस आहार । सेवितां साचार । फळ काय ॥२९६॥  
 हे तों वेगळें का । हवें सांगायास । म्हणे श्रीनिवास । पार्थालागीं ॥२९७॥  
 ह्यावरी आहारा-। सारखे च जाण । प्रकार हे तीन । यज्ञाचे हि ॥२९८॥  
 तरी तिहींमाजीं । सात्त्विकाचें वर्म । सांगतों प्रथम । तुज पार्था ॥२९९॥

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।

यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥११॥

पतीच्या च ठायीं । वाढूं देई 'काम । जैसा मनोधर्म । साध्वीचा तो ॥३००॥  
 किंवा पुढें गंगा । घेई ना च धांव । सागराचा ठाव । प्राप्त होतां ॥३०१॥  
 नातरी आत्म्याचें । घडतां दर्शन । स्वीकारिलें मौन । वेदें जैसें ॥३०२॥  
 तैसी चित्तवृत्ति । स्व-हिती वेंचोन । फळीं जे मीपण । ठेविती ना ॥३०३॥  
 वृक्षाचिया मूळीं । 'पातलें जें पाणी । वळे ना तेथोनि । मागें जैसें ॥३०४॥  
 मग वृक्षाचिया । ठायीं च जिरोन । करी 'संवर्धन । तयाचें गा ॥३०५॥  
 तैसें देह मन । यज्ञासी वाहोन । तेथें चि निमग्न । निर्धारें जे ॥३०६॥  
 आचरिती यज्ञ । स्वधर्म म्हणोन । सर्वथा सांडोन । फलाशेतें ॥३०७॥  
 तयांचा तो यज्ञ । सात्त्विक तूं जाण । सदा परिपूर्ण । सर्वांगांनीं ॥३०८॥  
 आपुलें स्वरूप । आपुल्या नयनीं । पाहूं ये दर्पणीं । जैसा रीती ॥३०९॥  
 किंवा तळहातीं । अंधारीं जें रत्न । प्रदीप घेवोन । पाहूं ये तें ॥३१०॥  
 किंवा सूर्योदय । होतां धनंजया । मार्ग 'आक्रमाया । दिसे जैसें ॥३११॥  
 तैसा वेदशास्त्रें । दाविती जो मार्ग । तैसे यज्ञयाग । आचरिती ॥३१२॥  
 यज्ञकुंडें वेदी । मंडपादि सारी । उचित सामुग्री । मेळविती ॥३१३॥  
 जणूं सामुग्री ती । मेळवाया तेथ । शास्त्र चि तें 'मूर्त । प्रकटलें ॥३१४॥  
 जेथींचे तेथील । शोभती साचार । जैसे अलंकार । सर्वांगातें ॥३१५॥  
 जेथींचे तेथें च । सर्व हि पदार्थ । तैसे व्यवस्थित । मांडिती ते ॥३१६॥  
 काय सांगूं फार । सर्व अलंकार । घालोनि साचार । तिथे स्थानीं ॥३१७॥  
 जणूं यज्ञ-विद्या । यज्ञाचिया 'मिषें । प्रकटली दिसे । मूर्तिमंत ॥३१८॥





छाया-फल-पुष्पी । न ठेवितां आस । राखिती तुळस । दारीं जैमी ॥३२०॥

ऐसा सांगोपांग । निपजे जो याग । नाहीं जेथें भाग । 'आढ्यतेचा ॥३१९॥  
छाया-फळ-पुष्पीं । न ठेवितां 'आस । राखिती तुळस । दारीं जैसी ॥३२०॥  
काय सांगूं फार । तैसा धनंजया । जो का सांडोनियां । फलाशेतें ॥३२१॥  
कर्तव्य म्हणोन । यज्ञ केला जाय । सात्त्विक तो होय । सर्वथैव ॥३२२॥

अभिसंधाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।

इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥

वाढे रजोगुण । जयाचिया ठायीं । यज्ञ करी तो हि । ह्या चि रीती ॥३२३॥  
परी श्राद्धालागीं । आमंत्रावा 'राव । तैसा मनीं भाव । वेगळा च ॥३२४॥  
घरीं जरी राजा । भोजनासी आला । तरी होय भला । उपयोग ॥३२५॥  
श्राद्धकार्य तें हि । होवोनि जाईल । तैसा विस्तारेल । लौकिक हि ॥३२६॥  
लौकिकाचा डंका । पिटावयासाठीं । ठेवोनियां पोटीं । फळहेतु ॥३२७॥  
ह्यापरी जो पार्था । यज्ञ केला जाय । राजस तो होय । ऐसें जाण ॥३२८॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।

श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥१३॥

पशुपक्षियांचें । लग्न लावायासी । दुजा नाहीं जोशी । कामाविण ॥३२९॥  
त्यापरी तामस । यज्ञालागीं साच । दुराग्रह हें च । मूळ होय ॥३३०॥  
वाऱ्यालागीं जैसा । वहावया पाहीं । मुळीं नसे काहीं । 'धरबंध ॥३३१॥  
किंवा मृत्यूलागीं । जैसा का मुहूर्त । लागे ना निभ्रांत । पहावया ॥३३२॥  
नातरी 'निषिद्ध । जाळावया काहीं । अग्नीलागीं नाहीं । भय जैसें ॥३३३॥  
तैसें यज्ञीं 'स्वैर । करिती वर्तन । विधीतें सांडोन । तामसी ते ॥३३४॥  
वेदमंत्रांचें तों । नांव चि ना तेथें । विधिविधानातें । पुसे कोण ॥३३५॥  
माशीस हि जेथें । खावया ना अन्न । ब्राह्मण-भोजन । कैचें तेथें ॥३३६॥  
ब्राह्मण तो वैरी । ऐसा जेथें भाव । तेथें कैचा ठाव । दक्षिणेसी ॥३३७॥  
अग्नि जैसा वायां । भडकोनि जाय । लाभतां साहाय्य । वारेयांचें ॥३३८॥  
किंवा निपुत्रिक । मरे जरी कोणी । सर्वस्व लुटोनि । नेती त्याचें ॥३३९॥

यज्ञसामुग्री ती । वेंचली तैसी च । वृथा सर्व साच । तामसाची ॥३४०॥  
 देव म्हण ऐसा । जो का 'यज्ञाभास । तयातें तामस । हें चि नांव ॥३४१॥  
 एक चि तें जैमें । गंगोदक भलें । परी जरी नेलें । भिन्न मार्गी ॥३४२॥  
 तरी एका मार्गें । येतसे 'मालिन्य । शुचित्व तें अन्य । मार्गें राहे ॥३४३॥  
 तैसैं जर्गी तप । जाहलें त्रिविध । त्रिधा गुणभेद । म्हणोनियां ॥३४४॥  
 तरी लागे पाप । आचरितां एक । दुजें तरी देख । उद्धरितें ॥३४५॥  
 त्रिधा कैसैं मग । जाणोनि तें घेई । परी आधीं पाहीं । 'तप' काय ॥३४६॥  
 तपाचें स्वरूप । आधीं सांगूं साचें । मग बोलूं त्याचे । तिन्ही भेद ॥३४७॥  
 'कायिक' वाचिक । तैसैं मानसिक । तप आधीं देख । धनंजया ॥३४८॥  
 मग प्रत्येकाचे । भेद होती तीन । त्रिगुणांवरोन । ते हि सांगूं ॥३४९॥  
 तरी आतां चित्त । देवोनियां एक । जप जें 'कायिक' । तें चि बोलूं ॥३५०॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ।

ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥१४॥

श्रीहरि वा शंभु । आवडे जो देव । तेथें सर्वभाव । ठेवोनियां ॥३५१॥  
 तयाचें मंदिर । पहावयासाठीं । सदा धांव घेती । पाय ज्याचे ॥३५२॥  
 देवाचें अंगण । झाडसारवून । रांगोळी घालोन । शोभवाया ॥३५३॥  
 किंवा मेळवाया । पूजा-उपचार । सर्वदा तत्पर । हात ज्याचे ॥३५४॥  
 लिंग किंवा मूर्ति । देखतांक्षणीं च । घाली जो का साच । लोटांगण ॥३५५॥  
 विद्या-विनयादि । गुणांनीं संपन्न । होती जे ब्राह्मण । पूजनीय ॥३५६॥  
 तया ब्राह्मणांची । करावया सेवा । उत्सुकता जीवा । जयाचिया ॥३५७॥  
 प्रवासें वा दुःखें । शिणोनियां गेले । किंवा सांपडले । संकटीं जे ॥३५८॥  
 तयांलार्गीं सुख । घावया साचार । झिजवी शरीर । आपुलें जो ॥३५९॥  
 मायबापें जीं का । सर्व तीर्थी श्रेष्ठ । तयातें संतुष्ट । करावया ॥३६०॥  
 तयांच्यावरून । मुखें पंचप्राण । टाकी ओवाळून । आपुले जो ॥३६१॥  
 सर्वथा दारुण । प्रपंचाचा शीण । नष्ट करी पूर्ण । भेटतां चि ॥३६२॥

ऐमा ज्ञानदाता । सद्गुरु दयाळ । तथा सर्वकाळ । भजे जो का ॥३६३॥  
 म्वधर्माभिमार्जी । अभ्यासें करीन । टाकितो जाळून । 'देहाहंता ॥३६४॥  
 जातां देहाहंता । नम्र झाला भूतां । भूतीं भगवंता । ओळखोनि ॥३६५॥  
 पर-उपकारीं । असे जो तत्पर । पाळी निरंतर । व्रतचर्य ॥३६६॥  
 जन्मतां स्त्रीस्पर्श । बाळपणीं झाला । तेथोनि सोवळा । सर्व जन्म ॥३६७॥  
 भूतमात्रीं देव । जाणोनियां एक । देई ना जो दुःख । तृणातें हि ॥३६८॥  
 काय सांगूं फार । अहिंमा पाळोन । कांहीं छिन्नभिन्न । करी ना जो ॥३६९॥  
 ऐशा रहाटीचा । शरीरीं विशेष । अर्जुना उत्कर्ष । होय जेव्हां ॥३७०॥  
 तेव्हां भरा आलें । तप तें 'कायिक' । ऐसें तूं निःशंक । जाण बापा ॥३७१॥  
 मुख्यत्वे हें तप । देहें चि साचार । म्हणोनि 'शारीर' । म्हणूं ह्यातें ॥३७२॥  
 सांगितलें तप । ह्यापरी 'कायिक' । निष्पाप 'वाचिक' । ऐक आतां ॥३७३॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् ।

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥१५॥

परीसु तो जैसा । न ठेवितां न्यून । लोहाचें सुवर्ण । करी स्पर्शें ॥३७४॥  
 तैसें ऐकल्यासी । देई ना जें दुःख । तेवीं चि आणिक । समीप जे ॥३७५॥  
 त्यांच्या हि चिन्ता । होय समाधान । ऐसें भलेपण । भाषणीं ज्या ॥३७६॥  
 ओथें तृणातें हि । होतसे पोषक । घातलें उदक । वृक्षासी जें ॥३७७॥  
 तैसें एकामाठीं । बोलिलें जें जाय । तेणें हित होय । सर्वांचें हि ॥३७८॥  
 अमृताची गंगा । लाभतां साचार । प्राणांसी अमर । करी जैसी ॥३७९॥  
 आणि पाप ताप । 'हारवी जी स्नानें । जिह्मे गोडपणें । सुख देई ॥३८०॥  
 तैसा जो का बोल । ऐकोनियां साचा । फिट अंतरांचा । अविवेक ॥३८१॥  
 भेटे अनादित्व । आपणा आपुलें । अवीट ज्या बोलें । 'सुधेऐशा ॥३८२॥  
 बोलणें ऐसे च । व्हावें सत्त्वगुणी । पुसे जरी कोणी । नम्रतेनें ॥३८३॥  
 नातरी देवाचीं । स्तुतिस्तोत्रें गात । बैसणें निवांत । आवडीनें ॥३८४॥  
 किंवा चालविणें । वाचे 'अहर्निश । वेदमंत्रघोष । स्वस्थचित्तें ॥३८५॥



तीन हि वेदांसी । रहावया स्थान । जणूं तें वदन । वेदशाळा ॥३८६॥  
 किंवा शिवाचें का । श्रीहरीचें नाम । नाचावें सप्रेम । मुखीं नित्य ॥३८७॥  
 केलें 'निरूपण । ऐशापरी देख । अर्जुना 'वाचिक' । तपाचें हें ॥३८८॥  
 तप 'मानसिक' । आतां सांगूं ऐक । ब्रह्मांडनायक । म्हणे कृष्ण ॥३८९॥

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ।

भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥१६॥

तरंगरहित । सरोवर शांत । किंवा नभःप्रान्त । मेधाविण ॥३९०॥  
 चंद्र जैसा 'कला-। वैषम्य-विहीन । सर्पाविण वन । चंद्रनाचें ॥३९१॥  
 ना तरी क्षीराब्धि । मंदरावांचोन । किंवा चिंताहीन । भूप जैसा ॥३९२॥  
 तैसें जेव्हां मन । संकल्पविहीन । रहावें रंगून । आत्मरूपीं ॥३९३॥  
 उष्णतेवांचोन । असावा प्रकाश । चोथ्याविण रस । अर्नीं जैसा ॥३९४॥  
 पोकळीवांचोन । आकाश तें जैसें । आत्मरूप तैसें । देखे जेव्हां ॥३९५॥  
 तेव्हां तें संकल्प-। विकल्पा मुकोन । होतसे विलीन । तयामार्जीं ॥३९६॥  
 मनाचें अस्थैर्य । लोपोनियां जाय । 'हिवांग तें काय । हिचें कांपे ? ॥३९७॥  
 शोभाचें का जैसें । निश्चल संपूर्ण । कलंकविहीन । चंद्र-बिंब ॥३९८॥  
 तैसें मलहीन । शोभे स्थिर मन । राहतां जडोन । आत्मरूपीं ॥३९९॥  
 जेथें बुडी देई । विरक्तीचें तप । सर्वथा निष्कंप । होई मन ॥४००॥  
 तेथें कैचा नाना । वृत्तींचा उद्भव । मनें घेतां ठाव । आत्मरूपीं ॥४०१॥  
 शास्त्राचा विचार । संपला म्हणोन । स्वभावे ये मौन । वाचेतें हि ॥४०२॥  
 पाहें जळालागीं । स्पर्शतां लवण । जळ चि होवोन । जाय जैसें ॥४०३॥  
 तैसा आत्मलाभ । होतां चि अर्जुना । मन मनपणा । धरूं नेणे ॥४०४॥  
 मग इंद्रियांच्या । मार्गीं घेती धांव । विषयांचा गांव । गांठावया ॥४०५॥  
 वासना त्या सर्व । हारपोनि जाती । ऐसी मनःशांति । प्राप्त होतां ॥४०६॥  
 केंसां विरहित । जैसा तळहात । तैसा मनःप्रांत । शुद्ध होय ॥४०७॥  
 बहु बोलू काय । ऐसी दशा मना । तप तें अर्जुना । 'मानसिक' ॥४०८॥

असो मानसिक । तपाचें लक्षण । ह्यापरी संपूर्ण । सांगितलें ॥४०९॥  
 ऐकविलें येथ । कायिक वाचिक । तैसें मानसिक । सामान्य हें ॥४१०॥  
 तरी विशेषत्वे । कैसें त्रिधा होय । हें चि गुणत्रय-। संगतीनें ॥४११॥  
 तुज विवरून । सांगतो तें आतां । ऐक प्रज्ञावंता । देव म्हणे ॥४१२॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।

अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥१७॥

तरी सांगितलें । सामान्य साचार । तप त्रि-प्रकार । ऐसें जें हें ॥४१३॥  
 तें चि केलें जाय । फलाशा सांडोन । सर्वथा होवोन । श्रद्धायुक्त ॥४१४॥  
 अंतरीं आस्तिक्य-। बुद्धि बाळगून । करोनियां मन । पूर्ण शुद्ध ॥४१५॥  
 तदा ज्ञाते जन । तया तपा जाण । 'सात्त्विक' म्हणोन । वाखाणिती ॥४१६॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् ।

क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमधुवम् ॥१८॥

आपुलें चि तप । दिसावें म्हणोन । जर्गीं दुजेपण । मांडोनियां ॥४१७॥  
 मोटेपणाचिया । शिखरीं बैसावें । ऐसी हांव जीवें । धरोनियां ॥४१८॥  
 'दुज्या कोणाचा हि । न व्हावा सन्मान । आपणावांचोन । त्रिभुवनीं ॥४१९॥  
 आपणा मिळावें । 'अग्रभागीं स्थान । सर्वत्र भोजन-। समारंभीं ॥४२०॥  
 जगें आपुलीं च । स्तुति स्तोत्रें गावीं । यात्रा हि करावी । आपुली च ॥४२१॥  
 आपुली च पूजा । व्हावी जगामार्जीं । आणि असे जी जी । भोग्य वस्तु ॥४२२॥  
 ती ती सर्व व्हावी । आपणासी प्राप्त । आपण चि श्रेष्ठ । म्हणोनियां ॥४२३॥  
 वृद्ध 'वारांगना । करोनि शृंगार । आपुलें शरीर । विकी जैसी ॥४२४॥  
 तैसें तपाचें जें । माजविती ढोंग । भोगावया भोग । नानाविध ॥४२५॥  
 वाढावा लौकिक । लाभावी संपत्ति । ऐसी हांव चितीं । धरोनियां ॥४२६॥  
 येथें सायासें जें । तप केलें जाय । 'राजस' तें होय । धनुर्धरा ॥४२७॥  
 कासेंतील दूध । गाभणेपणीं च । रोगें गेलें साच । आटोनियां ॥४२८॥  
 मग व्याली तरी । उपयोगी काय । होईल ती गाय । दुभत्यासी ॥४२९॥

किंवा उभें शेत । चारिलें निःशंक । तरी घ्यावें पीक । मग कोठें ॥४३०॥  
 तैमें सायासैं जें । तप केलें वीरा । पिटिला डांगोरा । जरी त्याचा ॥४३१॥  
 तरी तें सकळ । होतसे निष्कळ । केलें जें केवळ । लौकिकार्थ ॥४३२॥  
 ऐमें तें निष्कळ । जाहलें म्हणोन । मध्ये च सोडोन । देई मग ॥४३३॥  
 म्हणोनि तें तप । त्याचें अस्थिर । जाणावें साचार । धनंजया ॥४३४॥  
 अकार्ळीचा मेघ । आकाशीं उदंड । गर्जोनि ब्रह्मांड । फोडूं पाहे ॥४३५॥  
 परी घडीभरी । राहे का टिकोन । जरी तो भरोन । टाकी नभ ॥४३६॥  
 तैमें तें राजस । तप पंडुसुता । जाणावें सर्वथा । फळहीन ॥४३७॥  
 आणि आचराया । न ये निरंतर । म्हणोनि साचार । भंगुर हि ॥४३८॥  
 आतां तें चि तप । तमोगुणें युक्त । होवोनियां भ्रांत । केलें जाय ॥४३९॥  
 तरी तथें केंची । परलोकप्राप्ति । इहलोकीं कीर्ति । ती हि नाही ॥४४०॥

मूढग्राहेणाऽऽत्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।

परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसयुदाहृतम् ॥१९॥

तरी सूर्वपण । धरोनि अंतरी । मानोनियां वैरी । शरीरामी ॥४४१॥  
 तया शरीराचें । करोनि इंधन । पंचाग्नि-साधन । साधिती जे ॥४४२॥  
 आपुल्या मस्तकीं । जाळिती गुगूळ । पाठीमार्जी गळ । टोंचिती जे ॥४४३॥  
 सभोवतीं अग्नि । पेटवोनि चांग । आपुलें च अंग । जाळिती जे ॥४४४॥  
 किंवा श्वासोच्छ्वास । धरिती कोंडून । वायां उपोषण । करिती जे ॥४४५॥  
 घेती आपणासी । टांगोनि उलटें । मुख तें खालतें । करोनियां ॥४४६॥  
 धुराचा हि घांस । गिळोनियां देख । भागविती भूक । आपुली जे ॥४४७॥  
 उभे जे आकंठ । राहती पाण्यांत । तीव्र कडाक्यांत । थंडीचिया ॥४४८॥  
 नदीकांठीं किंवा । खडकीं बैसोन । करिती दारुण । तपश्चर्या ॥४४९॥  
 आपुल्या अंगींचें । तोडोनियां मांस । भूतपिशाच्चांस । अर्पिती जे ॥४५०॥  
 नानापरी देती । शरीरामी क्लेश । आणिकांचा नाश । करावया ॥४५१॥  
 डांगरावरोन । सुटला जो धोंडा । येई गडगडां । खालीं जैसा ॥४५२॥

आड पडे त्याचा । चुराडा करीत । आपण हि होत । शतखंड ॥४५३॥  
 तैसें आटवोनि । आपुलें शरीर । पीडावे इतर । सुखी जीव ॥४५४॥  
 ऐसी दुष्ट इच्छा । धरोनि अंतरीं । तप क्लेशकारी । करिती जे ॥४५५॥  
 तयांचें तें तप । जाणावें 'तामस' । म्हणे श्रीनिवास । अर्जुनातें ॥४५६॥  
 गुणभेदें ऐसें । तप जें त्रिविध । करोनि विशद । दाविलें तें ॥४५७॥  
 आतां तुज सांगूं । प्रसंगानुसार । तीन हि प्रकार । दानाचे ते ॥४५८॥  
 त्रिविध तें दान । होय गुण-भेदीं । तरी एक आधीं । 'सात्त्विक' जें ॥४५९॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥२०॥

स्वधर्मानुसार । मिळेल जें येथें । देत जावें तें तें । सन्मानानें ॥४६०॥  
 सुदैवें उत्तम । बीज झालें प्राप्त । तरी हवें शेत । भलें तेंथें ॥४६१॥  
 ऋतुमान तें हि । हवें अनुकूल । वाफ हि सोज्ज्वळ । 'यावी लागे ॥४६२॥  
 जैसें हें दुर्मीळ । तैसें चि केवळ । दानीं देशकाळ-। पात्रादिक ॥४६३॥  
 किंवा हातीं यावें । बहुमोल रत्न । पडावी तों वाण । सुवर्णाची ॥४६४॥  
 जोडली तीं दोन्ही । तरी हवें अंग । घालावया चांग । भूषणें तीं ॥४६५॥  
 परी संपूर्णत्वे । होय सानुकूल । जेव्हां भाग्यकाळ । आपणासी ॥४६६॥  
 तेव्हां जैसी सण । 'सुहृद् संपत्ति । तिन्ही प्राप्त होती । एके वेळीं ॥४६७॥  
 तैसें जेव्हां दान । घडवाया जाण । येई उत्तेजन । सत्त्वगुणा ॥४६८॥  
 तेव्हां देशकाळ-। पात्रादि सकळ । जुळतसे मेळ । अनायासें ॥४६९॥  
 तरी आधीं काशी । किंवा कुरुक्षेत्र । पहावें पवित्र । स्थान ऐसें ॥४७०॥  
 किंवा 'पुण्यधाम । पावन उत्तम । पहावें तत्सम । आणिक तें ॥४७१॥  
 तेथें रविचंद्र-। राहुकेतु-मेळ । ऐसा पर्वकाळ । असे जेव्हां ॥४७२॥  
 नातरी संक्रांति । सिंहस्थ पर्वणी । वेळा नव्हे उणी । शुचित्वें जी ॥४७३॥  
 ऐशा देशकाळीं । मांगल्याची मूर्ति । जो का वेदश्रुति-। शास्त्रवेत्ता ॥४७४॥  
 आचार-संपन्न । सद्गुण-निधान । जो का तपोधन । द्विजश्रेष्ठ ॥४७५॥

तयालागीं द्यावें । द्रव्यादिक दान । कर्तव्य म्हणोन । निष्कामत्वे ॥४७६॥  
 आपुलें सर्वस्व । अपॉनि सर्वथा । प्रियापुढें कांता । रिघे जैसी ॥४७७॥  
 किंवा ठेविली जी । ठेव ज्याची तया । व्हावें देवोनियां । उतराई ॥४७८॥  
 किंवा मनीं आस । न ठेवितां दास । देतसे रायास । विडा जैसा ॥४७९॥  
 तैसें सत्पात्रीं तें । करावें अर्पण । निष्काम होवोन । भूम्यादिक ॥४८०॥  
 बहु बोलूं काय । धनंजया तूतें । नये फलाशेतें । उरों देवों ॥४८१॥  
 भावें तयासी च । दान द्यावें येथें । जेणें तें मागुतें । फेडावें ना ॥४८२॥  
 आकाश तें जैसें । नेदी पडसाद । पुनःपुन्हां साद । घालितां हि ॥४८३॥  
 किंवा पाठमोरा । पाहतां आरसा । दाखवी ना जैसा । प्रतिर्विच ॥४८४॥  
 हापटितां चेंडू । जैसा जळपृथ्वीं । पुन्हां न ये हातीं । उफाळोनि ॥४८५॥  
 वसूलागीं चारा । घातला साचार । तरी उपकार । मानीना तो ॥४८६॥  
 कृतवाचा \*माथा । हुंगिला प्रेमानें । तरी फेडूं नेणे । उपकार ॥४८७॥  
 तैसा शकेना जो । होऊं उतराई । ऐसियासी देई । दानमात्र ॥४८८॥  
 देशकाळपात्रीं । जें जें दिलें दान । नुरों द्यावें भान । तयाचें हि ॥४८९॥  
 ऐशा सामुग्रीनें । युक्त जें जें दान । सात्त्विक तें जाण । सर्वश्रेष्ठ ॥४९०॥  
 आतां देशकाळ- । पात्र हि तैसें च । द्रव्य तें हि साच । यथायोग्य ॥४९१॥

यत्तु प्रत्युष्कारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।

दीयते च परिक्लिष्टं तदानं राजसं स्मृतम् ॥२१॥

परी जैसा चारा । घालावा गाईस । दुभत्याची आस । धरोनियां ॥४९२॥  
 किंवा धान्यासाठीं । बांधोनियां पेवें । मग पेरूं जावें । बीज जैसें ॥४९३॥  
 किंवा आमंत्रावें । जैसें सोयन्यांस । धरोनियां आस । आहेराची ॥४९४॥  
 किंवा व्रतस्थासी । देऊं जावें वाण । यावें परतोन । म्हणोनियां ॥४९५॥  
 ना तरी करावें । आणिकाचें काज । जैसें आधीं व्याज । घेवोनियां ॥४९६॥  
 किंवा जैसें आधीं । घेवोनियां धन । द्यावें रसायन । रोगियासी ॥४९७॥  
 तैसें दिलें दान । द्विगुण तें व्हावें । मागुतें लाभावें । आपणासी ॥४९८॥

१ जबाबदारीतून मोकळे व्हावें. २ बेत नाही. ३ पाण्यावर. ४ नेम घेतलेल्याला. ५ विशेष औषध; मात्रा.

ऐशा भावनेनें । जें जें दिलें जाय । 'राजस' तें होय । धनुर्धरा ॥४९९॥  
 किंवा शके ना जो । फेडूं दिलें दान । भेटतां ब्राह्मण । भला ऐसा ॥५००॥  
 मार्गीं तयाचिया । हातावरी एक । कष्टें 'कपर्दिक' । ठेवोनियां ॥५०१॥  
 सर्व गोत्रांचें च । \*प्रायश्चित्तोदक । सोडितसे देख । तेंणें योगें ॥५०२॥  
 'मध्याह्नाचे वेळीं । भागवाया भूक । पुरेल ना एक । वेळ जें का ॥५०३॥  
 ऐसं अन्नदान । देवोनि ब्राह्मणा । मनीं इच्छी नाना । स्वर्ग-भोग ॥५०४॥  
 मग जैसें दुःख । होतसे दारुण । सर्वस्व लुटोन । नेतां चोरें ॥५०५॥  
 तैसा 'पावे' शीण । हानि ती मानोन । देतां अल्पदान । ब्राह्मणासी ॥५०६॥  
 बहु बोलूं काय । 'राजस' तें दान । मनोवृत्ति हीन । ऐसी ज्यांत ॥५०७॥

अदेशकाले यदानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।

असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

\*म्लेंछ-वस्ति किंवा । जेथें दाट रानें । ना तरी जीं स्थानें । अपवित्र ॥५०८॥  
 किंवा नगरींच्या । 'राहुच्या चव्हाटे । सांजवेळीं तेथें । किंवा रात्रीं ॥५०९॥  
 गारुडी जुगारी । भाट भेटे कोणी । किंवा मोहखाणी । वारांगना ॥५१०॥  
 तयांलागीं देई । उदार होवोन । आणिलें जें धन । चोरोनियां ॥५११॥  
 आणि सुस्वरूप । नर्तकींचा मेळ । घाली जेव्हां भूल । नेत्रांलागीं ॥५१२॥  
 स्तुतिपाठकांचीं । ऐकोनियां गाणीं । घुमे जेव्हां कार्नी । तो चि जप ॥५१३॥  
 तशांत हि पुष्प-चंदनाचा गंध । हुंगोनि तो धुंद । होय जेव्हां ॥५१४॥  
 तेव्हां 'गमे दाता । जणूं तो केवळ । भ्रमाचा वेताळ । प्रकटला ! ॥५१५॥  
 असो ऐसें दान । तामस तें जाण । सांगेन लक्षण । आणिक हि ॥५१६॥  
 जैसी पडे गांठ । बैसावया 'काक' । आणि काष्ठ शुष्क । मोडावया ॥५१७॥  
 तैसा तामसासी । \*घुणाक्षरन्यायें । पावन-क्षेत्रीं ये । पर्वकाळ ॥५१८॥  
 तेथ सुदैवें ये । सत्पात्र ब्राह्मण । मागावया दान । तयापाशीं ॥५१९॥  
 मग वैभवाच्या । दपें भांवावून । द्याया तया दान । सिद्ध होय ॥५२०॥  
 तरी श्रद्धाहीन । तामस तो दाता । लववी ना माथा । लीनपणें ॥५२१॥

१ कवडी. २ रुपारचे. ३ कडो होतो. ४ यवनांचें राहणें. ५ तंबू. ६ वाटतो. ७ कावळा.

अ. जा. ३७

करी ना करवी । अध्यादिक कांहीं । न दे आसन हि । बैसावया ॥५२२॥  
 मग गंधाक्षता । कराव्या अर्पण । तेथ हें कोठोन । संभ्वेल ! ॥५२३॥  
 ऐशापरी दाता । तामस तो पाहीं । नेणे चि हें कांहीं । धनंजया ॥५२४॥  
 अरेतुरे ऐसी । भाषा वापरोन । अवज्ञा करोन । अतिथीची ॥५२५॥  
 मग हातावरी । ठेवोनि पै पैसा । बोळवितो जैसा । ऋणार्इत ॥५२६॥  
 देतां तुच्छतेनें । म्हणे ऐसे बोल । 'जा रे ! तुझे मोल । तेवढें च !' ॥५२७॥  
 ऐशापरी नाना । कुशब्दें ताडोन । देई घालवोन । तयालागीं ॥५२८॥  
 असो पार्था ऐसें । वेंचणें जें धन । तामस तें दान । जगामार्जी ॥५२९॥  
 ऐसीं आपुलाल्या । लक्षणांनीं युक्त । तिन्ही दांनें येथ । सांगितलीं ॥५३०॥  
 आतां भवबंध- । मोचक तें एक । निर्मल सात्त्विकं । दान जरी ॥५३१॥  
 तरी बोलावीं कां । विरोधी सदोष । राजस तामस । इतर तीं ॥५३२॥  
 ऐसें मनीं सुज्ञा । कल्पसील कांहीं । तरी तुज तें हि । सांगूं एक ॥५३३॥  
 हातीं ये ना जैसें । भूमिगत धन । दूर केल्याविण । डाकिणीतें ॥५३४॥  
 किंवा धनंजया । न साहतां धूर । न पेटे साचार । अग्नि जैसा ॥५३५॥  
 तैसें रजतमो- । गुणांचें कवाड । शुद्धसत्त्वाआड । असे जें का ॥५३६॥  
 प्रयत्नें तें पूर्ण । टाकणें मोडोन । म्हणेल का कोण । 'वोखटें हें ॥५३७॥  
 श्रद्धेपासोनियां । दानावेरीं सर्व । क्रियांचा उद्भव । होय जो का ॥५३८॥  
 सत्त्वरजादिक । त्रिगुणीं तो व्याप्त । ऐसें तुज येथ । बोलिलों जें ॥५३९॥  
 तें तों नव्हे तिन्ही । सांगावयासाठीं । जाण हें किरीटी । निःसंदेह ॥५४०॥  
 एक सत्त्वगुण । दावावा म्हणोन । इतर हे दोन । सांगितले ॥५४१॥  
 रात्र आणि दिन । दोन्ही हीं सांडोन । पाहूं जातां तिन- । सांज जैसी ॥५४२॥  
 तैसें दिसे दोन्ही । सांडोनि पाहतां । असे जें सर्वथा । तिजें साच ॥५४३॥  
 सत्त्व तें उत्तम । कळां ये सहज । नष्ट होतां रज- । तम दोन्ही ॥५४४॥  
 असो सत्त्व एक । कळावयासाठीं । बोलिलों किरीटी । रज-तम ॥५४५॥  
 तरी दोन्ही हि ते । सांडोनि महज । सत्त्वं सार्थीं काज । आपुलें तूं ॥५४६॥

ह्या चि शुद्धसत्त्व- । गुणें धनंजया । करीं सर्व क्रिया । यज्ञादिक ॥५४७॥  
 मग तेणें योगें । तुज आपोआप । दिसेल स्व-रूप । स्पष्टपणें ॥५४८॥  
 दाखवितां सूर्यें । चराचरीं येथ । कोणता पदार्थ । न दिसेल ॥५४९॥  
 तैसैं फलद्रूप । काय नोहे बा रे । सत्त्वगुणाधारें । 'वर्तू जातां ॥५५०॥  
 सत्त्वगुणालागीं । जरी ऐसी शक्ति । तरी जीवा मुक्ति । लाभे जेणें ॥५५१॥  
 तें तों वेगळें च । 'वर्म असे साचें । साहाय्य तयाचें । मिळे जेव्हां ॥५५२॥  
 तेव्हां चि पांडवा । मोक्षाचिया गांवा । पोंचविती जीवा । सात्त्विक तीं ॥५५३॥  
 राजमुद्रांकित । शुद्ध सुवर्णातें । जैसैं मोल येतें । आगळें च ॥५५४॥  
 किंवा सुगंधित । निर्मळ शीतळ । जरी झालें जळ । सौख्यदायी ॥५५५॥  
 तरी म्हणावें तें । तेव्हां चि 'पावन । तया तीर्थपण । येई जेव्हां ॥५५६॥  
 असो नदी थोर । गंगा अंगीकारी । तेव्हां चि उद्धरी । जीवांसी ती ॥५५७॥  
 तैसीं तीं सात्त्विक । सर्व कर्में जेव्हां । मोक्षाचिया गांवा । धांव घेती ॥५५८॥  
 तेव्हां जेणें योगें । न ये मध्यें विघ्न । वर्म तें 'गहन । वेगळें च ॥५५९॥  
 देवाचे हे बोल । ऐकोनि तो पार्थ । मनीं उत्कंठित । होवोनियां ॥५६०॥  
 म्हणे तें चि आधीं । देवा मायबापा । करोनियां कृपा । सांगावें जी ॥५६१॥  
 कृपावंतांचा तो । राजा चक्रवर्ती । ऐकोनि विनंती । पार्थाची ही ॥५६२॥  
 म्हणे सात्त्विक तीं । कैसीं मुक्तिप्रद । होती तें विशद । सांगूं ऐक ॥५६३॥

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।

ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥२३॥

सर्व हि जगाचें । उत्पत्तिकारण । विश्रांतीचें स्थान । अनादि जें ॥५६४॥  
 तयाचें तों नाम । एक चि साचार । परी त्रि-प्रकार । तें चि असे ॥५६५॥  
 ब्रह्म तें स्वभावें । 'अनाम 'अजाति । ऐसैं वेदश्रुति । जाणे जरी ॥५६६॥  
 तरी अविद्येच्या । रात्रीमार्जीं सर्व । भांबावले जीव । देखोनियां ॥५६७॥  
 तयांसी ब्रह्माची । व्हावी ओळखण । म्हणोनियां खूण । दाखवी ही ॥५६८॥  
 संसाराच्या दुःखें । सर्वथा शिणून । गाऱ्हाणें घेवोन । येती जे का ॥५६९॥



तयां परब्रह्म । ज्या नामें ओ देत । तो चि हा संकेत । जाण पार्था ॥५७०॥  
 जीवाचा-ब्रह्माचा । अबोला फिटून । जीव व्हावा लीन । ब्रह्म-पदीं ॥५७१॥  
 म्हणोनियां वेदें । कृपाळु होवोन । काढिला शोधोन । ऐसा मंत्र ॥५७२॥  
 ज्या मंत्रें हांक । मारितां ब्रह्मास । सर्वत्र जीवास । दिसे ब्रह्म ॥५७३॥  
 परी वेदांचिया । पर्वत-शिखरीं । असे जी नगरी । भव्य दिव्य ॥५७४॥  
 उपनिषदार्थ-। रूपी सुमंगल । तेथें सर्वकाळ । रमती जे ॥५७५॥  
 ब्रह्मासमवेत । तयांसी च प्राप्त । होय हा यथार्थ । नाम-मंत्र ॥५७६॥  
 काय सांगूं फार । पार्था वारंवार । करोनि उच्चार । नामाचा ह्या ॥५७७॥  
 प्रजापतीलागीं । सृष्टीची उत्पत्ति । करावया शक्ति । आली चांग ॥५७८॥  
 वेडापिसा ऐसा । सृष्टीपूर्वी होता । एकला विधाता । ब्रह्मदेव ॥५७९॥  
 मज ईश्वरातें । नोळखे साचार । तैसें चराचर । रचूं नेणे ॥५८०॥  
 परी अर्थयुक्त । घडतां चिंतन । आलें थोरपण । नामें एकें ॥५८१॥  
 झाला तो समर्थ । रचावया सृष्टि । अक्षरें हीं ओठीं । येतां तीन ॥५८२॥  
 मग त्या ब्रह्मानें । निर्मोनि ब्राह्मण । तयांचे स्वाधीन । केले वेद ॥५८३॥  
 आचाराची रीत । कळावी म्हणोन । दिलें हें साधन । तयांहातीं ॥५८४॥  
 आणि जीवनार्थ । यज्ञव्यवसाय । एक हा उपाय । सांगितला ॥५८५॥  
 मग किती नेणों । निर्मिली इतर । प्रजा ती अपार । ब्रह्मानें त्या ॥५८६॥  
 तयांसी जीवन-। साधन म्हणोन । दिलें त्रिभुवन । अग्रहार ॥५८७॥  
 असो ऐसें जेणें । नाममंत्रें भलें । थोरपण आलें । विधात्यासी ॥५८८॥  
 तयांचें स्वरूप । एक सांगूं येथ । म्हणे रमाकांत । पार्थालागीं ॥५८९॥  
 सर्व मंत्रांमार्जीं । श्रेष्ठ जो अकार । तें चि आद्याक्षर । मंत्राचें ह्या ॥५९०॥  
 आणि दुजा वर्ण । तत्कार तो जाण । सत्कार तो वर्ण । तिजा तेथें ॥५९१॥  
 'अंततसत' ऐमें । पाहें ऐशापरी । असे हें तिहेरी । ब्रह्मनाम ॥५९२॥  
 उपनिषदें तीं । नाममंत्रसार । सांगती साचार । हें चि एक ॥५९३॥  
 ब्रह्मनामाशीं ह्या । होवोनियां एक । कर्म तें सात्त्विक । चाले जेव्हां ॥५९४॥

तेव्हां तयापुढें । जोडोनियां हात । मोक्ष मूर्तिमंत । उभा राहे ॥५९५॥  
 परी दैवयोगें । लाधला साचार । रम्य अलंकार । कापुराचा ॥५९६॥  
 तरी देहीं कैसा । करावा धारण । लागे हें जाणोन । घ्यावें जैसें ॥५९७॥  
 तैसें आरंभिलें । जाईल सत्कर्म । मुखें ब्रह्मनाम । उच्चारोनि ॥५९८॥  
 परी विनियोग । ठाउका नसेल । तरी तें होईल । वृथा सारें ॥५९९॥  
 दैवयोगें संत-महंतांचा मेळा । जरी घरीं आला । चालोनियां ॥६००॥  
 तरी मूढपणें । होतां अनादर । लोपतें साचार । पुण्य जैसें ॥६०१॥  
 किंवा सुवर्णाचे । निर्मळ सुंदर । नाना अलंकार । जोडोनियां ॥६०२॥  
 तयांची एकत्र । बांधोनियां मोट । जैसा निजकंठ । शोभवावा ॥६०३॥  
 तैसें जरी तोंडीं । जडे ब्रह्मनाम । घडे हातीं कर्म । सात्त्विक तें ॥६०४॥  
 तरी धनंजया । विनियोगाविण । तें हि सर्व जाण । वायां जाय ॥६०५॥  
 बाळकासी भूक । लागलीसे चांग । अन्नाचा हि ढीग । सन्निधानीं ॥६०६॥  
 परी खावें कैसें । कळे ना तयास । म्हणोनि उपास । घडे जैसा ॥६०७॥  
 किंवा तेल वात । आणिक तो वृद्धि । समीप हीं तिन्ही । असोनि हि ॥६०८॥  
 लावावया दीप । ठाउकी ना युक्ति । तरी नोहे प्राप्ति । प्रकाशाची ॥६०९॥  
 तैसें जरी कर्म । करावया चांग । लाधला प्रसंग । यथोचित ॥६१०॥  
 आठवला मंत्र । तरी हि तें जाण । विनियोगाविण । वृथा सर्व ॥६११॥  
 म्हणोनियां पर-ब्रह्माचें जें एक । वर्णत्रयात्मक । नाम असे ॥६१२॥  
 आतां विनियोग । तयाचा सांगेन । एक सावधान । धनंजया ॥६१३॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः ।

प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥

अक्षरें हीं तीन । योजावीं किरिटी । आदि-मध्य-अंती । कर्माचिया ॥६१४॥  
 ब्रह्मवेत्त्यांलागीं । ब्रह्मसाक्षात्कार । जाहला साचार । ह्या चि मंत्रें ॥६१५॥  
 परब्रह्मीं ऐक्य । लाभावें म्हणोन । जाती ज्ञातेजन । ह्या चि मागें ॥६१६॥  
 वेदशास्त्रविधि । सर्व हि जाणोन । यज्ञतपोदान । आचरिती ॥६१७॥

ध्यानें तो अकार । करिती गोचर । मग नामोच्चार । मुखें त्याचा ॥६१८॥  
 ह्यापरी अकार । करोनि प्रकट । मग तो चि स्पष्ट । उच्चारोनि ॥६१९॥  
 होती ते प्रवृत्त । करावया कर्म । 'प्रणवाचें वर्म । जाणोनि हें ॥६२०॥  
 अभंग प्रदीप । जैसा अंधारांत । नातरी समर्थ । स्नेही रानीं ॥६२१॥  
 तैसा कर्मारंभीं । जाणावा अकार । समर्थ साचार । मुक्तिदाता ॥६२२॥  
 स्वधर्म पाळोन । मेळविलें धन । व्हावें तें अर्पण । देवालागीं ॥६२३॥  
 ह्या चि साठीं अग्नी-ब्राह्मणांच्या द्वारा । यज्ञव्यवहार । आरंभिती ॥६२४॥  
 'आहवनीयादि । अग्नीमार्जीं जाण । करिती यजन । यथाविधि ॥६२५॥  
 बहु बोलूं काय । नाना यज्ञयाग । आचरोनि चांग । निष्कामत्वे ॥६२६॥  
 त्या त्या उपाधींचा । करिती ते त्याग । देती उपसर्ग । तयांसी ज्या ॥६२७॥  
 स्वधर्मकरोन । मेळविलें द्रव्य । शुद्ध नीतिन्याय । विचारोनि ॥६२८॥  
 तें तें देशकाळ । सत्पात्र पाहोन । करिती ते दान । भूम्यादिक ॥६२९॥  
 \*कृच्छ्र \*एकान्तर । \*चांद्रायणादिक । नाना व्रतें देख । आचरोनि ॥६३०॥  
 शरीरींचे सप्त । धातु शोषोनियां । उग्र तपश्चर्या । करिती ते ॥६३१॥  
 ऐशापरी जाण । यज्ञतपोदान । बंधक म्हणोन । गाजतें जें ॥६३२॥  
 तें चि तयां होय । मोक्षाचें साधन । नाम हें पावन । उच्चारितां ॥६३३॥  
 भाररूप होय । 'नाव जी भूवरी । ती च जैसी तारी । जळामार्जीं ॥६३४॥  
 तैसीं जीं बंधक । तीं च कर्में देख । कैवल्यदायक । येणें नामें ॥६३५॥  
 असो अकाराचें । धेवोनि साहाय्य । ऐसें जें जें होय । यज्ञादिक ॥६३६॥  
 तें तें फलद्रूप । होऊं पाहें जेव्हां । प्रयोजिती तेव्हां । तत्कार तो ॥६३७॥

तदित्यनभिसंधाय फलं यज्ञतपःक्रियाः ।

दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥२५॥

सर्व हि जगाच्या । पलीकडे आहे । सर्वांसी हि पाहे । ऐसें जें का ॥६३८॥  
 तया ब्रह्माची च । दाखवाया खूण । असे 'प्रयोजन । तत शब्दाचें ॥६३९॥  
 ऐशा ततब्रह्माचें । सर्वादि म्हणोन । अंतरीं चिंतन । करोनियां ॥६४०॥

मग तो तत् शब्द । उच्चारोनि चांग । कर्मफलत्याग । साधिती ते ॥६४१॥  
 तथा तद्ब्रह्माते । होवोत अर्पण । कर्म तीं संपूर्ण । फलासह ॥६४२॥  
 भोगावया आम्हां । न उरो कांहीं च । ऐसें वाचे साच । उच्चारिती ॥६४३॥  
 समर्पोनि ऐसीं । यज्ञयागादिक । कर्म तदात्मक । ब्रह्मालागीं ॥६४४॥  
 धनंजया जाण । कर्मबंधांतून । 'न मम' म्हणोन । मुक्त होती ॥६४५॥  
 असो अकारें जें । आरंभिलें कर्म । तत्कारें तें ब्रह्म-रूप झालें ॥६४६॥  
 तरी जंव राहे । कर्ता वेगळा च । तंव अपुरा च । कार्यभाग ॥६४७॥  
 उदकीं लवण । विरालें संपूर्ण । तरी क्षारपण । उरे जैसें ॥६४८॥  
 तैसें सर्व कर्म । ब्रह्मरूप होत । परी उरे द्रैत । कर्तेपणें ॥६४९॥  
 आणि दुजें जों जों । निपजलें जाय । तों तों जोडे भय । संसाराचें ॥६५०॥  
 ऐसें कृष्णदेव । बोलती आपण । तैसें चि वचन । वेदांचें हि ॥६५१॥  
 म्हणोनि हें न्यून । काढावें भरोन । होवोनियां लीन । परब्रह्मीं ॥६५२॥  
 परब्रह्माहून । कर्ता नव्हे भिन्न । ऐसें एकपण । अनुभवावें ॥६५३॥  
 ह्या चि साठीं देवें । योजिला 'सत' शब्द । अभेद आनंद । लाभे जेणें ॥६५४॥  
 कर्म यज्ञादिक । अकार-तत्कारीं । केलीं जीं ह्या परी । ब्रह्मरूप ॥६५५॥  
 ज्यां कर्मांलागीं । धनंजया जाण । प्रशस्त म्हणोन । वाखाणिती ॥६५६॥  
 तेथें सत शब्दाचा । कैसा विनियोग । तें चि सांगूं चांग । एक आतां ॥६५७॥

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।

प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥२६॥

'असत्' पदार्थाचा । करोनि निरास । दाविलें ब्रह्मास । सत् शब्दें ह्या ॥६५८॥  
 पालटे ना देश-कालपरत्वे जें । अव्यंग सहजें । असे नित्य ॥६५९॥  
 असे अखंडित । आपुल्या चि ठायीं । आपण चि पाही । आपणातें ॥६६०॥  
 लाभे आत्मरूप । घेतां चि आश्रय । जेथें भिथ्या होय । विश्व सारें ॥६६१॥  
 ऐशा परब्रह्मीं । सच्छब्दें तल्लीन । व्हावें कर्तेपण । विस्मरोनि ॥६६२॥  
 मग ब्रह्मरूप । कर्म तें प्रशस्त । ब्रह्मरूप होत । कर्ता तो हि ॥६६३॥

ॐकार-तत्कारें । कर्म ब्रह्माकार । उरे ना संस्कार । हा हि जेथें ॥६६४॥  
 तेथें सत् शब्दाचें । होय प्रयोजन । अंतरंग खूण । जाणावी ही ॥६६५॥  
 ऐसा विनियोग । सच्छब्दाचा साच । मीं नव्हे देवें च । सांगितला ॥६६६॥  
 बोलिलों हें मी च । ऐसें म्हणूं जावें । तरी पात्र व्हावें । द्वैतदोषा ॥६६७॥  
 म्हणोनियां माझे । नव्हेत हे बोल । बोल हे सकळ । देवाचे चि ॥६६८॥  
 आणिक हि एके । परी साहाय्यक । सत् शब्द सात्त्विक- । कर्मा होय ॥६६९॥  
 यज्ञदानादिक । सत्कर्मांचें जाण । चाले आचरण । यथाशास्त्र ॥६७०॥  
 परी तयांमार्जीं । प्रसंगेंकरोन । जातसे राहोन । न्यून जेव्हां ॥६७१॥  
 थांबे जैसें सर्व । शरीराचें यंत्र । एखादें चि 'गात्र । ढिलें होतां ॥६७२॥  
 किंवा चक्रामार्जीं । घडतां विघाड । तेणें पडे बंद । रथ जैसा ॥६७३॥  
 तैसें सत्कर्मांसी । असत्कर्मपण । येई गुणाविण । एखादिया ॥६७४॥  
 तेव्हां ॐकाराचें । आणि तत्काराचें । साहाय्य तें साचें । घेवोनियां ॥६७५॥  
 तयां सत्कर्मांचा । करी 'जीर्णोद्धार । स्वभावे साचार । सत् शब्द हा ॥६७६॥  
 आपुल्या सामर्थ्यें । कर्मांसी सत्पण । आणी असत्पण । फेडोनियां ॥६७७॥  
 दिव्यौषधी जैसी । द्यावी 'व्याधिग्रस्ता । किंवा भयभीता । द्यावा धीर ॥६७८॥  
 तैसें कर्मांमार्जीं । जें जें राहे न्यून । तें काढी भरोन । सत् शब्द हा ॥६७९॥  
 वाटसरूलागीं । पडोनियां भूल । न दिसे पुढील । वाट जैसी ॥६८०॥  
 पारख्याहातून । जैसी घडे चूक । रत्न अमोलिक । पारखितां ॥६८१॥  
 व्यवहारीं हें तों । जैसें घडे पार्था । येथें हि सर्वथा । तैशा रीती ॥६८२॥  
 घडोनि प्रमाद । कर्म 'अमर्याद । होवोनि निषिद्ध- । वाटे चाले ॥६८३॥  
 तेव्हां तया कर्मा । करावया शुद्ध । सर्वथा सत् शब्द । 'प्रयोजिती ॥६८४॥  
 ॐकार तत्कार । दोहोंहानि थोर । अर्जुना साचार । सच्छब्द हा ॥६८५॥  
 लोखंडासी व्हावा । परिसाचा स्पर्श । भेटावी ओढ्यास । गंगा जैसी ॥६८६॥  
 किंवा मृतालागीं । कराया सजीव । अमृत-वर्षाव । व्हावा जैसा ॥६८७॥  
 तैसें दुष्कर्मांसी । कराया पावन । जाण प्रयोजन । सच्छब्दाचें ॥६८८॥

असो सच्छब्दाचें । ऐसें थोरपण । असे पार्था जाण । असामान्य ॥६८९॥  
 नामाचें हें 'वर्म' । जाणोनि पाहतां । नाम चि तत्त्वतां । परब्रह्म ॥६९०॥  
 ॐ तत् सत् नाम । दाखवी तें स्थान । 'प्रकाशे जेथोन । दृश्यजात ॥६९१॥  
 बोलिलें जें स्थान । ब्रह्म ऐशा नावें । शुद्ध जें स्वभावें । 'निर्विशेष ॥६९२॥  
 तथा ब्रह्माची च । अंतरंग खूण । दाखविती तीन । अक्षरें हीं ॥६९३॥  
 नामा आणि ब्रह्मा । अभेद आश्रय । नभालागीं होय । नभ जैसें ॥६९४॥  
 सूर्य चि तो जैसा । सूर्यातें प्रकट । करी आकाशांत । उगवतां ॥६९५॥  
 तैसें चि ॐ तत्सत् । नाम हें साचार । ब्रह्मसाक्षात्कार । घडवितें ॥६९६॥  
 म्हणोनियां पार्था । अक्षरें हीं तीन । ब्रह्म चि तूं जाण । मूर्तिमंत ॥६९७॥

यज्ञे तपासि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।  
 कर्म चैव तदर्थार्थं सदित्येवाभिधीयते ॥२७॥

यज्ञ तप दान । घडे जें हातून । कर्म पूर्णापूर्ण । असो कैसें ॥६९८॥  
 परी परिसाचा । स्पर्श होतां जैसें । चोख हीन ऐसें । 'नुरे 'हेर्मा ॥६९९॥  
 तैसीं सर्वकर्में । केलीं ब्रह्मार्पण । तरी होती पूर्ण । ब्रह्मरूप ॥७००॥  
 जैसे नदी नद । सागरा मिळोन । राहती होवोन । सागर चि ॥७०१॥  
 तैसें पूर्णापूर्ण । उरे चि ना कर्मी । ऐसीं परब्रह्मीं । अर्पितां तीं ॥७०२॥  
 ब्रह्मनामाचें हें । सामर्थ्य अपार । बोलिलों साचार । प्रज्ञावंता ॥७०३॥  
 तेविं एक एक । अक्षराचा चांग । तुज विनियोग । सांगितला ॥७०४॥  
 ब्रह्मनामाचें ह्या । रहस्य हें भलें । तुज आकळलें । काय पार्था ॥७०५॥  
 तरी तुझा आतां । एकनिष्ठ भाव । असूं दे सदैव । ह्या चि नामीं ॥७०६॥  
 तेणें जीवा लाभे । जीवनमुक्तपण । नुरोनि बंधन । प्रपंचाचें ॥७०७॥  
 तरी सत् शब्दाच्या । विनियोगें जाण । घडे आचरण । कर्माचें जें ॥७०८॥  
 तें तों धनंजया । असे सांगोपांग । 'अनुष्ठान चांग । वेदाचें चि ॥७०९॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।  
 असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥२८॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे  
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम  
सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

परी श्रद्धाहीन । सर्वथा होवोन । पंथ हा सोडोन । दुराग्रहे ॥७१०॥  
मग अश्वमेध । केले जरी कोटी । किंवा एकांगुष्ठी । दीर्घकाळ ॥७११॥  
राहोनियां उभे । केली तपश्चर्या । रत्नें भरोनियां । दिली पृथ्वी ॥७१२॥  
समुद्राएवढे । बांधिले तलाव । वृथा चि तें सर्व । जाण पार्थी ॥७१३॥  
खडकीं ती व्हावी । जैसी मेघवृष्टि । कीं द्यावी आहुति । राखेमार्जी ॥७१४॥  
किंवा साउलीसी । द्यावें आलिंगन । हाणावें गगन । किंवा हातें ॥७१५॥  
तैसा आघवा तो । व्यर्थ खटाटोप । यज्ञ दान तप । इत्यादींचा ॥७१६॥  
कांहीं च ना जोडे । तेल किंवा पेंड । गाळितां दगड । घाण्यामार्जी ॥७१७॥  
होतें तैसें राहे । दारिद्र्य तें गांठीं । श्रमोनि शेवटीं । काय लाभ ॥७१८॥  
नातरी पदरीं । आपुलिया जरी । बांधिली शिदोरी । खापरीची ॥७१९॥  
तरी निवारी ना । जैसी ती भुकेस । घडे उपवास । जावें तेथें ॥७२०॥  
तैसें यज्ञ-तप- । दानादिक जाण । विनियोगेविण । केलें जें जें ॥७२१॥  
तेणें इहलोकीं । नोहे सुखभोग । कोठोनि तो मग । परलोकीं ॥७२२॥  
म्हणोनि कौन्तेया । करावा जो धंदा । ब्रह्मनामश्रद्धा । सांडोनियां ॥७२३॥  
इहपरलोकीं । तो तो वृथा शीण । देव नारायण । बोले ऐसें ॥७२४॥  
जणूं पंचानन । पाप-कुंजरासी । त्रिताप-तमासी । भास्कर जो ॥७२५॥  
वीर नरहरि । श्रीधर मुरारि । बोले तो श्रीहरि । ऐसें जेव्हां ॥७२६॥  
तेव्हां पौर्णिमेचा । चंद्र जैशा परी । चांदिण्यामाझारीं । लीन व्हावा ॥७२७॥  
तैसा एकाएकीं । भक्त तो अर्जुन । जाहला तल्लीन । निजानंदीं ॥७२८॥  
जेथें बाणाग्रानीं । संग्राम हा वाणी । घेतसे मापोनि । जीवितासी ॥७२९॥  
तेथें कैसा पार्थ । कर्कश-प्रसंगीं । राज्य उपभोगी । स्वानंदाचें ! ॥७३०॥  
अर्जुनावांचोन । आणिकाचे ठायीं । भाग्योदय नाहीं । ऐसा आज ॥७३१॥

संजय तो बोले । कौरवांच्या राया । गुण देखोनियां । शत्रूचे हि ॥७३२॥  
वाटे आम्हांलागीं । आत्मसुखदाता । गुरु चि सर्वथा । लाभला हा ॥७३३॥  
जरी पुसता ना । देवासी अर्जुन । तरी देव ज्ञान । सांगते का ! ॥७३४॥  
मग आम्हांलागीं । कैसा परमार्थ । जोडता हा येथ । ऐशा रीती ॥७३५॥  
जन्म-मरणाच्या । चर्कीं गोते खात । होतो अंधारांत । अज्ञानाच्या ॥७३६॥  
परी मंदिरांत । आत्मप्रभेचिया । प्रवेशलों राया । आज येथें ॥७३७॥  
आम्हांतुम्हांवरी । एवढा हा थोर । केला उपकार । पंडु-सुते ॥७३८॥  
म्हणोनि हा वाटे । व्यासांचा बंधू च । होय आम्हां साच । गुरुदेव ॥७३९॥  
मग मनीं म्हणे । पुरे करूं बोल । नातरी खुपेल । रायालागीं ॥७४०॥  
अहो श्रोते जन । पार्थ-गुण-गान । संजयें ठेवोन । एकीकडे ॥७४१॥  
पार्थें मागुती जें । देवासी पुसिलें । बोलूं आरंभिलें । तें चि मग ॥७४२॥  
तें चि पुढें आतां । सांगेन तुम्हांस । ऐका म्हणे दास । निवृत्तीचा ॥७४३॥

इति श्री स्वामी स्वरूपानंदविरचित अभंग-ज्ञानेश्वरी  
सप्तदशोऽध्यायः ।

हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः । श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।





# अभंग — ज्ञानेश्वरी

## अध्याय अठरावा

जय जय गुरुदेवा । होसी तूं निर्मल । भक्तांसी मंगल । सर्वा परी ॥१॥  
जन्म—<sup>१</sup>जरारूपी । जें का मेघजाल । होवोनि <sup>२</sup>अनिल । भेदिसी तें ॥२॥  
जय जय गुरुदेवा । होसी तूं प्रबळ । सर्व अमंगळ । <sup>३</sup>निर्दाळिता ॥३॥  
वेदशास्त्ररूपी । वृक्षाचें तूं फळ । होसी सर्वकाळ । फलदायी ॥४॥  
जय जय गुरुदेवा । होसी तूं सकल । स्वभावे <sup>४</sup>वत्सल । विरक्तांसी ॥५॥  
काळाचा हि खेळ । तुझ्या चि आधीन । होसी तूं संपूर्ण । कलातीत ॥६॥  
चंचल चित्तासी । पिवोनि <sup>५</sup>तुंदिल । होसी तूं निश्चल । गुरुदेवा ॥७॥  
करावी प्रकट । सृष्टि <sup>६</sup>अविरत । क्रीडा ही अत्यंत । प्रिय तुज ॥८॥  
अखंडानंदाचें । होतसे स्फुरण । तुझ्या चि पासोन । गुरुदेवा ॥९॥  
टाकिमी जाळून । अशेष हि दोष । नित्य तूं निर्दोष । गुरुदेवा ॥१०॥  
विश्वा मूळभूत । होमी तूं साचार । तुझा जयजयकार । गुरुदेवा ॥११॥  
असो गुरुदेवा । तुझा जयजयकार । होसी तूं साचार । स्वयंप्रभ ॥१२॥  
जगद्रूपी मेघ । पोटीं सांठवितें । तूं चि आकाश तें । गुरुदेवा ॥१३॥  
होसी तूं आरंभ—<sup>७</sup>स्तंभ त्रिभुवना । संसार—नाशना । गुरुदेवा ॥१४॥  
जयजय गुरुदेवा । शुद्ध तूं अपार । दयेचा सागर । तूं चि होसी ॥१५॥  
अविद्या—उद्यान । कराया उध्वस्त । होसी तूं समर्थ । हत्ती जैसा ॥१६॥  
मदनाचा मद । भेदिसी गा तूं च । शमदमें साच । गुरुदेवा ॥१७॥

जय जय गुरुदेवा । होसी अविकार । करिसी संहार । त्रितापांचा ॥१८॥  
 डंखावया धावे । कामरूपी सर्प । तयाचा तूं 'दर्प । जिरविसी ॥१९॥  
 भक्तांचिया भक्ति-। प्रेमाचें मंदिर । तेथींचा सुंदर । 'प्रदीप तूं ॥२०॥  
 जय जय गुरुदेवा । अद्वितीय होसी । कळे ना मायेसी । रूप तुझे ॥२१॥  
 जयांचिया ठायीं । अपार विरक्ति । ते चि एक होती । प्रिय तुज ॥२२॥  
 आवडीनें होसी । भक्तांच्या आधीन । भजावया स्थान । तूं चि एक ॥२३॥  
 जय जय गुरुदेवा । कल्पतरू तूं च । 'अकल्पित साच । वस्तुदाता ॥२४॥  
 आत्मज्ञानवृक्ष-। बीज अंकुराया । होसी गुरुराया । भूमि तूं च ॥२५॥  
 असो गुरुदेवा । होसी 'निर्विशेष । वर्णावें विशेष । काय आतां ॥२६॥  
 नाना परिभाषा । ऐशा वापरून । करावें स्तवन । तरी कैसें ॥२७॥  
 विशेषणीं ज्या ज्या । विशेषावें तूतें । दृश्य नव्हे तें तें । रूप तुझे ॥२८॥  
 जाणतसें हें मी । म्हणोनियां मज । स्तवनाची लाज । वाटे ऐशा ॥२९॥  
 परी स्व-मर्यादा । सोडी ना सागर । बोल हा साचार । तोंवरी च ॥३०॥  
 जोंवरी तो साक्षात् । पूर्ण-चंद्रोदय । न देखता होय । नभामार्जी ॥३१॥  
 स्वयें देई काय । 'चंद्रम्यालागोनि । सोमकांत मणि । अर्घ्यादिक ॥३२॥  
 तो चि तयालागीं । फोडोनि पाझर । घेई उपचार । करवोनि ॥३३॥  
 वसंताच्या संगें । नेणों अकस्मात् । कैसे 'पल्लवित । 'होती वृक्ष ॥३४॥  
 तेथें पल्लवित । न व्हावें आपण । असे का स्वाधीन । तयांच्या हें ? ॥३५॥  
 रवि-किरणांच्या । संगें कमलिनी । लज्जा विसरोनि । फुले जैसी ॥३६॥  
 नातरी उदकें । स्पर्शिलें लवण । तन्मय होवोन । जाय जैसें ॥३७॥  
 तैसें तुझे होतां । श्रीगुरो स्मरण । विसरें मीपण । तेथ माझे ॥३८॥  
 तृप्ति होतां मग । एकापाठीं एक । ठेकर अनेक । येती जैसे ॥३९॥  
 तैसें मज केलें । तुवां गुरुदेवा । हरोनि आघवा । अहंभाव ॥४०॥  
 स्तवनाच्या 'मिषें । तूं चि माझ्या वाचे । लाविलेंसी साचें । वेड ऐसें ॥४१॥  
 ए-हवीं मीपण । माझे आठवोन । करावें स्तवन । जरी तुझे ॥४२॥

तरी गुणांसंगें । तुज गुणातीता । लेखिलें सर्वथा । ऐसें होय ॥४३॥  
 तुझे गुणातीता । गुण दाखवोन । करावें वर्णन । कैशा रीती ॥४४॥  
 श्रीगुरो, स्वरूप । तुझे एकरस । तेथें अवकाश । गुणां कोठें ? ॥४५॥  
 फोडोनियां मोतीं । मग सांधावें तें । प्रकार हा येथें । तैसा होय ॥४६॥  
 त्याहुनी तें होतें । अखंड स्वभावे । तैसें चि ठेवावें । हें चि भलें ! ॥४७॥  
 तुज माय बाप । ऐसें संबोधून । करावें स्तवन । जरी तुझे ॥४८॥  
 तरी लेंकरूं ह्या । उपाधीचा दोष । घडे निर्विशेष । तुझ्या रूपां ॥४९॥  
 तुज म्हणों स्वामी । दास मी होवोन । 'सोपाधिकपण । तरी तेथें ॥५०॥  
 ह्यापरी 'सापेक्ष । शब्द 'प्रयोजून । तुझे मोठेपण । काय वर्णूं ॥५१॥  
 सर्वा अंतर्बाह्य । व्यापक तूं सम । ऐसा आत्माराम । म्हणूं तुज ॥५२॥  
 तरी घालविलें । आंतुनी बाहेर । तुज मी साचार । ऐसें होय ॥५३॥  
 म्हणोनि यथार्थ । होईल स्तवन । ऐसें विशेषण । जर्गी कोठें ? ॥५४॥  
 घालिसी ना अंगीं । श्रीगुरो, भूषण । साच मौनाविण । दुजें कांहीं ॥५५॥  
 न करणें कांहीं । हें तुझे पूजन । मौन हें स्तवन । तुझे साच ! ॥५६॥  
 राहणें जें स्व-स्थ । अहंता सांडोन । तें चि संनिधान । तुझे नित्य ॥५७॥  
 भुलोनियां मोहें । कोणी वेडापिसा । बडबडे जैसा । हवें तें तें ॥५८॥  
 तैसें माझ्या मुखें । झालें जें स्तवन । करावें सहन । माउली तूं ॥५९॥  
 आतां निरूपणीं । प्रकटो गीतार्थ । आशीर्वादे येथ । आपुलिया ॥६०॥  
 तेणें संतांचिया । सभेमार्जी बोल । माझे पावतील । मान्यतेस ॥६१॥  
 तंव ते बोलती । श्रीगुरु निश्चि । कां गा ही विनंति । वारंवार ॥६२॥  
 वारंवार काय । घांसावा परीस । हेमत्व लोहास । आणावया ॥६३॥  
 तंव ज्ञानदेव । म्हणे कृपावंता । चित्त द्यावें आतां । ग्रंथासी ह्या ॥६४॥  
 अहो गीतारूप । रत्न-मंदिराचा । कळस चि साचा । अध्याय हा ॥६५॥  
 देखा अर्थरूप । चिंतामणिगुक्त । जो का दाखवीत । सर्व गीता ॥६६॥  
 जरी जातां येतां । पडला दृष्टीस । दुरोनि कळस । देवळाचा ॥६७॥

तरी देवाची च । भेट झाली साच । मानिती ऐसें च । लोकीं जैसें ॥६८॥  
 येथें हि तैसा च । जाणावा प्रकार । सर्व गीतासार । अध्याय हा ॥६९॥  
 एक चि अध्याय । पाहतां हा नीट । सर्व दिसे स्पष्ट । गीताशास्त्र ॥७०॥  
 म्हणोनि अध्याय । हा चि अठरावा । कळस बरवा । बोलूं ऐसें ॥७१॥  
 कळस हा ऐसा । गीताप्रासादाचा । उभारिला साचा । व्यासदेवें ॥७२॥  
 मंदिर संपूर्ण । झालें उभारून । दाखवी ही खूण । कळस तो ॥७३॥  
 तैसी गीता येथ । जाहली समाप्त । ऐसें दाखवीत । अध्याय हा ॥७४॥  
 देखा व्यासदेव । थोर कलाकार । सर्वथा चतुर । प्रज्ञावंत ॥७५॥  
 तेणें वेदरूपी । रत्नांचा पर्वत । प्रज्ञाबळें थेट । चढोनियां ॥७६॥  
 उपनिषदार्थ । माळभूमि भली । खणोनि काढिली । कौशल्यानें ॥७७॥  
 तेथें धर्म अर्थ । आणि कामरूप । धोंडे जे अमूप । आढळले ॥७८॥  
 धेवोनि ते महा- । भारताचा तट । उभारिला नीट । सभोवतीं ॥७९॥  
 मार्जा आत्मज्ञान- । रूपी अखंडैक । साधोनि बैठक । चिरेयाची ॥८०॥  
 श्रीहरीपार्थाच्या । संवादाचें भलें । चातुर्यें रचिलें । मंदिर हें ॥८१॥  
 सर्व शास्त्रार्थाचें । घालोनि भरण । ओळवा लावून । वैराग्याचा ॥८२॥  
 मोक्षस्वरूपाचा । साधिला आकार । मांडणी सुंदर । करोनियां ॥८३॥  
 आरंभापासोन । भूमि चोखाळून । रचना साधून । यथायोग्य ॥८४॥  
 ह्यापरी अध्याय । पंधरापर्यंत । आलें पुरें होत । मंदिर हें ॥८५॥  
 वरी सोळावा जो । अध्याय सुंदर । होय तो आकार । घुमटाचा ॥८६॥  
 त्या हि वरी जो का । सप्तदशाध्याय । बैठक ती होय । कळसाची ॥८७॥  
 वरी स्वभावे हा । मांडिला कळस । देखा अष्टादश । अध्यायाचा ॥८८॥  
 मग गीताकार । व्यासाचें निशाण । राहे फडकोन । त्या हि वरी ॥८९॥  
 म्हणोनि चढती । वाढती भूमिका । आकारली जी का । पूर्वाध्यायीं ॥९०॥  
 तिथेलागीं येथ । संपूर्णता येत । ऐसें दाखवीत । अध्याय हा ॥९१॥  
 कळसाच्या योगें । येई स्पष्टतेसी । संपूर्णता जैसे । मंदिराची ॥९२॥

तैसा हा अध्याय । दाखवी साचार । गीतेचें मंदिर । संपूर्णत्वे ॥९३॥  
 असो, ऐसें थोर । गीतेचें मंदिर । रचोनि चतुर । व्यास-देवें ॥९४॥  
 नानापरी जीवां । राखिलें सर्वथा । साच मोक्षपंथा । दाखवोनि ॥९५॥  
 गीतामंदिरासी । प्रदक्षिणा कोणी । घालिती करोनि । आवर्तन ॥९६॥  
 कोणी श्रवणाचें । करोनि निमित्त । लोळती छायेंत । मंदिरीं ह्या ॥९७॥  
 अवधानरूपी । विडापैसा कोणी । समीप घेवोनि । आपुलिया ॥९८॥  
 मग अर्थज्ञान- । रूपी गाभाऱ्यांत । सहजें निभ्रांत । प्रवेशती ॥९९॥  
 तेथें निजबोधें । श्रीहरी गोपाळ । भेटतो तत्काळ । त्यांलागीं ॥१००॥  
 गीता मंदिरीं ह्या । सर्वांलागीं साच । होय सारखा च । मोक्षलाभ ॥१०१॥  
 एक चि पक्कान्न । लाभतें सर्वास । बैसतां पंक्तीस । समर्थाच्या ॥१०२॥  
 तैसें अर्थज्ञानें । श्रवणें पठणें । एक चि पावणें । मोक्ष येथ ॥१०३॥  
 जाणोनि हें सार । बोलिलों साचार । गीता हें मंदिर । वैष्णवांचें ॥१०४॥  
 तेविं अठराव्या । अध्यायालागोनि । कळस म्हणोनि । वाखाणिलें ॥१०५॥  
 आतां सतराव्या । अध्यायाशेवटीं । देव जगजेठी । बोलिले जें ॥१०६॥  
 तथाची संगति । कैसी अष्टादशीं । सांगूं दिसे तैसी । उपपत्ति ॥१०७॥  
 गंगे-यमुनेचे । ओघ जरी भिन्न । एक चि त्यांतून । पाणी वाहे ॥१०८॥  
 भिन्नाकृति दोन । एका चि शरीरीं । जैशा अर्धनारी- । नटेश्वरीं ॥१०९॥  
 किंवा प्रतिदिन । जरी कला भिन्न । एक चि संपूर्ण । चंद्र जैसा ॥११०॥  
 चारी चरणांचा । तैसा एक श्लोक । श्लोक हि अनेक । एकाध्यायीं ॥१११॥  
 आणि अध्याय हि । भिन्न भिन्न ऐसे । सिद्धान्त तो असे । परी एक ॥११२॥  
 गुंफिलीं अनेक । रत्न रत्नहारीं । परी जैसी दोरी । एक चि ती ॥११३॥  
 एकावळीमाजीं । जरी नाना मोतीं । परी जैसी कांति । एक चि ती ॥११४॥  
 फुलें फुलसर । मोजिले अनेक । परी द्रुति एक । असे जैसी ॥११५॥  
 तैसे येथें श्लोक । अध्याय अनेक । परी देवें एक । सांगितलें ॥११६॥  
 अठरा अध्याय । सात शतें श्लोक । अभिप्राय एक । दुजें नाहीं ॥११७॥

तो चिं 'अभिप्राय । सन्मुख ठेवून । ग्रंथ-विवरण । मीं हि केलें ॥११८॥  
भूमिका ही माझी । धेवोनियां ध्यानीं । आतां निरूपणीं । चित्त द्यावें ॥११९॥  
तरी सतराव्या । अध्यायाशेवटीं । देव जगजेठी । काय बोले ॥१२०॥  
म्हणे ऐकें पार्था । करावा जो धंदा । ब्रह्मनामश्रद्धा । सांडोनियां ॥१२१॥  
इह-परलोकीं । तो तो वृथा शीण । कृतार्थ जीवन । नाहे तणें ॥१२२॥  
एकोनियां ऐसें । देवाचें भाषण । पार्थ आनंदून । मनीं म्हणे ॥१२३॥  
'ब्रह्मनामनिष्ठां । देवें वाखाणिलें । कनिष्ठ लेखिलें । कर्मठांसी ॥१२४॥  
कर्मठ तो अंध । अज्ञानी लाचार । देखेना ईश्वर । सर्वव्यापी ॥१२५॥  
तरी तया कैसें । कळावें हें वर्म । ध्यावें ब्रह्मनाम । श्रद्धायुक्त ॥१२६॥  
आणि श्रद्धा ती हि । बोलिलीसे हीन । रज-तमोगुण-। युक्त जरी ॥१२७॥  
मग जडावी ती । ब्रह्मनामीं कैसी । पारखी सत्त्वासी । जरी होय ॥१२८॥  
नाड्यावरी जैसें । नाचणें बेताल । किंवा जैसा खेळ । नागिणीशीं ॥१२९॥  
नातरी शस्त्रासी । देणें आलिंगन । घातासी कारण । होय जैसें ॥१३०॥  
तैसें कर्मठाचें । कर्म तें कठिण । जन्ममृत्युंतून । सोडवी ना ॥१३१॥  
तया कर्मांमार्जीं । ऐसे दुष्ट धर्म । केलें ब्रह्मनाम । सांडोनि जें ॥१३२॥  
असो, सुदैवें हें । कर्म यथासांग । घडे तरी चांग । ज्ञान जोडे ॥१३३॥  
एन्हवीं हें कर्म । घाली नरकांत । 'द्विधा गति येथ । दिसे ऐसी ॥१३४॥  
कर्मांमार्जीं विघ्न । एवढें दारुण । कर्मठां कोडून । मग मोक्ष ? ॥१३५॥  
म्हणोनि कर्माचा । फिटावया पांग । केला जावो त्याग । संपूर्णत्वे ॥१३६॥  
स्वीकारिला जावो । सुखें हा संन्यास । दोष औषधास । नुरे जेथें ॥१३७॥  
नुरे जेथें जन्म-। मरणाची भीति । होय आत्मप्राप्ति । जेणें योगें ॥१३८॥  
जे का आत्मज्ञाना । बोलाविते मंत्र । होती जे सुक्षेत्र । 'ज्ञानपीका ॥१३९॥  
आणि आत्मज्ञाना । ध्यावया ओढून । होती जे साधन । सूत्रतंतु ॥१४०॥  
ऐसे त्याग आणि । संन्यास हे दोन्ही । सुखें आचरोनि । मिळे मुक्ति ॥१४१॥  
तरी आतां तें च । पुसावें देवातें । ऐसें मनीं पार्थें । योजोनियां ॥१४२॥

१ हेतु; अर्थ. २ ब्रह्मनामांत रंगलेल्यांना. ३ दूर; परकी. ४ दोन प्रकारची. ५ ज्ञानरूपी पीक येण्याला.  
अ. जा. ३८

त्याग-संन्यासाचें। व्हावें स्पष्ट ज्ञान। म्हणोनि तो प्रश्न। करी जेव्हां ॥१४३॥  
 तेव्हां तयालार्गीं। द्यावया उत्तर। देव शार्ङ्गधर। बोलिले जें ॥१४४॥  
 तो चि अठरावा। अध्याय हा जाणा। एक आत्मज्ञाना। दाखविता ॥१४५॥  
 असो ऐसा 'जन्य-। जनक-संबंध। दाविला विशद। अध्यायांचा ॥१४६॥  
 तरी आतां एका। तो चि प्रश्न भला। पार्थें जो पुसिला। श्रीहरीमी ॥१४७॥  
 अहो सतराव्या। अध्यायाअखेर। सांगोनि साचार। ब्रह्मनाम ॥१४८॥  
 देवें संपविलें। आपुलें भाषण। तेणें मनीं खिन्न। धनंजय ॥१४९॥  
 ए-हवीं 'तत्त्वार्थ'। निश्चित तो भला। होता आकळला। तयालार्गीं ॥१५०॥  
 परी देव आतां। राहतील स्वस्थ। पार्थासी हें तेथ। साहवेना ॥१५१॥  
 तृप्त झालें वत्स। तरी तें धेनूस। दूर जावयास। देई काय ? ॥१५२॥  
 अहो एकनिष्ठ। प्रीतीचा प्रकार। जाणावा साचार। ऐसा चि तो ॥१५३॥  
 कारणावांचोन। प्रियजनासवें। बोलत बैसावें। ऐसें वाटे ॥१५४॥  
 तया पाहिलें चि। पहावें फिरोन। पुनःपुन्हां मन। इच्छी ऐसें ॥१५५॥  
 प्रियवस्तुभोग। घेतां एकवार। तो चि वारंवार। घ्यावा वाटे ॥१५६॥  
 प्रेमाची ही जाति। देखा ऐसी साच। मूर्ति प्रेमाची च। असे पार्थ ॥१५७॥  
 म्हणोनि तो खिन्न। झालासे पाहोन। अबोलकेपण। श्रीहरीचें ॥१५८॥  
 ए-हवीं आपुलें। रूप दिसे ना तें। परी पाहूं येतें। आरशांत ॥१५९॥  
 तैसें संवादाचें। करोनि निमित्त। भोगावी अव्यक्त। ब्रह्मवस्तु ॥१६०॥  
 ऐशा संवादांत। जरी पडे खंड। तरी ब्रह्मानंद-। भोग थांबे ॥१६१॥  
 आतां सांगा पार्था। साहवेल हें का। लाचावला जो का। स्वानंदासी ॥१६२॥  
 म्हणोनि हा त्याग। संन्यासाचा प्रश्न। मागुता पुसोन। श्रीहरीसी ॥१६३॥  
 तेणेंमिषें गीता-। वस्त्राची ती घडी। पुन्हां तो उघडी। ऐसें केलें ॥१६४॥  
 नोहे अठरावा। अध्याय हा साच। असे ही गीताच। एकाध्यायी ! ॥१६५॥  
 धेनूसी का वेळ। सोडावया पान्हा। बिलगतां तान्हा। स्तनालार्गीं ॥१६६॥  
 तैसें येथें गीता। संपतां संपतां। देवासी मागुता। पार्थ पुसे ॥१६७॥

म्हणोनि तो देव । प्रेमं संतोषून । पुन्हा निरूपण । आरंभील ॥१६८॥  
 गुरु-शिष्य-प्रेम- । संवाद हा भला । सामर्थ्ये आगळा । वाटे मज ॥१६९॥  
 असो, पार्थ म्हणे । ऐका जगन्नाथा । विनंति ही आतां । एक माझी ॥१७०॥

अर्जुन उवाच-

संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम् ।  
 त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूदन ॥१॥

‘संघ’ ‘संघात’ हे । शब्द जरी दोन । एक चि त्यांतून । निघे अर्थ ॥१७१॥  
 तैसे त्याग आणि । संन्यास हे दोनी । सारिखे च मानीं । हृषीकेशा ॥१७२॥  
 देवा त्याग शब्दें । किंवा संन्यासानें । ‘त्याग’ चि मी जाणें । एक येथें ॥१७३॥  
 नातरी असेल । जरी अर्थभेद । तरी तो विशद । करावा जी ॥१७४॥  
 तंव किंचिन्मात्र । असे तेथें भेद । ऐसें श्रीगोविंद । सांगे तया ॥१७५॥  
 पार्था त्याग आणि । संन्यास हे दोन्ही । एक चि मानोनि । राहिलासी ॥१७६॥  
 तैसें मी हि देख । मानितों त्रिवार । ‘त्याग’ चि साचार । दोहींतें हि ॥१७७॥  
 परी किंचिन्मात्र । असे अर्थ भिन्न । तो चि उकलून । सांगूं आतां ॥१७८॥  
 कर्माचा च त्याग । जो का सर्वथैव । ‘संन्यास’ हें नांव । तयालागीं ॥१७९॥  
 आणि फलाशेतें । सांडोनि जें केलें । तया नांव दिलें । ‘त्याग’ ऐसें ॥१८०॥  
 कोणत्या कर्माची । फलाशा सांडावी । कोणतीं त्यजावीं । आमूलाग्र ॥१८१॥  
 तें चि तुज सांगूं । आतां विवरून । देई अवधान । धनंजया ॥१८२॥  
 रानीवनीं झाडें । होती आपोआप । तैसें नव्हे रोप । साळीचें तें ॥१८३॥  
 उगवतें तृण । न पेरितां जैसें । उगवे का तैसें । भातशेत ? ॥१८४॥  
 तेथ यत्नें लागे । करावी पेरणी । भूमि चोखाळोनि । नाना रीती ॥१८५॥  
 देह-अवयव । हा तों स्वाभाविक । तैसा नव्हे देख । अलंकार ॥१८६॥  
 नदीचा प्रवाह । वाहे आपोआप । परी नोहे कूप । यत्नाविण ॥१८७॥  
 तैसीं कर्में जीं का । नित्य-नैमित्तिक । तीं तों स्वाभाविक । देख पार्था ॥१८८॥  
 परी काम्य कर्म । कामनेवांचून । न होय निर्माण । कदा काळीं ॥१८९॥



## श्रीभगवानुवाच -

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः ।

सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥२॥

फलेच्छा प्रबळ । एक हें केवळ । कारण सकळ । काम्य कर्मा ॥१९०॥  
 अश्वमेधादिक । आचरावे याग । बांधावे तडाग । वापी-कूप ॥१९१॥  
 भूम्यादिक द्यावें । ब्राह्मणा इनाम । किंवा महाग्राम । वसवावे ॥१९२॥  
 करावीं अनेक । व्रतें उद्यापनें । रचावीं उद्यानें । मनोरम ॥१९३॥  
 इष्टापूर्त ऐसें । कर्मातें ह्या नांव । जयाचा उद्भव । कामनेत ॥१९४॥  
 कर्त्यालागीं जें का । बांधोनिया चांग । लावी फळभोग । भोगावया ॥१९५॥  
 देहाचिया गांवा । आलिया साचार । जैसे अनिवार । जन्ममृत्यु ॥१९६॥  
 नातरी अर्जुना । \*ललाटीचा लेख । पालटेना देख । कांहीं केल्या ॥१९७॥  
 किंवा फिटूं नेणें । काळगेरेपण । टाकिलें धुवोन । जरी यत्नें ॥१९८॥  
 किंवा जैसे ऋण । फेडिल्यावांचोन । ऋणमुक्तपण । प्राप्त नोहे ॥१९९॥  
 तैसें फलाशेनें । केलें कर्म तें तें । लावी भोगायातें । फळभोग ॥२००॥  
 कामनेवांचून । जरी अकस्मात् । घडे पार्था येथ । काम्यकर्म ॥२०१॥  
 तरी रणीं बाण । लागतां चुकोन । जैसे मर्मस्थान । छेदीभेदी ॥२०२॥  
 नातरी नेणतां । घातला मुखांत । तरी गोडी देत । गूळ जैसा ॥२०३॥  
 ठेविला आर्गांत । अजाणतां पाय । म्हणोनियां काय । जळेना तो ? ॥२०४॥  
 तेविं काम्यकर्में । भोगविती फळ । स्वाभाविक बळ । ऐसें त्यांचें ॥२०५॥  
 म्हणोनियां पार्था । कौतुकें हि येथ । देऊं नये चित्त । मुमुक्षुंनीं ॥२०६॥  
 किंबहुना ऐसें । काम्यकर्म जाण । टाकावें ओकून । विष जैसें ॥२०७॥  
 'संन्यास' हें नांव । तया त्यागालागीं । देती अंतरंगी । सर्वद्रष्टे ॥२०८॥  
 करोनियां ध्यावें । निर्भयत्व प्राप्त । जैसें सर्व वित्त । सांडोनियां ॥२०९॥  
 तैसें काम्यकर्म । सांडोनि सकळ । त्यजावी समूळ । कामना च ॥२१०॥  
 असो चंद्रसूर्या । लागतां ग्रहण । विहित म्हणोन । करावें जें ॥२११॥

करावें जें कांहीं । क्रियाकर्मान्तर । स्वधर्मानुसार । पर्वकाळीं ॥२१२॥  
 पितरांचे नावें । करावें तर्पण । भावें स्मृतिदिन । पाळोनियां ॥२१३॥  
 नातरी 'अतिथि' । 'अभ्यागत कोणी । बैसतां येवोनि । सत्कारावा ॥२१४॥  
 करावें जें लागे । ऐसें श्राद्धादिक । कर्म नैमित्तिक । जाणावें तें ॥२१५॥  
 वर्षाकाळीं जैसें । क्षोभतें गगन । किंवा शोभे वन । वसंतांत ॥२१६॥  
 किंवा प्राप्त होतां । देहासी यौवन । सौंदर्य खुलोन । दिसे जैसें ॥२१७॥  
 किंवा द्रवूं लागे । जैसा सोमकांत । नर्भी निशानाथ । उगवतां ॥२१८॥  
 नातरी पद्मिनी । पावते विकास । येतां उदयास । 'दिन-मणि ॥२१९॥  
 मूर्ळीं असे तें च । विस्तारतें येथ । दुजें नाही येत । बाहेरूनि ॥२२०॥  
 तैसें 'नित्य' तें च । प्रसंगानुसार । नियमं विस्तार । पावे जेव्हां ॥२२१॥  
 तेव्हां तयासी च । 'नैमित्तिक' कर्म । ऐसें थोर नाम । प्राप्त होय ॥२२२॥  
 नेत्रामार्जीं जैसी । दृष्टि स्वाभाविक । किंवा पार्यीं देख । गति जैसी ॥२२३॥  
 दीपामार्जीं तेज । चंदनीं सुगंध । पार्या स्वयंसिद्ध । असे जैसा ॥२२४॥  
 तैशापरी नित्य- । कर्म स्वाभाविक । असे येथें देख । सर्वासी च ॥२२५॥  
 'प्रत्यहीं त्रिकाळ । करावयाजोगें । परी जेणें योगें । नोहे शीण ॥२२६॥  
 नित्यकर्म ऐसें । बोलती जें लोकीं । तें हें अवलोकीं । धनंजया ॥२२७॥  
 ऐशापरी नित्य- । नैमित्तिक दोन्ही । दिलीं दाखवोनि । तुजलागीं ॥२२८॥  
 नित्य-नैमित्तिक । लागती करावीं । म्हणोनि म्हणावीं । निष्फल तीं ॥२२९॥  
 ऐसें बोले कोणी । तरी तें अज्ञान । सफळ तीं जाण । सर्वांगांनीं ॥२३०॥  
 भागोनियां भूक । लाभे समाधान । करितां भोजन । धनंजया ॥२३१॥  
 नातरी अर्भीत । जळोनियां हीण । होतसे सुवर्ण । शुद्ध जैसें ॥२३२॥  
 तैसें चि निःशंक । फळ मिळे देख । नित्य-नैमित्तिक । कर्मांचें हि ॥२३३॥  
 आगळें चि तेज । चढे 'स्वाधिकारा । झडोनियां सारा । दोष तेणें ॥२३४॥  
 जीवासी सद्गति । लाभे हातोहात । होवोनियां चित्त । सुनिर्मळ ॥२३५॥  
 नित्य-नैमित्तिक । कर्मांठायीं ऐसें । थोर फळ असे । जरी पार्या ॥२३६॥

तरी त्यजावें तें । येथें सर्वापरी । नक्षत्रांमाझारीं । 'मूळ' जैसें ॥२३७॥  
 लतेसी वसंती । फुलें फळें येती । पल्लवित होती । आम्रवृक्ष ॥२३८॥  
 परी तो वसंत । सर्व तें सोडोन । निरिच्छ निधोन । जाय जैसा ॥२३९॥  
 तैसीं सर्व कर्में । नित्य नैमित्तिक । आचरावीं देख । यथाविधि ॥२४०॥  
 परी कर्मफळीं । न जावें गुंतून । ओकारीसमान । त्यजावें तें ॥२४१॥  
 ह्या चि फळत्यागा । पार्था ज्ञातेजन । देती 'अभिधान । 'त्याग' ऐसें ॥२४२॥  
 ऐशापरी त्याग- संन्यास हे दोन्ही । तुज विवरोनि । सांगितले ॥२४३॥  
 फळाचा संन्यास । ऐसा घडे जेव्हां । कैचें बाधे तेव्हां । काम्यकर्म ? ॥२४४॥  
 निषिद्ध तें गेलें । स्वभावे सांडिलें । शास्त्रें 'निषेधिलें । म्हणोनियां ॥२४५॥  
 शरीर निर्जीव । तोडितां मस्तक । तैसें नित्यादिक । फळत्यागें ॥२४६॥  
 धान्यालार्गी पीक । येतां वाळे जैसें । गळतां चि तैसें । कर्मजात ॥२४७॥  
 मग आपोआप । तया पुरुषातें । धुंडाळीत येतें । आत्मज्ञान ॥२४८॥  
 त्याग-संन्यासाची । जाणोनि ही खूण । होय 'अनुष्ठान । जरी ह्यांचें ॥२४९॥  
 तरी पार्था आत्म- ज्ञान-सिंहासनीं । जीवासी हे दोन्ही । बैसविती ॥२५०॥  
 त्यागाचें हें वर्म । न जाणतां कोणी । कर्म चि टाकोनि । देईं सारें ॥२५१॥  
 तयाचे हातून । त्याग तों न घडे । बंधनीं तो पडे । अधिक चि ॥२५२॥  
 घेतलें औषध । न होतां 'निदान । तरी परतोन । विष होय ॥२५३॥  
 भुकेत्रिया वेळीं । घेतलें ना अन्न । तरी ती हिरोन । घेई प्राण ॥२५४॥  
 म्हणोनियां त्याज्य । नव्हे चि जें येथें । कोणीं केव्हां हि तें । सोडूं नये ॥२५५॥  
 आणि होय जें का । त्यजावया योग्य । कदापि तें भोग्य । मानूं नये ॥२५६॥  
 त्यागाचें हें वर्म । न जाणतां चांग । केला सर्वत्याग । ओझे होय ॥२५७॥  
 निषिद्ध जें येथें । तें तें 'नाचरती । विरक्त जे होती । स्वभावे चि ॥२५८॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥३॥

सोडवेना कोणां । फलाशा म्हणोन । कर्मासी दूषण । लाविती ते ॥२५९॥

जैसा कोणी नग्न । असोनि आपण । 'भांडकें म्हणोन । जगा निंदी ॥२६०॥  
 नातरी जिह्नेच्या । आधीन जो रोगी । ठेवी अत्रालागीं । नावें जैसीं ॥२६१॥  
 किंवा कुष्ठरोगी । कोपे माशियांस । रुसे ना देहास । आपुलिया ॥२६२॥  
 तैसी सोडवेना । फलाशा जयांस । कर्म चि तयांस । 'हीण वाटे ॥२६३॥  
 म्हणोनि आधवें । कर्म चि सोडावें । निर्णय स्वभावें । ऐसा त्यांचा ॥२६४॥  
 बोलती कित्येक । यज्ञदानादिक । कर्म आवश्यक । करावीं च ॥२६५॥  
 पाहूं जातां चित्त-। शुद्धीचें साधन । जर्गी ह्यावांचोन । दुजें नाहीं ॥२६६॥  
 आपुली सत्वर । चित्तशुद्धि व्हावी । ऐसी चाड जीवीं । वसे जरी ॥२६७॥  
 तरी चित्त-शुद्धि । कराया समर्थ । कर्म जें, 'किमर्थ । त्यजावें तें ॥२६८॥  
 सुवर्णाचा कस । वाढावा ही आस । तरी कां आगीस । कंटाळावें ? ॥२६९॥  
 \*रजःकर्णी जैसा । घांसावा दर्पण । दिसावें म्हणोन । निज-रूप ॥२७०॥  
 नातरी निर्मळ । निज-वस्त्रें व्हावीं । ऐसी इच्छा जीवीं । होय जरी ॥२७१॥  
 तरी मानूं नये । 'सौंदणी मलिन । त्यांत चि धुवोन । काढावीं तीं ॥२७२॥  
 तैसा करूं नये । कर्माचा 'अवहेर । जरी क्लेशकर । वाटलीं तीं ॥२७३॥  
 रांधायाचे श्रम । घेतल्यावांचोन । रुचिर पक्वान्न । लाभे काय ? ॥२७४॥  
 म्हणोनियां कर्में । करावीं ऐसा च । निर्णय हा साच । कित्येकांचा ॥२७५॥  
 ऐसा त्यागाचिया । संबंधीं गोंधळ । परस्परां मेळ । पडे चि ना ॥२७६॥  
 तरी विसंवाद । सर्व तो फिटावा । 'त्याग' आकळावा । यथार्थत्वे ॥२७७॥  
 ऐसें सप्रमाण । करूं निरूपण । देई अवधान । धनंजया ॥२७८॥  
 तरी त्याग येथें । जाणावा त्रिविध । दाखवूं विशद । विभागोनि ॥२७९॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ।

त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः संप्रकीर्तितः ॥४॥

दाखविले स्पष्ट । तीन हि प्रकार । तरी जाण सार । एवढें चि ॥२८०॥  
 मज सर्वज्ञाच्या । बुद्धीसी साचार । होय जें गोचर । 'यथार्थत्वे ॥२८१॥  
 त्यागाचें तें तत्त्व । आधीं निवेदीन । बरवें श्रवण । करीं पार्थी ॥२८२॥

जया मुमुक्षुतें । वाटे मुक्त व्हावें । तयें आचरावें । हें चि एक ॥२८३॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥५॥

जोंवरी न होय । इष्टस्थळ-भेट । सोडूं नये वाट । पांथिकानें ॥२८४॥

तैसीं मुमुक्षुतें । यज्ञदानादिक । कर्में आवश्यक । सोडावीं ना ॥२८५॥

हारपली वस्तु । देखिली जों नाहीं । शोधणें केव्हां हि । सोडूं नये ॥२८६॥

लोटूं नये जैसें । जेवणाचें ताट । भरलें ना पोट । जोंवरी तें ॥२८७॥

जोंवरी तीराचा । गांठिला ना ठाव । त्यजूं नये नाव । तोंवरी ती ॥२८८॥

जोंवरी ना केळीं । लागलीं रसाळ । तोंवरी ती केळ । तोडूं नये ॥२८९॥

ठेविला अंधारीं । सांपडे ना ठेवा । फुंकूं नये दिवा । तोंवरी तो ॥२९०॥

तैसें निःसंदेह । आत्मज्ञान भलें । जोंवरी ना आलें । प्रत्ययासी ॥२९१॥

तोंवरी यज्ञादि । कर्माठारीं जाण । पार्थी उदासीन । राहूं नये ॥२९२॥

वरी स्वाधिकारा-। नुरूप तीं येथ । आचरावीं चित्त । देवोनियां ॥२९३॥

बैसावें हा हेत । धरोनि मनांत । चालावें वेगांत । जैशा रीती ॥२९४॥

तैसीं यज्ञादिक । कर्में चि तीं होती । कारण किरीटी । नैष्कर्म्यासी ॥२९५॥

जों जों करावें तें । औषधीसेवन । रोगनिवारण । तों तों होय ॥२९६॥

कर्में यज्ञादिक । जों जों तैशा रीती । अनुष्ठिलीं जाती । यथायोग्य ॥२९७॥

तों तों झडोनियां । रज-तमोगुण । होऊं लागे मन । सुनिर्मळ ॥२९८॥

नातरी खाराचीं । जों जों घावीं पुटें । तों तों शुद्ध होतें । सोनें जैसें ॥२९९॥

तैसीं धनंजया । यज्ञतपोदानें । एकनिष्ठपणें । आचरितां ॥३००॥

तेणें रज-तम । झडोनि सकळ । होय सुनिर्मळ । अंतर्धाम ॥३०१॥

म्हणोनि तयांसी । तीर्थें च हीं होती । करूं जे इच्छिती । अंतःशुद्धि ॥३०२॥

तीर्थें बाह्य मळ । धुवोनियां जाय । कर्में शुद्ध होय । अंतरंग ॥३०३॥

ऐशापरी जाण । यज्ञतपोदान । अर्जुना, पावन । तीर्थें च हीं ॥३०४॥

तृषार्तालागोन । निर्जळ प्रदेशीं । व्हावी वृष्टि जैसी । अमृताची ॥३०५॥

किंवा दैवें व्हावी । 'गभस्तीची वस्ति । अंधाचिया दृष्टि-। मार्जी जैसी ॥३०६॥  
 बुडत्यासी जैसें । नदीनें तारावें । भूमीनें झेलावें । पडत्यासी ॥३०७॥  
 किंवा मरत्याचें । टाळोनि मरण । द्यावें जीवदान । मृत्यूनें च ॥३०८॥  
 किंवा विष तें हि । होतसे जीवन । देतां 'रसायन-। रूपें जैसें ॥३०९॥  
 कमें च तीं तैसीं । मुमुक्षूलागोन । कर्मबंधांतून । सोडविती ॥३१०॥  
 सोडविती कमें । होती जीं बंधक । जरी युक्ति एक । हाता येई ॥३११॥  
 कमें चि गा कैसा । कर्म-बंध तुटे । 'वर्म तें 'गोमटें । सांगूं आतां ॥३१२॥

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।

कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥६॥

'यथाविधि होय । यज्ञादिक सर्व । परी नाहीं गर्व । कर्तृत्वाचा ॥३१३॥  
 धेवोनियां मोल । तीर्थयात्रे जाय । मिरवी तो काय । 'आत्मप्रौढी ? ॥३१४॥  
 समर्थाची मुद्रा । धेवोनियां हातीं । झोंबे रायाप्रति । एकटा जो ॥३१५॥  
 विजेता मी एसें । सांगे ना तो जनीं । धरोनियां मनीं । अभिमान ॥३१६॥  
 समर्थाची कांस । धरोनि साचार । जाय महापूर । तरोनि जो ॥३१७॥  
 तयाचिया चितीं । पोहणारा तो मी । ऐसी नुरे 'ऊर्मि । अहंतेची ॥३१८॥  
 देई 'पुरोहित । जरी विप्रां दान । दाता मी म्हणोन । मिरवी ना ॥३१९॥  
 तैसा सांडोनियां । कर्तृत्वाभिमान । व्हावीं कमें जाण । यथाप्राप्त ॥३२०॥  
 आणि केल्या कर्मा । होय फलप्राप्ति । नसावी आसक्ति । तयाठायीं ॥३२१॥  
 पार्था आरंभीं च । फलाशा सांडोन । यज्ञ तप दान । आचरावीं ॥३२२॥  
 लाभतील फळें । म्हणोनि का कोणी । शिंपीतसे पाणी । पिंपळासी ? ॥३२३॥  
 किंवा दाई जैसी । न ठेवितां आस । पोषिते मुलांस । आणिकांच्या ॥३२४॥  
 तैसीं कमें जाण । यज्ञतपोदान । करावीं सांडोन । फलासक्ति ॥३२५॥  
 गुराखी तो जैसा । राखितो गाईस । न ठेवितां आस । दुभत्याची ॥३२६॥  
 काय सांगूं फार । तैसी अनासक्ति । असूं द्यावी चितीं । कर्म-फळीं ॥३२७॥  
 जाणोनि हें वर्म । घडे जेव्हां कर्म । भेटे आत्माराम । तेव्हां चि तो ॥३२८॥

म्हणोनि फळाचा । संबंध सोडोन । तेविं अभिमान । कर्तृत्वाचा ॥३२९॥  
 आचरावीं कर्में । जाण कपिध्वजा । संदेश हा माझा । सुनिश्चर्ये ॥३३०॥  
 प्रपंचाच्या बंधें । पावोनियां शीण । सुटावें म्हणोन । तळमळे ॥३३१॥  
 तेणें नये माझे । अऽव्हेरूं हे बोल । म्हणे श्रीगोपाळ । पार्थालागीं ॥३३२॥

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपघते ।

मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥७॥

दिसे ना अंधारीं । म्हणोनियां नेटें । खुपसावीं बोटें । डोळ्यांमार्जी ॥३३३॥  
 तैसीं कर्में होती । बंधकें म्हणोन । सारीं च सांडोन । देई द्रपें ॥३३४॥  
 अर्धाशिशीलागीं । जैसें कंटाळोन । टाकावें तोडोन । मस्तक चि ॥३३५॥  
 तैसा तयाचा तो । कर्मत्याग जाण । असे परिपूर्ण । तमोगुणें ॥३३६॥  
 चालवेना वाट । म्हणोनियां काय । टाकावे ते पाय । तोडोनियां ? ॥३३७॥  
 पुढें आलें अन्न । ऊन तें म्हणोन । भुकेला लोटोन । देई जैसा ॥३३८॥  
 तैसें भ्रमें नेणे । सुटावें आपण । कर्मबंधांतून । कैशा रीती ॥३३९॥  
 म्हणोनियां पार्था । तामस तो जन । कर्में चि सोडोन । देई सारीं ॥३४०॥  
 ऐशापरी कर्में । स्वभावे जीं प्राप्त । अविचारें येथ । सांडितां तीं ॥३४१॥  
 तया कर्म-त्यागा । तामस हें नांव । पाहूं नको गांव । तयाचा तूं ॥३४२॥

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।

स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥

कर्तव्य आपुलें । कळे जया भलें । वांट्यासी जें आलें । स्वाधिकारें ॥३४३॥  
 परी आचराया । वाटे तें कठिण । म्हणोनि सोडोन । देई जो का ॥३४४॥  
 तयाचा तो त्याग । राजस तूं जाण । केला जो भिवोन । कायक्लेशा ॥३४५॥  
 शिदोरी ती जैसी । खाऊं जातां गोड । परी वाटे जड । वाहूं जातां ॥३४६॥  
 किंवा जैसा निंब । जिव्हे कडवट । प्रारंभीं तुरट । हिरडा तो ॥३४७॥  
 तैसें चालूं जातां । स्व-कर्माच्या वाटे । प्रारंभीं तें वाटे । कष्टदायी ॥३४८॥  
 मारकुटी गाय । कांटेरी शेवंती । तैसीं स्वकर्में तीं । तयालागीं ॥३४९॥

भोजनाचें सुख । पुढें वाटे गोड । परी अवघड । रांधूं जातां ॥३५०॥  
 तैसे प्रारंभीचे । पाहोनि ते श्रम । जयातें स्वकर्म । नको वाटे ॥३५१॥  
 बैसतां चटका । जैसी वस्तु ऊन । द्यावी हातांतून । टाकोनि ती ॥३५२॥  
 आरंभिलें कर्म । तैसें यथाविधि । मध्ये च तें सांडी । शीण होतां ॥३५३॥  
 म्हणे देहाऐसी । वस्तु बहुमोल । लाधली केवळ । पूर्वपुण्यें ॥३५४॥  
 तरी पाप्याऐसीं । कर्म आचरोन । कां गा द्यावा शीण । तथा देहा ॥३५५॥  
 हातींचे कां भोग । दवडावे वायां । कष्टवोनि काया । उद्यांसाठीं ॥३५६॥  
 कायाक्लेशभयें । सोडणें जें कर्म । राजस हें नाम । त्यागासी त्या ॥३५७॥  
 जैसें अग्नीमार्जीं । दूध उतूं जाय । होमिलें तें काय । म्हणूं येतें ? ॥३५८॥  
 तैसा कर्मत्याग । येथें हि केवळ । परी त्याग-फळ । लाभे ना तें ॥३५९॥  
 म्हणावें का तेंणें । घेतली समाधि । बुडाला 'उदधि-। मार्जी जो का ? ॥३६०॥  
 त्यासी निभ्रांत । झाला अपघात । बोलणें उचित । हें चि जैसें ॥३६१॥  
 तैसे देहा कष्ट । होतील म्हणोनि । 'कर्मावरी' पाणी । 'सोडी जो का ॥३६२॥  
 त्यासी लाभेल । त्यागाचें तें फळ । ऐसें न घडेल । कल्पान्तीं हि ॥३६३॥  
 आकाशीं आदित्य । पावतां उदय । जैसा लोप होय । नक्षत्रांचा ॥३६४॥  
 आत्मज्ञानोदयें । तैसें चि तत्काळ । हारपे समूळ । कर्म जेव्हां ॥३६५॥  
 तेव्हां कर्मत्यागें । तेंणें मोक्ष-प्राप्ति । होय जी किरीटी । अनायासें ॥३६६॥  
 मोक्षाचें तें फळ । अज्ञानासी नाहीं । 'राजस' तो पाहीं । त्याग त्याचा ॥३६७॥  
 तरी मोक्ष-फळ । मिळे कोण्या त्यागें । सांगेन प्रसंगें । ऐक आतां ॥३६८॥  
 कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ।

सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः ॥९॥

स्वभावे जें झालें । स्वाधिकारें प्राप्त । आचरे तें येथ । यथाविधि ॥३६९॥  
 परी कर्तृत्वाचा । 'नेधे अभिमान । न गुंतवी मन । फलाशेंत ॥३७०॥  
 मातेचिया ठायीं । 'अवज्ञा' कामना । केलिया पतना । हेतु होती ॥३७१॥  
 म्हणोनि हीं दोन्ही । सर्वथा सांडोन । माता चि म्हणोन । भजावी ती ॥३७२॥



सुखीं अपवित्र । म्हणोनियां गाय । त्यजावी कीं काय । सर्वथैव ? ॥३७३॥  
 'कोय आणि साल । नाहीत रसाळ । म्हणोनियां फळ । त्यजावें का ? ॥३७४॥  
 कर्तृत्वाचा मद । आणि फलास्वाद । ह्यासी कर्म-बंध । ऐसें नांव ॥३७५॥  
 जन्मदाता जैसा । 'नातळे लेकीस । तैसें फलाशेस । सांडोनियां ॥३७६॥  
 निज कर्तेपण । ठेवोनि परतें । सुखें स्व-कर्मातें । आचरे तो ॥३७७॥  
 सात्त्विक हा त्याग । विख्याति ऐसीच । जगामार्जी साच । असे ह्याची ॥३७८॥  
 ह्या चि 'त्याग-तरु-। श्रेष्ठासी साचार । लागे पार्था थोर । मोक्ष-फळ ॥३७९॥  
 वृक्षाचा निर्वेश । होतसे सहज । टाकितां च बीज । जाळोनियां ॥३८०॥  
 तैसा फळ-त्यागें । तेणें कर्म-त्याग । साधियेला चांग । धनंजया ॥३८१॥  
 जाय गंज आणि । काळिमा हि तैसा । लोहाचा परिसा । स्पर्श होतां ॥३८२॥  
 तैसीं रज-तमें । नष्ट होती देख । त्याग हा सात्त्विक । घडे जेव्हां ॥३८३॥  
 घडे जेव्हां शुद्ध । सात्त्विक हा त्याग । उघडते चांग । ज्ञान-दृष्टि ॥३८४॥  
 सांजवेळे जाय । 'मृगांबु लयास । तैसा विश्वाभास । आत्म-ज्ञानें ॥३८५॥  
 असोनि विशाल । एवढें आकाश । पडे ना दृष्टीस । कोणीकडे ॥३८६॥  
 तैसें तयाचिया । मन बुद्धि पुढां । असोनि एवढा । विश्वाभास ॥३८७॥  
 आत्मरूपाविण । साच दुजें कांहीं । अर्जुना कोठें हि । देखे ना तो ॥३८८॥

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषजते ।

त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥१०॥

प्रारब्धाच्या वळें । पार्था इष्टानिष्ट । कर्म होय प्राप्त । येथे जें जें ॥३८९॥  
 तें तें ब्रह्मरूप । मानोनि चोखाळी । मेघ अंतराळीं । विरे जैसा ॥३९०॥  
 म्हणोनि उठेना । हर्ष किंवा खेद । होतां आत्मबोध । अंतर्त्यामीं ॥३९१॥  
 हें तों शुभ कर्म । म्हणोनि करावें । आणि अन्हेरावें । अशुभातें ॥३९२॥  
 ऐसें शुभाशुभ । नेणे चि तो कांहीं । स्वप्न जैसें नाहीं । जागृतासी ॥३९३॥  
 म्हणोनि मर्धथा । कर्म आणि कर्ता । ऐसी द्वैत-वार्ता । नुरे जेथें ॥३९४॥  
 सात्त्विक तो त्याग । जाण पंडुसुता । ह्यापरी सांडितां । कर्मजात ॥३९५॥

नेणोनि हें वर्म । टाकिलें जें जाय । बंधक तें होय । अधिक चि ॥३९६॥

न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।

यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥११॥

लाहोनियां देह । प्राप्त कर्मी खंती । जे का बाळगिती । अज्ञानी ते ॥३९७॥  
 सांग पार्था, काय । करील तो घट । घेवोनियां वीट । मृत्तिकेचा ? ॥३९८॥  
 वस्त्रातें घडेल । कैसा तंतु-त्याग । कंटाळेल आग । उष्णतेसी ? ॥३९९॥  
 प्रकाशाचा द्वेष । करील का दीप । सांडील का आप । ओलेपण ? ॥४००॥  
 हिंग सुगंधत्व । आणील कोठोन । आपुल्या त्रासोन । दुर्गंधीसी ? ॥४०१॥  
 तैसा पार्था, येथें । लाहोनियां देह । कां गा दुराग्रह । कर्म-त्यागी ? ॥४०२॥  
 पुसोनि टाकितां । येईल तो टिळा । आपुल्या कपाळा । लाविला जो ॥४०३॥  
 परी तें कपाळ । कैसें सांडवेल । सांडावें म्हणेल । जरी कोणी ॥४०४॥  
 तैसें विहित जें । स्वीकारिलें येथें । तें तों टाकूं येतें । टाकूं जातां ॥४०५॥  
 परी देहरूपें । कर्म चि तें मूर्त । कैसें कोणा येथ । सांडवेल ? ॥४०६॥  
 श्वासोच्छ्वासाच्या । रूपें स्वाभाविक । निद्रेंत हि देख । होय जें का ॥४०७॥  
 न करितां कांहीं । चाले अखंडित । थांबे ना निवांत । राहतां हि ॥४०८॥  
 ऐशापरी जाण । कर्म चि संपूर्ण । झालें अवतीर्ण । देहरूपें ॥४०९॥  
 जावो राहो देह । परी थांबे ना । तें अखंड भोंवतें । कर्मचक्र ॥४१०॥  
 म्हणोनि निष्काम । कर्म तें होतां च । पार्था होय साच । कर्म-त्याग ॥४११॥  
 त्यजावया कर्म । ऐशापरी होय । एक चि उपाय । जगामार्जी ॥४१२॥  
 होतां कर्म-फल । ईश्वरीं अर्पण । लाभे आत्मज्ञान । कृपें त्याच्या ॥४१३॥  
 मग जैसा रज्जु । येतां प्रत्ययास । सर्पाचा आभाम । लोप पावे ॥४१४॥  
 तैसा आत्म-बोधें । अविद्येसहित । होतसे निभ्रान्त । कर्म-नाश ॥४१५॥  
 त्यजावें तें ऐसें । कर्मजात जेव्हां । साच घडे तेव्हां । कर्म-त्याग ॥४१६॥  
 करोनियां कर्में । कर्मफलत्यागी । तयासी च 'त्यागी' । ऐसें म्हणों ॥४१७॥  
 इतर तो त्याग । तैसा चि गणावा । म्हणावें विसांवा । मूर्च्छनेसी ॥४१८॥

दुज्या कर्मीं घेऊं । पाहे तो विश्रांति । पावतां चि 'खंती । एका कर्मीं ॥४१९॥  
 दंडुक्याचा मार । ठोशांवरी न्यावा । तैसा चि जाणावा । प्रकार हा ! ॥४२०॥  
 केली फळत्यागें । कर्माची 'निष्कृति । जाण त्रिजगतीं । त्यागी तो च ॥४२१॥

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ।

भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित् ॥१२॥

परी सांडिती ना । फलाशा जे कोणी । सर्वथा गुंतोनि । मायापार्शीं ॥४२२॥  
 पार्था, ते त्रिविध । कर्मफळालागीं । भोगावया जर्गीं । पात्र होती ॥४२३॥  
 पिता 'आत्मजेचें । करोनियां दान । 'न मम' म्हणोन । मुक्त होई ॥४२४॥  
 परी तो जामात । तिज स्वीकारोन । 'ममत्वे' गुंतोन । जाय जैसा ॥४२५॥  
 किंवा सुखें वाणी । चालवी संसार । करोनि व्यापार । विषाचा हि ॥४२६॥  
 परी तें जे घेती । वेंचोनियां धन । घालविती प्राण । आपुले ते ॥४२७॥  
 तैसा करी कर्में । फलाशा सांडोन । सुटे बंधांतून । अकर्ता तो ॥४२८॥  
 परी करी कर्में । ठेवोनि आसक्ति । बंधक तीं होती । तयालागीं ॥४२९॥  
 वाटेवरी जें का । पक्क आम्रफळ । मिळे तें केवळ । घेई त्यासी ॥४३०॥  
 तैसें कर्मफळ । ध्यावया जो पाहे । तयासी तें राहे । चिकटोनि ॥४३१॥  
 त्रिविध हें जग । अर्जुना सकळ । कर्माचें चि फळ । म्हणोनियां ॥४३२॥  
 फलाशा सांडोन । करी येथें कर्म । तया जगदभ्रम । उरें कैचा ? ॥४३३॥  
 पाहें पार्था, देव । मनुष्य स्थावर । तया जगदंबर । ऐसें नांव ॥४३४॥  
 कर्मफळाचे च । प्रकार हे तिन्ही । सांगतां जाणोनि । घेई आतां ॥४३५॥  
 त्रिधा कर्म-फळ । एक तें अनिष्ट । एक 'इष्टानिष्ट' । इष्ट एक ॥४३६॥  
 वागती जे स्वैर । होवोनि मदांध । कुकर्में निषिद्ध । आचरती ॥४३७॥  
 तयांलागीं देह । लाभतो निकृष्ट । होती कृमि कीट । मृत्तिका ते ॥४३८॥  
 ह्यापरी अनिष्ट । कर्मफळ जाण । इष्टाचें लक्षण । ऐक आतां ॥४३९॥  
 जे कां स्वधर्मातें । देवोनियां मान । आपुला पाहोन । अधिकार ॥४४०॥  
 मानोनि प्रमाण । वेद-शास्त्राज्ञेतें । पुण्यकर्में येथें । आचरती ॥४४१॥

तथां इंद्रादिक । देवतांचि देह । स्वर्गीं निःसंदेह । प्राप्त होती ॥४४२॥  
 इष्टकर्म-फळ । ऐसी ह्याचि ख्याति । मिश्र तें किरिटी । एक आतां ॥४४३॥  
 गोड-आंबटाचें । होतां चि मिश्रण । रुचि दोहोंहून । आगळी चि ॥४४४॥  
 \*'रेचक' चि जैसा । होतसे कारण । योगमार्गीं जाण । 'कुंभका'सी ॥४४५॥  
 तैसें सत्यासत्य । मिसळतां येथें । रूप तें पालटे । असत्याचें ॥४४६॥  
 मग शुभाशुभ । सम प्रमाणांत । मिळोनियां होत । कर्म जेव्हां ॥४४७॥  
 तेव्हां मनुष्यत्व । प्राप्त होय साच । कर्मफळ हें च । इष्टानिष्ट ॥४४८॥  
 पाहें धनजया । ऐशा तीन भागीं । कर्मफळ जर्गीं । मांडलेंसे ॥४४९॥  
 फळभोगाशेंत । गुंतोनि जो राहे । तथा सोडी ना हें । कर्म-फळ ॥४५०॥  
 खातां गोड वाटे । होईतो अजीर्ण । ओढवे मरण । परी तेणें ॥४५१॥  
 सावचोराचें तो । 'मैत्र वाटे भलें । नाहीं जो पातलें । आडरान ॥४५२॥  
 जैसी तोंवरी च । 'वारांगना चांग । जोंवरी ना अंग- । स्पर्श झाला ॥४५३॥  
 तैसें कर्तृत्वाचें । घेती मोटेपण । कर्म आचरोन । अहंभावे ॥४५४॥  
 परी एकाएकीं । देहान्तीं आघवीं । लागती भोगावीं । कर्मफळें ॥४५५॥  
 घेतलें जें ऋण । फेडणें तें प्राप्त । भेटतां समर्थ । सावकार ॥४५६॥  
 तैसे तथांलार्गीं । कर्म-फळ-भोग । भोगणें च मग । प्राप्त होय ॥४५७॥  
 रुजोनियां दाणा । वाढती कणिसें । कणिसासी जैसे । दाणे येती ॥४५८॥  
 किंवा चालूं जातां । एकापुढें एक । परंपरा देख । पाउलांची ॥४५९॥  
 तैसें फळभोगीं । कर्म-फळ एक । 'प्रसवे आणिक । कर्मफळा ॥४६०॥  
 नदीतटीं 'नाव । घाली 'येरझारा । भोग-परंपरा । तैसी चाले ॥४६१॥  
 साध्य-साधनाच्या । प्रकारें साचार । भोगाचा विस्तार । वाढे ऐसा ॥४६२॥  
 म्हणोनि सुटे ना । ज्यांची फलासक्ति । गुंतोनियां जाती । संसारीं ते ॥४६३॥  
 परी जाईचिया । फुलांचा विकास । कोमेजावयास । हेतु जैसा ॥४६४॥  
 तैसें त्यागियांचें । कर्म-आचरण । होतसे कारण । नैऋर्भ्यासी ॥४६५॥  
 बीज चि खावोन । टाकितां साचार । शेतीचा 'व्यापार । 'खुंटे जैसा ४६६॥

तैसा कर्मबंध । टाकिला तोडोन । तयांनीं संपूर्ण । फलत्यागें ॥४६७॥  
 तेणें 'अंतःशुद्धि । लाभतां सत्वर । सद्गुरु 'दातार । कृपा करी ॥४६८॥  
 सद्गुरु-प्रसादें । होतां आत्मज्ञान । जाय मावळोन । दैतभाव ॥४६९॥  
 मग जगद्भास-। निमित्तें केवळ । स्फुरे कर्म-फळ । त्रिविध जें ॥४७०॥  
 तयाचा विनाश । होतां, भोग्यभोक्ता । ऐसी नुरे वार्ता । स्वभावे चि ॥४७१॥  
 ज्ञानप्रधान हा । घडतां संन्याम । लोपतो 'अशेष । फळभोग ॥४७२॥  
 फलत्यागें ऐसी । आत्मरूपीं दृष्टि । जडोनि किरीटी । राहे जेव्हां ॥४७३॥  
 तेव्हां दिसे कोठें । स्वरूपावेगळें । भिन्नत्वं उरलें । कर्मजात ? ॥४७४॥  
 चित्रांची केवळ । जैसी माती होय । पडोनियां जाय । भिंत जेव्हां ॥४७५॥  
 नातरी प्रभातीं । नष्ट होतां 'निशा । अंधार तो जैसा । नुरे कोठें ॥४७६॥  
 रूप नाहीं तेंथें । सावली कोठोन । 'दर्पणावांचोन । प्रतिबिंब ? ॥४७७॥  
 किंवा नुरे जैसें । स्वप्नाचें अस्तित्व । निद्रेसी च ठाव । नाहीं जेंथें ॥४७८॥  
 नाहीं जेंथें स्वप्न । मग पाहे कोण । खरेखोटेपण । तयाचें गा ॥४७९॥  
 तैशापरी पार्था । संन्यासें ह्या साच । मूळ अविद्या च । लोपे जेंथें ॥४८०॥  
 तेंथें कोणीं कर्म । मांडावें सांडावें । कार्य जें स्वभावे । अविद्येचें ॥४८१॥  
 म्हणोनि ह्या ज्ञान-। प्रधान संन्यासीं । करावी ती कैसी । कर्म-वार्ता ! ॥४८२॥  
 परी अविद्या ती । धनंजया पाहीं । आपुलिया देहीं । राहे जेव्हां ॥४८३॥  
 कर्तृत्वाभिमान । धरोनियां जीव । शुभाशुभीं धांव । घेईं जेव्हां ॥४८४॥  
 आणि भेदाचिया । राजसिंहासनीं । बैसते खिळोनि । दृष्टि जेव्हां ॥४८५॥  
 तेव्हां हि आत्म्याचा । कर्माशीं तो साच । संबंध नाहीं च । लेशमात्र ॥४८६॥  
 पूर्व-पश्चिमेसी । जैसी वेगळीक । आभाळा आणिक । नभालागीं ॥४८७॥  
 नातरी 'मार्तंडा । आणि मृगजळा । पवना-भूतळा । वेगळीक ॥४८८॥  
 पांघरोनि बैसे । नदीचें उदक । परी तो खडक । वेगळा चि ॥४८९॥  
 उदकासन्निध । राहिली शेवाळी । म्हणोनि का झाली । उदक ती ? ॥४९०॥  
 दीपाचिया संगें । काजळी जी वसे । तिज दीप ऐसें । म्हणों ये का ? ॥४९१॥

जाहला 'कलंक । जरी चंद्राठायीं । चंद्राशीं तो नाहीं । एकरूप ॥४९२॥  
 नातरी अर्जुना । दृष्टीहून डोळा । सर्वथा वेगळा । असे जैसा ॥४९३॥  
 एक होती काय । ओघ आणि पाणी । किंवा वाट आणि । वाटसरू ? ॥४९४॥  
 आरसा आणिक । पाहणारा त्यांत । सर्वथा दोघांत । भेद जैसा ॥४९५॥  
 तैसें आत्म्याहून । सर्वथैव भिन्न । कर्म असे जाण । सुनिश्चये ॥४९६॥  
 परी अज्ञानें तें । धनंजया, कैसें । आत्म्याठायीं भासे । ऐक सांगूं ॥४९७॥  
 फुलोनि पद्मिनी । सांगते जगासी । आला उदयासी । सूर्य ऐसें ॥४९८॥  
 भ्रमराकडोन । भोगवी सुगंध । सरोवरीं स्तब्ध । राहोनियां ॥४९९॥  
 तैसें आत्म्याठायीं । भासतें जें कर्म । तयाचें तों वर्म । ऐक आतां ॥५००॥  
 कर्माचीं वेगळीं । कारणें जीं पांच । तुज सांगूं तीं च । विवरोनि ॥५०१॥

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ।

सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥१३॥

तुज हि तीं पार्था । असतील ठावीं । वर्णिलीं बरवीं । शास्त्रांनीं जीं ॥५०२॥  
 सांख्यवेदान्ताच्या । भव्य 'प्रासादीं जीं । राजधानीमार्जीं । वेदांचिया ॥५०३॥  
 निरूपणरूपी । नौबदीच्या 'नादीं । पावलीं प्रसिद्धि । असामान्य ॥५०४॥  
 सर्व कर्मांचिया । सिद्धीसी कारण । जर्गीं पांच जाण । कारणें हीं ॥५०५॥  
 आत्मराजालागीं । न 'गोंवांचें तेथें । स्वीकारोनि मतें । नेणत्यांचीं ॥५०६॥  
 ह्यापरी विख्यात । कारणें हीं पांच । सांगितलीं साच । शास्त्रांमार्जीं ॥५०७॥  
 परी एकावीं तीं । आणिकांतोंहून । हें हि ओझे जाण । नको तुज ॥५०८॥  
 असतां 'चिद्रत्न । मी तुझ्या स्वाधीन । आणिकांकडोन । एकावे कां ? ॥५०९॥  
 पहावया रूप । असतां दर्पण । काय 'प्रयोजन । आणिकांचें ? ॥५१०॥  
 मग लोकांलागीं । विनवाचें कां गा । कैसें दिसे सांगा । रूप माझे ॥५११॥  
 मजलागीं भक्त । जेथ जैसा पाहे । मी हि होत आहे । तैसा तेथ ॥५१२॥  
 तो मी तुझे आज । जाहलों खेळणें । ऐसें देव म्हणे । पार्थालागीं ॥५१३॥  
 प्रेमभरें ऐसें । बोलूं जातां देव । न धरी आठव । आपुला तो ॥५१४॥

१ डाग. २ राजवाड्यांत. ३ मोठ्या नगान्याच्या आवाजातें. ४ गुंतवाचें. ५ ज्ञानरूप रत्न. ६ जहरी.

पार्थ हि आनंदें । होवोनि तल्लीन । गेला देहभान । विसरोनि ॥५१५॥  
 पूर्णचंद्राचिया । उदयें साचार । येतां चि बहर । चांदण्यासी ॥५१६॥  
 चंद्रकांताचा तो । द्रवोनि डोंगर । जैसा सरोवर । होऊं पाहे ॥५१७॥  
 तैसें मुख आणि । मुखाची 'प्रचीत । द्वैताची ही भित । कोसळोनि ॥५१८॥  
 भक्तिप्रेमामार्जी । बुडोनि किरीटी । मुखाची च मूर्ति । होत जेव्हां ॥५१९॥  
 तेव्हां तो श्रीहरी । समर्थ म्हणोन । सावध होवोन । एकाएकी ॥५२०॥  
 ऐक्यानंदांतून । पार्थासी सत्वर । देहभानावर । आणूं पाहे ॥५२१॥  
 अर्जुनासारिखा । थोर प्रज्ञावंत । बुडोनियां जात । ऐक्यरसीं ॥५२२॥  
 एवढा अपार । आनंदाचा भर । त्यांतुनी बाहेर । काढोनियां ॥५२३॥  
 देव म्हणे पार्था । येई भानावरी । सत्वर सांवरीं । आपणातें ॥५२४॥  
 तेव्हां तो अर्जुन । उसासा टाकोन । डोलवोनि मान । म्हणे देवा ॥५२५॥  
 आतां जीवदशा । ठेवोनि बाजूस । व्हावें 'एकरस । तुझ्या ठायीं ॥५२६॥  
 मनींचा हा भाव । जाणसी दातारा । तरी कां माघारा । फिरविसी ? ॥५२७॥  
 जरी प्रेम माझे । करिसी कौतुक । तरी ऐक्य-मुख । भोगूं जातां ॥५२८॥  
 कां गा मज ऐसा । देहभानावरी । आणिसी मुरारी । द्वैतभावं ? ॥५२९॥  
 तंव म्हणे देव । पार्था तूं मी एक । चंद्र आणि देख । 'ज्योत्स्ना जैसी ॥५३०॥  
 भक्तश्रेष्ठा तुज । नसे का हें ठावें । काय 'म्यां बोलावें । ऐसे आहे ? ॥५३१॥  
 बोलावया हें हि । मज वाटे भीति । न जाणों अद्वैतीं । रंगशील ॥५३२॥  
 प्रियजनासंगें । हंसावें रूसावें । तेणें वाढवावें । प्रेमसौख्य ॥५३३॥  
 पार्था ऐसें प्रेम । तुझ्या माझ्या ठायीं । म्हणोनि ही पाहीं । वेगळीक ॥५३४॥  
 ऐसी वेगळीक । जांवरी ही साच । घडे तांवरी च । प्रेम-भोग ॥५३५॥  
 म्हणोनियां राहो । बोलणें हें आतां । चित्त देई पार्था । निरूपणीं ॥५३६॥  
 सर्व कमें भिन्न । कैसीं आत्म्याहून । होतो 'विवरून । सांगत हें ॥५३७॥  
 तंव म्हणे पार्थ । माझ्या मनींचें च । स्वभावं हें साच । बोलतसां ॥५३८॥  
 सर्वकर्मबीज । कारण-पंचक । सागेन ही 'भाक । दिली मज ॥५३९॥

आत्म्याचा संबंध । नसे काहीं येथे । ऐसें तुम्ही माते । बोलिले जें ॥५४०॥  
 तें चि आवडीनें । एकावेसें वाटे । तरी कृपामूर्ते । निरूपावे ॥५४१॥  
 पार्थाचे हे बोल । करोनि श्रवण । बहु संतोषून । विश्वनाथ ॥५४२॥  
 म्हणे ह्या चि साठीं । घेईल जो हट्ट । ऐसा भक्तश्रेष्ठ । असे कोठें ! ॥५४३॥  
 तुजऐशा थोर । भक्ताचा मी ऋणी । प्रेमें निरूपणी । प्रवर्तलों ॥५४४॥  
 तंव पार्थ म्हणे । मागील तो भाव । विसरले देव । पुन्हां कैसे ? ॥५४५॥  
 मी तूं पणालागीं । रहावया जागा । असे का हो सांगा । येथे आतां ? ॥५४६॥  
 असो, म्हणे देव । एक सावधान । पार्था निरूपण । करीन जें ॥५४७॥  
 सर्व हि कर्माची । पांच ह्या कारणीं । होय उभारणी । परभारें ॥५४८॥  
 कर्माचीं कारणें । जैसीं होती पांच । तैसे च ते साच । पांच हेतु ॥५४९॥  
 परी आत्मतत्त्व । राहे उदासीन । न तें उपादान । नव्हे हेतु ॥५५०॥  
 करी ना साहाय्य । स्वये तें काहीं च । व्हावयासी साच । कर्मसिद्धि ॥५५१॥  
 शुभाशुभ कर्में । आत्मतत्त्वीं जाण । रात्र आणि दिन । नर्भीं जैसीं ॥५५२॥  
 उदक उष्णता । वाफ ऐसीं तीन । जातां चि जडोन । पवनार्शीं ॥५५३॥  
 उद्भवती मेघ- । पंक्ति आकाशांत । परी तें अलिप्त । राहे जैसें ॥५५४॥  
 जोडोनियां काष्ठें । घडविली होडी । लोटितो नावाडी । उदकांत ॥५५५॥  
 वायूचिया बळें । जाय ती वेगांत । परी साक्षीभूत । जळ जैसें ॥५५६॥  
 मृत्तिकेचा गोळा । ठेवोनियां देख । भोवंडोनि चाक । दंडुक्यानें ॥५५७॥  
 तथाचा चि घडा । घडितो कुंभार । मृत्तिका आधार । मात्र तेथे ॥५५८॥  
 लोकव्यवहार । चालतां सकळ । सूर्य तो केवळ । साक्षी जैसा ॥५५९॥  
 तैसी च ह्या पांच । कारणांकडोन । एकत्र मिळोन । पांच हेतु ॥५६०॥  
 केली जाय कर्म- । लतेची लावणी । वेगळें त्याहूनि । आत्म-तत्त्व ॥५६१॥  
 आतां वेगळालीं । तीं च सांगूं भलीं । तोलोनि घेतलीं । मोत्यें जैसीं ॥५६२॥

आधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् ।

विविधाश्च पृथक्चेष्टा देवं चैवात्र पञ्चमम् ॥१४॥



तरी पार्था येथें । देह हें चि जाण । पहिलें कारण । कर्माचें गा ॥५६३॥  
 सुखदुःखादिक । भोगांसमवेत । नांदतसे येथ । जीव भोक्ता ॥५६४॥  
 हा चि अभिप्राय । जाणोनि देहासि । 'अधिष्ठान' ऐसी । संज्ञा द्यावी ॥५६५॥  
 दाही इंद्रियांच्या । द्वारा नाना कष्ट । करोनियां येथ । रात्रंदिन ॥५६६॥  
 प्रकृतीकडोन । जीं का नाना रीती । मेळविलीं जाती । सुख-दुःखें ॥५६७॥  
 त्यां भोगावया । शरीरावांचोन । नाहीं दुजें स्थान । जीवालागीं ॥५६८॥  
 म्हणोनि देहासी । येथें 'अधिष्ठान' । ऐसें अभिधान । द्यावें पार्था ॥५६९॥  
 चौवीस तत्वांचें । कुटुंब तें भलें । रहावया आलें । शरीरीं ह्या ॥५७०॥  
 बंध-मोक्षाची जी । असे गुंतागुंत । उकले निभ्रांत । येथें च ती ॥५७१॥  
 बहु बोलूं काय । निद्रा आणि स्वप्न । जागृति ह्या तीन । अवस्था ज्या ॥५७२॥  
 त्यां देह मात्र । अधिष्ठान एक । म्हणोनियां देख । हें चि नाम ॥५७३॥  
 'कर्ता' हें तों 'दुजें । कर्माचें कारण । प्रतिबिंब जाण । चैतन्याचें ॥५७४॥  
 नभ चि तें जैसें । वर्षांनियां नीर । रची सरोवर । महीतळीं ॥५७५॥  
 तथा सरोवरीं । मग बिंबोनियां । राहे होवोनियां । 'तदाकार ॥५७६॥  
 निद्राभरें 'भ्रूप । आपणा नेणोन । स्वप्नीं 'रंकपण । धरी जैसा ॥५७७॥  
 तैसा स्वरूपाचा । पडोनि विसर । होय देहाकार । चैतन्य जें ॥५७८॥  
 मग देह चि मी । ऐसें मानी साच । पावोनि देहीं च । तद्रूपता ॥५७९॥  
 'जीव' ऐसी संज्ञा । तयालागीं देती । स्वरूप-विस्मृति । घडतां च ॥५८०॥  
 मग देहाचा तो । धरी अभिमान । सर्वथा गुंतोन । देहधर्मी ॥५८१॥  
 प्रकृतीकडोन । कर्में होती जीं जीं । भ्रमें तीं तीं माझीं । ऐसें म्हणे ॥५८२॥  
 ह्या चि लागीं कर्ता । बोलती जीवास । अहंममत्वास । बाळगी जो ॥५८३॥  
 आतां जैसी दृष्टि । एक चि असोन । फांके केंसांतून । पापणीच्या ॥५८४॥  
 तेव्हां भेदलेली । ऐसें वाटे साच । जणूं चवरी च । मोकळी ती ॥५८५॥  
 एक चि प्रकाश । परी भासे भिन्न । झरोक्यांमधून । फांके जेव्हां ॥५८६॥  
 तैसें बुद्धीचें तें । एक ज्ञान फांके । इंद्रियांसारिखें । भिन्नपणें ॥५८७॥

भिन्न ऐसीं पांच । ज्ञानेन्द्रियें जाण । कर्माचें कारण । तसर हें ॥५८८॥  
 एक चि तें पाणी । परी नदी नद । घडे हा प्रवाद । ओघभेदे ॥५८९॥  
 एक चि पुरुष । नऊ हि रसांचा । आविर्भाव साचा । दावी जेव्हां ॥५९०॥  
 तेव्हां नवविध । ऐसा वाटूं लागे । असोनि निजागें । एकला तो ॥५९१॥  
 तैसी क्रियाशक्ति । प्राणवायूमार्जी । अखंड असे जी । मूळची च ॥५९२॥  
 वांटली ती जाय । नाना स्थानीं जेव्हां । ऐसी भासे तेव्हां । नानाविध ॥५९३॥  
 वाचेचिया ठायीं । येवोनियां राही । तेव्हां पार्था होई । बोलणें ती ॥५९४॥  
 हाताचिया ठायीं । येवोनियां बैसे । तेव्हां ती होतसे । देणेंघेणें ॥५९५॥  
 मळमूत्रद्वारीं । क्षरणें ती होई । चरणांच्या ठायीं । गति ती च ॥५९६॥  
 नाभिपामोनियां । हृदयापर्यंत । प्रणवरूपांत । घुमे जेव्हां ॥५९७॥  
 तेव्हां त्या चि क्रिया-। शक्तिलागीं जाण । पार्था देती 'प्राण' । ऐसी संज्ञा ॥५९८॥  
 तिज कंठस्थानीं । बोलती 'उदान' । होय ती 'अपान' । अधोरंघीं ॥५९९॥  
 सर्व हि देहांत । व्यापकत्वे राहे । 'व्यान' ऐसें लाहे । नाम तेव्हां ॥६००॥  
 सारिखा वांटोन । देई शरीरास । मुखें अन्नरस । भक्षिला जो ॥६०१॥  
 भरोनियां राहे । सांध्यासांध्यांतून । म्हणावें 'समान' । तेव्हां तिज ॥६०२॥  
 जांभई वा शिक । नातरी ढेकर । होय व्यवहार । ऐसा जेव्हां ॥६०३॥  
 तेव्हां 'नाग कूर्म' । कृकरादि संज्ञा । तिज देती प्राज्ञा । धनंजया ॥६०४॥  
 अमो वायूची ही । क्रियाशक्ति एक । ह्यापरी अनेक । धरी रूपें ॥६०५॥  
 ऐसी भिन्न भिन्न । व्यापारीं वर्तोन । विविध होवोन । राहिली जी ॥६०६॥  
 ती च वायुशक्ति । धनंजया जाण । कर्माचें कारण । होय चौथें ॥६०७॥  
 ऋतूमार्जी जैसा । शोभावा शरदू । तशांत हि चांद । पौर्णिमेचा ॥६०८॥  
 नातरी वमंतीं । असावें उद्यान । आणि प्रियजन । प्राप्त व्हावा ॥६०९॥  
 तशांत हि तैथें । सर्व उपचार । असावे साचार । सानुकूल ॥६१०॥  
 नातरी कमल । व्हावें विकसित । खुलावें तशांत । मकरंदें ॥६११॥  
 किंवा वाचेलागीं । कवित्व बरवें । कवित्वीं शोभावें । रसिकत्व ॥६१२॥

रभिकर्त्वी आत्म-। तत्त्वाचें वर्णन । दिसावें खुलोन । मग जैसें ॥६१३॥  
 तैसी सर्व वृत्तीं-। मार्जी बुद्धि भली । शोभावी आगळी । इंद्रियांनीं ॥६१४॥  
 आणि इंद्रियांच्या । देवतांचा मेळ । व्हावा अनुकूल । तशांत हि ॥६१५॥  
 म्हणोनि नेत्रादि । दशेन्द्रियां ठायीं । 'स्वानुग्रहें' राही । स्वभावें जो ॥६१६॥  
 तो चि सूर्यादिक । 'देववृंद' जाण । पांचवें कारण । कर्माचें गा ॥६१७॥  
 तुझिया बुद्धीचें । जेणें समाधान । होय परिपूर्ण । ऐशा रीती ॥६१८॥  
 कर्माचीं कारणें । येथें पंचविध । दाविलीं विशद । करोनियां ॥६१९॥  
 आणिक ज्या पांच । हेतूंचिया योगें । खाण वाढूं लागे । कारणांची ॥६२०॥  
 मग साच घडे । कर्माची रचना । हेतु ते अर्जुना । सांगूं ऐक ॥६२१॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः ।

न्याय्यं वा विपरीतं वा पश्चैते तस्य हेतवः ॥१५॥

तरी ऋतुराज । येतां अकस्मात । होती पल्लवित । वृक्ष-वेली ॥६२२॥  
 पल्लवांमधून । पुष्पगुच्छ येती । होय फलप्राप्ति । पुष्पांतून ॥६२३॥  
 किंवा वर्षाकाळीं । उद्भवती मेघ । मेघांतून मग । वृष्टि होय ॥६२४॥  
 वृष्टीचिया योगें । धान्याची समृद्धि । होय सुखवृद्धि । जैशा रीती ॥६२५॥  
 पूर्वदिशा जन्म । देई अरुणासी । दाखवी सूर्यासी । अरुण तो ॥६२६॥  
 सूर्याचिया योगें । अर्जुना संपूर्ण । उजाडतो दिन । मग जैसा ॥६२७॥  
 तैसा चि कर्माचा । संकल्प व्हावया । मन धनंजया । हेतु होय ॥६२८॥  
 मग तो संकल्प । वाचेचिया द्वारा । मांडितो पसारा । बोलण्याचा ॥६२९॥  
 ऐशापरी जेव्हां । वाचेचा तो दिवा । दाखवी आघवा । कर्ममार्ग ॥६३०॥  
 तेव्हां कर्ता जीव । पार्था अवधारीं । सांपडे व्यापारीं । कर्तृत्वाच्या ॥६३१॥  
 मग लोहवस्तु । घडावी साचार । घेवोनि हत्यार । लोहाचें चि ॥६३२॥  
 तैसा देहादिक । सर्व समुदाय । तो चि हेतु होय । देहादिकां ॥६३३॥  
 'ताण्यामार्जी' बाणा । गोंवितां निभ्रांत । तंतु चि तो होत । वस्त्र जैसा ॥६३४॥  
 किंवा देती पैलू । पाडोनि साचार । रत्नासी आकार । रत्नानें च ॥६३५॥

तैसें मन-वाचा- देहकर्मा देख । मनवाचादिक । हेतु होय ॥६३६॥  
 आतां शरीरादि । कारणे जीं साच । होती कैसीं तीं च । हेतु येथें ॥६३७॥  
 ऐसी जरी कोणी । घेईल आशंका । परिहार देखा । तरी ऐसा ॥६३८॥  
 सूर्यप्रकाशासी । सूर्य चि कारण । आणि हेतु जाण । सूर्य चि तो ॥६३९॥  
 कांड्यांतून कांडें । ऐसा वाढे उस । कांडें चि कांड्यास । हेतु तेव्हां ॥६४०॥  
 किंवा वाग्देवीचें । कराया वर्णन । वाचा चि कारण । होय जैसी ॥६४१॥  
 नातरी वेदांचा । मोठेपणा साच । जैसा वेदांनीं च । वाखाणावा ॥६४२॥  
 तैसीं देह वाचा । इत्यादिक सार्ची । कारणे कर्माचीं । होती जरी ॥६४३॥  
 तरी तीं च हेतु । म्हणों ये निःशंक । मन-वाचादिक । कारणे जीं ॥६४४॥  
 कारणां-हेतूंची । होतां चि मिळणी । होय उभारणी । कर्माची ज्या ॥६४५॥  
 कर्म तें यथोक्त । होतां धनंजया । न्याय्य चि तें न्याय्या । हेतु होय ॥६४६॥  
 जिरे शेतामार्जी । पर्जन्याचा लोट । परी तो अचाट । उपयोगी ॥६४७॥  
 किंवा अकस्मात । कोणी रागे रागे । वाटे जाऊं लागे । द्वारकेच्या ॥६४८॥  
 तरी पदयात्रा । तयाची ती वायां । ऐसें धनंजया । म्हणावें ना ॥६४९॥  
 तैसें हेतु आणि । कारणांच्या मेळें । कर्म उपजलें । आंधळें जें ॥६५०॥  
 तया कर्मा लाभे । शास्त्रदृष्टि जेव्हां । म्हणावें तें तेव्हां । पुण्यकर्म ॥६५१॥  
 नातरी स्वभावं । दूध उतूं गेलें । तरी तें वेंचलें । वृथा जैसें ॥६५२॥  
 तैसें शास्त्राचिया । सहाय्यावांचोन । केलें निष्कारण । होय कर्म ॥६५३॥  
 तस्करें लुटोन । नेलें जें का धन । म्हणों ये तें दान । ऐसें जरी ॥६५४॥  
 तरी कर्मासी त्या । म्हणावें सफळ । नातरी केवळ । निष्फळ तें ॥६५५॥  
 नातरी बावन्न । वर्णाविरहित । पार्था मंत्रजात । असे काय ? ॥६५६॥  
 आणि राहे कोण । उच्चारिल्याविण । वर्ण ते बावन्न । घडीघडी ॥६५७॥  
 परी मंत्रोच्चार- । फलप्राप्ति कैची । नाकळे मंत्राची । हातोटी जो ॥६५८॥  
 तैसें हेतु आणि । कारणांच्या योगें । कर्म होऊं लागे । येथें जें जें ॥६५९॥  
 तें तें यथाशास्त्र । घडे ना जोंवरी । जाणावें तोंवरी । निष्फळ तें ॥६६०॥

तेव्हां हि तें कर्म । घडे जरी साच । तरी तें नव्हे च । पुण्यकर्म ॥६६१॥  
कर्म तें अन्याय्य । ऐसें हेतु होय । सर्वथा अन्याय्य । कर्मासी च ॥६६२॥

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।

पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥१६॥

कर्मालागीं पांच । कारणें हीं साच । हेतु हि तैसे च । पांच होती ॥६६३॥  
येथें उदासीन । आत्मतत्त्व जाण । हेतु ना कारण । कर्मासी तें ॥६६४॥  
दाखवोनि दृष्टि । आणि दृश्यजात । राहतो अलिप्त । सूर्य जैसा ॥६६५॥  
तैसें न होवोन । हेतु वा कारण । कर्म-प्रकाशन । करी आत्मा ॥६६६॥  
प्रतिविंब किंवा । आरसा हीं दोन्ही । स्वयें न होवोनि । वीरश्रेष्ठा ॥६६७॥  
आरशामाझारीं । न्याहाळिता देख । होय प्रकाशक । दोहोंचा हि ॥६६८॥  
किंवा रविराज । राहोनि अलिप्त । दिन आणि रात । दावी जैसा ॥६६९॥  
तैसा न होवोनि । कर्म आणि कर्ता । तयां प्रकाशिता । होय आत्मा ॥६७०॥  
परी जो का देह-। अहंतेच्या मोहें । देह चि मी आहे । ऐसें मानी ॥६७१॥  
आणि आत्मरूपा -। संबंधीं साचार । गाढ अंधकार । ज्याच्या ठायीं ॥६७२॥  
चैतन्या ईश्वरा । आणि परब्रह्मा । दाखवी जो सीमा । देहाची च ॥६७३॥  
तयाच्या बुद्धीसी । आत्मा कर्ता ऐसें । सर्वथैव दिसे । सुनिश्चयें ॥६७४॥  
अकर्ता मी आत्मा । असें कर्मातीत । सदा साक्षीभूत । सर्व कर्मा ॥६७५॥  
ऐसी आपुलिया । स्व-रूपाची वार्ता । नायके च पार्था । कधीं हि तो ॥६७६॥  
म्हणोनि अमाप । आत्म्यालागीं जाण । देह चि मानोन । राहिला तो ॥६७७॥  
सूर्योदयीं रात्र । घुबडासी होय । नवल तें काय । असे येथ ॥६७८॥  
आकाशींचा सूर्य । दृष्टीलागीं साच । पडला नाही च । ज्याचिया ॥६७९॥  
तयासी जें बिंब । सरोवरीं भासे । तो चि सूर्य ऐसें । वाटतसे ॥६८०॥  
सूर्य तो निर्माण । झाला ऐसें मानी । जाय तें भरोनि । जळें जेव्हां ॥६८१॥  
आणि वाऱ्यासंगें । हालतां तें तोय । कंप पावे सूर्य । ऐसें बोले ॥६८२॥  
आटतां तें मग । नष्ट झाला सूर्य । बुद्धीचा निश्चय । करी ऐसा ॥६८३॥

जौवरी ना जागें । व्हावें निद्रेंतून । तौवरी तें स्वप्न । सत्य वाटे ॥६८४॥  
 जौवरी रज्जुचें । नाहीं झालें भान । सर्प तो म्हणोन । वाटे भय ॥६८५॥  
 नातरी विकार । काविळीचा डोळां । तौवरी पिंवळा । दिसे चंद्र ॥६८६॥  
 भुलोनियां धांव । न घेती का मृग । देखोनियां चांग । मृग-जळ ? ॥६८७॥  
 तैसें शास्त्रा आणि । गुरुतें नेणोन । जगे जो जीवन । मूढतेचें ॥६८८॥  
 आरोपी तो आत्म्या-। ठायीं देहधर्मा । देहासी च आत्मा । मानोनियां ॥६८९॥  
 मेघ धावें परी । चंद्र धावें ऐसें । साच वाटे जैसें । जंबुकातें ॥६९०॥  
 असो, अज्ञानी तो । देहासी च आत्मा । ऐसें वीरोत्तमा । मानोनियां ॥६९१॥  
 कर्माचिया वज्र-। गांठीनें बांधिला । देहीं अडकला । मूढपणें ॥६९२॥  
 नलिका-यंत्रां राघू । येवोनि बैसला । सर्वथा मोकळा । असोनि हि ॥६९३॥  
 ब्रह्म झालों ऐसें । मानोनि बापुडा । सोडी ना चवडा । पाउलांचा ॥६९४॥  
 तैसें नित्य सिद्ध । शुद्ध आत्मरूपां । कर्म जो आरोपी । प्रकृतीचें ॥६९५॥  
 तथा कर्म-बंध । तुटे ना किरिटी । जरी कोटी कोटी । कल्प गेले ! ॥६९६॥  
 आतां वडवाभि । असोनि सागरां । उदक न करी । स्पर्श तथा ॥६९७॥  
 तेविं कर्मांमार्जी । असोनि अर्जुना । जयातें स्पर्श ना । कर्मबंध ॥६९८॥  
 करोनियां कर्में । अलिप्त जो पूर्ण । तथाचें लक्षण । सांगूं ऐक ॥६९९॥  
 शोधितां ती दीपें । जैसी होय प्राप्त । वस्तु अंधारांत । सांडली जी ॥७००॥  
 तैसें आपुलें च । लाभे मुक्तपण । मुक्ताचें वर्णन । करूं जातां ॥७०१॥  
 किंवा जैसा स्वच्छ । करोनि दर्पण । आपुलें दर्शन । ध्यावें त्यांत ॥७०२॥  
 नातरी लवण । जळीं मिसळोन । जळ चि होवोन । राहे जैसें ॥७०३॥  
 किंवा प्रतिबिंब । मार्गें परतोन । बिंबाचें दर्शन । घेई जेव्हां ॥७०४॥  
 तेव्हां राहे मूळ । बिंब चि होवोन । पहाणें सांडोन । जैशा रीती ॥७०५॥  
 तैसा हारपला । निज आत्म-भाव । ध्यावा त्याचा ठाव । ऐसें वाटे ॥७०६॥  
 तरी संतस्थिति । आणितां ध्यानांत । येई तो शोधीत । आपणासी ॥७०७॥  
 म्हणोनि संतांचें । करावें स्तवन । एकावें वर्णन । तथाचें चि ॥७०८॥

चर्मचक्षुंचिया । चर्में लिप्त नोहे । धनंजया पाहें । दृष्टि जैसी ॥७०९॥  
 तैसा शुभाशुभ । कर्मीं जो अलिप्त । सदा उपार्धीत । वावरोनि ॥७१०॥  
 तथा मुक्तात्म्याचें । लक्षण तें एक । तुज सयुक्तिक । सांगूं आतां ॥७११॥

यस्य नाऽहंक्रतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।

हत्वाऽपि स इमाँल्लोकात्र हन्ति न निबध्यते ॥१७॥

होता जो भोगीत । विश्वरूपी स्वप्न । निद्रेंत राहोन । अविद्येच्या ॥७१२॥  
 तथा मायाबद्ध । अनादि जीवातें । जेव्हां गुरुनाथें । जागें केलें ॥७१३॥  
 'तत्त्वमसि' मंत्र । सांगितला कार्नी । मस्तकीं ठेवोनि । कृपाहस्त ॥७१४॥  
 तेव्हां विश्वरूप । स्वप्नातें सांडोन । माया-निद्रेंतून । उठोनियां ॥७१५॥  
 अद्रयानंदांत । तन्मय तो झाला । निज-स्वरूपाला । ओळखोनि ॥७१६॥  
 एकाएकीं लांपे । मृगजळपूर । पसरतां कर । चंद्रम्याचे ॥७१७॥  
 किंवा बाळपण । निधोनियां जातां । बागुलासी त्राता । उरें कोण ? ॥७१८॥  
 नातरी इंधन । जातां जळोनियां । स्वयंपाकक्रिया । ठेली जैसी ॥७१९॥  
 किंवा निद्रेंतून । येतां जागृतीस । पडेना दृष्टीस । स्वप्न जैसें ॥७२०॥  
 तैसें तयालागीं । उरें ना मी-माझे । स्वरूपीं सहजे । लीन होतां ॥७२१॥  
 भळत्या भुयारीं । रिधो प्रभाकर । दिसे ना अंधार । तथा जैसा ॥७२२॥  
 तैसा आत्मभावे । व्यापिला जो जीव । तथा जो जो ठाव । दिसे डोळां ॥७२३॥  
 तो तो सकळ हि । द्रष्टेपणासवें । होतसे स्वभावे । आत्मरूप ॥७२४॥  
 अग्निसंगें दग्ध । होय जें का तृण । अभि च होवोन । राहे जेव्हां ॥७२५॥  
 'दाह्य-दाहक हा । भेद तेव्हां मग । उरें कोठें सांग । पंडु-सुता ॥७२६॥  
 तैसा जो आरोप । कर्मकर्तृत्वाचा । आला होता साचा । आत्म्यावरी ॥७२७॥  
 होतां चि तो दूर । एक आत्मस्थिति । उरें जी किरीटी । अनिर्वाच्य ॥७२८॥  
 त्या चि आत्मस्थिती-। मार्जी नित्य राहे । तथासी का आहे । देहभाव ? ॥७२९॥  
 कल्पान्ताच्या वेळीं । विश्व जळमय । होतां उरें काय । क्षुद्र ओघ ? ॥७३०॥  
 तैसी आत्मरूप । अहंता संपूर्ण । पार्था, देहपण । उरों नेदी ॥७३१॥

काय सांगें विश्व-। प्रकाशिता सूर्य । सामावला जाय । प्रतिविंबी ? ॥७३२॥  
 कादिलें जें लोणी । करोनि मंथन । घातलें फिरोन । 'ताकामार्जी ॥७३३॥  
 तरी तार्की नाहीं । मिसळोनि जात । राहतें अलिप्त । तेथें जैसें ॥७३४॥  
 काष्ठाभार्जी अभि । असे जो का गुप्त । वर्षणें प्रकट । करितां तो ॥७३५॥  
 मग काष्ठाचिया । पेटीभार्जी जाण । ठेविला कोंडोन । राहे कैसा ? ॥७३६॥  
 किंवा रात्रीचिया । उदराआंतून । 'सहस्र-किरण । निघाला जो ॥७३७॥  
 तथाचिया कानीं । जैसी पंडु-सुता । शिरे चि ना वार्ता । रजनीची ॥७३८॥  
 तैसें ज्ञाता-ज्ञेय । टाकी जो गिळोन । तथासी कोठून । देहाहंता ॥७३९॥  
 आकाशें जेशून । जयाठायीं जावें । तेथें हि स्वभावे । असे तें चि ॥७४०॥  
 म्हणोनि सर्वत्र । सारखें 'कोंडून । राहिलें गगन । जैशा रीती ॥७४१॥  
 तैसें मुक्तात्म्यानें । करावें जें काहीं । स्वभावे तें होई । आत्मरूप ॥७४२॥  
 म्हणोनि मी कर्ता । ऐसा अभिमान । उरेल कोठोन । त्यालागीं ॥७४३॥  
 'महार्णवीं जैसें । प्रवाहाचें नांव । किंवा नुरे 'ठाव । नभाविण ॥७४४॥  
 ध्रुवालागीं जैसें । जाणें येणें नाहीं । तैसी स्थिति पाहीं । मुक्तात्म्याची ॥७४५॥  
 ऐशापरी त्याचा । देह-अहंकार । बुडाला साचार । आत्मबोधी ॥७४६॥  
 तरी जोंवरी तो । दिसे देहाकारें । तोंवरी तें उरे । कर्म त्यासी ॥७४७॥  
 वारा तरी जैसा । वाहोनियां गेला । परी डोल ठेला । वृक्षाठायीं ॥७४८॥  
 नातरी कापूर । जातसे उडोन । सुगंध ठेवोन । 'करंडकीं ॥७४९॥  
 गीत-समारंभ । जाय तो संपोनि । परी घुमे कानीं । ध्वनि जैसा ॥७५०॥  
 भूमीवरी गेलें । वाहोनियां जल । परी मागें ओल । उरे जैसें ॥७५१॥  
 मावळे 'गभस्ति । परी नभःप्रांती । उरे 'सायंदीप्ति । मागें जैसी ॥७५२॥  
 किंवा लक्ष्यभेद । जाहला तरी हि । पुढें धांव घेई । बाण जैसा ॥७५३॥  
 घेतला काढोन । कुंभकारें घट । तरी तें भोंवत । राहे चक्र ॥७५४॥  
 तैसा मुक्तात्म्याचा । देह-अहंकार । गळोनि साचार । जरी गेला ॥७५५॥  
 तरी तथाचिया । प्रारब्धानुसार । चालती व्यापार । शरीराचे ॥७५६॥



पडे जैमें स्वप्न । संकल्पावांचोनि । न लावितां वरीं । होती वृक्ष ॥७५७॥  
 न रचितां तरी । गंधर्व-नगरी । उभोर अंबरीं । आपोआप ॥७५८॥  
 देहादिक पांच । कारणांकडोन । तैसें घडे जाण । कर्मजात ॥७५९॥  
 येथें आत्मराजें । करावा उद्यम । तरी घडे कर्म । ऐमें नाहीं ॥७६०॥  
 परी धनंजया । देहादिक पांच । कारणें जीं साच । सहेतुक ॥७६१॥  
 तयांच्याकडोन । कर्म-आविष्कार । संस्कारानुसार । प्रारब्धाच्या ॥७६२॥  
 तथा कर्मांमार्जीं । मंहरो हें जग । किंवा नवें चांग । जन्म पावो ॥७६३॥  
 परी रवि नेणे । फांके कमलिनी । किंवा कुमुदिनी । सुके कैसी ॥७६४॥  
 मेघमालंतून । वीज कोसळोन । टाको ती जाळोन । विश्व सारें ॥७६५॥  
 किंवा पर्जन्याची । होवोनियां वृष्टि । होवो धन्य सृष्टि । 'तृणांकुरीं ॥७६६॥  
 परी दोहींतें हि । नभ नेणे जैसें । तैसा देहीं असे । विदेही जो ॥७६७॥  
 सृष्टीची तो नेणें । घडामोड पार्थी । न देखे जागता । स्वप्न जैसें ॥७६८॥  
 परी म्थूल दृष्टि । होती जे अज्ञानी । ते तथा मानोनि । देहधारी ॥७६९॥  
 कर्मांचें कर्तृत्व । तथात्रिया ठायीं । धनंजया पार्हीं । आरोपिती ॥७७०॥  
 उभवोनि भलें । तृणांचें बाहुलें । कडे जें ठेविलें । शेतात्रिया ॥७७१॥  
 तथासी तो कोल्हा । 'राखणा' ऐसें च । मानी ना का साच । भ्रमोनियां ॥७७२॥  
 'पिमें नेसलें का । नागवें चि असे । जाणावें हें जैसें । आणिकांनीं ॥७७३॥  
 झुंझारामी घाव । लागले जे रणीं । जैसे आणिकांनीं । मोजावे ते ॥७७४॥  
 किंवा जैमा महा-सतीचा शृंगार । पहावा साचार । आणिकांनीं ॥७७५॥  
 परी शरीराचें । नसे तिज भान । देखे ना ती जन । किंवा अग्नि ॥७७६॥  
 तैसा आत्मबोधें । जाग्रत जो झाला । कोठोनि त्याला । जगद्भान ? ॥७७७॥  
 द्रष्टा-दृश्य-भाव । आटतां साचार । नेणे तो व्यापार । इंद्रियांचे ॥७७८॥  
 कळोळ कळोळ । गिळीतसे ऐसें । जरी साच दिसे । जनांलागीं ॥७७९॥  
 तरी जळ एक । येतां प्रत्ययास । तत्त्वतां कोणास । गिळी कोण ? ॥७८०॥  
 तैसें मुक्तात्म्यास । दुजें नाहीं कोठें । वधी तो कोणातें । मग कैसा ? ॥७८१॥

हेम-चंडिकेनें । हेम-गूळें साचा । हेम-महिषाचा । नाश केला ॥७८२॥  
 ऐसें जरी पाहे । पुजा-न्याची दृष्टि । तरी वस्तुस्थिति । वेगळी च ॥७८३॥  
 चंडिका महिष । गूळ हीं सकळ । तत्त्वतां केवळ । सुवर्ण चि ॥७८४॥  
 दिसे जळ-अग्नि । पट-चित्रीं साच । परी दृष्टीचा च । आभाम तो ॥७८५॥  
 पटाचिया ठायीं । ओलांश ना आग । पाहूं जातां चांग । धनंजया ॥७८६॥  
 तैसें चि प्रारब्ध-। संस्कारानुमार । मुक्ताचें शरीर । हालतसे ॥७८७॥  
 परी तें देखोन । कैसे मूढ जन । कर्ता तो म्हणोन । बोलती गा ! ॥७८८॥  
 त्रैलोक्याचा घात । तया कर्मीं झाला । तरी तेणें केला । म्हणों नये ॥७८९॥  
 प्रभाकरें आधीं । देखावें तमासी । मग तो तें नाशी । ऐसें म्हणों ॥७९०॥  
 तैसें मुक्ताचिया । ठायीं नाहीं द्वैत । मग कर्मजात । कोठोनि तें ? ॥७९१॥  
 भागीरथीमार्जी । जातां चि मिळोन । होतसे पावन । नदी जैसी ॥७९२॥  
 तैसी त्याची बुद्धि । होतां आत्मरूप । पुण्य-पाप-लेप । नेणे कांहीं ॥७९३॥  
 अग्नीलागीं होतां । अग्नीचा च स्पर्श । पोळितो कोणास । कोण तेथें ? ॥७९४॥  
 रुतेल का शस्त्र । आपणा आपण ? । कर्मासी जो भिन्न । तैसें नेणे ॥७९५॥  
 तयाच्या बुद्धीसी । कैसें कर्मजात । करील तें लिप्त । कर्तेपणें ? ॥७९६॥  
 म्हणोनि जयातें । कर्ता कार्य क्रिया । झालीं धनंजया । आत्मरूप ॥७९७॥  
 तयालागीं नाहीं । कर्माचें बंधन । शरीराकडोन । होती जीं का ॥७९८॥  
 देखें पांचांची ह्या । काढोनियां खाण । कौशल्येंकरोन । बुद्धीचिया ॥७९९॥  
 तेथें कर्ता जीव । दशेंद्रियद्वारा । कर्माचा पसारा । मांडी ऐसा ॥८००॥  
 न्याय्यान्याय्याकार । मंदिरें कर्माचीं । उभारी तो सार्ची । क्षणार्थात ॥८०१॥  
 ऐशा अवाढव्य । कर्मालागीं साच । आत्मा तो नाहीं च । साह्यकर्ता ॥८०२॥  
 कर्मारंभा तरी । हात लावी, हा हि । तयाचिया ठायीं । बोल फोल ॥८०३॥  
 आत्मा जो चिद्रूप । असे साक्षीभूत । उपाधिरहित । नित्यसिद्ध ॥८०४॥  
 कर्म-प्रेरणेच्या । संकल्पाचा देख । कैसा आज्ञापक । होईल तो ? ॥८०५॥  
 कर्म-प्रवृत्तीचे । श्रम जीवासी च । अलिप्त तें साच । आत्मतत्त्व ॥८०६॥

म्हणोनि निर्मळ । आत्मरूप भला । होवोनि राहिला । मुक्तात्मा जो ॥८०७॥  
 तथा बांधी केंची । कर्माची शृंखला । अखंड मोकळा । स्वभावे जो ॥८०८॥  
 परी अज्ञानाच्या । पटावरी जाण । विपरीत ज्ञान । हें चि चित्र ॥८०९॥  
 काढिते जी पार्था । त्रिपुटी विख्यात । ती च तुज येथ । सांगूं आतां ॥८१०॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।

करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥१८॥

ज्ञाता ज्ञेय ज्ञान । त्रिपुटी ही जाण । जगामी कारण । धनुर्धरा ॥८११॥  
 कर्म-प्रवृत्तीमी । हेतु ही च होय । न धरीं संशय । येथें काहीं ॥८१२॥  
 ह्यांतील एकैक । आतां वेगळालें । तुज दावूं भलें । विवरोनि ॥८१३॥  
 तरी जीवरूपी । सूर्याचे किरण । श्रोत्रादिक जाण । पांच जे का ॥८१४॥  
 स्पर्शानि विकाम । करिती ते साचा । पद्म-कलिकांचा । विषयांच्या ॥८१५॥  
 किंवा जीवरूपी । नृपाळाचे चांग । संकल्प-तुरंग । घेवोनियां ॥८१६॥  
 इंद्रिय-ममूह । आणी भोग-धन । प्रदेश लुटोन । विषयांचा ॥८१७॥  
 दर्शेंद्रियां ऐसे । व्यापार चालवी । जीवा जें भोगवी । सुख-दुःखें ॥८१८॥  
 सुषुप्तीच्या कालीं । सर्वथा तें ज्ञान । होवोनियां लीन । राहे जेथें ॥८१९॥  
 तथा जीवालागीं । ज्ञाता ऐसें जाण । सांगितलें ज्ञान । तें हि तुज ॥८२०॥  
 जीवाचें तें ज्ञान । अविद्येच्या पोटीं । जन्मतां किरीटी । त्रिधा होय ॥८२१॥  
 आपुलिया पुढें । ठेवोनि ज्ञेयास । मागील बाजूस । ज्ञातेपण ॥८२२॥  
 ज्ञात्या आणि ज्ञेया । दोघां नांदवून । राहतें आपण । मध्यभागीं ॥८२३॥  
 ज्ञेय-विषयाची । देखतां चि शींव । संपे ज्याची धांव । धनुर्धरा ॥८२४॥  
 सर्व पदार्थास । नावें देत बैसे । सामान्य तें ऐसें । ज्ञान जाण ॥८२५॥  
 सामान्य ज्ञानाचें । बोलिलें लक्षण । एक आतां खूण । ज्ञेयाची हि ॥८२६॥  
 तरी शब्द स्पर्श । रूप रस गंध । ऐसा पंचविध । ज्ञेयाभास ॥८२७॥  
 आम्र-फळ एक । परी भोग भिन्न । देई भिन्न भिन्न । इंद्रियांसी ॥८२८॥  
 रसें रूपें स्पर्शें । आणि गंधें भेटे । त्या त्या इंद्रियांतें । जैशा रीती ॥८२९॥

ज्ञेयाच्चै तं तैसै । ज्ञान होई वीरा । पंचेंद्रियद्वारा । जीवालागीं ॥८३०॥  
 म्हणोनि असोन । एक चि तें ज्ञेय । पंचविध होय । धनुर्धरा ॥८३१॥  
 इष्ट स्थलीं जातां । संपे जैसा मार्ग । किंवा जैसा ओघ । सागरांत ॥८३२॥  
 येतां चि कणिसें । धान्यादि पिकांची । वाढ खुंटे साची । आपोआप ॥८३३॥  
 तैसै इंद्रियांच्या । द्वारा धांवे ज्ञान । जाय तें खुंटोन । जयास्थानीं ॥८३४॥  
 तया विषयासी । ज्ञेय ऐसी संज्ञा । देती जाण प्राज्ञा । धनंजया ॥८३५॥  
 ऐशापरी ज्ञाता । ज्ञेय आणि ज्ञान । तिन्ही विवरून । दाविलीं हीं ॥८३६॥  
 कर्म-प्रवृत्तीसी । होतसे कारण । त्रिपुटी ही जाण । सर्वथैव ॥८३७॥  
 शब्दस्पर्शरूप- । रसादि विषय । पंचविध ज्ञेय । ऐसै जें का ॥८३८॥  
 तें चि प्रियाप्रिय । कैसै असो पार्था । ज्ञानें तें दावितां । ज्ञात्यालागीं ॥८३९॥  
 करावया त्याचा । स्वीकार वा त्याग । प्रवर्ते चि मग । ज्ञाता तेथें ॥८४०॥  
 मीनातें देखोन । धांवे जैसा बक । किंवा जैसा रंक । निधानातें ॥८४१॥  
 किंवा कामीजन । कामिनी देखोन । द्याया आर्लिगन । धांवे जैसा ॥८४२॥  
 नातरी उदक । उतारावरून । जातसे धांवून । वेगें जैसै ॥८४३॥  
 नातरी पुष्पाचा । लुटाया सुगंध । सवेग षट्पाद । धांवे जैसा ॥८४४॥  
 काढावया धार । सोडिलें वासरूं । मुखीं स्तन धरूं । धांवे जैसै ॥८४५॥  
 रंभा उर्वश्यादि । अप्सरांचा भोग । स्वर्गीं मिळे चांग । ऐकोनि हें ॥८४६॥  
 यज्ञयाग करूं । धांवती मानव । स्वर्गलोक ठाव । पावावया ॥८४७॥  
 पारवा सर्वांग । लोटी तिजवरी । देखोनि अंबरीं । पारवीतें ॥८४८॥  
 मेघांची गर्जना । ऐकोनि नभांत । झेपावूं पहात । मोर जैसा ॥८४९॥  
 तैसै देखोनियां । ज्ञेय पंडुसुता । धांव घेई ज्ञाता । जीव तेथें ॥८५०॥  
 म्हणोनियां ज्ञाता । ज्ञेय ज्ञान देख । कर्माचीं प्रेरक । होती तिन्ही ॥८५१॥  
 सुदैवैकरोन । परी तें चि ज्ञेय । जरी प्रिय होय । ज्ञात्यालागीं ॥८५२॥  
 तरी त्याचा भोग । घ्यावया अर्जुना । विलंब साहे ना । क्षणाचा हि ॥८५३॥  
 परी अकस्मात् । विरोधी अप्रिय । जरी भेटे ज्ञेय । ज्ञात्यालागीं ॥८५४॥

तरी त्याचा त्याग । करूं जातां तेथ । लोटला युगान्त । ऐसें वाटे ॥८५५॥  
 पाहें धनंजया । देखतां चि साप । भयें थरकांप । होऊं लागे ॥८५६॥  
 परी रत्न-हार । दृष्टी पडतांच । हर्ष होय साच । जैशा रीती ॥८५७॥  
 तैसी च ती स्थिति । जीवाची हि होय । देखोनि विषय । प्रियाप्रिय ॥८५८॥  
 ऐशा त्या ज्ञेयाचा । स्वीकार वा त्याग । करावया चांग । प्रवर्ते तो ॥८५९॥  
 पाहें रथारूढ । महारथी मल्ल । पुढें प्रतिमल्ल । पाहोनियां ॥८६०॥  
 तयामर्वें कुम्ती । करावी म्हणोन । उडी रथांतून । टाकी जैसा ॥८६१॥  
 तैसा ज्ञातेपणा । असे जो का पार्था । पावे हीनावस्था । कर्तेपणें ॥८६२॥  
 आयतें जेवण । मोडोनियां जैसें । रंक करूं बैसे । स्वयंपाक ॥८६३॥  
 भ्रमरें मांडोन । पराग-मेवन । धावावें उद्यान । रचावया ॥८६४॥  
 मोनारें आपुला । मोडोनियां धंदा । स्वयें व्हावें धोंडा । कसोटीचा ॥८६५॥  
 किंवा देवें जैसें । स्वयें चि साचार । लागावें मंदिर । बांधावया ॥८६६॥  
 तैसी धरोनियां । विषयांची हांव । जेव्हां ज्ञाता जीव । धनंजया ॥८६७॥  
 इंद्रियांकडोन । करवी व्यापार । तेव्हां तो साचार । कर्ता होय ॥८६८॥  
 ज्ञाता घेई जेव्हां । ऐसें कर्तेपण । ज्ञान हें कारण । ठरे तेव्हां ॥८६९॥  
 मग पाहूं जातां । असे जें का ज्ञेय । तें चि होय कार्य । स्वभावतां ॥८७०॥  
 ऐक स्वयंसाची । ह्यापरी ज्ञानाची । 'पालटे गा साची । 'निजगति ॥८७१॥  
 पावतां 'रजनी । अर्जुना, सहज । नेत्र ते निस्तेज । होती जैसे ॥८७२॥  
 नातरी प्रारब्ध । होतां चि उदास । पालटे 'विलास । श्रीमंताचा ॥८७३॥  
 पौर्णिमेच्या पाठीं । जैसा प्रतिदिन । होत जाय क्षीण । निशा-नाथ ॥८७४॥  
 तैसा ज्ञाता जीव । इंद्रियांच्या द्वारा । कर्माचा पसारा । मांडी जेव्हां ॥८७५॥  
 तेव्हां तयाठायीं । येई कर्तेपण । तयाचें लक्षण । ऐक आतां ॥८७६॥  
 मन बुद्धि चित्त । आणि अहंकार । चार हे प्रकार । 'अंतराचे ॥८७७॥  
 बाह्य त्वचा कर्ण । चक्षू जिह्वा घ्राण । पंचविध जाण । इंद्रियें गा ॥८७८॥  
 तेथ कर्ता जीव । 'अंतरिंद्रियांनीं । 'आढावा घेवोनि । कर्तव्याचा ॥८७९॥

मग तें होईल । सुखदायी साच । वाटलें ऐसें च । जरी त्यासी ॥८८०॥  
 तरी चक्षुरादि । इंद्रियां सत्वर । लावी तो व्यापार । करावया ॥८८१॥  
 कर्म-फल हातीं । आलें ना जोंवरी । राबवी तोंवरी । तयांसी तो ॥८८२॥  
 कर्म तें होईल । दुःखदायी ऐसें । तयालागीं दिमे । जरी पार्था ॥८८३॥  
 तरी सर्वेंद्रियां-। लागीं तो चि मग । लावी कर्मत्याग । करावया ॥८८४॥  
 दीन खेडुताचा । चाले जैसा छळ । कराया वसूल । शेतसारा ॥८८५॥  
 तैमें इंद्रियांतें । राबवी तोंवरी । दुःख तें जोंवरी । फिटलें ना ॥८८६॥  
 त्याग वा म्बीकार । कराया ह्यापरी । होय तो पुढारी । इंद्रियांचा ॥८८७॥  
 तेव्हां ऐकें तया । ज्ञात्यालागीं प्राज्ञा । कर्ता ऐमी संज्ञा । देती येथें ॥८८८॥  
 आणि त्या कर्त्याच्या । सर्व कर्मीं जाण । 'आउताममान । इंद्रियें तीं ॥८८९॥  
 म्हणोनियां तयां । इंद्रियांतें माच । 'करण' ऐसी च । 'संज्ञा देऊं ॥८९०॥  
 ह्या चि इंद्रियांच्या । योगें धनंजया । कर्ता येथें क्रिया । उभारी ज्या ॥८९१॥  
 त्या त्या क्रियामात्रें । व्यापिलें जें जाय । तें चि 'कर्म' होय । सुनिश्चयें ॥८९२॥  
 सुवर्णकाराच्या । बुद्धीनें साचार । 'व्यापे अलंकार । जैशा रीती ॥८९३॥  
 नातरी चंद्राचे । शीतल किरण । टाकित्ती व्यापोन । चांदिण्यातें ॥८९४॥  
 विस्तार कीं जैसा । व्यापितो वेलीस । किंवा प्रकाशास । प्रभा जैसी ॥८९५॥  
 नातरी आकाश । व्यापी अवकाशा । किंवा 'इक्षुरसा । गोडी जैसी ॥८९६॥  
 कर्त्याच्या क्रियेनें । तैसें व्यापिलें जें । तया नांव साजे । 'कर्म' ऐसें ॥८९७॥  
 एवं कर्ता कर्म । करण हीं तिन्हीं । तुज विवरोनिं । सांगितलीं ॥८९८॥  
 ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय । त्रिपुटी ही देख । कर्माची प्रेरक । होय येथें ॥८९९॥  
 तैसें चि कारण । कर्ता आणि कार्य । अर्जुना 'संचय । कर्माचा हा ॥९००॥  
 बीजामार्जी तरु । अभीमार्जी धूम । मनामार्जी काम । सदा जैसा ॥९०१॥  
 किंवा सुवर्णाच्या । खाणीलागीं जाण । जैसें का जीवन । सुवर्ण चि ॥९०२॥  
 तसीं कर्ता क्रिया । करण हीं होती । जीवन किरीटी । कर्मालागीं ॥९०३॥  
 म्हणोनि हें कार्य । तयाचा मी कर्ता । जीवासी अहंता । असे ऐसी ॥९०४॥

परी तथा कर्मां-। पासोनि 'निभ्रांत । जाणावें अलिप्त । आत्मतत्त्व ॥९०५॥  
म्हणोनि हें सांगूं । किती तें च तें च । आत्मा वेगळा च । कर्माह्नि ॥९०६॥

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ।

प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणु तान्यपि ॥१९॥

परी ज्ञान कर्म । कर्ता ऐसे तीन । येथें विवरून । दाविले जे ॥९०७॥  
ते हि त्रिधा होती । गुण-भेदें भिन्न । नको 'विसंबून । राहूं तें ॥९०८॥  
जे का राजसिक । तामसिक दोन्ही । घालिती बंधनी । जीवासी ते ॥९०९॥  
परी होय जो का । सात्त्विक प्रकार । जीवासी साचार । सोडवी तो ॥९१०॥  
तुज सत्त्वाचें त्या । स्पष्ट व्हावें ज्ञान । म्हणोनि सांगेन । शास्त्राधारं ॥९११॥  
सांख्यशास्त्रामार्जी । ह्याचा सांगोपांग । केला असे चांग । 'उहापोह ॥९१२॥  
होय ज्ञानगर्भ-। शास्त्रांचा जें राव । किंवा क्षीरार्णव । विचाराचा ॥९१३॥  
आत्मबोधरूपी । कुमुदिनीलागीं । होय चंद्र जर्गी । शास्त्र जें का ॥९१४॥  
प्रकृति-पुरुष । मिसळलीं दोन्हीं । जणूं रात्र आणि । दिन जैसीं ॥९१५॥  
तयांची निवड । करोनि जें दावी । जर्गी जणूं रवि । होवोनियां ॥९१६॥  
चौवीस तत्त्वांचें । धेवोनियां माप । मापोनि अमाप । प्रपंचासी ॥९१७॥  
जया शास्त्राचिया । योगें सुखें जीव । रहातो सदैव । परतर्त्वी ॥९१८॥  
तया सांख्यशास्त्रीं । वर्णिले त्रिगुण । ते चि विवरून । दावूं आतां ॥९१९॥  
आपुलिया बळें । 'त्रि-गुणीं समस्त । केलें दृश्यजात । त्रि-प्रकार ॥९२०॥  
विधात्यापासोन । कीटकापर्यंत । त्रिगुणीं हें 'व्याप्त । विश्व सारं ॥९२१॥  
सत्त्व रज तम । त्रिगुण-महिमा । देख नरोत्तमा । असे ऐसा ॥९२२॥  
परी जें का ज्ञान । भेदलें म्हणोन । त्रिविध होवोन । राहे विश्व ॥९२३॥  
तें चि ज्ञान आधीं । सांगूं सविस्तर । कैसें त्रि-प्रकार । झालें येथें ॥९२४॥  
येतां निर्मळत्व । दृष्टीलागीं जैसें । पहावें तें दिसे । निर्मळ चि ॥९२५॥  
तैसें शुद्ध ज्ञानें । सर्व हि पदार्थ । शुद्ध स्वरूपांत । कळों येती ॥९२६॥  
तरी आतां सांगूं । सात्त्विक तें ज्ञान । देई अवधान । धनंजया ॥९२७॥

ऐसें पार्थालागीं । म्हणे कृष्णदेव । गुणांची जो ठेव । मोक्षरूपी ॥९२८॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमच्ययमीक्षते ।

अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥२०॥

पार्था ज्ञात्यासर्वे । ज्ञेय बुडे जेथें । शुद्ध सात्त्विक तें । ज्ञान जाण ॥९२९॥

जैसा दिवाकर । न देखे अंधार । न जाणे सागर । सरितांसी ॥९३०॥

किंवा साउलीस । मिठी मारूं जातां । नये जैसी हाता । आपुलिया ॥९३१॥

तैसें जया ज्ञाना । शिवादि तृणान्त । शोधूं जातां दैत । आठळे ना ॥९३२॥

पाहूं जातां चित्र । हातें सारवून । ना तरी लवण । धुतां जलें ॥९३३॥

होवोनियां जागें । पाहूं जातां स्वप्न । जाय तें लोपोन । एकाएकीं ॥९३४॥

तैसें जेणें ज्ञानें । पाहूं जातां ज्ञेय । त्रिपुटीचा लय । होय पार्था ॥९३५॥

काय आटवाया । लागती भूषणें । पहावया सोनें । बुद्धिमंता ॥९३६॥

काय लाटांलागीं । गालोनियां घ्यावें । तेव्हां चि दिसावें । उदक तें ॥९३७॥

तैसें जया ज्ञाना । सर्वत्र अभेद । जाण ज्ञान शुद्ध । सात्त्विक तें ॥९३८॥

पार्था, पाहूं जातां । कौतुकें आरसा । दिसे त्यांत जैसा । पाहता च ॥९३९॥

तैसें जया ज्ञानें । ज्ञेयातें लोटोन । आपणा आपण । पाहे ज्ञाता ॥९४०॥

सात्त्विक तें ज्ञान । धनंजया जाण । होय जें भुवन । मोक्षश्रीचें ॥९४१॥

सात्त्विक ज्ञानाचें । असो हें वर्णन । आतां ऐक खूण । राजमाची ॥९४२॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।

वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥२१॥

धरोनियां चाले । द्वैताचा आश्रय । राजस तें होय । ज्ञान पार्था ॥९४३॥

जेणें भूतभेद । पाहोनि उदंड । केलें शतखंड । आपणासी ॥९४४॥

जेणें ज्ञात्यालागीं । पाडोनि भ्रमांत । दाखविलें दैत । विश्वामार्जी ॥९४५॥

जागृतीमधील । सत्यरूपाआड । घालोनि कवाड । विस्मृतीचें ॥९४६॥

निद्रावस्था जैसी । लाविते जीवास । स्वप्नींचे आयास । भोगावया ॥९४७॥

तैसें स्व-ज्ञानाच्या । आवाराबाहेरी । मिथ्या भूमीवरी । संसाराच्या ॥९४८॥



'जागृत्यादि तिन्ही । अवस्थांचा खेळ । दावी सर्वकाळ । जीवासी जें ॥९४९॥  
 अलंकारपणें । झांकलें म्हणोन । कळे ना सुवर्ण । बाळा जैसें ॥९५०॥  
 नामरूपाचिया । योगें तैसें जया । एक सर्वा ठायां । आकळे ना ॥९५१॥  
 घटागाडग्यांच्या । रूपा आली माती । म्हणोनि नेणती । मतिमंद ॥९५२॥  
 किंवा मूढालागीं । दीपपणामुळें । सर्वथा नाकळे । अग्नि जैसा ॥९५३॥  
 देखोनियां वख । जैसा अज्ञजन । जाय विसरून । मूळ तंतु ॥९५४॥  
 पटावरी चित्र । रेखिलें देखोन । पडे विस्मरण । पटाचें त्या ॥९५५॥  
 तैमीं भूतें भिन्न । देखोनि जें ज्ञान । गेलें विसरून । ऐक्यबोध ॥९५६॥  
 मग नाना काशीं । भेदला अनळ । किंवा परिमळ । पुष्पीं जैसा ॥९५७॥  
 किंवा जैसा चंद्र । एक चि असोन । जळभेदें भिन्न । ऐसा भासे ॥९५८॥  
 तैसें नाना भूतीं । भिन्नत्व जाणोन । पाहे थोर सान । ऐसा भेद ॥९५९॥  
 राजस तें ज्ञान । धनंजया जाण । आतां सांगूं खूण । तामसाची ॥९६०॥  
 'मातंगाचें घर । लागतें जाणावें । 'डावलोनि जावें । म्हणोनियां ॥९६१॥  
 तैसा तामसाचा । करावया त्याग । जाणोनि घे चांग । लक्षणें हीं ॥९६२॥

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम् ।

अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

अर्जुना जें ज्ञान । विधिवस्त्रहीन । निलाजरें नम्र । हिंडे विश्वीं ॥९६३॥  
 म्हणोनि जयातें । श्रुति पाठमोरी । होवोनि अन्हेरी । निरंतर ॥९६४॥  
 इतर हि शास्त्रें । श्रुतीतें मानोन । जया ज्ञाना हीन । लेखोनियां ॥९६५॥  
 'म्लेंछधर्माचिया । डोंगरीं लावोन । देती 'निखंदोन । नानापरी ॥९६६॥  
 तमोगुणरूपी । पिशाचचें घेरिलें । म्हणोनि जें झालें । वेडें पिसें ॥९६७॥  
 विषयांचा भोग । घेऊं जातां देख । नात्याची ओळख । ठेवी ना जें ॥९६८॥  
 नसे जया ज्ञाना । कांहींच वावडें । श्वान जैसें हिंडे । शून्य ग्रामीं ॥९६९॥  
 नये आटोव्यांत । खाऊं पाहतां जें । किंवा तोंड भाजे । जेणे योगें ॥९७०॥  
 तेवढ्या च वस्तु । निरुपायें वाळी । इतर तें गिळी । सर्व कांहीं ॥९७१॥

उंदीर तो जैसा । चोरितां सुवर्ण । चोख किंवा हीण । विचारी ना ॥९७२॥  
 नातरी जो कोणी । मांस खाऊं बैसे । पाहे ना तो जैसें । काळें गोरें ॥९७३॥  
 किंवा वनालागीं । जाळितां दावाग्रि । ओलें सुकें 'नाणी । मनीं जैसें ॥९७४॥  
 किंवा हवें तेथें । बैसूं जातां माशी । पाहे ना ती जैशी । जितें मेलें ॥९७५॥  
 ओकलें वाढलें । शिळें का साजूक । नेणे हा विवेक । 'काक जैसा ॥९७६॥  
 तैमें निषिद्धातें । सांडोनियां जावें । विहित तें ध्यावें । आदरानें ॥९७७॥  
 ऐमा भोगीं नाहीं । जयातें विवेक । पार्था ज्ञान देख । तामस तें ॥९७८॥  
 दिसे तें तें भोग्य । मानोनि साचार । तयाचा स्वीकार । करोनियां ॥९७९॥  
 'द्रव्य-दारादिक । मेळवी जें काहीं । वांटोनि तें देई । शिशोदरां ॥९८०॥  
 पवित्रापवित्र । ऐसी भाषा नाहीं । पिऊं जातां पाहीं । उदक तें ॥९८१॥  
 भागोनियां तृषा । तेणें होय सुख । हें चि ठावें एक । जया ज्ञाना ॥९८२॥  
 निंद्यानिंद्य तैमें । 'भक्ष्याभक्ष्य नेणे । आवडे तें म्हणे । पवित्रान्न ॥९८३॥  
 एक त्वचेन्द्रिय-। द्वारा चि केवळ । जाणे जें सकळ । स्त्रियांलागीं ॥९८४॥  
 आणि स्त्रियांशीं च । जोडावा संबंध । ऐसा एक बोव । जया ज्ञाना ॥९८५॥  
 मोयरें हें नांव । देई तयालागीं । स्वार्थी उपयोगी । पडे जें का ॥९८६॥  
 देहसंबंधी जे । परी होती कोणी । तयातें न मानी । आप्त ऐसे ॥९८७॥  
 काळालागीं वाटे । आघवें भक्ष्यान्न । आघवें इंधन । अमीलागीं ॥९८८॥  
 तैमें सर्व विश्व । आपुलें चि धन । ऐसें जाणे ज्ञान । तामस जें ॥९८९॥  
 जया ज्ञाना वाटे । विश्व हें सकळ । अर्जुना केवळ । भोग्य वस्तु ॥९९०॥  
 शरीर पाषणा-। वांचोनियां येथ । दुजा पुरुषार्थ । नाहीं जया ॥९९१॥  
 आकाशाआंतून । पडलें जें 'तोय । तयासी आश्रय । एक 'सिंधु ॥९९२॥  
 तैसीं सर्व कर्म । एका पोटासाठीं । ऐसी च निश्चिती । जया ज्ञाना ॥९९३॥  
 विहित तें जाण । स्वर्गासी कारण । निषिद्धाचरण । नरकासी ॥९९४॥  
 नेणे चि हें काहीं । तामस तें ज्ञान । अंधारें भरोन । राहिलें जें ॥९९५॥  
 सुनिश्चयें मानी । देहासी च आत्मा । पाषाण-प्रतिमा । ईश्वरासी ॥९९६॥

पडतां हा देह । केल्या कर्मासह । आत्मा निःसंदेह । नष्ट होय ॥९९७॥  
 मग कर्मफळ । भोगावयालागीं । उरे कोण जर्गी । ऐसें म्हणे ॥९९८॥  
 भोगविता साच । प्रभु देवराय । ऐसें बोलूं जाय । जरी कोणी ॥९९९॥  
 तरी देवासी च । विकोनियां खाय । म्हणे करी काय । कोण माझे ? ॥१०००॥  
 देउळामधील । पाषाणाची मूर्ति । होय भोगविती । कर्म-फळ ॥१००१॥  
 तरी ते पर्वत । राहोनियां स्वस्थ । होती असमर्थ । शासनीं कां ? ॥१००२॥  
 यदाकदा ऐसा । मानी जरी देव । तरी मनीं भाव । पाषाणाचा ॥१००३॥  
 आणि देहासी च । आत्मा ऐसें म्हणे । भोगाविण नेणे । साच काहीं ॥१००४॥  
 पापपुण्यादिक । मानोनि लटिकें । एक हित देखे । भोग्यजातीं ॥१००५॥  
 स्थूलदृष्टीलागीं । दिसे जें जें काहीं । इंद्रियें ज्या ठायीं । ओढ घेती ॥१००६॥  
 तें चि सत्य ऐसा । करी जें निश्चय । तामस तें होय । ज्ञान पार्था ॥१००७॥  
 जेथ ऐसी वाढे । देहभोगीं आस्था । धूम्र-वेली वृथा । नर्मीं जैसी ॥१००८॥  
 कोरडा ना ओला । उपयोगा आला । वाढोनि मोडला । भेंड जैसा ॥१००९॥  
 उसाचीं कणसें । हिजडीं माणसें । किंवा वन जैसें । सावरीचें ॥१०१०॥  
 बाळकाचें मन । चोरट्याचें धन । किंवा गळां स्तन । शेळियेचे ॥१०११॥  
 तैसें जें का स्वैर । निरर्थक ज्ञान । धनंजया जाण । तामस तें ॥१०१२॥  
 नांवापुरती च । जन्मांधाची दृष्टि । तैसा चि किरीटी । भाव येथें ॥१०१३॥  
 अपेयासी पान । ऐसें नांव देती । कान जैसे होती । बहिऱ्याचे ॥१०१४॥  
 तैसें ह्या तामस । ज्ञानालागीं फोल । 'ज्ञान' हें केवळ । आडनांव ॥१०१५॥  
 असो, आतां पार्था । बोलूं किती काई । ऐसें जें जें काहीं । देखशील ॥१०१६॥  
 तथा नको देऊं । ज्ञान ऐसें नाम । डोळस तें तम । जाण बापा ॥१०१७॥  
 असो, त्रिगुणांनीं । भेदलें म्हणोन । झालें असे ज्ञान । त्रिविध जें ॥१०१८॥  
 दाविलें तें तुज । येथें विवरोनि । श्रोतृ-शिरोभाणि । धनंजया ॥१०१९॥  
 ह्या चि त्रि-प्रकार । ज्ञानाच्या प्रकाशें । कर्त्याची ती दिसे । क्रिया येथें ॥१०२०॥  
 जैसें भिन्न भिन्न । ओधीं वाहे नीर । तैसें त्रि-प्रकार । कर्म तें हि ॥१०२१॥

अर्जुना त्रिविध । ज्ञानाचिया योगे । कर्म होऊं लागे । त्रि-विध जें ॥१०२२॥  
तयामार्जी कर्म । होय जें सात्त्विक । तुज सांगूं एक । तें चि आधीं ॥१०२३॥

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।

अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥२३॥

पतिव्रतेचिया । आलिंगनें जैसे । पतीसी होतसे । समाधान ॥१०२४॥  
तेमें स्वाधिकारें । वांढ्यासी जें आलें । तेणें कर्में झालें । सौख्य तया ॥१०२५॥  
सांवळ्या अंगासी । शोभावे चंदन । लोचनां अंजन । कामिनीच्या ॥१०२६॥  
तेमें स्वाधिकारा । होतसे भूषण । नित्यपणें जाण । कर्म जें का ॥१०२७॥  
सुगंधता प्राप्त । व्हावी सुवर्णासी । मग तया जैसी । यावी शोभा ॥१०२८॥  
तेमें नित्यकर्मा । नैमित्तिक जोडे । तेणें तेज चढे । तयालागीं ॥१०२९॥  
बाळ-संगोपन । कराया कारणें । माता देहप्राणें । कंटाळना ॥१०३०॥  
तेमें जीवेंभावं । आचरोनि कर्म । राहे तो निष्काम । फलाटार्यां ॥१०३१॥  
नित्य-नैमित्तिक । सर्व कर्में जाण । करी ब्रह्मार्पण । ऐशा रीती ॥१०३२॥  
उरे किंवा सर । ह्याचें नुरे भान । वाढितां भोजन । प्रियालागीं ॥१०३३॥  
तेमें मत्सेवादि- । प्रसंगें करोन । राहिलें चुकोन । नित्यकर्म ॥१०३४॥  
तरी राहिल्याचा । नसे जीवीं खेद । झाल्याचा आनंद । तो हि नाहीं ॥१०३५॥  
ऐशा हातोटीनें । घडे जें जें कर्म । तया गुण-नाम । 'सात्त्विक' हें ॥१०३६॥  
आतां राजमाचें । सांगेन लक्षण । अवधानीं न्यून । नको राखूं ॥१०३७॥

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहंकारेण वा पुनः ।

क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥२४॥

संसारीं हि धड । बोले ना तयांसी । असोनियां पार्सी । मायबाप ॥१०३८॥  
परी जगावरी । प्रेम करूं धांवे । भरोनियां हांवे । मूर्ख जैसा ॥१०३९॥  
किंवा दुरून हि । तुळशीच्या झाडा । न द्यावा शितोडा । उदकाचा ॥१०४०॥  
परी दुधाचा हि । भरोनियां हंडा । द्राक्षीचिया बुडां । ओतावा तो ॥१०४१॥  
तेसीं स्वाधिकारें । नित्य-नैमित्तिक । कर्में आवश्यक । होती जीं का ॥१०४२॥

तयां अनुष्ठाया । कदापि उठे ना । बैसलिया स्थाना-। पासोनि तो ॥१०४३॥  
 परी काम्यकर्मी । देहादि अमाप । वेंचितां हि अल्प । ऐसें मानी ॥१०४४॥  
 करावया वाढी-। दिढीचा व्यापार । वेंचितां अपार । तृप्ति नोहे ॥१०४५॥  
 किंवा पुरे ऐसें । जैसें म्हणवे ना । बीज पेरितांना । भूमीमार्जी ॥१०४६॥  
 नातरी परीस । दैवें होतां प्राप्त । लोह तें विकत । ध्यावयासी ॥१०४७॥  
 वेंचूं जातां धन । तेथें निःसंदेह । धनिका उत्साह । वाटे जैसा ॥१०४८॥  
 तैसीं फळें रम्य । पुढील देखोन । आचरे कठिण । काम्य कर्में ॥१०४९॥  
 परी केलें कर्म । तें हि वाटे अल्प । आणिक अमाप । करूं धांवे ॥१०५०॥  
 जेवढीं म्हणोन । काम्य कर्में होती । करी तेवढीं तीं । यथाविधि ॥१०५१॥  
 कर्मठ मी ऐसी । ख्याति सांगे लोकां । पिटोनियां डंका । कर्मांचा त्या ॥१०५२॥  
 पाहें धनंजया । जैसा काळज्वर । लेखी ना साचार । औषधासी ॥१०५३॥  
 तैसी भरतांच । कर्मांची अहंता । गुरु किंवा पिता । मानी ना तो ॥१०५४॥  
 आणि अहंकारें । करी जें जें कांहीं । फलेच्छु तो पाहीं । आदरानें ॥१०५५॥  
 तें तें करायाम । अल्प फलासाठीं । ओझीं वाहे पाठीं । मायासार्ची ॥१०५६॥  
 जैसा जीवापाड । करीतसे कष्ट । भरावया पोट । कोल्हाटी तो ॥१०५७॥  
 आघवा डोंगर । पोखरी मूषक । मिळावया एक । दाणा जैसा ॥१०५८॥  
 लाभावें शेवाळ । म्हणोनि दुर्दुर । ज्यापरी सागर । द्व्यळितो ॥१०५९॥  
 भिकेहून कांहीं । न लाभे तरी हि । सर्पालागीं वाही । गारुडी तो ॥१०६०॥  
 शीण चि तो गोड । एखाद्यासी होय । तेथें कोणें काय । करावें गा ॥१०६१॥  
 परमाणूसाठीं । वाळवी ती जैसी । जाय पाताळासी । लंघोनियां ॥१०६२॥  
 तैसें स्वर्गसुख । लाभावें म्हणोन । करावा जो शीण । निरंतर ॥१०६३॥  
 तें चि काम्यकर्म । सर्वथा संकेश । जाणावें राजस । ऐसें येथें ॥१०६४॥  
 आतां तामसाचें । सांगेन लक्षण । देई अवधान । धनंजया ॥१०६५॥

अनुबन्धं क्षयं हिसामनपेक्ष्य च पौरुषम् ।

मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते ॥२५॥

तरी निषिद्धासी । जन्मोनियां आली । सार्थकता भली । जेणें योगें ॥१०६६॥  
 धनंजया जाण । तामस तें कर्म । काळेंकुट्टु धाम । निंदेचें जें ॥१०६७॥  
 पाण्यावरी रेघ । काढावी तैसें च । करोनि जें साच । निरर्थक ॥१०६८॥  
 ताकाची निवळ । घुसळावी जैसी । किंवा राखोंडीसी । फुंकरावें ॥१०६९॥  
 किंवा घाण्यामार्जी । निरर्थ घालोन । काढावी गाळोन । वाळू जैसी ॥१०७०॥  
 पाखडावें भूस । विंधावें आकाश । घालावा कीं पाश । पवनासी ॥१०७१॥  
 अवध्या ह्या गोष्टी । जैशा निरर्थक । तैसें व्यर्थ देख । करोनि जें ॥१०७२॥  
 नरदेहाऐसें । जेणें नासे धन । जगाचें मोडोन । जाय सौख्य ॥१०७३॥  
 घेतां पद्मवना- । वरोनि ओढोन । कांटेरी सुतीक्षण । पाश जैसा ॥१०७४॥  
 स्वयें आपण हि । सर्वथा झिजोन । करी छिन्न भिन्न । पद्म-वृंद ॥१०७५॥  
 नातरी पतंग । घालोनि झडप । मालवोनि दीप । एकाएकीं ॥१०७६॥  
 स्वयें आपणासी । जाळोनियां घेत । टाकी अंधारांत । जगा जैसा ॥१०७७॥  
 तैसें वायां जावो । आपुलें सर्वस्व । वरी बैसो घाव । देहासी हि ॥१०७८॥  
 परी केला जाय । आणिकां अपाय । जेणें कर्में होय । तामस तें ॥१०७९॥  
 आपुल्या स्वतांसी । गिळविते माशी । परी गिळित्यासी । छळी जैसी ॥१०८०॥  
 ऐशा कश्मलाची । धनंजया जाण । देई आठवण । करोनि जें ॥१०८१॥  
 आपुलें सामर्थ्य । न पाहतां कांहीं । अविचारें घेई । हातीं जें का ॥१०८२॥  
 कोणता प्रसंग । यत्न तो हि किती । काय फलप्राप्ति । येणें होय ॥१०८३॥  
 ऐशा विचारातें । लाथाडूनि दूर । करी अहंकार । धरोनि जें ॥१०८४॥  
 आपुला आश्रय । जाळोनियां जैसा । अग्नि दाही दिशां । घेई धांव ॥१०८५॥  
 नातरी आपुली । सीमा उलंघून । जाय खवळून । सिंधु जैसा ॥१०८६॥  
 मग मागेंपुढें । न पाहतां कांहीं । तेविं नेणतां हि । बहु थोडें ॥१०८७॥  
 पवित्रापवित्र । करोनि एकत्र । स्वच्छंद सर्वत्र । धावूं पाहे ॥१०८८॥  
 तैसें कृत्याकृत्य । न पाहतां येथ । आपपरघात । करोनियां ॥१०८९॥  
 अहंकारें जें जें । कर्म केलें जाय । तामस तें होय । सुनिश्चयें ॥१०९०॥

ऐसें गुणभेदे । कर्म त्रिधा झालें । तें चि विवरिलें । 'सयुक्तिक ॥१०९१॥  
 आतां पार्था हीं च । कर्में आचरितां । अभिमानी कर्ता । जीव जो का ॥१०९२॥  
 तो हि त्रिविधत्व । पावला साचार । ऐक सविस्तर । तें चि सांगूं ॥१०९३॥  
 दिसे चतुर्विध । एक चि तो नर । स्वीकारोनि चार । आश्रमातें ॥१०९४॥  
 तैसा कर्म-भेदे । धनंजया पाहीं । कर्ता तो हि होई । त्रि-प्रकार ॥१०९५॥  
 तरी पार्था आतां । तयां तिहींतून । ऐक मावधान । सात्त्विक तो ॥१०९६॥

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहमन्वितः ।

सिध्दामिध्द्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥२६॥

चंदनाच्या शाखा । वाढती सरळ । न ठेवितां फळ- । हेतु जैसा ॥१०९७॥  
 'नागवेलीलागीं । न येतां चि फळ । तियेचें सफळ । जिणें जैमें ॥१०९८॥  
 तैसा फळहेतु । न ठेवितां देख । करी नित्यादिक । क्रिया जो का ॥१०९९॥  
 परी तयार्ची तीं । कर्में वायां जाती । निष्फळ चि होती । ऐसें नाहीं ॥११००॥  
 होती फलरूप । स्वभावे तीं जाण । फळासी कोडून । फळें येती ॥११०१॥  
 नित्यनैमित्तिक । कर्माचा पसारा । मांडी धनुर्धरा । आदरें तो ॥११०२॥  
 परी वर्षाकाळीं । जैसा मेघवृंद । सर्वथा 'निःशब्द' । करी वृष्टि ॥११०३॥  
 तैसा कर्तृत्वाचा । नाहीं अहंकार । स्वभावे साचार । जयालागीं ॥११०४॥  
 आणि परब्रह्मा । अर्पावया चांग । व्हावे यथासांग । कर्मजात ॥११०५॥  
 म्हणोनियां माधी । शुद्ध स्थळ-काळ । कर्मी ठेवी मेळ । शास्त्राज्ञेसी ॥११०६॥  
 कर्माविण कोठें । जाऊं नेदी वृत्ति । चितीं फलासक्ति । बाळगीना ॥११०७॥  
 शास्त्रनियमांचें । पाळी जो बंधन । कर्म-आचरण । करूं जातां ॥११०८॥  
 मनीं चिंता वाहे । जागती धैर्याची । बेडी नियमाची । सहावया ॥११०९॥  
 व्हावा आत्मलाभ । म्हणोनियां येथ । कर्में यथाप्राप । आचरितां ॥१११०॥  
 जो का 'देहसुखें' येऊं 'नेदी आड । आत्म्याची आवड । ऐसी जया ॥११११॥  
 नित्यादिक कर्में । ऐसीं आचरितां । दुरावे जो पार्था । तृषा त्याची ॥१११२॥  
 पडे विस्मरण । जो जो क्षुधेचें हि । देहसुखा नाहीं । भेटी जो जो ॥१११३॥

तों तों सोनें जैसें । विस्तवामाझारीं । 'तोलीं' 'तुटे परी । कसीं वाढे ॥१११४॥  
 तैसें नित्यादिक । कराया उत्साह । चढे निःसंदेह । तयालागीं ॥१११५॥  
 प्रीतीपुढें वाटे । जीवित हि तुच्छ । प्रीतीची ऐसी च । असे जाति ॥१११६॥  
 सती पतीसाठीं । सांडोनियां भय । न घे उडी काय । अमीमार्जीं ॥१११७॥  
 मग आत्म्याऐसी । थोर वस्तु प्रिय । जयालागीं होय । धनंजया ॥१११८॥  
 तयाचिया देहा । प्राप्त झाले कष्ट । तरी का दुःखित । होईल तो ? ॥१११९॥  
 विषयांचें सुख । ऐशापरी तुटे । आणि जों जों आटे । देहबुद्धि ॥११२०॥  
 तों तों नित्यादिक । कर्में करायास । होय 'दुणा' 'तोष' । जयालागीं ॥११२१॥  
 आचरितां ऐसें । कर्म थांबे जरी । कोणे अवसरिं । एकाएकीं ॥११२२॥  
 तरी जैसा गाडा । डोंगरावरोन । कोसळला खिन्न । होत नाहीं ॥११२३॥  
 तैसा जो का कर्म । थांबलें म्हणोन । होई ना 'उद्दिग्ध' । लेशमात्र ॥११२४॥  
 किंवा आरंभिलें । सिद्ध होतां पूर्ण । जिंकिलें म्हणोन । फुशारे ना ॥११२५॥  
 जाणोनि हें वर्म । आचरे जो कर्म । सात्त्विक हें नाम । तया कर्त्या ॥११२६॥  
 एक पंडु-सुता । राजस जो कर्ता । खूण सांगूं आतां । तयाची गा ॥११२७॥

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।

हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥२७॥

सर्व 'अभिलाषा । आली धनंजया । जयाचिया ठायीं । आश्रयामी ॥११२८॥  
 उकिरड्यावरी । राहते सांचून । जैसी सर्व घाण । गांवांतील ॥११२९॥  
 नातरी स्मशानीं । जैमे अमंगळ । पदार्थ सकळ । एक होती ॥११३०॥  
 तैसा जो सकळ । जगाचिया हांवें । रहाया बरवें । स्थान झाला ॥११३१॥  
 म्हणोनि सुलभ । जेथें फळलाभ । करी कर्मरंभ । आदरें तो ॥११३२॥  
 आणि जें जें काहीं । मेळविलें धन । वेंची ना त्यांतून । कवडी हि ॥११३३॥  
 क्षणोक्षणो तया । संपत्तीवरोन । टाकी ओंवाळून । जीव तो हि ॥११३४॥  
 कृपणांचें चित्त । जैसें ठेव्यापार्शीं । तैसें अभिलाषी । पर-द्रव्य ॥११३५॥  
 माशासाठीं बक । टपोनियां राहे । तैसें 'लक्षिताहे । तया द्रव्या ॥११३६॥



'बोरांटीचें झाड । टाकी गुंतवून । जातां जवळून । जैसा रीती ॥११३७॥  
 धांभूं जातां अंग । बांचोनियां कांटे । वस्त्रासवें फाटे । त्वचा ती हि ॥११३८॥  
 फळें खाऊं जावें । तरी तीं 'ढसाण । टाकिती पोळोन । जिह्मेलार्गी ॥११३९॥  
 तैमें पीडी लोकां । काया-वाचा-मनें । स्वार्थापुढें नेणे । पर-हित ॥११४०॥  
 आरंभिलें कर्म । न्यावया तडीस । सामर्थ्य जयास । नसे अंगीं ॥११४१॥  
 काम्यकर्मांचा त्या । न घे कधीं वीट । दुर्घट अचाट । जरी होती ॥११४२॥  
 धात-न्याचें फळ । मादक आंतून । आणि बाहेरून । कांटेरी तें ॥११४३॥  
 तैमा अंतर्बाह्य । अशुद्ध सर्वथा । राजस तो कर्ता । ऐसें जाण ॥११४४॥  
 इष्टफलप्राप्ति । होतां धनंजया । हषें वांकुलिया । दावी जगा ॥११४५॥  
 आरंभिलें कर्म । झालें फलहीन । तरी उद्वेगून । धिःकारी तें ॥११४६॥  
 ऐशापरी कर्मीं । ज्याचें आचरण । पार्था, कर्ता जाण । राजस तो ॥११४७॥  
 आतां ताममाची । तुज दावूं खूण । होय जो टिकाण । कुकर्माचें ॥११४८॥

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलमः ।

विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥२८॥

आणिकांतें कैमें । टाकितों जाळोनि । हें तों नेणे अग्नि । स्वयें जैसा ॥११४९॥  
 किंवा परघात । करितों आपण । हें तों नेणे तीक्ष्ण । शस्त्र जैसें ॥११५०॥  
 किंवा नेणे जैसें । काळकूट विष । कैसा होतो नाश । आणिकांचा ॥११५१॥  
 तैमीं आपपर-। घातासी कारण । कुकमें तीं जाण । आरंभी जो ॥११५२॥  
 आरंभितां कमें । राहे चि ना दक्ष । परिणामीं लक्ष । नसे ज्याचें ॥११५३॥  
 वाहटुळी वारा । जैसा वाहूं लागे । तैसा चि जो वागे । स्वैरगती ॥११५४॥  
 करी कमें सारीं । सोडोनियां तोल । क्रियांसवें मेळ । नाहीं ज्याचा ॥११५५॥  
 ऐसें वाटे जया । पाहोनि साचार । आणील हा हार । वेड्यासी हि ॥११५६॥  
 झोंबती गोचीड । बैलाचिया अंगीं । तैसा जगे भोगीं । विषयांच्या ॥११५७॥  
 क्षणीं हांसे क्षणीं । रडे जैसें वाळ । तैसा 'उच्छृंखळ । 'रहाटे जो ॥११५८॥  
 प्रकृति आधीन । जाहला म्हणोन । कृत्याकृत्यभान । विसरला ॥११५९॥

होवोनियां तृप्त । मग स्वैराचारें । 'फुगे जैसा केरें । उकिरडा ॥११६०॥  
 ईश्वरापुढें हि । लववी ना शिर । मानी चि ना थोर । तयालार्गी ॥११६१॥  
 निश्चळवें वाटे । डोंगर हि सान । ऐसा अभिमान । जया अंगी ॥११६२॥  
 ज्याचें मन जणूं । विषाचे 'कळोळ । आचार केवळ । चोरट्याचा ॥११६३॥  
 वारांगना-प्रेम । जैसें धावे स्वैर । तैसी च 'अस्थिर । दृष्टि ज्याची ॥११६४॥  
 काय सांगूं फार । देह चि तयाचा । जाण 'कापट्याचा । घडिलासे ॥११६५॥  
 तिवाच्यावरील । जुगान्याचें घर । तैसें चि साचार । जिणें त्याचें ॥११६६॥  
 म्घार्थी लुटारुंचा । जैसा 'वस्तिग्राम । नव्हे काय जन्म । तैसा त्याचा ? ॥११६७॥  
 नय जावों येवों । तयामागें कोणीं । हेतु हा धरोनि । बोलिलों हें ॥११६८॥  
 आणिकांचें भलें । पाहोनि साचार । जयालार्गी 'वैर । वाटे चितीं ॥११६९॥  
 जैमें दुधामार्जी । मिसळतां मीठ । होय तें वाईट । प्यावयासी ॥११७०॥  
 थंड हि पदार्थ । घालितां आगींत । तो हि घेई पेट । जैशा रीती ॥११७१॥  
 पक्वान्नं स्वादिष्ट । घातलीं पोटांत । तरी त्यांची होत । विष्टा जैसी ॥११७२॥  
 तैमें आणिकांचें । भलें जें जें काहीं । प्रवेशे हृदयीं । तयाचिया ॥११७३॥  
 तें तें 'विपरीत । होवोनि साचार । आघवें बाहेर । पडूं लागे ॥११७४॥  
 किंवा गोड दूध । पाजितां सर्पांस । तयाचें हि विष । करी जैसा ॥११७५॥  
 तैमे आणिकांचे । पाहे जरी गुण । ठेवी तो दूषण । तयांलार्गी ॥११७६॥  
 जणें येथें लाभे । सुखाचें जीवन । आणिक पावन । पर-लोक ॥११७७॥  
 ऐमें योग्य कर्म । करावया चांग । येतसे प्रसंग । जिये वेळीं ॥११७८॥  
 ठेविल्यासारिखी । तियेवेळीं झोंप । लागे आपोआप । जयालार्गी ॥११७९॥  
 परी शिवे ना ती । मानोनि विटाळ । प्राप्त होतां वेळ । कुकर्माची ॥११८०॥  
 आभ्ररस-भोग । घडायचा योग । तेव्हां मुखरोग । कावळ्यासी ॥११८१॥  
 नातरी भास्कर । पावतां उदय । दिसेनामें होय । घुबडासी ॥११८२॥  
 तैमा कल्याणाचा । येतां चि समय । आळसानें जाय । प्रासिला जो ॥११८३॥  
 परी प्रमादाची । वेळ येतां जाण । चढतें स्फुरण । जयालार्गी ॥११८४॥

सागराच्या पोटीं । नित्य वडवाग्नि । तैसा अंतःकर्णीं । खेद वाहे ॥११८५॥  
 लेंड्यांच्या अग्नींत । मदा धूर राहे । दुर्गंध चि वाहे । अधोद्वारा ॥११८६॥  
 तैमें धनंजया । जयाचें जीवित । निरंतर व्याप्त । विषादानें ॥११८७॥  
 कल्पानंतर हि । व्हावी फलप्राप्ति । ऐसी आशा चित्तीं । बाळगोनि ॥११८८॥  
 विश्वापलीकडे । जरी चिंता वाहे । तृण हि न लाहे । परी जो का ॥११८९॥  
 जर्गी पापराशि । ऐसा मूर्तिमंत । जाणावा निभ्रांत । तामस तो ॥११९०॥  
 ह्यापरी त्रि-विध । कर्म कर्ता ज्ञान । तयाचें लक्षण । दाविलें हें ॥११९१॥

बुद्धेभेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ।

प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय ॥२९॥

आतां तमोग्रामीं । मोह पांघरोनि । लेवोनियां लेणीं । संदेहार्ची ॥११९२॥  
 आत्मनिश्चयाचें । पहाया सौन्दर्य । मूर्तिमंत होय । आरसा जी ॥११९३॥  
 ऐशा बुद्धीची हि । त्रिधा असे धांव । सांगेन तें सर्व । एक पार्था ॥११९४॥  
 त्रिधा केला नाहीं । कोणता पदार्थ । सत्त्वादिकीं येथ । त्रिगुणांनीं ? ॥११९५॥  
 पाहें जर्गी काष्ठ । असे कोठें ऐमें । पोटीं अग्नि नसे । जयाचिया ॥११९६॥  
 तैमें दृश्यजाता- । मार्जी असे काय । भेदलें न होय । त्रिगुणीं जें ॥११९७॥  
 म्हणोनि त्रिगुणीं । बुद्धि त्रिधा केली । तेविं त्रिधा झाली । धृति ती हि ॥११९८॥  
 सांगूं यथायोग्य । चढवोनि साज । लक्षणें तीं तुज । वेगळालीं ॥११९९॥  
 तरी बुद्धि-धृति- । माझारीं साचार । बुद्धीचे प्रकार । सांगूं आधीं ॥१२००॥  
 उत्तम मध्यम । कनिष्ठ हे तीन । मार्ग भवीं जाण । यावयासी ॥१२०१॥  
 विहित सोडणें । काम्य आचरणें । निषिद्ध करणें । कर्म येथें ॥१२०२॥  
 प्राणियांमी पंथ । त्रिविध हा होय । जेणें जोडे भय । प्रपंचाचें ॥१२०३॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।

बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥३०॥

म्हणोनि वांट्याम । विधिमागें आलें । तेविं जें मानिलें । स्वाधिकारें ॥१२०४॥  
 तें चि एक नित्य- । कर्म धनंजया । भलें आचराया । असे येथें ॥१२०५॥

केवळ तहान । भागावी म्हणोन । करावें प्राशन । जळ जैसे ॥१२०६॥  
 तैसें नित्यकर्म । करावें केवळ । आत्मप्राप्ति-फळ । लक्षूनियां ॥१२०७॥  
 ऐशा रीती कर्म । आचरितां नीट । हरोनि अनिष्ट । जन्म-भय ॥१२०८॥  
 देई मोक्ष-लाभ । करोनि सुगम । कर्माचें हें वर्म । ध्यानीं घेई ॥१२०९॥  
 जाणोनि हें वर्म । कर्म करी भला । पार्था तो सांडिला । भव-भयें ॥१२१०॥  
 कर्तव्य म्हणोनि । आचरे विहित । लक्षूनियां पंथ । कैवल्याचा ॥१२११॥  
 ठेविल्यासारिखी । तेणें मिळे मुक्ति । ऐसी दृढ मति । होय त्याची ॥१२१२॥  
 म्हणोनि प्रवृत्ति- । रूपें निवृत्ती च । प्रकटली साच । जया कर्मी ॥१२१३॥  
 तया कर्माजां । डुंबावें कीं नाहीं । सांगें कामया ही । विवंचना ॥१२१४॥  
 बुडत्यासी जैसें । नावेचें साधन । लाभावें जीवन । तृषार्तासी ॥१२१५॥  
 किंवा अंधकूपीं । सांपडला नर । तया रवि-कर । भेटावे गा ॥१२१६॥  
 पथ्यासवें दिव्य । औषधी सेवोन । लाभावें जीवन । रोगियामी ॥१२१७॥  
 मिळे मीनालागीं । जळाचा आश्रय । तरी निःशंशय । जगे जैसा ॥१२१८॥  
 तैसें निष्कामत्वे । आचरितां कर्म । होतो चि सुगम । मोक्षलाभ ॥१२१९॥  
 जिये बुद्धिलागीं । ऐशापरी देख । ज्ञान असे चोख । कर्तव्याचें ॥१२२०॥  
 आणि अकर्तव्य । कर्म जें वाईट । तें हि कळे नीट । जियेलागीं ॥१२२१॥  
 पार्था काम्यादिक । जीं जीं कर्में होती । जेणें भयप्राप्ति । सांसारिक ॥१२२२॥  
 अकार्य म्हणोनि । जाती निंदिलीं जीं । जन्ममृत्यूमाजीं । गोविती जीं ॥१२२३॥  
 तया अकार्यात । न व्हावी प्रवृत्ति । म्हणोनि जी मति । दक्ष राहें ॥१२२४॥  
 अग्नीमाजीं जैसी । घालवे ना उडी । देववे ना बुडी । सिंधूमाजीं ॥१२२५॥  
 फुत्कारिता नाग । धरवे ना हातीं । मारवे ना मिठी । तप्त शूळा ॥१२२६॥  
 किंवा गुहेमाजीं । जाववे ना जैसें । क्रूर व्याघ्र वसे । जिये ठायीं ॥१२२७॥  
 निषिद्ध देखोन । तैसें महाभय । वाटे निःशंशय । बुद्धीसी ज्या ॥१२२८॥  
 जाणूं येतें जैसें । वाढिलें विषान्न । तरी आमंत्रण । मृत्यूसी तें ॥१२२९॥  
 तैसें निषिद्ध तें । बंधासी कारण । ऐसें असे ज्ञान । बुद्धीसी ज्या ॥१२३०॥

देखोनि निषिद्ध । बंधभयें युक्त । जाणे जी निवृत्त । व्हावें कैसें ॥१२३१॥  
 रत्नपारख्यासी । जैसें असे ज्ञान । खरें खोटें रत्न । पारखाया ॥१२३२॥  
 प्रवृत्ति-निवृत्ति- । द्वारा तैसें पार्था । मापी जी सर्वथा । कार्याकार्य ॥१२३३॥  
 ऐसें कृत्याकृत्य । जाणिते जी चोख । बुद्धि ती सात्त्विक । ऐसें जाण ॥१२३४॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ।

अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥३१॥

तरी पार्था 'क्षीर- । नीराची निवड । करूं नेणें 'जड । 'बक जैसा ॥१२३५॥  
 किंवा जैसा अंध । होय असमर्थ । दिन आणि रात । ओळखाया ॥१२३६॥  
 पुष्प-मकरंद । सेवी जो स्वभावं । काष्ठ कोरूं धांवे । तो चि 'भृंग ॥१२३७॥  
 परी स्वभावामी । तयाच्या निभ्रांत । तें तों विमंगत । नव्हे जैसें ॥१२३८॥  
 तैमें कार्याकार्य । आणि धर्माधर्म । न पाहतां कर्म । आचरे जी ॥१२३९॥  
 परीक्षवांचोन । घेऊं जातां मोती । कैसीं लाभती तीं । यथायोग्य ॥१२४०॥  
 लाभलीं तरी तीं । अपवादे साच । न लाभती हें च । घडे तेथें ॥१२४१॥  
 तैमें तें अकार्य । पुढें आलें नाहीं । तरी च न जाई । आचरिलें ॥१२४२॥  
 एन्हवीं जी बुद्धि । कार्याकार्य दोन्ही । मारखीं च मानी । धनंजया ॥१२४३॥  
 लक्ष्मीं सर्वांसी च । देती आमंत्रण । न पाहतां गुण । उच्चनीच ॥१२४४॥  
 तैमें कार्याकार्य । कळे ना जियेस । बुद्धि ती राजस । ऐसें जाण ॥१२४५॥

अधर्म धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ।

सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥३२॥

राजमार्ग तो हि । आडमार्गाऐसा । वाटतसे जैसा । 'तस्करासी ॥१२४६॥  
 उजाडतां दिन । रात्र झाली ऐसें । साच वाटे जैसें । 'निशाचरां ॥१२४७॥  
 'करंट्यासी दिसे । कोळशाचा ढीग । असोनियां चांग । धन-राशि ॥१२४८॥  
 तैमें स्वाधिकारें । विहित जें येथें । पातक तें वाटे । बुद्धीसी ज्या ॥१२४९॥  
 अर्थ तो अनर्थ । खरें तें चि खोटें । गुण तो चि वाटे । दोष ऐसा ॥१२५०॥  
 काय सांगूं जें जें । श्रुतीसी संमत । तें तें विपरीत । मानिते जी ॥१२५१॥

तामसी ती बुद्धि । जाणावी अर्जुना । पुसावया कोणा । नको येथे ॥१२५२॥  
 काय उक्त होय । रात्रीचा समय । दिन-धर्मकार्य । करावया ॥१२५३॥  
 आत्मबोधरूपी । कुमुदालागोन । फुलविता पूर्ण-चंद्रमा तूं ॥१२५४॥  
 तथा तुज ऐसे । बुद्धीचे त्रि-विध । सांगितले भेद । स्पष्टपणे ॥१२५५॥  
 ऐसी बुद्धि करी । कर्माचा निश्चय । तेथे जी आश्रय । होय धृति ॥१२५६॥  
 तथा धृतीचे हि । विभाग जे तीन । त्यांचे लक्षण । एक सांगूं ॥१२५७॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।

योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ साच्चिकी ॥३३॥

थांबे चौर्यकर्म । लोपतो अंधार । गगनीं भास्कर । उगवतां ॥१२५८॥  
 नातरी राजाज्ञा । जैसी हातोहात । थांबविते येथ । निंदकर्म ॥१२५९॥  
 गर्जनेसहित । नष्ट होती मेघ । देखतां चि वेग । पवनाचा ॥१२६०॥  
 सिंधु जैसा राहे । धरोनियां मौन । होतां चि दर्शन । अगस्तीचे ॥१२६१॥  
 मिटोनियां जाय । पद्मसमुदाय । चंद्राचा उदय । होतां जैसा ॥१२६२॥  
 नातरी सामोरा । गर्जना करीत । येतां अवचित । सिंहराज ॥१२६३॥  
 उचलिला पाय । तैसा चि तो तेथ । राहे मदोन्मत्त । हत्तीचा हि ॥१२६४॥  
 तैसी धृति जी का । उठतां अंतरीं । मनादिक सारीं । स्तब्ध होती ॥१२६५॥  
 होत्या इंद्रियांच्या । विषयांशीं गांठी । सुटोनि त्या जाती । आपोआप ॥१२६६॥  
 दहा हि इंद्रियें । मग प्रवेशती । मातेच्या पोटीं । मनरूपी ॥१२६७॥  
 आणि नव वायु-सहवर्तमान । प्राण होय लीन । सुषुम्नेत ॥१२६८॥  
 संकल्पविकल्प । सोडोनि लुगडें । सर्वथा उघडें । होय मन ॥१२६९॥  
 मग जावोनियां । बुद्धीच्या मार्गे । स्वस्थ होऊं लागे । एकाएकीं ॥१२७०॥  
 ऐसी धृति जी का । मन प्राणेंद्रियां । लावी सोडावया । स्व-व्यापार ॥१२७१॥  
 मग योगबळें । सडीं तीं समस्त । कोंडी कोंठडीत । ध्यानाच्या ॥१२७२॥  
 परी चक्रवर्ती । परमात्मा जाण । तथाच्या स्वाधीन । होती ना जों ॥१२७३॥  
 तोंवरी त्यांस । सोडी ना जी साच । देऊं केली लांच । जरी त्यांनीं ॥१२७४॥

ती गा धृति येथें । सात्त्विक तूं जाण । म्हणे नारायण । अर्जुनातें ॥१२७५॥

यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन ।

प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥३४॥

जो का आपणातें । देह चि मानोन । 'धर्मार्थादि' तीन । उपायांनीं ॥१२७६॥  
स्वर्ग-संसाराच्या । दोन्ही घरीं पाहें । आनंदानें राहे । धनंजया ॥१२७७॥  
मनोरथांचिया । सागरामधून । 'तारवें' हांकोन । धर्मार्थादि ॥१२७८॥  
करी क्रियारूप । व्यापार सकळ । धृतीचें ज्या बळ । धेवोनियां ॥१२७९॥  
जेथें कर्म हें च । घाली भांडवल । 'चौगुणें' फळेळ । म्हणोनियां ॥१२८०॥  
सोशितो जीवात्मा । एवढे सायास । धरोनियां कास । धृतीची ज्या ॥१२८१॥  
राजस ती येथ । ऐसें पार्था देख । आतां धृति ऐक । तामस जी ॥१२८२॥

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।

न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥३५॥

जी का व्यक्त होय । नीच तमोगुणें । जैसा काळेपणें । कोळसा तो ॥१२८३॥  
असोनि राक्षस । पापी दुष्ट हीन । तया 'पुण्यजन' । नांव जैसें ॥१२८४॥  
तैसा तमोगुण । प्राकृत अधम । परी तया नाम । 'गुण' ऐसें ॥१२८५॥  
नवग्रहामार्जी । जणूं तो 'इंगळ' । बोलती 'मंगळ' । परी तया ॥१२८६॥  
तैसें तमोगुणा । गुण ऐसें नाम । जरी तो अधम । गुणहीन ॥१२८७॥  
ऐसा तमोगुण । सर्व दोषस्थान । तयाची च जाण । मूर्ति जो का ॥१२८८॥  
तया नरा निद्रा । सोडी ना आळस । जैसा पातक्यास । दुःखभार ॥१२८९॥  
सोडी च ना भय । तया देहासक्ता । जैसी कठिणता । पाषाणासी ॥१२९०॥  
जैसा कृतघ्नासी । सोडोनियां दूर । जाई ना 'संभार' । पातकांचा ॥१२९१॥  
तैसा उपार्धांत । गुंतला म्हणोन । शोकासी ठिकाण । जाहला तो ॥१२९२॥  
विषादें सख्यत्व । केलें तयापार्शीं । सदा असंतोषी । म्हणोनियां १२९३॥  
कुपथ्यानें वागे । तया जैसी व्याधी । सोडी ना दुर्गंधि । लसुणातें ॥१२९४॥  
तैसें आमरण । जाय ना सोडून । पार्था खिन्नपण । तयालागीं ॥१२९५॥

'गौरवी तारुण्य । विषयेच्छा वित्त । म्हणोनि उन्मत्त । जाहला तो ॥१२९६॥  
 जैसें 'दाहकत्व । सोडी ना अग्नीस । सोडी ना वैरास । सर्प जैसा ॥१२९७॥  
 किंवा भय जैसें । सोडी ना जगास । नातरी देहास । काळ जैसा ॥१२९८॥  
 तैसा तमोगुणी । पुरुषालागोन । मद एक क्षण । विसंबे ना ॥१२९९॥  
 तथा तमोगुणी । पुरुषाच्या ठायीं । दोष हे पांच हि । निद्रादिक ॥१३००॥  
 धृतीनें ज्या जाती । धरिले निभ्रांत । तामसी ती येथ । जाण पार्था ॥१३०१॥  
 कर्माचा निश्चय । करी त्रिधा बुद्धि । परी होय सिद्धि । धृतीनें च ॥१३०२॥  
 होतां सूर्योदय । दिसूं लागे वाट । चालवेल नीट । पायांनीं ती ॥१३०३॥  
 परी जरी जोडे । धृतीचें सहाय्य । तरी च हें होय । ए-हवीं ना ॥१३०४॥  
 तैसी बुद्धि कर्म । दाखविती होय । निर्मां तें 'इंद्रिय-। गण सर्व ॥१३०५॥  
 परी धृति तेंथें । होय जी आधार । त्रिधा सविस्तर । वर्णिली ती ॥१३०६॥  
 परी त्रिधा कर्म । होतां चि निर्माण । फळ लाभे जाण । तथाचें जें ॥१३०७॥  
 जयालागीं नांव । सुख ऐसें पाहीं । 'कर्मवशें तें हि । त्रिधा होय ॥१३०८॥  
 ऐसें फलरूप । सुख त्रि-प्रकार । जाहलें साचार । त्रिगुणीं जें ॥१३०९॥  
 तें हि आतां सांगूं । स्पष्ट विवरून । बोल वापरून । चोख भले ॥१३१०॥  
 परी चोखपण । तथाचें आगळें । सर्वथा नाकळे । बोलामी हि ॥१३११॥  
 लागे कानाचिया । हाताचा हि मळ । 'आशय निर्मळ । घेऊं जातां ॥१३१२॥  
 म्हणोनि सांडून । बाह्य अवधान । ऐक अंतःकरण । देवोनियां ॥१३१३॥  
 बोलोनियां ऐसें । देवें आरंभिलें । त्रिधा सुख भलें । विवराया ॥१३१४॥  
 ज्ञानदेव म्हणे । अहो श्रोते जन । तें चि निरूपण । एका आतां ॥१३१५॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ।

अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥३६॥

देव म्हणे सांगूं । सुखत्रय-चिह्न । बोलिलों वचन । तें चि ऐक ॥१३१६॥  
 तें चि सुख देख । होतसे सहजें । आत्म-दर्शनें जें । जीवालागीं ॥१३१७॥  
 परी पार्था जैसें । दिव्यौषध येथ । ध्यावें प्रमाणांत । मात्रेचिया ॥१३१८॥



नातरी रसार्ची । देवोनियां पुटें । १ रुपें करूं येतें । कथिलाचें ॥१३१९॥  
 किंवा मिठावरी । चार दोन वेळ । शिंपडावें जळ । पाणी व्हाया ॥१३२०॥  
 तैसा आत्मराज । भेटतां जीवास । लाभे सुखलेश । तेथें जो का ॥१३२१॥  
 तयार्ची च पुटें । देवोनियां जीवा । अभ्यासें सद्गवा । भोगूं जातां ॥१३२२॥  
 जया आत्मसुखा-। ठायीं पार्थ देख । जीवदशादुःख । नाश पावे ॥१३२३॥  
 तें चि आत्मसुख । झालें त्रिगुणात्मक । अर्जुना एकैक । सांगूं आतां ॥१३२४॥

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ।

तत्सुखं साच्चिकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥

सर्पामुळें जैसें । चंदनाचें वूड । होय अवघड । मेळवाया ॥१३२५॥  
 द्रव्यराशीवरी । बैसली १ डाकीण । म्हणोनि कठिण । लाभाया तो ॥१३२६॥  
 यज्ञादि सायास । आरंभीं सहावे । तेव्हांचि भोगावें । स्वर्गसुख ॥१३२७॥  
 बाळपर्णी कष्ट । काढोनि साचार । मग व्हावें थोर । पुढें जैसें ॥१३२८॥  
 नातरी धुराचा । साहोनियां त्रास । दीपाचा प्रकाश । मग घ्यावा ॥१३२९॥  
 औषधाचा घोट । गिळोनियां आधीं । मग जैसी २ व्याधि । घालवावी ॥१३३०॥  
 तैसे आधीं यम-। दमाचे सायास । मग पुढें ३ वास । आत्मसुखां ॥१३३१॥  
 सर्व हि आसक्ति । नाशितें निभ्रांत । ऐसे धगधगीत । वैराग्य तें ॥१३३२॥  
 स्वर्ग-संसाराचें । कांटेरी कुंपण । सर्वथा तोडोन । टाकी जेथें ॥१३३३॥  
 जेथें सारासार-। विवेकेंकरोन । व्रतें हि कठिण । आचरितां ॥१३३४॥  
 बुद्धीचें ४ मालिन्य । झडोनियां सर्व । होय एकजीव । स्व-रूपीं ती ॥१३३५॥  
 गिळावे लागती । जेथें प्राणापान । सुषुम्नेत लीन । करोनियां ॥१३३६॥  
 एवढे सायास । जया सुखासाठीं । करावे लागती । प्रारंभीं च ॥१३३७॥  
 जैसे चक्रवाक-। पक्ष्याचें ५ मिथुन । मावळतां दिन । दुःखी होय ॥१३३८॥  
 कांसेपासोनियां । ओढिलें वासरूं । मोहें दुःख करूं । लागे जैसें ॥१३३९॥  
 नातरी भरल्या । ताटावरोनियां । घ्यावें हांकोनियां । भणंगातें ॥१३४०॥  
 माउलीपुढून । एकुलतें एक । ओढावें बालक । ६ काळें जैसें ॥१३४१॥

किंवा धनंजया । 'जीवनावांचेन । सोडूं पाहे प्राण । मासा जैसा ॥१३४२॥  
 तैसें इंद्रियांसी । दुःख होई फार । सोडूं जातां घर । विषयांचें ॥१३४३॥  
 परी सर्व हि तें । करिती सहन । वैराग्यसंपन्न । धीर वीर ॥१३४४॥  
 क्षीरसमुद्राचें । करितां मंथन । अमृत-निधान । हातीं आलें ॥१३४५॥  
 तैसें आधीं येथें । साहोनियां दुःख । पुढें आत्म-सुख । भोगिती ते ॥१३४६॥  
 आरंभितां आत्म-। सुखाचा अभ्यास । वैराग्याचें \*विष । निघे तेथें ॥१३४७॥  
 गिळोनि तें टाकी । धैर्य-शंभु जेव्हां । प्रकटतें तेव्हां । ज्ञानामृत ॥१३४८॥  
 कच्चेपर्णीं द्राक्ष । आंबट कोळीत । रसाळ अत्यंत । परिपार्कीं ॥१३४९॥  
 तैसें वैराग्यादि । येतां पूर्णतेस । लाभोनि प्रकाश । आत्मयाचा ॥१३५०॥  
 'आघवी अविद्या । वैराग्यासहित । हारपोनि जात । एकाएकीं ॥१३५१॥  
 आत्मरूपीं बुद्धि । 'होतां 'एकरस । मिळे सागरास । गंगा जैसी ॥१३५२॥  
 अद्रयानंदाची । प्रकटते खाण । स्वभावे तल्लीन । जीव ब्रह्मीं ॥१३५३॥  
 ऐसें स्वानुभव-। विश्रांति हें फळ । वैराग्य हें मूळ । जया सुखा ॥१३५४॥  
 तया सुखा देती । सात्त्विक हें नांव । म्हणे कृष्णदेव । अर्जुनातें ॥१३५५॥

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।

परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥३८॥

विषय आणिक । इंद्रियांच्या योगें । पूर वाहूं लागे । सुखाचा जो ॥१३५६॥  
 जैसा सत्ताधारी । गांवामार्जी यावा । मग तेथें व्हावा । समारंभ ॥१३५७॥  
 विवाहाचा बार । द्यावा उडवोन । काढोनियां ऋण । आणिकांचें ॥१३५८॥  
 किंवा जैसें केळें । आणिक साखर । जिह्वेसी मधुर । रोगियाच्या ॥१३५९॥  
 किंवा 'बचनाग । खाऊं जातां गोड । परी अवघड । प्राण जातां ॥१३६०॥  
 प्रारंभीं च भली । जैसी प्रवासांत । मैत्री संभावित । तस्काराची ॥१३६१॥  
 नातरी साचार । वेश्येचा शृंगार । दर्शनीं रुचिर । वाटे जैसा ॥१३६२॥  
 किंवा नट जैसा । नाचे वरीवरी । सोंगें नानापरी । धेवोनियां ॥१३६३॥  
 तैसें चि विषयां-। इंद्रियांच्या मेळें । जें का सुख मिळे । जीवालागीं ॥१३६४॥

दुःखद तें जाण । सर्वथा कृत्रिम । नव्हे परिणाम । भला त्याचा ॥१३६५॥  
 खडकीं रत्नांची । धरोनियां आस । हंस तो प्राणास । मुके जैसा ॥१३६६॥  
 सर्व हि संपत्ति । तैसी वांया जाय । आणि हानि होय । जीविताची ॥१३६७॥  
 पापाचा संचय । सुकृताचा क्षय । भोगिलें तें होय । स्वप्न जैसें ॥१३६८॥  
 मग निरंतर । दुर्धर आघात । बसावे सोशीत । हानीचे च ॥१३६९॥  
 ऐसें इहलोकीं । देई जें आपत्ति । आणिक दुर्गति । परलोकीं ॥१३७०॥  
 जेथें जाळोनियां । सद्धर्माचा मळा । भोगिती सोहळा । विषयांचा ॥१३७१॥  
 जेथें दिला जाय । इंद्रियांतें लळा । पापमात्र बळा । चढे तेथें ॥१३७२॥  
 मग पातकें तीं । घालिती नरकीं । ऐसी परलोकीं । हानि जेणें ॥१३७३॥  
 जैसा बचनाग । भक्षितां मधुर । परी तो दुर्धर । प्राण जातां ॥१३७४॥  
 तैसें आरंभीं जें । देतसे संतोष । परी कडू विष । परिणामीं ॥१३७५॥  
 धनंजया जाण । सुख तें राजस । स्पर्श नको त्यास । कदा काळीं ॥१३७६॥

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ।

निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥३९॥

अपेयाच्या पानें । अमोज्य-भोजनें । किंवा संत्रिधानें । स्वैरिणीच्या १३७७  
 किंवा आणिकांचा । करोनियां धात । किंवा पर-वित्त । हिरावोनि ॥१३७८॥  
 नातरी भाटांची । ऐकोनियां स्तुति । निपजतें चिर्तीं । सुख जें का ॥१३७९॥  
 आळसांत होय । सुखाची ज्या वाढ । भोगावें जें गाढ । निद्रेमार्जी ॥१३८०॥  
 आत्मकल्याणाचें । जेथें नुरे भान । पार्था सुख जाण । तामस तें ॥१३८१॥  
 नको येथें आतां । विस्तारें वर्णन । तया सुखा कोण । सुख म्हणे ? ॥१३८२॥  
 ऐसें कर्म-भेदें । सुख त्रिधा झालें । तुज सांगितलें । यथाशास्त्र ॥१३८३॥  
 पार्था कर्ता कर्म । आणि कर्म-फळ । एक जी केवळ । त्रिपुटी ही ॥१३८४॥  
 ती वांचोनि स्थूल । सूक्ष्म सृष्टीमार्जी । जाण वस्तु दुजी । नसे काहीं ॥१३८५॥  
 आणि त्रिगुणां ही । गुंफिलीसे साच । गुंफिले तंतू च । वस्त्रीं जैसे ॥१३८६॥  
 न तदास्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।

सत्त्वं प्रकृतिजैर्भुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥४०॥

म्हणोनि सत्त्वादि । त्रिगुणांनीं भला । जाई ना गोंविला । मायाभासी ॥१३८७॥  
 ऐसा स्थूल सूक्ष्म । एक हि पदार्थ । नसे पार्था येथ । किंवा स्वर्गी ॥१३८८॥  
 लोंकरीवांचोन । कोठोनि कांबळा । चिखलाचा गोळा । मातीविण ॥१३८९॥  
 नातरी अर्जुना । उदकावांचोन । अस्तित्व कोठोन । कल्लोळांसी ॥१३९०॥  
 तैसें सृष्टीमार्जी । काहीं हि नाही च । त्रिगुणीं जें साच । घडिलें ना ॥१३९१॥  
 म्हणोनियां जाण । विश्व हें सकळ । त्रिगुणीं केवळ । घडिलेंसें ॥१३९२॥  
 गुणीं ब्रह्मा विष्णु । आणिक शंकर । ऐसे त्रि-प्रकार । देव केले ॥१३९३॥  
 स्वर्ग मृत्यु आणि । पाताळ हे भेद । त्रिगुणीं त्रि-विध । केले लोकीं ॥१३९४॥  
 भिन्न व्यवसाय । चतुर्वर्णां भले । लावोनियां दिले । त्रि-गुणीं च ॥१३९५॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परंतप ।

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥४१॥

पुससी ते कोण । कोण चारी वर्ण । तरी ते ब्राह्मण । अग्रभागीं ॥१३९६॥  
 क्षत्रिय आणिक । वैश्य ऐसे दोन । ब्राह्मणासमान । ते हि मानीं ॥१३९७॥  
 वेदोक्त कर्मांचा । तयां अधिकार । जैसा तो साचार । ब्राह्मणांसी ॥१३९८॥  
 चौथा शूद्र वर्ण । म्हणोनि प्रसिद्ध । वेदांशीं संबंध । नाही ज्याचा ॥१३९९॥  
 परी वृत्ति त्याची । वर्णत्रयाधीन । म्हणोनि गणन । चौथा ऐसें ॥१४००॥  
 फुलांसंगें घ्यावा । धान्याचा हि वास । भोगितां विलास । श्रीमंतानें ॥१४०१॥  
 तैसा द्विजांसंगें । केलासे साचार । श्रुतीनें स्वीकार । शूद्रांचा हि ॥१४०२॥  
 ऐसी चतुर्वर्ण्य-व्यवस्था हि पार्था । सांगूं कर्में आतां । तयांचीं गा ॥१४०३॥  
 जेणें कर्में होय । ईश्वराची प्राप्ति । तयां यातायाती । चुकोनियां ॥१४०४॥  
 कर्में चहूं ठायीं । दिलीं विभागोनि । मायेच्या त्रि-गुणीं । चहूं वर्णां ॥१४०५॥  
 जन्मदाता जैसा । जोडोनियां धन । देतसे वांटोन । पुत्रांलागीं ॥१४०६॥  
 नातरी भास्कर । पांथिकांलागोन । देई दाखवोन । मार्ग जैसे ॥१४०७॥  
 नातरी स्वामीनें । सेवकांलागोन । द्यावीं विभागोन । कर्में जैसीं ॥१४०८॥

तैसी 'चहूं' 'वर्णी' । कर्मविभागणी । केली त्रि-गुणांनीं । प्रकृतीच्या ॥१४०९॥  
 सत्त्वगुणांचें च । 'न्यूनाधिकपण । क्षत्रिय-ब्राह्मण । तेथें दोघे ॥१४१०॥  
 रजोगुणीं अल्प । सत्त्वाचें मिश्रण । तेथें वैश्यवर्ण । निपजला ॥१४११॥  
 रजोगुणामार्जी । तमाची भेसळ । तेथें चि केवळ । शूद्रवर्ण ॥१४१२॥  
 एका प्राणिगणीं । ऐसा चतुर्विध । केला वर्णभेद । त्रि-गुणांनीं ॥१४१३॥  
 ठेविला अंधारीं । दिसावा पदार्थ । घेतां चि हातांत । दीप जैसा ॥१४१४॥  
 तैसें कर्म जें का । शास्त्रें दाखविलें । त्रि-गुणीं भेदलें । स्वाभाविक ॥१४१५॥  
 तें चि आतां ऐक । जें जें जया वर्णा । विहित अर्जुना । असे येथें ॥१४१६॥  
 सांगेन मी तुज । तयाचें लक्षण । निधि तूं श्रवण- । सौभाग्याचा ॥१४१७॥

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिराजवमेव च ।

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥४२॥

तरी यत्नें सर्व । इंद्रियांच्या वृत्ती । आपुलिया हातीं । घेवोनियां ॥१४१८॥  
 बुद्धि एकनिष्ठ । मिळे आत्मयासी । एकान्तीं कांतासी । प्रिया जैसी ॥१४१९॥  
 ऐसी आत्म्याठायीं । बुद्धि अंतर्मुख । तया नाम देख । 'शम' ऐसें ॥१४२०॥  
 तो चि शम येथें । ब्राह्मण-कर्माचा । गुण आरंभीचा । ऐसें जाण ॥१४२१॥  
 अधर्मीं प्रवृत्ति । न व्हावी म्हणोन । प्रयत्नें करोन । धनंजया ॥१४२२॥  
 'विधीचिया' 'दंडें' । बाह्येंद्रियगण । 'काढणें' 'पिटोन । निरंतर ॥१४२३॥  
 तो चि 'दम' नामें । दुजा गुण देख । होय साहाय्यक । शमासी जो ॥१४२४॥  
 स्वधर्मानुसार । करणें साचार । सर्व व्यवहार । जीवनाचे ॥१४२५॥  
 \*पांचवीच्या रात्रीं । प्रसूति-गृहांत । ठेवती तेवत । दीप जैसा ॥१४२६॥  
 तैसें सदा चितीं । ईश्वर-त्रितन । तो चि तिजा गुण । 'तप' नामें ॥१४२७॥  
 आतां जो निष्पाप । शौच नामें गुण । द्विविध लक्षण । ऐक त्याचें ॥१४२८॥  
 विहिता चरणें । देह भूषविणें । मानसीं ठेवणें । शुद्ध भाव ॥१४२९॥  
 ऐसें अंतर्बाह्य । साजिरें जीवन । तो चि चौथा गुण । 'शौच' नामें ॥१४३०॥  
 पृथ्वीचिया परी । 'साहणें' जें सर्व । तया गुणा नांव । 'क्षमा' ऐसें ॥१४३१॥

स्वरामार्जी जैसा । पंचम मधुर । तैसा चि साचार । पांचवा हा ॥१४३२॥  
 वांकडातिकडा । ओष जरी होय । वाहे गंगा-तोय । उजू जैसे ॥१४३३॥  
 नातरी वांकडा । दिसे जरी ऊंस । तरी गोड रस । उजू जैसा ॥१४३४॥  
 तैसे आपणार्शी । जे का 'प्रतिकूल । वागणें सरळ । तयांशीं हि ॥१४३५॥  
 'आर्जव' हें नांव । तया गुणा पाहीं । सहावा जो होई । ब्रह्मकर्मी ॥१४३६॥  
 वृक्षाचिया मूळीं । प्रयत्नेकरोन । ओतोनि जीवन । माळी जैसा ॥१४३७॥  
 करी परिश्रम । ऐसे सर्वकाळ । जाणोनि पुढील । फळ-प्राप्ति ॥१४३८॥  
 तैसे शास्त्राधारे । वर्तोनियां देख । पावावा तो एक । ईश्वर चि ॥१४३९॥  
 ऐसे जाणणें जें । तया नांव 'ज्ञान' । सातवा तो गुण । 'ब्रह्म-कर्मी ॥१४४०॥  
 'विज्ञान' म्हणोन । आठवा जो गुण । तयाचें लक्षण । सांगूं आतां ॥१४४१॥  
 शास्त्रें किंवा ध्यानें । होतां अंतःशुद्धि । स्थिर राहे बुद्धि । आत्मतर्त्वी ॥१४४२॥  
 तया गुणा नाम । जाणावें 'विज्ञान' । कर्मी गुणरत्न । आठवें हें ॥१४४३॥  
 ऐक आतां गुण । सांगेन नवम । 'आस्तिक्य' हें नाम । जयालागीं ॥१४४४॥  
 'राजमुद्रांकित । पार्था असो कोणी । तया नरा मानी । प्रजा जैसी ॥१४४५॥  
 तैसा स्वीकारिला । शास्त्रें जो जो मार्ग । ठेवणें अभंग । श्रद्धा तथें ॥१४४६॥  
 'आस्तिक्य' तें जाण । नवम तो गुण । जणें साचपण । कर्मांलागीं ॥१४४७॥  
 जया कर्मी ऐसे । नऊ हि हे चोख । गुण शमादिक । देखशील ॥१४४८॥  
 तें चि स्वाभाविक । ब्राह्मणाचें कर्म । म्हणे त्रिविक्रम । अर्जुनातें ॥१४४९॥  
 शमादिक नव-। गुणांचा सागर । ब्राह्मण साचार । जाण पार्था ॥१४५०॥  
 प्रकाशातें नित्य । करोनि धारण । सूर्यनारायण । राहे जैसा ॥१४५१॥  
 तैसा नवगुण-। रत्नांचा हा हार । शोभे निरंतर । ब्राह्मणासी ॥१४५२॥  
 पुष्प-भारें जैसा । शोभला चंपक । खुलला 'शशांक' । 'चंद्रिकेन ॥१४५३॥  
 नातरी चंदन । चोपडिला साच । असे अंगींच्या च । सुगंधानें ॥१४५४॥  
 तैसे नवगुणीं । जडिलें 'अव्यंग' । भूषण हें चांग । ब्राह्मणाचें ॥१४५५॥  
 ब्राह्मणाचें अंग । सोडोनि अर्जुना । क्षण हि राहे ना । भूषण हें ॥१४५६॥

आतां क्षत्रियासी । कर्म जें उचित । तें हि सांगूं येथ । प्रज्ञावंता ॥१४५७॥  
 शौर्य तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।  
 दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥४३॥  
 द्यावया प्रकाश । पाहें जैसा सूर्य । नापेशी साहाय्य । आणिकांचें ॥१४५८॥  
 आपुलें सामर्थ्य । गाजवायासाठीं । सिंहासी सोबती । नको कोणी ॥१४५९॥  
 सहाय्यावांचोन । तैसा जोरदार । स्वभावतः शूर । असे जो का ॥१४६०॥  
 'शौर्य' येणें नामें । तो चि श्रेष्ठ गुण । पहिला च जाण । क्षत्रियाचा ॥१४६१॥  
 कोटी नक्षत्रांचें । हारपतें तेज । प्रतापें सहज । सूर्याचिया ॥१४६२॥  
 परी कोट्यवधि । सचंद्र तारका । ग्रासिती ना एका । सूर्य-तेजा ॥१४६३॥  
 तैसें आपुलिया । प्रतापें निभ्रांत । करणें विस्मित । जगालागीं ॥१४६४॥  
 कैसा हि प्रसंग । येवो अवचित । क्षोभणें माहीत । नाहीं जेथें ॥१४६५॥  
 ऐसें महत्तेज । तो चि दुजा गुण । पार्थी कर्मी जाण । क्षत्रियाच्या ॥१४६६॥  
 आतां 'धैर्य' नामें । जो का तिजा गुण । तयाचें लक्षण । सांगूं तुज ॥१४६७॥  
 पडो अंगावरी । तुटोनि आकाश । बुद्धीसी मानस । मोहवी ना ॥१४६८॥  
 तें चि धैर्य ऐसें । जाण धनुर्धरा । गुण जो तिसरा । क्षात्र-कर्मी ॥१४६९॥  
 पाहिजे तेवढें । खोल असो पाणी । तयातें जिंकोनि । 'पद्म' 'फांके ॥१४७०॥  
 ना तरी तें जैसें । पदार्थमात्रास । जिंकितें आकाश । उंचीमार्जी ॥१४७१॥  
 जिंकोनियां तैशा । अवस्था अनेक । हर्ष-शोकादिक । फलार्थासी ॥१४७२॥  
 टाकणें विंधोन । निश्चयेंकरोन । ऐसें स्थिरपण । प्रज्ञेचें जें ॥१४७३॥  
 'दक्षत्व' तें चोख । धनंजया जाण । जो का चौथा गुण । क्षत्रियाचा ॥१४७४॥  
 आतां पांचवा जो । गुण अलौकिक । लक्षण हें देख । तयाचें गा ॥१४७५॥  
 सूर्यकुलें जैसी । राहती अखंड । सूर्यापुढें तोंड । करोनियां ॥१४७६॥  
 शत्रूपुढें तैसें । धनंजया जाण । 'मांडोनियां ठाण । 'राहणें जें ॥१४७७॥  
 निश्चयेंकरोन । न घ्यावी साचार । नारी गरोदर । सेजे जैसी ॥१४७८॥  
 राहणें रोवोनि । तैसें रणीं खोट । न दावितां पाठ । शत्रूलागीं ॥१४७९॥

धर्मार्थादि जे का । चारी पुरुषार्थ । तयांहुनी श्रेष्ठ । भक्ति जैसी ॥१४८०॥  
 तैसा क्षत्रियांच्या । गुणांमार्जी देख । सर्वथा प्रमुख । पांचवा हा ॥१४८१॥  
 आलीं फुलें फळें । द्यावया साचार । सर्वदा उदार । वृक्ष जैसा ॥१४८२॥  
 नातरी सुगंध । अर्पावयालागीं । 'पद्मवृंदाअंगीं । उदारता ॥१४८३॥  
 किंवा रात्रीं जैसा । कोणी हि स्वच्छंद । लुटावा आनंद । चांदण्याचा ॥१४८४॥  
 तैसें जो जो जें जें । मागेल तें तया । औदार्यें द्यावया । सिद्ध होणें ॥१४८५॥  
 अमाप तें दान । क्षात्रधर्मीं जाण । होय गुणरत्न । सहावें जें ॥१४८६॥  
 हवें तें तें काम । ध्यावें करवून । आपुले पोसून । अवयव ॥१४८७॥  
 तैसी प्रजा प्रेम । पोसोनियां चांग । घेणें उपभोग । साम्राज्याचा ॥१४८८॥  
 आणि आज्ञेलागीं । एक चि ठिकाण । रहावया जाण । हाणें जें का ॥१४८९॥  
 'ईश्वरभाव' हें । तया नांव पाहें । पार्था जेथें राहे । सर्व शक्ति ॥१४९०॥  
 क्षत्रिय-कर्मांत । जो का गुणराज । सांगितला तुज । सातवा हा ॥१४९१॥  
 ह्या चि सप्तगुणीं । जें का अलंकृत । जैसा नभःप्रांत । सप्तर्षीनीं ॥१४९२॥  
 तैसें सप्तगुणीं । पवित्र जें देख । तें चि स्वाभाविक । क्षात्रकर्म ॥१४९३॥  
 नव्हे तो क्षत्रिय । वाटे जणूं साचा । सत्त्वसुवर्णाचा । मेरू च तो ॥१४९४॥  
 म्हणोनियां सप्त-गुण-स्वर्गालागीं । आधार तो जर्गीं । एक झाला ॥१४९५॥  
 नव्हे कर्म जणूं । भोगितो तो पृथ्वी । 'सप्तगुणार्णवीं । वेष्टित ही ॥१४९६॥  
 किंवा सप्तगुण-रूपी सप्त ओर्धी । गंगा च ही जर्गीं । कर्मरूप ॥१४९७॥  
 क्षत्रियस्वरूपी । सागराच्या अंगा । मिळोनि 'सुभगा । शोभतसे ॥१४९८॥  
 असो, ऐसें देख । सप्तगुणात्मक । कर्म स्वाभाविक । क्षत्रियाचें ॥१४९९॥  
 आतां वैश्याचिया । जातीसी उचित । कर्म तें यथार्थ । सांगूं एक ॥१५००॥

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।

परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥४४॥

भूमि बीज आणि । धेवोनि नांगर । जोडणें अपार । लाभ तेणें ॥१५०१॥  
 किंबहुना ऐसी । करोनियां शेती । जोडणें संपत्ति । 'जीवनार्थ ॥१५०२॥



किंवा बाळगोनि । विपुल गोधन । करावें रक्षण । कुटुंबाचें ॥१५०३॥  
 नातरी पदार्थ । घेवोनि सवंग । आणिकां महाग । विकावा तो ॥१५०४॥  
 वैश्य-वर्णाचें हें । कर्म एवढें च । स्वाभाविक साच । धनंजया ॥१५०५॥  
 ब्राह्मण क्षत्रिय । आणि वैश्य जाण । होती तिन्ही वर्ण । द्वि-जन्मे हे ॥१५०६॥  
 ह्या चि त्रिवर्गाची । करणें जी सेवा । जाण तें पांडवा । शूद्रकर्म ॥१५०७॥  
 द्विजाचिया सेवे-।वांचोनि आणिक । कर्म स्वाभाविक । नसे शूद्रां ॥१५०८॥  
 ऐशापरी कर्में । चतुर्वर्णांचित । दाविलीं यथार्थ । तुज येथें ॥१५०९॥

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ।

स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दन्ति तच्छृणु ॥४५॥

श्रोत्रादि इंद्रियां । शब्दादि विषय । जैसा योग्य होय । धनंजया ॥१५१०॥  
 तैसीं भिन्न भिन्न । चार हि वर्णांतें । हीं च कर्में येथें । योग्य होती ॥१५११॥  
 मेघापासोनियां । सुटलें जें जळ । तथा योग्य स्थळ । नदी जैसी ॥१५१२॥  
 आणि नदीलागीं । जैसा पंडुसुता । उचित सर्वथा । सागर चि ॥१५१३॥  
 किंवा गौरांगासी । जैसें गोरेपण । सर्वथा शोभून । दिसतसे ॥१५१४॥  
 तैसें वर्णाश्रम-। धर्मवशें भलें । वांड्यासी जें आलें । कर्म शोभे ॥१५१५॥  
 स्वभावे विहित । कर्म तें शास्त्रोक्त । कराया निश्चित । बुद्धि व्हावी ॥१५१६॥  
 आपुलें च रत्न । परी पारखोन । पारख्याकडोन । घ्यावें जैसें ॥१५१७॥  
 तैसें कर्म आलें । वांड्यासी जें वीरा । घ्यावें शास्त्रद्वारा । पारखोनि ॥१५१८॥  
 पाहों येतें काय । रात्रीं दिव्याधिण । असोनि लोचन । आपणासी ॥१५१९॥  
 असोनियां पाय । काय उपयोग । जोंवरी ना मार्ग । सांपडला ॥१५२०॥  
 तैसा ज्ञातिवशें । स्वभावे साचार । असे अधिकार । आपुला जो ॥१५२१॥  
 तो तो यथार्थत्वे । घ्यावा समजोन । शास्त्रासी प्रमाण । मानोनियां ॥१५२२॥  
 ठेवा गृहीचा च । दीपें दाखवितां । मग येई घेतां । अनायासें ॥१५२३॥  
 स्वभावतां तैसें । वांड्यासी जें आलें । वरी मान्य केलें । शास्त्रानें जें ॥१५२४॥  
 अर्जुना तें कर्म । आपुलें विहित । आचरे जो येथ । उत्साहानें ॥१५२५॥

आगें जीवें भर । तेथें चि देवोन । सर्वथा सांडोन । 'फल-काम ॥१५२६॥  
 पार्था प्रवाहीं जें । सांपडलें पाणी । 'आणिक वाहणी । नेणे जैसें ॥१५२७॥  
 तैसा व्यवस्थित । होवोनि विहित । आचरे जो येथ । यथाशास्त्र ॥१५२८॥  
 तयालागीं लाभे । वैराग्य साचार । जें का 'एल द्वार । 'कैवल्याचें ॥१५२९॥  
 अकर्मातें थारा । देई ना जो मनीं । न पाहे ढुंकोनि । निषिद्धासी ॥१५३०॥  
 म्हणोन तो जाण । भव-व्यथेंतून । स्वभावे संपूर्ण । मुक्त झाला ॥१५३१॥  
 काम्य कर्माकडे । ज्याचें गा मन । पाहे ना ढुंकोन । कौतुकें हि ॥१५३२॥  
 म्हणोनि तो स्वर्ग- । सुखाच्या खोड्यांत । घालोनि न घेत । आपणासी ॥१५३३॥  
 आणि नित्यकर्म । तें हि सर्व भलें । तयें संपविलें । फलत्यागें ॥१५३४॥  
 म्हणोनि तो पावे । कैवल्याची सीमा । सहजें स्वकर्मा । आचरोनि ॥१५३५॥  
 ऐसा शुभाशुभीं । सांडिला संसारीं । राहे मोक्षद्वारीं । वैराग्याच्या ॥१५३६॥  
 वैराग्य जें दावी । कैवल्याची वाट । घडवोनि भेट । भाग्यश्रीची ॥१५३७॥  
 ज्याठायीं नाना । 'कर्ममार्ग-श्रम । पावती विश्राम । स्वभावे चि ॥१५३८॥  
 मोक्षफळें दिलें । तारण जें भलें । फूल जें फुललें । सुकृताचें ॥१५३९॥  
 तया वैराग्याच्या । पुष्पीं ठेवी पद । जैसा का 'षट्पद । धनंजया ॥१५४०॥  
 आत्मज्ञानरूपी । सुदिनाची वार्ता । साच सुचविता । अरुण चि ॥१५४१॥  
 ऐसें जें वैराग्य । तें हो तया प्राप्त । स्वकर्मीं जो रत । असे बापा ॥१५४२॥  
 काय सांगूं फार । आत्मज्ञानधन । दावितें अंजन । वैराग्य जें ॥१५४३॥  
 त्या चि वैराग्याचें । घाली दिव्यांजन । जीवेंभावे जाण । बुद्धिनेत्रीं ॥१५४४॥  
 ऐसा विहिताचा । करितां आचार । लाभे अधिकार । कैवल्याचा ॥१५४५॥  
 विहित हें कर्म । धनंजया जाण । एक चि जीवन । आपणासी ॥१५४६॥  
 मी जो सर्वात्मक । तया माझी देख । ही च सेवा एक । सर्वश्रेष्ठ ॥१५४७॥  
 सर्व भोगांसह । पतिव्रता नारी । जेव्हां क्रीडा करी । पतीसंगें ॥१५४८॥  
 तेव्हां तें योगें । सर्व तपें तिज । घडती सहज । जैशा रीती ॥१५४९॥  
 मातेविण जिणें । बाळकासी काय । तयासी आश्रय । ती च एक ॥१५५०॥

किंवा जैसा सर्व-। तीर्थ-सहवासा । पात्र होय मासा । गंगाश्रयें ॥१५५१॥  
 तैसें विहित तें । आचरितां येथ । तेणें जगन्नाथ । वश होय ॥१५५२॥  
 अगा जयालागीं । कर्म जें विहित । तें चि मनोगत । ईश्वराच ॥१५५३॥  
 म्हणोनियां तेणें । कर्में चि निभ्रांत । ईश्वर तो प्राप्त । होय येथें ॥१५५४॥  
 दासी च ती जैसी । होतसे स्वामिनी । स्वामीचिया मनीं । बैसतां च ॥१५५५॥  
 स्वामीकार्या शिर । वेंचाया जो सज्ज । स्वामीसी सहज । प्रिय होय ॥१५५६॥  
 तैसें विहितातें । चुकूं नये येथें । प्रिय तें देवातें । म्हणोनियां ॥१५५७॥  
 ती च त्याची सेवा । सर्वश्रेष्ठ जाण । इतर वर्तन । वाणिज्य तें ॥१५५८॥

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः ॥४६॥

म्हणोनि करणें । विहिताचरण । पाळणें ती खूण । ईश्वराची ॥१५५९॥  
 धनंजया जया । ईश्वरापासोनि । आले सर्व प्राणी । आकारास ॥१५६०॥  
 अविद्येच्या चिंध्या । गुंडाळूनि भल्या । घडोनि बाहुल्या । जीवरूपी ॥१५६१॥  
 तयां खेळवी जो । बांधोनि साचार । त्रिगुणाहंकार-। रूपी सूत्रीं ॥१५६२॥  
 दीपमात्रालागीं । अंतर्बाह्य पाहें । व्यापोनियां राहे । तेज जैसें ॥१५६३॥  
 तैसें जेणें योगें । असे पार्था चांग । व्यापिलें हें जग । अंतर्बाह्य ॥१५६४॥  
 तया सर्वात्मक । ईश्वरालागोनि । पूजितां पुष्पांनीं । स्वकर्माच्या ॥१५६५॥  
 अपार संतोष । जाण कपिध्वजा । देतसे ती पूजा । तयालागीं ॥१५६६॥  
 सर्वभावे ऐसें । घडतां पूजन । होवोनि प्रसन्न । आत्मराज ॥१५६७॥  
 वैराग्यसिद्धीचा । देतसे प्रसाद । तया स्वयंसिद्ध । पूजकासी ॥१५६८॥  
 वैराग्य तें अंगीं । बाणतां चि दृढ । लागोनियां ओढ । ईश्वराची ॥१५६९॥  
 प्रपंचाचा वीट । घेई त्याचें मन । ओकारीसमान । लेखोनि तो ॥१५७०॥  
 विरहिणीलागीं । प्रियाचिया ध्यासें । जिणें हि नकोसें । वाटे जैसें ॥१५७१॥  
 तैसें देवाविण । जें जें भोगसुख । तें तें तया दुःख । ऐसें होय ॥१५७२॥  
 \*अपरोक्षज्ञान । व्हावया पूर्वीं च । उपजे वेधें च । तन्मयता ॥१५७३॥

ऐसी तयालार्गीं । बोधाची योग्यता । स्वभावेँ सर्वथा । प्राप्त होय ॥१५७४॥  
 म्हणोनियां येथें । मोक्षलाभालार्गीं । तपें व्रतें अंगीं । धरी जो का ॥१५७५॥  
 तेंणें स्वधर्माचें । चांग 'अनुष्ठान । करावें ठेवोन । आस्था तेथें ॥१५७६॥

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥४७॥

आपुला स्वधर्म । धनंजया जाण । वाटला कठिण । आचराया ॥१५७७॥  
 तरी परिणामी । लाभेल जें फळ । तेथें चि केवळ । दृष्टि द्यावी ॥१५७८॥  
 सांगें 'कटुत्वासी । कंटाळावें काय । जरी निव होय । सुखालार्गीं ॥१५७९॥  
 फळावयाआधीं । केळीचें तें झाड । पाहतां 'उजाड । होय मन ॥१५८०॥  
 ऐसी तोडिली ती । तरी पुढें गोड । कैसी केळवंड । प्राप्त होय ॥१५८१॥  
 स्वधर्माचरण । त्या परी कठिण । म्हणोनि सोडोन । दिलें जरी ॥१५८२॥  
 तरी पार्था सांगें । साधकातें अंतीं । मोक्षसुखप्राप्ति । होय कैची ॥१५८३॥  
 वांकुडी कुरूप । सौन्दर्यानेँ उणी । आपुली 'जननी । जरी झाली ॥१५८४॥  
 तरी जेणें योगें । लाभतें जीवन । प्रेम तें कठिण । 'वक्र नोहे ॥१५८५॥  
 इतर त्या नारी । सौन्दर्यसंपन्न । जरी रंभेहून । थोर झाल्या ॥१५८६॥  
 तरी बाळकासी । कराव्या त्या काय । आपुली च माय । होय त्यासी ॥१५८७॥  
 जरी गुणीं थोर । जळाहूनि 'धृत । तरी मासा त्यांत । जगे काय ? ॥१५८८॥  
 अवध्या जगासी । होय जें का विष । तें तरी 'पीयूष । 'कीटकांसी ॥१५८९॥  
 आणि जगा गोड । स्वभावेँ तारक । होय तें मारक । तयांलार्गीं ॥१५९०॥  
 म्हणोनियां जया । विहित जें होय । जेणें नासे भय । संसाराचें ॥१५९१॥  
 तयें तें चि येथें । आचरावें नीट । जरी झाले कष्ट । आचरितां ॥१५९२॥  
 आपुला स्वधर्म । सांडोनियां मग । आचरिला चांग । परधर्म ॥१५९३॥  
 तरी पायाचें च । काम जें का भलें । मस्तकें तें केलें । ऐसेँ होय ॥१५९४॥  
 म्हणोनि जें कर्म । स्ववर्णानुसार । स्वभावेँ साचार । प्राप्त होय ॥१५९५॥  
 तें जो करी तेंणें । सहजें चि भला । तोडोनि टाकिला । कर्म-बंध ॥१५९६॥

पाळावा स्वधर्म । गाळावा परधर्म । न केला हा नेम । जरी पार्था ॥१५९७॥  
 राहतें का कर्म । करणें तोंवरी । भेटला जोंवरी । नाहीं आत्मा ? ॥१५९८॥  
 आणि जेथें कर्म । करणें तें साच । आरंभीं आहे च । श्रम तेथें ॥१५९९॥

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत् ।

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥४८॥

म्हणोनियां अमो । कोणतें हि कर्म । जरी आधीं श्रम । पडे तेथें ॥१६००॥  
 तरी स्वधर्में चि । चालतां वाईट । काय असे त्यांत । सांगें मज ॥१६०१॥  
 असो उजू वाट । किंवा आडरान । चालायाचा शीण । चुके काय ? ॥१६०२॥  
 शिळा कीं शिदोरी । अमो डोईवर । ओझ्याचा तो भार । सारखा च ॥१६०३॥  
 तरी वाहतां जें । धनंजया अंतीं । मिळेल विश्रांति । तें चि घ्यावें ॥१६०४॥  
 असो कोंडा किंवा । असो दाणा साच । श्रम सारिखे च । कांडितांना ॥१६०५॥  
 पाहें श्वान-मांस । रांधितां जो शीण । तो चि हविष्यान्न । शिजवितां ॥१६०६॥  
 घुसळितां पाणी । पडती जे कष्ट । ती च खटपट । दह्यासी हि ॥१६०७॥  
 गाळितां घाण्यांत । वाळू किंवा तीळ । श्रम ते केवळ । सारिखे च ॥१६०८॥  
 असो रखेली वा । असो धर्मपत्नी । सायास पोषणीं । एक चि ते ॥१६०९॥  
 तरी रखेलीस । बाळगोनि मग । लावावा कां डाग । नांवालागीं ? ॥१६१०॥  
 होतां पाठलाग । चुके ना मरण । रणांगणीं बाण । लागोनियां ॥१६११॥  
 तरी शत्रूसर्वें । झुंजोनि समोर । कां गा स्वर्गद्वार । गांठावें ना ? ॥१६१२॥  
 पतीतें सोडोन । कुलवती नारी । आणिकांचे घरीं । रिघाली हि ॥१६१३॥  
 दंडुक्याचा मार । तेथें जरी खाय । वृथा नव्हे काय । पति-त्याग ? ॥१६१४॥  
 तैसा कोणत्या हि । कर्मीं जरी शीण । विहित कठिण । म्हणावें कां ? ॥१६१५॥  
 वेंचो अमृतार्थ । आपुलें सर्वस्व । जेणें अमरत्व । जीवितासी ॥१६१६॥  
 परी मोलें विष । घेवोनि तें प्यावें । आणि कां मरावें । निरर्थक ? ॥१६१७॥  
 तैसा इंद्रियांसी । देवोनियां शीण । वायां घालवोन । आयुष्य हि ॥१६१८॥  
 पापाचा संचय । जरी करूं जावें । दुःख चि भोगावें । तरी अंतीं ॥१६१९॥

म्हणोनि स्वधर्में । वर्तावें साचार । श्रम-परिहार । होय जेणें ॥१६२०॥  
 आचरितां येथ । आपुला स्वधर्म । उचित परम । मोक्ष लाभे ॥१६२१॥  
 ह्यालागीं स्वधर्म । सोडूं नये कधीं । जैसा का 'आपदीं । सिद्धमंत्र ॥१६२२॥  
 अथांग सागरीं । त्यजावी ना होडी । किंवा दिव्यौषधी । महारोगीं ॥१६२३॥  
 त्या चि परी येथें । स्वधर्माचरण । सोडूं नये जाण । कदा काळीं ॥१६२४॥  
 ईशासी संतोष । देई कपिध्वजा । ही च महापूजा । स्वकर्माची ॥१६२५॥  
 तोषतां तो ईश । रज तम नाशी । देवोनि चित्तासी । 'शुद्धसत्त्व ॥१६२६॥  
 मग साधकासी । भव-स्वर्ग दोन्ही । वाटती जीवनीं । विषाऐसे ॥१६२७॥  
 बोलिलों जी मार्गें । 'संसिद्धि म्हणोन । दावोनि लक्षण । वैराग्याचें ॥१६२८॥  
 काय सांगूं फार । त्या चि संसिद्धीचा । लाभ होय साचा । साधकासी ॥१६२९॥  
 मग ऐशापरी । साधक तो जाण । आपुलें ठिकाण । गांठोनियां ॥१६३०॥  
 कैसा उपाधींत । राहे धनंजया । काय लाभे तथा । तें हि सांगूं ॥१६३१॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ।

नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति ॥४९॥

जाळ्यामार्जी जैसा । सांपडे ना 'वात । तैसा उपाधींत । गुंते ना तो ॥१६३२॥  
 फळ पक होतां । धरी ना देठास । देठ हि फळास । सोडी जैमें ॥१६३३॥  
 तैसैं 'लुलें' प्रेम । जयाचें सर्वत्र । असोनि 'कलत्र । पुत्र वित्त ॥१६३४॥  
 वश तरी तेथें । ममत्व तें नसे । विष-पात्र ऐसैं । त्यां मानी ॥१६३५॥  
 झटकोनि जैसा । मार्गें घ्यावा हात । पोळतां आगींत । एकाएकीं ॥१६३६॥  
 विषयांपासोन । तैसी बुद्धि मार्गें । वळोनि ती रिगे । अंतरांत ॥१६३७॥  
 स्वामीची शपथ । पाळीतसे दासी । भिवोनि तयासी । जैशा रीती ॥१६३८॥  
 तैसैं अंतःकरण । पाळी ज्याची आण । घेई ना दर्शन । विषयांचें ॥१६३९॥  
 ऐक्याच्या मुठींत । धरोनियां चित्त । छंद एक घेत । आत्मयाचा ॥१६४०॥  
 गाडितां अमीस । राखेनें सत्वर । थांबे जैसा धूर । आपोआप ॥१६४१॥  
 तैसी तेणें नासे । वासना अपार । सर्व इह-पर-। विषयांची ॥१६४२॥

स्वभावे चि ऐसा । निरिच्छ तो होय । पार्था मनोजय । साधोनियां ॥१६४३॥  
 काय सांगूं फार । तथा माधकामी । प्राप्त होय ऐमी । भूमिका ही ॥१६४४॥  
 विपरीत ज्ञान । मावळोनि सर्व । प्रबोधीं च ठाव । जीवालागीं ॥१६४५॥  
 सांचलेलें पाणी । संपतें वेंचून । प्रारब्ध भोगून । संपे तैसें ॥१६४६॥  
 जन्म-मरणासी । न होय कारण । पार्था क्रियमाण । तथाचें गा ॥१६४७॥  
 मग आपोआप । श्रीगुरु भेटती । कर्मसाम्यस्थिति । होतां ऐमी ॥१६४८॥  
 रात्रीचे प्रहर । संपतां च चारी । डोळ्यांसी तमारि । भेटे जैसा ॥१६४९॥  
 नातरी फळांचा । येवोनियां घड । थांबवितो वाढ । केळीची त्या ॥१६५०॥  
 कर्मकर्तृत्वाची । तैसी खटपट । थांबे होतां भेट । सद्गुरूची ॥१६५१॥  
 मग पौर्णिमेने । चंद्र आलिंगिला । सर्वा कलीं ज्ञाला । परिपूर्ण ॥१६५२॥  
 तैसा माधक तो । पावतो पूर्णता । गुरुकृपा होतां । धनंजया ॥१६५३॥  
 अज्ञान म्हणोन । जें जें असे काहीं । तें तें लया जाई । कृपेने त्या ॥१६५४॥  
 अज्ञानाच्या सवें । लोपे कर्ममात्र । संपतां चि रात्र । तम जैसें ॥१६५५॥  
 ह्यापरी समूळ । घडे कर्मत्याग । नष्ट होतां भाग । अज्ञानाचा ॥१६५६॥  
 लोपतां अज्ञान । कर्मासी जें मूळ । लोपतें सकळ । दृश्यजात ॥१६५७॥  
 तेव्हां जाणावें जें । स्वभावे तें तो च । होवोनियां साच । राहे यथे ॥१६५८॥  
 निद्रेसवें स्वप्न । लोपोनि किरीटी । येतां चि जागृति । परिपूर्ण ॥१६५९॥  
 स्वप्नांचिया डोहीं । बुडालें म्हणोनि । काढा ऐसें कोणी । म्हणे काय ? ॥१६६०॥  
 तैसें तेव्हां नेणें । आतां मी जाणेन । सरलें दुःस्वप्न । तथासी हें ॥१६६१॥  
 स्वये चिदाकाश- । रूप धनंजया । ज्ञाला ज्ञातृज्ञेया- । विहीन तो ॥१६६२॥  
 पार्था, दिसे जेथे । मुखाचा आभास । सारितां बाजूस । आरसा तो ॥१६६३॥  
 पाहतेपणातें । सांडोनि स्वभावे । जैसें का रहावें । पाहत्यानें ॥१६६४॥  
 तैसें पंडु-सुता । नेणणें जें गेलें । सवें तेणें नेलें । जाणणें हि ॥१६६५॥  
 मग ज्ञानाज्ञान । गिळोनि सर्वत्र । निष्क्रिय चिन्मात्र । उरे एक ॥१६६६॥  
 स्वभावे केवळ । ज्ञानरूपीं तथा । कोणती च क्रिया । संभवे ना ! ॥१६६७॥

म्हणोनि स्वरूप-। स्थितीसी त्या जाण। 'नैष्कर्म्य' म्हणोन। बोलती गा ॥१६६८॥  
 तरंग तो मूळ-। सागराच्या रूपें। राहे जैसा लोपे। वारा जेव्हां ॥१६६९॥  
 तैसा राहे मूळ। स्वरूप होवोनि। आपुल्या ठिकाणीं। आपण तो ॥१६७०॥  
 ऐसी अक्रियता। स्वभावे जी पार्था। सिद्धि ती तत्त्वतां। नैष्कर्म्याची ॥१६७१॥  
 सर्व सिद्धीमार्जी। ही च सिद्धि श्रेष्ठ। म्हणे श्रीवैकुण्ठ-। नायक तो ॥१६७२॥  
 गंगेलागीं जैसा। सागरीं प्रवेश। नातरी कळस। 'राउळासी ॥१६७३॥  
 किंवा सोळावा च। कस जैसा श्रेष्ठ। 'सुवर्ण शुद्धींत। होय पार्था ॥१६७४॥  
 तैसें अज्ञानातें। नाशितें जें ज्ञान। तया हि गिळोन। राहणें जें ॥१६७५॥  
 तया नैष्कर्म्याच्या। सिद्धीहून कांहीं। श्रेष्ठ दुजें नाहीं। 'प्राप्य येथें ॥१६७६॥  
 म्हणोनियां सर्व। सिद्धीमार्जी साच। श्रेष्ठ सिद्धि ही च। बोलती गा ॥१६७७॥

सिद्धि प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे।

समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥५०॥

श्रीगुरुकृपेचा। लाभ होय जेव्हां। दैवदर्शें तेव्हां। जया कोणा ॥१६७८॥  
 भाग्यवंतालागीं। आत्मसिद्धि ही च। प्राप्त होय साच। धनंजया ॥१६७९॥  
 अंधार तो जैसा। प्रकाश चि होय। उगवतां सूर्य। एकाएकीं ॥१६८०॥  
 नातरी कापूर। दीपाचिया संगें। दीप चि तो अंगें। होय जैसा ॥१६८१॥  
 भेटतां जळस। 'लवणाचा कण। जळ चि होवोन। 'ठाके जैसा ॥१६८२॥  
 किंवा झोंपला जो। तयालागीं साच। जागें करितां च। थापटोनि ॥१६८३॥  
 स्वप्रासवे दूर। सारोनि निद्रेस। मूळ जागृतीस। मिळे जैसा ॥१६८४॥  
 तैसें गुरुवाक्य। पडतां चि कार्नीं। समूळ गिळोनि। द्वैतभाव ॥१६८५॥  
 जया साधकाची। सुदैवे साचार। वृत्ति राहे स्थिर। आत्मरूपीं ॥१६८६॥  
 काना-वचनाची। भेट होतांक्षणीं। ब्रह्म चि होवोनि। राहे जो का ॥१६८७॥  
 तयालागीं कर्म। करणें हें साच। उरलें नाहीं च। धनंजया ॥१६८८॥  
 आकाशासी तैसें। नाहीं येणें जाणें। तैसे चि करणें। नुरे तया ॥१६८९॥  
 परी नव्हे तैसा। ज्याचा अधिकार। कर्म तें साचार। उरे तया ॥१६९०॥



काम्यनिषिद्धाचें । घालोनि इंधन । 'वाह्नि पेटवोन । स्वकर्माचा ॥१६९१॥  
 जेणें 'रज' तम । टाकिलीं जाळोन । कामना स्वाधीन । ठेवोनियां ॥१६९२॥  
 पुत्र वित्त आणि । स्वर्गादिकीं साच । गुंतली नाहीं च । इच्छा ज्याची ॥१६९३॥  
 नाना विषयांची । धरोनियां प्रीति । विटाळलीं होतीं । इंद्रियें जीं ॥१६९४॥  
 तयां प्रत्याहार- । तीर्थांमार्जीं स्नान । घालोनि पावन । केलें ज्यानें ॥१६९५॥  
 आणि झालें प्राप्त । स्वधर्माचें फळ । ईश्वरीं सकळ । आपोनि तें ॥१६९६॥  
 जेणें 'संपादोनि । ईश्वरी प्रसाद । स्थिर केलें पद । वैराग्याचें ॥१६९७॥  
 ज्या ज्ञानोत्कर्षें । आत्मसाक्षात्कार । लाभतो साचार । धनंजया ॥१६९८॥  
 तया उत्कर्षाच्या । प्राप्तीची सामुग्री । मेळविली पुरी । ऐसी जेणें ॥१६९९॥  
 आणि त्या चि क्षणीं । सद्गुरु भेटले । 'न वंचितां दिलें । ज्ञान त्यांनीं ॥१७००॥  
 तरी औषध तें । घेतांक्षणीं काय । सांग प्राप्त होय । आरोग्याची ? ॥१७०१॥  
 किंवा 'दिनोदय' होतां चि केवळ । 'मध्याह्नाचा काळ । दिसे काय ? ॥१७०२॥  
 नांगरोनि शेत । पेरिलें तयांत । बीज सर्वोत्कृष्ट । मेळवोनि ॥१७०३॥  
 आणि दिलें पाणी । तरी इष्ट फळ । मिळावया वेळ । लागे जैसा ॥१७०४॥  
 नातरी सुगम । सांपडली वाट । मिळाली सोबत । ती हि भली ॥१७०५॥  
 तरी इष्ट म्यळ । आपुलें गांठाय । लागे धनंजया । वेळ जैसा ॥१७०६॥  
 तैसा वैराग्याचा । लाभ झाला पाहीं । वरी सद्गुरु हि । भेटले गा ॥१७०७॥  
 सद्गुरुप्रसादें । अंतरीं साचार । फुटला अंकुर । विवेकाचा ॥१७०८॥  
 एक ब्रह्माविण । इतर ती भ्रांति । ऐसी चि प्रचीति । दृढ केली ॥१७०९॥  
 तरी सर्वात्मक । जें का सर्वोत्तम । मोक्षाचें हि काम । सरे जेथें ॥१७१०॥  
 तिन्ही अवस्थांतें । जिरवी जें ज्ञान । तया हि गिळोन । राहे जें का ॥१७११॥  
 जेथें ऐक्याचें हि । सरे एकपण । आनंदाचा कण । विरे तो हि ॥१७१२॥  
 कांहीं चि नुरोन । उरें जें सकळ । वस्तु जी केवळ । परब्रह्म ॥१७१३॥  
 त्या चि सर्वात्मक । ब्रह्मीं परिपूर्ण । ब्रह्म चि होवोन । राहणें जें ॥१७१४॥  
 अवस्था ती पावे । साधक तो साच । क्रमाक्रमानें च । धनंजया ॥१७१५॥

वाढितां षड्स । अन्न क्षुधितास । तृप्ति प्रतिग्रास । मिळे जैसी ॥१७१६॥  
 तैसें वैराग्याचें । घालोनि भरण । दीप उजळोन । विवेकाचा ॥१७१७॥  
 साधक तो जाण । काढी च शोधोन । आत्मरूपी धन । धनंजया ॥१७१८॥  
 आत्मस्वरूपाचें । भोगाचें ऐश्वर्य । ऐसी जी का होय । श्रेष्ठ सिद्धि ॥१७१९॥  
 त्या चि मिद्धीचें तो । घालोनि भूषण । अखंड तल्लीन । होय ब्रह्मी ॥१७२०॥  
 आतां जेणें जीव-ब्रह्मैक्य सुगम । क्रमाचें त्या वर्म । ऐक सांगूं ॥१७२१॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ।

शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च ॥५१॥

तरी सदगुरूनें । दाविली जी वाट । श्रद्धेनें ती नीट । आक्रमोनि ॥१७२२॥  
 घेवोनि विवेक-तीर्थाचिया तटीं । 'क्षाळितां किरीटी । बुद्धिदोष ॥१७२३॥  
 मग राहुग्रस्त । प्रभा होतां मुक्त । तिज मिठी देत । चंद्र जैसा ॥१७२४॥  
 होवोनि ती तैसी । बुद्धि सुनिर्मळ । प्राप्त होय मूळ-स्वरूपामी ॥१७२५॥  
 दोन्ही कुळांलागीं । सांडोनियां जैसी । 'कामिनी प्रियासी । अनुसरे ॥१७२६॥  
 तैसी च ती बुद्धि । विसरोनि द्वैत । आत्मचिंतनांत । 'रत होय ॥१७२७॥  
 ज्यां इंद्रियांसी । बाह्यज्ञानें साचें । होतें विषयांचें । आकर्षण ॥१७२८॥  
 तयां इंद्रियांसी । धैर्यें निरोधून । विषयांपासोन । सोडविलें ॥१७२९॥  
 घेतां चि काढोन । 'सूर्यरश्मिजाळ । जाय मृगजळ । लया जैसें ॥१७३०॥  
 निरोधितां धैर्यें । तैसें इंद्रियांस । जाहला निरास । विषयांचा ॥१७३१॥  
 भक्षिलें नेणोन । अधमाचें अन्न । टाकावें ओकोन । मग जैसें ॥१७३२॥  
 वासनेसाहित । तैसे भोग जाण । इंद्रियांकडोन । ओकविले ॥१७३३॥  
 विषयांपासोन । ऐशापरी देख । केलीं 'पराङ्मुख । इंद्रियें जीं ॥१७३४॥  
 आत्माकारवृत्ति-रूपी गंगातटीं । आणोनि किरीटी । ठेविलीं तीं ॥१७३५॥  
 ऐसा केला भला । प्रायश्चित्तविधि । शुद्ध व्हावी बुद्धि । म्हणोनियां ॥१७३६॥  
 सात्त्विक धैर्याचें । घेवोनि साहाय्य । केला जो इंद्रिय-गण शुद्ध ॥१७३७॥  
 साधकें तो मग । मनासह चांग । लावियेला योग-धारणेसी ॥१७३८॥

प्रारब्धाच्या योगें । येथें इष्टानिष्ट । भोग होतां प्राप्त । धनुर्धरा ॥१७३९॥  
 अनिष्ट भोगाचा । मानी ना विषाद । चितीं द्वेषें क्षुब्ध । होवोनियां ॥१७४०॥  
 किंवा जरी दैवें । इष्ट भोग दिला । लालसा तयाला । नाहीं त्याची ॥१७४१॥  
 इष्टानिष्ट भोगीं । ऐसा प्रीति-द्वेष । त्यजोनि निःशेष । पंडुसुता ॥१७४२॥  
 साधक तो राहे । गिरिगहरांत । नातरी कुंजांत । जनहीन ॥१७४३॥

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाकायमानसः ।

ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥५२॥

आणिक सांगाती । जेथें नाहीं कोणी । राहे ऐशा वर्नीं । एकला च ॥१७४४॥  
 शमदमादिक । हा चि त्याचा खेळ । न बोलणें बोल । हे चि त्याचे ॥१७४५॥  
 सदगुरुवाक्याचें । करितां मनन । तया नुरे भान । काळाचें हि ॥१७४६॥  
 अंगीं यावें बळ । क्षुधा व्हावी शांत । जिह्वा-मनोरथ । पुरवावे ॥१७४७॥  
 तीन हि ह्या गोष्टी । लेखी ना साचार । सुखें अल्पाहार । घेई जेव्हां ॥१७४८॥  
 जठराभि प्राण । घेई ना हिरोन । भक्षितो अल्पान्न । एवढें च ॥१७४९॥  
 परपुरुषाच्या । होई ना स्वाधीन । कुलवधु जाण । इच्छिली हि ॥१७५०॥  
 तैसें नये हाऊं । निद्रालस्याधीन । म्हणोनियां अन्न । अल्प भक्षी ॥१७५१॥  
 भूमीवरी टेंकी । तेव्हां चि निजांग । वंदन साष्टांग । करी जेव्हां ॥१७५२॥  
 परी अविचारें । राहे ना लोळत । होवोनियां सुस्त । निद्रालस्यें ॥१७५३॥  
 शरीरनिर्वाहा- । पुरता साचार । इंद्रिय-व्यापार । चाले त्याचा ॥१७५४॥  
 काय सांगूं फार । देह मनादिक । वश केलीं देख । ऐसीं त्यानें ॥१७५५॥  
 मनाकडे वृत्ति । पाहे ना हुंकोन । बोलणें कोठून । मग तेथें ? ॥१७५६॥  
 ऐशापरी देह । वाचा आणि मन । सर्वथा जिंकोन । बाह्यभाग ॥१७५७॥  
 ध्यानाचें गगन । करितो स्वाधीन । साधक तो जाण । धनंजया ॥१७५८॥  
 निर्मळ आरसा । घेवोनि हातांत । न्याहाळावें त्यांत । रूप जैसें ॥१७५९॥  
 तैसीं गुरुवाक्यें । ज्ञानाची जागृति । स्व-रूपनिश्चिती । पाहे तेथें ॥१७६०॥  
 ध्यानयोगें ध्याता । स्वतःसी च पाहीं । ध्येयपणें घेई । वृत्तीमार्जी ॥१७६१॥

ऐसी सुविख्यात । ध्यानाची ही रीत । जाणावी निभ्रांत । धनंजया ॥१७६२॥  
 ध्येय ध्याता ध्यान । येती एकत्वाम । तोंवरी अभ्याम । करावा गा ॥१७६३॥  
 आत्मज्ञानीं दक्ष । मुमुक्षु तो ज्ञाला । आचरोनि भला । योगाभ्याम ॥१७६४॥  
 गुद-<sup>१</sup>उपस्थांच्या । मध्ये जी शिवण । धरी नेहटून । टांचेनें ती ॥१७६५॥  
 आकुंचूनि <sup>२</sup>अध । साधूनि त्रिवंध । करी एकविध । भिन्न वायु ॥१७६६॥  
 कुंडलिनीशक्ति । करोनि जागृत । करी विकसित । सुषुम्नेतें ॥१७६७॥  
 आधारापासोन । आज्ञाचक्रावेरीं । मग भेद करी । षट्चक्रांचा ॥१७६८॥  
<sup>३</sup>ब्रह्मरंध्ररूपी । मेघाचा अपूर्व । अमृत-वर्षाव । करोनियां ॥१७६९॥  
 तथा अमृताच्या । प्रवाहाची धार । आणी मूलाधार- । चक्रावेरीं ॥१७७०॥  
 आज्ञाचक्ररूपी । कैलामीं तांडव । करी जो भैरव । चैतन्याचा ॥१७७१॥  
 तयासी श्विचडा । भिक्षापात्रीं साचा । मनपवनाचा । वाहोनियां ॥१७७२॥  
 ऐसा योगाभ्याम । करोनियां चांग । तयें ध्यानमार्ग । आक्रमिला ॥१७७३॥  
 व्हावया प्रविष्ट । ध्यान-योग दोन्ही । आत्मतत्त्वज्ञानीं । विघ्नांविण ॥१७७४॥  
 वैराग्यासारखा । मवंगडी भला । आधीं च ठेवला । जोडोनियां ॥१७७५॥  
 असो कोणत्या हि । भूमिकेवरतीं । माधक किरिटी । योगाभ्यासीं ॥१७७६॥  
 तथात्रिया मंगें । चाले निरंतर । सखा हा साचार । वैराग्याचा ॥१७७७॥  
 पहावें तें दिसे । तोंवरी अंधारीं । दृष्टीमी ना जरी । मांडी दीप ॥१७७८॥  
 तरी देखावया । इच्छिला पदार्थ । मांगें वेळ तेथ । लागे काय ? ॥१७७९॥  
 तथा मुमुक्षूची । तैमी वृत्ति जाण । होय जों विलीन । परब्रह्मीं ॥१७८०॥  
 तोंवरी तयासी । वैराग्य साहाय्य । तरी काय भय । विनाशाचें ? ॥१७८१॥  
 म्हणोनि सभाग्य । साधक तो जाण । वैराग्यसंपन्न । होवोनियां ॥१७८२॥  
 ऐसा ज्ञानाभ्यास । करोनियां चांग । पात्र होय मग । आत्मलाभा ॥१७८३॥  
 वैराग्यकवच । चढवोनि अंगीं । बैसला <sup>४</sup>तुरंगीं । योगाचिया ॥१७८४॥  
 मग पडे दृष्टी । जें जें थोर सान । दिसावें अभिन्न । आत्मरूपीं ॥१७८५॥  
 म्हणोनि ध्यानाची । <sup>५</sup>खड्गलता तीक्ष्ण । मुठींत धरोन । विवकाच्या ॥१७८६॥

मग मोक्षरूपी । जयश्रीचा भर्ता । व्हावयासी पार्था । साधक तो ॥१७८७॥  
 'भव-रणी' करी । निर्भय संचार । अंधारी भास्कर । शिरे जैसा ॥१७८८॥

अहंकार बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।

विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५३॥

दोष वैरी आले । आडवाया तेथें । काढिलें त्यातें । धोपटोनि ॥१७८९॥  
 त्यांमार्जी जाण । पहिला साचार । देह-अहंकार । धनंजया ॥१७९०॥  
 जो का प्राण्यालागीं । मारोनि सोडी ना । त्या लावी पुन्हां । जन्म घ्याया १७९१  
 घालोनि जन्मास । जगूं नेदी त्यास । पुन्हां करी ग्रास । काळाहार्ती ॥१७९२॥  
 ऐशापरी करी । कुचंबणा त्याची । घालोनि देहाची । दृढ बेडी ॥१७९३॥  
 त्या चि अहंतेचें । केलें निर्दाळण । साधकें जिंकोन । देह-दुर्ग ॥१७९४॥  
 तेवि बलोन्माद । हा जो दुजा वैरी । त्या हि संहारी । साधक तो ॥१७९५॥  
 चौपटीनें वाढे । शत्रूची ज्या हांव । काढितां चि नांव । विषयाचें ॥१७९६॥  
 ज्या शत्रूचिया । योगें मृतावस्था । प्राप्त होय पार्था । जगालागीं ॥१७९७॥  
 बलरूपी शत्रु । तो गा निःसंदेह । विषाचा च डोह । विषयाच्या ॥१७९८॥  
 जाण सुनिश्चयें । सर्व हि दोषांचा । धनी चि तो साचा । कपिध्वजा ॥१७९९॥  
 परी ध्यानरूपी । खड्गाचा प्रहार । सहावया जोर । कैचा त्यासी ॥१८००॥  
 आवडता भोग । प्राप्त होतां देख । प्रकटे जें सुख । धनंजया ॥१८०१॥  
 त्या सुखाची च । खोळ पांघरोन । घालितो थैमान । शरीरीं जो ॥१८०२॥  
 सन्मार्गीपासोन । नेई भुलवोनि । घालोनियां रानीं । अधर्माच्या ॥१८०३॥  
 मग रौरवादि । व्याघ्रांचिया मुखीं । नेवोनि जो टाकी । हातोहात ॥१८०४॥  
 ऐसा 'दर्परूप । घातकी जो वैरी । त्या हि संहारी । साधक तो ॥१८०५॥  
 आणि ज्याचें नांव । ऐकतां चि कानीं । तापसांलागोनि । सुटे कंप ॥१८०६॥  
 क्रोधाऐसा दोष । ही च गुडाकेशा । परिपक्वदशा । असे ज्याची ॥१८०७॥  
 भरूं जावें तों तों । स्वभावे जो पार्था । होऊं लागे रिता । अधिक चि ॥१८०८॥  
 त्या कामरूपी । शत्रूतें जिंकोन । ठाव चि पुसोन । टाकी त्याचा ॥१८०९॥

होतां पार्था ऐसें । 'काम-निर्दालन । सहजें निष्प्राण । क्रोध तो हि ॥१८१०॥  
 वृक्षाचें तें मूळ । तोडितां चि पाहीं । तुटती शाखा हि । आपोआप ॥१८११॥  
 तैसें करितां च । 'कामाचें हनन । होय निर्मूलन । क्रोधाचें हि ॥१८१२॥  
 म्हणोनियां होतां । कामवैरी ठार । ठेली येरझार । क्रोधाची हि ॥१८१३॥  
 आपुला चि खोडा । माथां वहावया । लावी जैसा राया । प्रतिज्ञेनें ॥१८१४॥  
 'परिग्रहरूपी । तैसा वैरी श्रेष्ठ । होई जो बलिष्ठ । भोग-दानें ॥१८१५॥  
 जीवाच्या माथां । ठेवी जो खोगीर । भरवी शरीर । अवगुणें ॥१८१६॥  
 टेवावया लावी । धनंजया पाहीं । विषयाच्या ठायीं । आसक्ति जो ॥१८१७॥  
 तेविं जीवासी जो । ममत्वाची काठी । लावीतसे हातीं । धरावया ॥१८१८॥  
 शिष्यशाखा शास्त्र- । संभार अनेक । मठमुद्रादिक । निमित्तानीं ॥१८१९॥  
 जेणें परिग्रहें । पार्शीं गुंतविला । 'निःसंग जो झाला । तयातें हि ॥१८२०॥  
 संसार सोडोन । जावें वनांतरीं । गुंतवितो तरी । तेथें हि जो ॥१८२१॥  
 नागवें उघडें । ठेविलें शरीर । तरी हि साचार । सोडी ना जो ॥१८२२॥  
 ऐसा परिग्रह । वैरी दुर्निवार । तयासी हि ठार । करोनियां ॥१८२३॥  
 भव-विजयाचा । पार्था निःसंदेह । भोगितो उत्साह । साधक तो ॥१८२४॥  
 जणूं सत्ताधारी । मोक्ष-नगरीचे । राजे च जे साचे । धनंजया ॥१८२५॥  
 ऐसे ज्ञानगुण । अमानित्वादिक । रहावया देख । आले तेथें ॥१८२६॥  
 यथार्थज्ञानाचें । तयालागीं मग । समर्पौनि चांग । अधिराज्य ॥१८२७॥  
 ते चि ज्ञानगुण । राहिले आपण । तयाचा होवोन । परिवार ॥१८२८॥  
 मग साधक तो । पार्था जाऊं लागे । जेव्हां राजमार्गें । प्रवृत्तीच्या ॥१८२९॥  
 तेव्हां 'जागृत्यादि । तीन भिन्नावस्था । ह्या चि कोणी पार्था । तरुणी ज्या १८३०  
 पदोपदीं त्यांनीं । तयाच्यावरोन । उतरिलें लोण । सौख्याचें चि ॥१८३१॥  
 तया सम्राटाच्या । पुढतीं राहोनि । विवेक हा कोणी । चोपदार ॥१८३२॥  
 बोधरूपी काठी । धेवोनियां हातीं । दूर गर्दी लोटी । दृश्याची गा ॥१८३३॥  
 योगभूमिका त्या । धेवोनि आरती । मग जणूं येती । ओवाळया ॥१८३४॥

मग तथा ऋद्धि-। सिद्धींचा मेळावा । प्रसंगें पांडवा । प्राप्त होय ॥१८३५॥  
 ऋद्धिसिद्धींची ती । होतां पुष्पवृष्टि । न्हावोनि किरीटी । निघे त्यांत ॥१८३६॥  
 ब्रह्मैक्य-स्वराज्य । येतां सन्निधानीं । आनंदें तो तिन्ही । भरी लोक १८३७  
 सखा किंवा मित्र । ऐसें म्हणावया । नुरे दुजें तथा । समसाम्यें ॥१८३८॥  
 ऐसें अद्वैतत्व । तथा होतां प्राप्त । ममत्वाची मात । उरे कोठें ? ॥१८३९॥  
 आपुलिया एक-। सत्तेनें चि जाण । विश्वातें व्यापून । सकळ हि ॥१८४०॥  
 साधकें त्या केला । ममत्वाचा त्याग । अद्रयता चांग । संपादोनि ॥१८४१॥  
 ऐशापरी शत्रु । अहंकारादिक । सकळ हि देख । जिंकोनियां ॥१८४२॥  
 स्वयें चि तो पार्था । होतां विश्वरूप । स्थिर आपोआप । योग-चारु ॥१८४३॥  
 वैराग्य-कवच । अंगीं दृढ भलें । तें हि करी दिलें । क्षणभरी ॥१८४४॥  
 ध्यानरूपी खड्गें । प्रहारावें ज्यातें । ऐसें उरे तेथें । दुजें काय ? ॥१८४५॥  
 म्हणोनि आवरे । वृत्तीचा हि हात । सर्वत्र अद्वैत-। भाव होतां ॥१८४६॥  
 रोगनिवारण । करोनि आपण । नुरे रसायन । स्वयें जैसें ॥१८४७॥  
 तैसें त्याचें ध्यान । द्वैतातें जिंकोन । जातसे विरोन । आपण हि ॥१८४८॥  
 जैसें इष्ट स्थळ । देखतां चि भलें । धांवतीं पाउलें । स्थिर होती ॥१८४९॥  
 येतां चि समीप । तैसी ब्रह्मप्राप्ति । मंद होय गति । अभ्यासाची ॥१८५०॥  
 गंगा सांडी वेग । भेटतां सागर । किंवा कांता स्थिर । प्रियापार्शी ॥१८५१॥  
 नातरी केळीची । जैसी खुंटे वाढ । फळांचा तो घड । लागतां चि ॥१८५२॥  
 किंवा गांवकूस । दिसूं लागतां च । सरूं लागे साच । मार्ग जैसा ॥१८५३॥  
 तैसा साधक तो । आत्म-साक्षात्कार । होईल गोचर । ऐसें देखे ॥१८५४॥  
 तेव्हां साधनाचें । हत्यार जें चांग । हळू चि तें मग । खालीं ठेवी ॥१८५५॥  
 ऐसी तथा येतां । ब्रह्मैक्याची वेळ । साधनें सकळ । ओहटती ॥१८५६॥  
 मग वैराग्याची । मावळती वेळ । ऐसी च केवळ । शांति जी का ॥१८५७॥  
 योगफळाची जी । परिपक्वावस्था । वृद्ध जेथें पार्था । ज्ञानाभ्यास ॥१८५८॥  
 बाणतां ती शांति । पूर्ण तथा अंगीं । ब्रह्मपणालागीं । पात्र होय ॥१८५९॥

चतुर्दशीदिनीं । चंद्रीं उणेपण । असे पुनवेहून । जेवढें गा ॥१८६०॥  
 किंवा सोळाकशी । शुद्ध सोन्याहून । कसीं राहे न्यून । पंधराव्या ॥१८६१॥  
 'महार्णवीं वेगें । प्रवेशे जें 'आप । तें तों गंगारूप । जाणावें गा ॥१८६२॥  
 परी प्रवेशोनि । स्थिरावे जें तेथें । तया रूप येतें । सागराचें ॥१८६३॥  
 तेवीं ब्रह्म आणि । ब्रह्मत्व-पावता । दोहोंमार्जीं पार्था । अंतर जें ॥१८६४॥  
 लोपोनि तें मग । शांतीत्रिया योगें । ब्रह्म चि तो वेगें । होय पार्था ॥१८६५॥  
 न होतां चि ऐसें । ब्रह्मीं समरस । आलें प्रत्ययास । ब्रह्मत्व जें ॥१८६६॥  
 ब्रह्मत्वपावती । योग्यता ती येथ । बोलिली यथार्थ । विवरोनि ॥१८६७॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।

समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥५४॥

ऐसी ब्रह्मभाव-। योग्यता येतां च । साधक तो साच । धनंजया ॥१८६८॥  
 अंतरीं संतुष्ट । राहे अखंडित । आत्मबोधें युक्त । होवोनियां ॥१८६९॥  
 झाला स्वयंपाक । होय आह्लादक । 'ताप तो हि देख । जाय जेव्हां ॥१८७०॥  
 येतां शरत्काळ । गंगेलागीं मग । सांडी लगबग । भरतीची ॥१८७१॥  
 नातरी संगीत । संपोनियां जातां । 'उपागें सर्वथा । ओहटती ॥१८७२॥  
 तैसे आत्मज्ञान-। साधनीं जे श्रम । पावती विश्राम । ते हि जेथें ॥१८७३॥  
 तया आत्मबोध-। प्रसन्नता ऐसें । पार्था नांव असे । सुविख्यात ॥१८७४॥  
 ती च आत्मबोध-। प्रसन्नता चांग । साधक तो मग । भोगी जेव्हां ॥१८७५॥  
 तेव्हां ऐक्यभावे । तयामी अर्जुना । खेद ना कामना । उरे काहीं ॥१८७६॥  
 'जैसा का आकाशीं । उगवतां रवि । 'सतेज लोपवी । नक्षत्रांतें ॥१८७७॥  
 तैसा स्व-रूपाचा । येतां अनुभव । भूतीं भेदभाव । देखे ना तो ॥१८७८॥  
 पाटीवरी शब्द । काढिले लिहोन । टाकावे पुसोन । करें जैसे ॥१८७९॥  
 तैसा भिन्नभाव । हारपोनि जाय । देखे तें तें होय । आत्मरूप ॥१८८०॥  
 विपरीतज्ञानें । दाविल्या ज्या जाती । अवस्था जाणति । आणि स्वप्न ॥१८८१॥  
 दोन्ही हि त्या लीन । होती सुषुप्तींत । स्थिति जी निभ्रांत । अज्ञानाची ॥१८८२॥



मग पार्था जों जों । वाढूं लागे ज्ञान । सर्वत्र अभिन्न । एक दिसे ॥१८८३॥  
 तों तों अज्ञान हि । होवोनियां क्षीण । पावतें विलीन । पूर्ण बोधीं ॥१८८४॥  
 घालितां मुखांत । घांस एक एक । होत जाय भूक । शांत जैसी ॥१८८५॥  
 हारपे निःशेष । मग होतां तृप्ति । तैसी होय गति । अज्ञानाची ॥१८८६॥  
 वाढूं लागे जों जों । चालण्याचा वेग । तों तों जाय मार्ग । थोडा होत ॥१८८७॥  
 मग इष्ट स्थल । गांठितां चि तेथें । निःशेष तो खुंटे । पार्था जैसा ॥१८८८॥  
 किंवा जागृतीचा । होय जों उदय । तों तों लया जाय । निद्रावस्था ॥१८८९॥  
 मग संपूर्णत्वे । जाग येतां साच । स्वरूपें नाहीं च । होय जैसी ॥१८९०॥  
 पौर्णिमेचा चंद्र । सर्व हि कलांनीं । राहतां होवोनि । परिपूर्ण ॥१८९१॥  
 मग त्या चंद्राची । वाढ जेव्हां खुंटे । निःशेष तो आटे । शुक्लपक्ष ॥१८९२॥  
 तैसें दृश्यजात । हारवी जें ज्ञान । तेणें तो येवोन । माझ्या रूपीं ॥१८९३॥  
 पावतां ऐक्यास । साद्यन्त अज्ञान । नष्ट होतें जाण । धनंजया ॥१८९४॥  
 तेव्हां नदी नद । नसोनि हा भेद । जातां अमर्याद । होवोनियां ॥१८९५॥  
 कल्पान्ताच्या वेळीं । पार्था जैसें जळ । आब्रह्म सकळ । विश्व व्यापी ॥१८९६॥  
 नातरी अकाश । राहे एकवट । घटमठ नष्ट । होतां जैसें ॥१८९७॥  
 काष्ठाकाष्ठाचिया । वर्षणें जळोन । अभी चि होवोन । राहे काष्ठ ॥१८९८॥  
 किंवा मुशीमार्जी । सुवर्णालंकार । घालोनि साचार । आटवितां ॥१८९९॥  
 नाना नामरूप- । भेद हारपोन । एकलें सुवर्ण । राहे जैसें ॥१९००॥  
 हें हि असो पूर्ण । येवोनि जागृति । सर्व स्वप्न-सृष्टि । नष्ट होतां ॥१९०१॥  
 मग धनंजया । जैसे का एकले । राहतों आपुले । आपण चि ॥१९०२॥  
 तया हि सकट । तैसें तयालागीं । दुजे नाहीं जर्गीं । माझ्याविण ॥१९०३॥  
 ह्यापरी जी श्रेष्ठ । माझी चौथी भक्ति । जाण तयासी ती । प्राप्त होय ॥१९०४॥  
 इतर जे आर्त । जिज्ञासु अर्थार्थी । मातें जिया पंथीं । भजती गा ॥१९०५॥  
 पाहोनि ते तिन्ही । पंथ धनंजया । म्हणों भक्तीसी ह्या । चौथी ऐसें ॥१९०६॥  
 ए-हवीं चौथी ना । तिजी हि अर्जुना । तेविं पहिली ना । शेवटली ॥१९०७॥

माझिया सहज-स्थितीलागीं देख । म्हणों आम्ही एक । भक्ति ऐमें ॥१९०८॥  
 करी मद्रूपाची । नेणीव प्रकट । मातें विपरीत । भासवोनि ॥१९०९॥  
 भक्ति करायास । लावी सर्वांठीयां । बुझावीत जाई । सर्वांलागीं ॥१९१०॥  
 जो जो जेथ जैसैं । पहावया बैसे । तैसैं चि जें भासे । तया तेथें ॥१९११॥  
 तें तों दिसे माझ्या । ज्ञान-प्रकाशें च । सहज जो साच । निरंतर ॥१९१२॥  
 आपुलें अमित्व । आहे चि म्हणोन । पार्था जैसैं स्वप्न । दिसे नासे ॥१९१३॥  
 तैसैं चि अखंड । प्रकाशें ज्या होय । उत्पत्ति-प्रलय । विश्वाचा ह्या ॥१९१४॥  
 ऐसा माझा जो हा । सहज प्रकाश । म्हणावें तयास । भक्ति ऐमें ॥१९१५॥  
 म्हणोनियां पार्था । आर्ताचिया ठायीं । बनोनि ही राही । उत्कटेच्छा ॥१९१६॥  
 मग तिथेचा जो । इच्छेचा विषय । तो हि मी च होय । धनुर्धरा ॥१९१७॥  
 जिज्ञासूच्या ठायीं । अर्जुना जी साच । जिज्ञासा ती ही च । होवोनियां ॥१९१८॥  
 मग जाणण्याच्या । इच्छेचा विषय । तो हि मी च जाय । दाखविला ॥१९१९॥  
 ही च परमार्थेच्छा । होवोनि अर्जुना । करोनि याचना । माझी मी च ॥१९२०॥  
 अर्थ ऐमें नांव । ठेविते मातें च । सर्व कांहीं मी च । म्हणोनियां ॥१९२१॥  
 एवं अज्ञानातें । घेवोनि पांडवा । वर्तों लागे जेव्हां । भक्ति माझी ॥१९२२॥  
 तेव्हां साच मज । दृष्ट्यालागीं जाण । दृश्यचि करोन । दाखवी ती ॥१९२३॥  
 आरशामाझारीं । पाहूं जातां देख । मुखासी च मुख । दिसे जैसैं ॥१९२४॥  
 परी मुखाचें तें । मिथ्या दुजेपण । आरिसा कारण । तयालागीं ॥१९२५॥  
 नातरी चंद्रमा । एक चि असोन । भासती ते दोन । नेत्र-रोगें ॥१९२६॥  
 आकळिला जाय । तैसा माझा मी च । भक्तियोगें ह्या च । सर्वत्र गा ॥१९२७॥  
 परी अज्ञानाच्या । योगें धनंजया । दृश्यत्व हें वायां । भासतसे ॥१९२८॥  
 आपुलिया बिंबी । प्रतिबिंब देख । जैसैं व्हांवें एक । सर्वथैव ॥१९२९॥  
 तैसैं तें अज्ञान । फिटोनियां गेलें । द्रष्टृत्व भेटलें । माझे मज ॥१९३०॥  
 सोन्यामार्जी हीण । मिसळतां साच । सोनें तें सोनें च । असे जरी ॥१९३१॥  
 तरी तें चि हीण । टाकितां काढोन । केवळ सुवर्ण । उरे जैसैं ॥१९३२॥

पौर्णिमेच्या आधीं । चंद्र सावयव । पार्था नसे काय । सांग बरें ॥१९३३॥  
 प्रकाशदृष्टीनें । परी पाहूं जातां । तयासी पूर्णता । त्या दिनीं च ॥१९३४॥  
 अन्यथाज्ञानानें । जरी दिसें मी च । अप्रकट साच । दृश्यरूपें ॥१९३५॥  
 परी दृश्य पावे । 'द्रष्टृत्वीं विलय । तेव्हां प्राप्त होय । माझा मी च ॥१९३६॥  
 म्हणोनि हा माझा । भक्तियोग चौथा । होय दृश्यपथा-। पलीकडे ॥१९३७॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥५५॥

ज्ञानभक्तीनें ह्या । भक्त जो स्वभावे । एकत्वासी पावे । माझ्या ठायीं ॥१९३८॥  
 मी चि तो केवळ । होवोनियां राहे । ठावे तुज आहे । आवघें हें ॥१९३९॥  
 ज्ञानी तो केवळ । आत्मा माझा जाण । बाहू उभारून । बोलिलों जें ॥१९४०॥  
 मागें तुजप्रति । सप्तमाध्यायांत । तें चि पुन्हा येथ । सांगितलें ॥१९४१॥  
 सहज ही भक्ति । माझी सर्वोत्तम । म्हणोनि परम । आवडीनें ॥१९४२॥  
 भागवतद्वारा । कल्पारंभीं ही च । सांगितली साच । ब्रह्मयालागीं ॥१९४३॥  
 'स्वसंविक्ति' ऐसें । ज्ञानी देती नांव । संबोधिती शैव । 'शक्ति' ऐसें ॥१९४४॥  
 आम्ही तरी भक्ति । आपुली परम । ऐसें देऊं नाम । भक्तीसी ह्या ॥१९४५॥  
 मद्रूपीं सायुज्य । पावावया योग्य । होतसे सभाग्य । 'क्रम-योगी ॥१९४६॥  
 तेव्हां तयालागीं । ही च आपोआप । होय फलद्रूप । चौथी भक्ति ॥१९४७॥  
 तेणेंयोगें मग । विश्व हें सकळ । होतसे केवळ । मद्रूप चि ॥१९४८॥  
 विवेकासहित । वैराग्य हि आटे । बंध तो हि तुटे । मोक्षासवे ॥१९४९॥  
 अवृत्तिसहित । वृत्ति बुडे तेथ । चौथी भक्ति प्राप्त । होतां माझी ॥१९५०॥  
 प्रळयाच्या वेळीं । चार हि भूतातें । गिळोनि राहते । नभ जैसे ॥१९५१॥  
 ऐलपणासवे । तैसें पैलपण । तेथें हारपोन । जाय पार्था ॥१९५२॥  
 साध्य-साधनाच्या । अतीत जें शुद्ध । आदि अंत मध्य । नाहीं जया ॥१९५३॥  
 ऐसें मत्स्वरूप । पावोनि तो योगी । एकत्वे चि भोगी । मजलागीं ॥१९५४॥  
 सिंधूवरी जैसी । तळपते गंगा । सिंधूचिया अंगा । मिळोनियां ॥१९५५॥

तैसा घडे भोग । भक्तीचिया योगें । भक्त तो निजांगें । मी चि होतां ॥१९५६॥  
 आरशासी एका । दाखवितां जैसा । पुसोनि आरसा । दुजा एक ॥१९५७॥  
 'द्रष्टेपणासी च । तेथें येई भर । तैसा चि प्रकार । जाण येथें ॥१९५८॥  
 घेतां समोरील । आरसा काढोन । जातां हारपोन । प्रतिबिंब ॥१९५९॥  
 मुखाचें सौंदर्य । भोगावें तें भलें । आपण आपुलें । मग जैसें ॥१९६०॥  
 नातरी जागृति । येतां चि संपूर्ण । स्वप्न मावळोन । जातां मग ॥१९६१॥  
 आपुलें एकत्व । असे जें स्वभावं । जैसें तें भोगावें । द्वैताविण ॥१९६२॥  
 न घडे चि भोग । झालिया तन्मय । ऐसा अभिप्राय । जयांचा गा ॥१९६३॥  
 बोलीं बोलाची च । निंदा स्तुति होत । पहावा दृष्टांत । तयांनीं हा ॥१९६४॥  
 तयांचिया गांवीं । दीपाकडोनियां । नेणों काय सूर्या । तेज लाभे ! ॥१९६५॥  
 नातरी तयांनीं । मंडप घालोन । व्यापिलें गगन । नेणों काय ! ॥१९६६॥  
 शकेल का भोगूं । राजा राजेपण । राजेपणाविण । निजांगींच्या ? ॥१९६७॥  
 नातरी अंधार । भास्करालागोन । कैसें आलिंगन । देऊं शके ? ॥१९६८॥  
 नव्हे जें आकाश । तयालागीं कैची । व्याप्ति आकाशाची । कळूं शके ? १९६९  
 भूषणें गुंजांचीं । रूपीं रत्नाचिया । कैसी धनंजया । मिरवती ? ॥१९७०॥  
 म्हणोनि मद्रूप । झाला नाहीं साच । तयालागीं मी च । आहें कोठें ? ॥१९७१॥  
 मग कैचा मातें । भजेल तो पाहीं । नको चि हें काहीं । बोलावया ॥१९७२॥  
 म्हणोनियां घेई । तरुणांगी चांग । तारुण्याचा भोग । जैशा रीती ॥१९७३॥  
 मद्रूप होवोन । तैसा क्रम-योगी । पार्था, मातें भोगी । निरंतर ॥१९७४॥  
 तरंग सर्वांगीं । जैसें तोय चुंबी । विलसते बिंबीं । प्रभा जैसी ॥१९७५॥  
 नभीं नभोरूप । होवोनियां पाहें । भरोनियां राहे । अवकाश ॥१९७६॥  
 सुवर्ण असोन । स्वयें अलंकार । भजे निरंतर । सुवर्णासी ॥१९७७॥  
 तैसा क्रियेविण । स्वभावं तो साच । भजे मातें मी च । होवोनियां ॥१९७८॥  
 चंदन-सुगंध । भजे चंदनासी । चंद्रिका ती जैसी । चंद्रम्यासी ॥१९७९॥  
 तैसी असे भक्ति । स्वभावं अद्वैतीं । जरी साहे ना ती । क्रिया काहीं ॥१९८०॥

परी हें तों नये । दावितां बोलोन । स्वानुभवे खूण । कळों ये ती ॥१९८१॥  
 अमो ऐसा पूर्व-। संस्काराच्या छंदें । जें जें अनुवादे । क्रमयोगी ॥१९८२॥  
 तेथ आळवणी । ऐकोनि ती पार्था । देवोनि ओ, वक्ता । मी च होय ॥१९८३॥  
 जेथ वक्त्यालागीं । स्वये भेटे वक्ता । बोलणें तत्त्वतां । तेथे केंचें ? ॥१९८४॥  
 म्हणोनियां ऐसें । तत्त्वतां जें मौन । गोमटे स्तवन । तें चि माझे ॥१९८५॥  
 ऐशापरी जें जें । बोलूं जाय तेथें । बोलता मी भेटें । बोलीं तया ॥१९८६॥  
 म्हणोनि तयाचें । बोलणें तें मौन । तेणें चि स्तवन । करी माझे ॥१९८७॥  
 तैमें स्थूल किंवा । सूक्ष्म-नेत्रें पाहे । तें तें होत आहे । पाहतें च ॥१९८८॥  
 ह्या परी दृश्यातें । सारोनि वाजूस । दावी पाहत्यास । देखणें तें ॥१९८९॥  
 आरशाआधीं च । देखतें जें मुख । तें चि दिसे देख । आरशांत ॥१९९०॥  
 तैमें देखणें तें । तयाचें गा साच । दावी द्रष्ट्यासी च । धनंजया ॥१९९१॥  
 ऐशापरी पार्था । दृश्यजात आटे । द्रष्टा जेव्हां भेटे । द्रष्ट्यासी च ॥१९९२॥  
 तेव्हां उरे द्रष्टा । एकला म्हणोन । तेथें द्रष्टेपण । नुरे तें हि ॥१९९३॥  
 होवोनियां जागें । स्वर्मीचिया कांते । आर्लिगावयातें । धांव घेतां ॥१९९४॥  
 कान्त कान्ता दोन्ही । नाहींशीं होवोन । स्वरूपे आपण । उरें जैसा ॥१९९५॥  
 काष्ठावरी काष्ठ । धांशितां चि देख । उपजे पावक । तेथें जो का ॥१९९६॥  
 गिळोनि तो दोन्ही । काष्ठांसी संपूर्ण । एकला आपण । उरें जैसा ॥१९९७॥  
 सूर्ये प्रतिबिंब । हातीं धरूं जावें । तंव तें लोपावें । बिंबत्व हि ॥१९९८॥  
 तैसा जो मी द्रष्टा । तो चि तो होवोन । दृश्याचें दर्शन । घेऊं जाय ॥१९९९॥  
 तेव्हां दृश्यजात । स्वभावे लोपोन । तेथ द्रष्टेपण । तें हि लोपे ॥२०००॥  
 सूर्योदयीं तम । जातां चि लोपोन । प्रकाशितेपण । लोपे जैसें ॥२००१॥  
 तैसें दृश्यजात । होतां चि मद्रूप । लोपे आपोआप । द्रष्टृत्व हि ॥२००२॥  
 न पाहणें किंवा । पाहणें हि नाहीं । अवस्था जी कांहीं । ऐसी होय ॥२००३॥  
 दृश्यासवें आटे । जेथें द्रष्टेपण । तत्त्वतां 'दर्शन' । तें चि माझे ॥२००४॥  
 मग कोणता हि । पदार्थ किरीटी । येवो दृष्टिपथीं । तयाचिया ॥२००५॥

दृश्य-द्रष्टेपण । दोन्ही हि सांडोन । स्वरूप आपण । भोगी नित्य ॥२००६॥  
 आकाश आकाशें । भरोनि राहिलें । म्हणोनि न ढळे । अणुमात्र ॥२००७॥  
 मज आत्म्यामार्जी । तैसा मिसळोन । मी चि मी होवोन । राहिला तो ॥२००८॥  
 कल्पान्ती उदक । रोधिलें उदकें । जैसैं वाहूं ठाके । धनंजया ॥२००९॥  
 तैसा कोंदला तो । क्रमयोगी देख । जो मी आत्मा एक । तयानें गा ॥२०१०॥  
 जळामार्जी काय । करावया स्नान । जळ चि आपण । प्रवेशोल ? ॥२०११॥  
 किंवा अग्नि कैसा । स्वतःभी जाळील । चढेल पाऊल । पायावरी? ॥२०१२॥  
 तैसैं सर्व कांहीं । मी च होतां तया । ठेलें धनंजया । येणें जाणें ॥२०१३॥  
 मज अद्रयाची । ही च यात्रा जाण । ठायीं च राहोन । घडे त्यामी ॥२०१४॥  
 उदकावरील । खेळता तरंग । धांवला सवेग । जरी साच ॥२०१५॥  
 तरी आक्रमिला । तेणें भूमिभाग । ऐसैं पार्था सांग । म्हणों ये का ? ॥२०१६॥  
 तेथें तरंगें जें । सांडावें ठिकाण । गांठावें कीं स्थान । दुजें जें का ॥२०१७॥  
 चालणें वा जेणें । चालावें तें देख । एक चि उदक । सर्व कांहीं ॥२०१८॥  
 म्हणोनि तो जावो । तरंग कोठें हि । एकात्मते नाहीं । भंग कदा ॥२०१९॥  
 तैसा क्रमयोगी । पावला तो मज । मद्रूप सहज । होवोनियां ॥२०२०॥  
 ही च यात्रा माझी । करोनि तो भला । यात्रेकरू झाला । माझा साच ॥२०२१॥  
 देह-स्वभावे तो । कांहीं करूं बैसे । तरी तेणें मिषें । भेटें मी च ॥२०२२॥  
 ऐशा स्थितीमार्जी । कर्म आणि कर्ता । भेद हा तत्त्वतां । लोपोनियां ॥२०२३॥  
 मद्रूप होवोन । मज पाहूं जाय । तेव्हां मी चि होय । सर्वथा तो ॥२०२४॥  
 सुवर्णें सुवर्ण । टाकिलें झांकोन । न झांकणें जाण । झालें तें चि ॥२०२५॥  
 किंवा दर्पणातें । पाहिलें दर्पणें । तें चि न पाहणें । होय जैसैं ॥२०२६॥  
 दीपें दीपालागीं । प्रकाशितां साच । न प्रकाशणें च । होतमे तें ॥२०२७॥  
 तैसैं करावें जें । मद्रूप होवोन । कर्म ऐसैं कोण । म्हणे तया ? ॥२०२८॥  
 करी जरी कर्म । तरी पार्था जाण । कर्तृत्वाभिमान । नाहीं तेथें ॥२०२९॥  
 म्हणोनियां केलें । तयानें जें कांहीं । न करणें होई । तयाचें तें ॥२०३०॥

घडे जें कांहीं च । न करणें साच । क्रियाजात मी च । होतां ऐमें ॥२०३१॥  
 तें चि माझें जाण । गुणेचें पूजन । अनन्यभजन । स्वभावे चि ॥२०३२॥  
 ऐशा रीती कर्म । आचरिलें जाय । न करणें होय । तत्त्वतां तें ॥२०३३॥  
 ती च महापूजा । जाण कपिध्वजा । तेणें करी पूजा । नित्य माझी ॥२०३४॥  
 ऐशापरी तो जें । बोळे तें स्तवन । देखे तें दर्शन । जाण माझें ॥२०३५॥  
 गमन तें साचें । मज अद्रयाचें । अर्जुना तयाचें । चालणें जें ॥२०३६॥  
 तो जें करी कांहीं । ती च माझी पूजा । कल्पी जें तो माझा । जप जाण ॥२०३७॥  
 ज्या ज्या स्थितीमार्जी । असेल तो पार्था । समाधि-अवस्था । ती च माझी २०३८  
 देखें 'सुवर्णाशीं । सुवर्ण-कंकण । सर्वथा अभिन्न । असे जैमें ॥२०३९॥  
 तैसा स्वभावे तो । भक्तियोगें ह्या च । एकरूप साच । माझ्या ठायीं ॥२०४०॥  
 अभिन्नत्वे राहे । रत्नीं जैसें तेज । कापुरीं सहज । परिमळ ॥२०४१॥  
 जळीं जैसी लाट । तंतूपाशीं पट । किंवा जैसा घट । मृत्तिकेशीं ॥२०४२॥  
 तैसा क्रमयोगी । भक्त माझा जाण । राहे मिसळोन । माझ्या ठायीं ॥२०४३॥  
 ह्या चि स्वयंसिद्ध । भक्तियोगें पूर्ण । मद्रूप होवोन । निरंतर ॥२०४४॥  
 आत्मत्वे तो पाहे । ज्ञानी-भक्त साच । मज द्रष्ट्यासी च । दृश्यजातीं ॥२०४५॥  
 जागृत्यादि तिन्ही । अवस्थांच्या द्वारा । येई जें का वीरा । प्रत्ययासी ॥२०४६॥  
 उपाधि आणिक । उपाहिताकारें । दृश्य जें हें स्फुरे । भावाभाव ॥२०४७॥  
 सर्व हि तें मी च । दृष्ट ऐसें साचें । ज्ञान होतां नाचे । थेंडा जैसा ॥२०४८॥  
 होतां रज्जु-ज्ञान । सर्पाभास तो हि । रज्जु ऐसें येई । प्रत्ययासी ॥२०४९॥  
 सोन्याहून कांहीं । लेंगे भिन्न नाहीं । आटवोनि पाहीं । जाणावें हें ॥२०५०॥  
 पाणी च तें एक । तरंगीं साचार । न घ्यावा आकार । तरंगाचा ॥२०५१॥  
 किंवा स्वर्गां जे जे । पाहिले पदार्थ । ते ते जागृतींत । मापूं जातां ॥२०५२॥  
 आपणापासोन । दिसती ना भिन्न । झालों होतों जाण । आपण चि ॥२०५३॥  
 तैसें भावाभाव-। रूपें स्फुरे ज्ञेय । तें तें मी च होय । ज्ञातेपणें ॥२०५४॥  
 ऐसें भोगी योगी । स्वानुभव-सुख । सर्वत्र मी एक । जाणोनियां ॥२०५५॥

'अज मी अजर । अक्षय अक्षर । अपूर्व अपार । आनंद मी ॥२०५६॥  
 अचळ अच्युत । अनंत अद्वैत । आद्य मी अव्यक्त । व्यक्त हि मी ॥२०५७॥  
 'ईश्य मी ईश्वर । अनादि अमर । अभय आधार । आधेय मी ॥२०५८॥  
 स्वामी सदोदित । सहज मी मतत । सर्व सर्वातीत । सर्वव्यापी ॥२०५९॥  
 स्थूल मी, मी सूक्ष्म । नवा मी 'पुराण । शून्य मी संपूर्ण । सर्वा परी ॥२०६०॥  
 अक्रिय मी एक । असंग अशोक । व्याप्य मी व्यापक । पुरुषोत्तम ॥२०६१॥  
 अशब्द अश्रोत्र । अरूप अगोत्र । सम मी भ्वतंत्र । परब्रह्म ॥२०६२॥  
 मज एकालागीं । ऐसें आत्मपणे । अद्रय-भक्तीनें । जाणोनियां ॥२०६३॥  
 ह्या हि बोधालागीं । जाणते जें साच । असे तें हि मी च । ऐसें जाणे ॥२०६४॥  
 स्वप्नांतून जागे । होतां पंडुसुता । आपुली एकता । उरे जी का ॥२०६५॥  
 ती हि आपणासी । स्फुरे जैसी साच । आपुल्या ठायीं च । धनंजया ॥२०६६॥  
 सूर्य आपण चि । होय प्रकाशक । प्रकाशितां देख । आपणासी ॥२०६७॥  
 तेथ प्रकाशक । आणि प्रकाश्याचें । दावी ऐक्य साचें । तो चि जैसा ॥२०६८॥  
 तैसें लोपतां च । ज्ञेय तें सकळ । उरे जो केवळ । ज्ञाता एक ॥२०६९॥  
 तो हि आपणास । आपण चि जाणे । हें हि कळे जेणें । ज्ञानें ऐक्य ॥२०७०॥  
 ती च ज्ञानकला । ईश्वर मी होय । ऐसा चि प्रत्यय । असे ज्याचा ॥२०७१॥  
 मी च आत्मा एक । द्वैताद्वैतातीत । अर्जुना निभ्रांत । जाणोनि हें ॥२०७२॥  
 जाणणें जें तें हि । स्वानुभवे मुरे । ऐसी जेव्हां नुरे । 'ज्ञानोर्मि हि ॥२०७३॥  
 तेव्हां स्वप्नांतल । नानात्व लोपतां । स्फुरे जी एकता । जागृतीत ॥२०७४॥  
 आपुली आपणा । ती हि मग नुरे । नेणों काय उरे । अवस्था जी ॥२०७५॥  
 नाटयितां होय । लेण्याची आटणी । सुवर्ण म्हणोनि । पाहतां तें ॥२०७६॥  
 जळाचिया रूपें । राहे क्षारपण । जळीं मिसळोन । जातां भीठ ॥२०७७॥  
 मग क्षारता हि । सर्वथा जिरोन । स्वरूपेकरोन । राहे पाणी ॥२०७८॥  
 तैसा मी ईश्वर । आणिक तो भक्त । पार्था ऐसें द्वैत । असे जें का ॥२०७९॥  
 स्वानंदानुभवीं । जिरोनि तें जातां । मद्रूप सर्वथा । होय तो हि ॥२०८०॥



जेथें 'तो' हा शब्द । मंपे ऐशा परी । तेथें 'मी' हा तरी । शब्द कोणा ? ॥२०८१॥  
 मग मी तो ऐसी । भाषा नुरे काहीं । ऐशा माझ्या ठायीं । सामावे तो ॥२०८२॥  
 जळोनियां संपे । कापूर तो जेव्हां । अमीसी हि तेव्हां । नुरे ठाव ॥२०८३॥  
 मग दोहींहून । वेगळें आणिक । आकाश तें एक । उरें जैसें ॥२०८४॥  
 एकांतून एक । टाकितां काढोन । मग जैसें शून्य । उरें पार्था ॥२०८५॥  
 तैसें आहे नाहीं । भाव हे गिळोन । शेष महा-शून्य । उरें मी च ॥२०८६॥  
 तेथें ब्रह्म आत्मा । ईश हे हि बोल । राहिले केवळ । नाममात्र ॥२०८७॥  
 आणि जें का मग । न बोलणें काहीं । तयासी हि नाहीं । ठाव तेथें ॥२०८८॥  
 न बोलणें तें हि । न बोलतां काहीं । बोलवें तें पार्हीं । तोंडभरी ॥२०८९॥  
 जाणीव नेणीव । सांडोनियां सर्व । घ्यावा अनुभव । तयाचा गा ! ॥२०९०॥  
 स्वरूपीं त्या बोध । बोधें चि जाणावा । आनंद लुटावा । आनंदें चि ॥२०९१॥  
 स्वरूपीं त्या पार्था । केवळ 'अव्यंग । सुखें घ्यावा भोग । सुखाचा चि ॥२०९२॥  
 तेथें प्रभेनें च । आलिंगिली प्रभा । लाभ चि तो लाभ । प्राप्त झाला ॥२०९३॥  
 विस्मय तो तेथें । विस्मयीं बुडाला । ऐक्यालागीं आला । ऐक्यभाव ॥२०९४॥  
 अनुभव वेडा । होय अनुभवे । विश्रांति हि पावे । विश्रांतीतें ॥२०९५॥  
 बहु बोलूं काय । क्रम-योग-वेली । सेवोनियां भली । ऐशा रीती ॥२०९६॥  
 मग जें का माझे । निर्मळ मीपण । तें चि तो होवोन । राहे पार्था ॥२०९७॥  
 क्रमयोग-राज-। मुकुटीचें रत्न । ऐसें जें मी ज्ञान । धनंजया ॥२०९८॥  
 क्रमयोगी तो हि । तें चि होय जाण । मज समर्पून । जीवदशा ॥२०९९॥  
 किंवा क्रमयोग-। रूपी मंदिराचा । कळस मोक्षाचा । असे जो हा ॥२१००॥  
 त्या चि मोक्षरूपी । कळसावरील । झाला तो विशाल । अवकाश ॥२१०१॥  
 किंवा भवारण्यां । क्रमयोग-मार्ग । जोडला जो चांग । धनंजया ॥२१०२॥  
 क्रमोनि तो ज्ञानी । क्रमयोगी भक्त । 'मदैक्यग्रामांत । प्रवेशला ॥२१०३॥  
 किंवा भक्तिज्ञान-। रूपी गंगाजळ । ऐसा तो निर्मळ । क्रमयोगी ॥२१०४॥  
 स्वानंदोदधीस । मज मिळे वेगें । क्रमयोग-ओर्धे । निःसंदेह ॥२१०५॥

क्रमयोगाची ही । एवढी अपार । थोरवी साचार । असे पार्था ॥२१०६॥  
 म्हणोनियां आम्हीं । तुज वेळोवेळां । हा चि एक भला । ऐकविला ॥२१०७॥  
 योग्य देश काल । पदार्थ पाहोन । ध्यावें ओळखोन । मजलागीं ॥२१०८॥  
 ऐसा नव्हे मी तों । स्वयंसिद्ध पाहीं । सर्वांचें सर्व हि । मी च एक ॥२१०९॥  
 म्हणोनियां पार्था । सायासावांचोन । होय माझे ज्ञान । क्रमयोगें ॥२११०॥  
 एक गुरु होय । आणि एक शिष्य । ऐसा सांप्रदाय । रूढ जो का ॥२१११॥  
 पाहें धनंजया । केवळ तो येथ । मत्प्राप्तीची रीत । जाणावया ॥२११२॥  
 आइताच ठेवा । वसुधेच्या पोटी । अग्नि सिद्ध काष्टीं । कासे दूध ॥२११३॥  
 परी मिळवाया । करावे उपाय । तरी च तें होय । प्राप्त जैमें ॥२११४॥  
 तैसा स्वयंसिद्ध । असें जरी साच । तरी लाभें ह्या च । उपार्ये मी ॥२११५॥  
 असो फलप्राप्ति । सांगोनि अंतिम । ऐसा उपक्रम । साधनाचा ॥२११६॥  
 करिती कां देव । मागुतीं सखोल । ऐसें विचाराल । तरी सांगूं ॥२११७॥  
 जाणा हें संपूर्ण । गीताशास्त्र साचें । साधन मोक्षाचें । एकलें च ॥२११८॥  
 अन्य शास्त्रें येथें । होती अप्रमाण । ऐसें भलेपण । गीतार्थाचें ॥२११९॥  
 आड आले मेघ । निवारितो वारा । परी तो भास्करा । घडवी ना ॥२१२०॥  
 किंवा जैमें हातें । लोट्टे ये शेवाळ । परी नवें जळ । निर्मू न ये ॥२१२१॥  
 आत्मदर्शनाच्या । आड तैसा मळ । असे जो केवळ । अविद्येचा ॥२१२२॥  
 तथाचा निराम । होय शास्त्राभ्यासें । निर्मळ मी अमें । स्वयंप्रभ ॥२१२३॥  
 अविद्येचा नाश । करावा केवळ । एवढें च बळ । शास्त्राचें त्या ॥२१२४॥  
 परी आत्मबोध । करोनि द्यावया । न होती कौन्तेया । स्वतंत्र तीं ॥२१२५॥  
 सर्व हि तीं घेती । गतिकडे धांव । आपुलें सत्यत्व । पटवाया ॥२१२६॥  
 सुयें विभूषित । होतां पूर्वदिशा । दाही दिशा जैशा । तेजोमय ॥२१२७॥  
 तैसें सर्वश्रेष्ठ । गीताशास्त्रें भलें । सनाथ जाहलें । शास्त्रजात ॥२१२८॥  
 असो किती सांगूं । धनंजया साच । गीताशास्त्रें ह्या च । पूर्वाधार्यां ॥२१२९॥  
 बोलिला उपाय । विस्तारें बहुत । आत्मा हस्तगत । होय जणें ॥२१३०॥

परी एकदां च । ऐकोनि केवळ । कैसें आकळेल । अर्जुनातें ॥२१३१॥  
 ऐसा अभिप्राय । धरोनियां मनीं । देव चक्रपाणी । कृपावंत ॥२१३२॥  
 तें चि पुन्हां आतां । ठसावें म्हणोन । सारांशें करोन । निवेदील ॥२१३३॥  
 आणि ह्या अध्यायीं । देखा गीताग्रंथ । होतसे समाप्त । म्हणोनियां ॥२१३४॥  
 प्रसंगें ह्या ग्रंथीं । आदि-अंतीं सार । एक चि साचार । ऐसें दावी ॥२१३५॥  
 'ग्रंथ-गर्भी' नाना । बोलिले सिद्धांत । ओघें झाले प्राप्त । म्हणोनियां ॥२१३६॥  
 ग्रंथीं नाना अर्थ । ऐसें म्हणे कोणी । संबंध नेणोनि । 'पूर्वापर ॥२१३७॥  
 तरी सर्व एका । महा-सिद्धान्तांत । होती 'अंतर्भूत । सिद्धान्त ते ॥२१३८॥  
 म्हणोनि आद्यन्तीं । एक चि सिद्धान्त । मांडोनियां ग्रंथ । संपविला ॥२१३९॥  
 अविद्येचा नाश । मुख्य हा विषय । जेणें प्राप्त होय । मोक्ष-फल ॥२१४०॥  
 ह्या दोघां केवळ । ज्ञान चि साधन । सिद्धान्त महान् । हा चि एक ॥२१४१॥  
 नानापरी ग्रंथीं । देव नारायण । विस्तारें करोन । बोलिला जो ॥२१४२॥  
 तो चि आतां येथें । सारांशें कथन । करावा म्हणोन । पुनरपि ॥२१४३॥  
 साधनेचें रूप । 'विवरितो हरि । साध्य झालें जरी । हस्तगत ॥२१४४॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्ब्रह्मपाश्र्वयः ।

सत्प्रमादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥५६॥

म्हणे माझ्याठायीं । क्रमयोगी जाण । मद्रूप होवोन । राहे भावं ॥२१४५॥  
 पुष्पें स्वकर्माचीं । वाहोनि पावन । बरवें पूजन । करी माझें ॥२१४६॥  
 ऐशापरी मातें । करोनि प्रमत्त । घेई आकळोन । ज्ञाननिष्ठा ॥२१४७॥  
 होय हस्तगत । ज्ञाननिष्ठा जेथ । प्रकटते तेथ । भक्ति माझी ॥२१४८॥  
 तेणें भक्तियोंगें । माझा भक्तोत्तम । एकत्वे परम । सुखी होय ॥२१४९॥  
 ऐशापरी माझें । स्वभावं संपूर्ण । सर्वव्यापीपण । जाणोनियां ॥२१५०॥  
 विश्वप्रकाशिता । आत्मा जो मी एक । तया जो साधक । अनुमरे ॥२१५१॥  
 उदकीं लवण । जातमे मिळोन । आपुलें 'काठिन्य । सांडोनियां ॥२१५२॥  
 नातरी म्वच्छंद । हिंडता पवन । जैमा होय लीन । आकाशांत ॥२१५३॥

तैसा माझ्या ठायीं । झाला जो विलीन । काया वाचा मन । समर्पानि ॥२१५४॥  
 तयाच्या हातून । प्रसंगें करोन । निषिद्धाचरण । घडो पार्था ॥२१५५॥  
 परी नदी नाले । गंगारूप होती । मिळोनियां जाती । जेव्हां गंगे ॥२१५६॥  
 शुभाशुभ तैसें । एकरूप जाण । होतां माझें ज्ञान । यथार्थत्वे ॥२१५७॥  
 चंदन वा खैर । तोंवरी हा भेद । जोंवरी संबंध । अग्नीशीं ना ॥२१५८॥  
 हीणमिश्र किंवा । सोळा कशी शुद्ध । सुवर्णी हा भेद । तोंवरी च ॥२१५९॥  
 जोंवरी तें नाहीं । झालें एकरस । परिसाचा स्पर्श । होवोनियां ॥२१६०॥  
 तैसा आकळेना । जोंवरी मी एक । सर्वांसी व्यापक । सदोदित ॥२१६१॥  
 तांवरी च भामे । शुभाशुभ ऐसें । उरे द्वैत कैसें । सामरर्थ्या ? ॥२१६२॥  
 दिन-रात्र ऐसी । नुरे भेद-वार्ता । ग्रामीं प्रवेशतां । सूर्याच्या ॥२१६३॥  
 म्हणोन मद्रक्ता । भेट माझी होतां । लाभे अलिप्तता । सर्व कर्मीं ॥२१६४॥  
 मग सायुज्याच्या । सिंहामनीं बैसे । तोडोन तो ऐसे । कर्म-बंध ॥२१६५॥  
 देश-कालें किंवा । स्वभावे विनाश । निश्चयें जयास । संभवे ना ॥२१६६॥  
 ऐसें पद माझें । जें का अविनाश । माझिया भक्तास । तें चि लाभे ॥२१६७॥  
 काय मांगूं फार । मज आत्मयाची । प्रसन्नता साची । लाभतां च ॥२१६८॥  
 पार्था तयालागीं । अप्राप्य जें होय । ऐसें उरे काय । जगामार्जी ? ॥२१६९॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ।

बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव ॥५७॥

म्हणानि आपुलीं । सर्व कर्में अर्पीं । माझिया स्वरूपीं । धनुर्धरा ॥२१७०॥  
 परी तें अर्पण । नमावे कृत्रिम । ठेवीं वृत्ति आत्म-। विवेकीं तूं ॥२१७१॥  
 मग तया आत्म-। विवेकाच्या बळें । सर्वथा निराळें । कर्माहून ॥२१७२॥  
 माझिया निर्मळ । स्वरूपीं अर्जुना । स्वभावे आपणा । देखसील ॥२१७३॥  
 कर्म जेथ जन्मे । प्रकृति ती भिन्न । स्वरूपापासोन । आपुलिया ॥२१७४॥  
 देखतां चि ऐसें । मग धनंजया । रूपीं जैसी छाया । सामावे गा ॥२१७५॥  
 तैसी स्वस्वरूपीं । प्रकृति ती पार्था । सामावे सर्वथा । कर्मांमवे ॥२१७६॥

ह्यापरी कर्माचा । समूळ संन्यास । मायेचा निरास । होतां घडे ॥२१७७॥  
 ऐसें कर्मजात । लोपतां चि साच । आत्मा उरें मी च । स्वयंसिद्ध ॥२१७८॥  
 तेथें तूं आपुली । पार्था बुद्धि भली । करोनियां घालीं । एकनिष्ठ ॥२१७९॥  
 बुद्धि जेव्हां ऐसी । अनन्य होवोन । राहते रिघोन । मजमार्जी ॥२१८०॥  
 तेव्हां करी चित्त । माझे चि भजन । विषय सांडोन । चिंतनाचा ॥२१८१॥  
 चिंतनाचा सर्व । सांडोनि विषय । जडोनियां जाय । चित्त तुझे ॥२१८२॥  
 प्रेमें माझ्या ठायीं । नित्य निरंतर । अर्जुना सत्वर । करीं ऐसें ॥२१८३॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।

अथ चेत्त्वमहंकारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि ॥५८॥

अभेद-भक्तीनें । चित्त सुनिर्मळ । मद्रूपीं जडेल । ऐसें जेव्हां ॥२१८४॥  
 संपूर्ण प्रसाद । माझा तेव्हां तुज । लाभेल सहज । धनंजया ॥२१८५॥  
 मग जें सकळ । दुःखाचें माहेर । ऐसे अनिवार । जन्म-मृत्यु ॥२१८६॥  
 पावशील पार । सुखें तयांतून । मद्रूपीं जडोन । जातां चित्त ॥२१८७॥  
 सूर्य-प्रकाशाचा । घेवोनि आश्रय । सतेज ती होय । दृष्टि जेव्हां ॥२१८८॥  
 तेव्हां अंधारातें । पुमे तेथें कोण । जाय तो लोपोन । स्वभावे चि ॥२१८९॥  
 लाभोनि प्रसाद । माझा पार्था तैसा । भ्रांत जीवदशा । आटे जेव्हां ॥२१९०॥  
 तेव्हां भवरूप । बागुलाची भीति । कैसी कोणाप्रति । बाधूं शके? ॥२१९१॥  
 माझिया प्रसादें । म्हणोनि तूं पाहीं । भव-दुर्गति ही । तरशील ॥२१९२॥  
 बोलणें हें माझे । धरोनि अहंता । जरी पंडुसुता । ऐकसी ना ॥२१९३॥  
 तरी अविनाश । तूं जो नित्यमुक्त । सर्व हि तें व्यर्थ । जावोनियां ॥२१९४॥  
 देहतादात्म्याचा । दुर्धर आघात । आदळेल येथ । तुझ्या अंगीं ॥२१९५॥  
 पाउलागणिक । जेथें आत्मघात । भोगितां उसंत । नाहीं कदा ॥२१९६॥  
 असोनि तूं पार्था । स्वरूपें अमर । ऐसी व्यथा घोर । पावशील ॥२१९७॥  
 जासी अव्हेरून । जरी माझे बोल । मृत्यु आदळेल । तुझ्या अंगीं ॥२१९८॥

यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे ।

मिथ्यैव व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां । नयीक्ष्येति ॥५९॥

पथ्यद्वेषी जैसा । पोषीतसे ज्वर । नातरी अंधार । दीपद्वेषी ॥२१९९॥  
 तैमें विवेकाशीं । करोनियां वैर । जरी अहंकार । वाढविमी ॥२२००॥  
 स्वदेहातें नाम । ठेवोनि अर्जुन । मानोनि स्वजन । पर-देहा ॥२२०१॥  
 धर्म-संग्रामासी । घोर पापाचार । नाम हें साचार । देवोनियां ॥२२०२॥  
 भ्रांत-बुद्धीनें तूं । तिघांलार्गीं तीन । ह्यापरी ठेवोन । नामें ऐमीं ॥२२०३॥  
 न झुंजें मी ऐसा । निश्चय जो दृढ । करिशील मूढ-पणें आतां ॥२२०४॥  
 तयालार्गीं फोल । ठरवील देख । तुझा नैसर्गिक । स्वभाव चि ॥२२०५॥  
 आणि मी अर्जुन । हे माझे सोयरे । वध ह्यांचा ठरे । पाप चि तें ॥२२०६॥  
 भ्रामक ही जाण । कल्पना सर्वथा । सत्य नव्हे पार्था । तत्त्वदृष्ट्या ॥२२०७॥  
 आधीं तूं झुंजार । मिथ्या हें त्रिवार । शस्त्राचा स्वीकार । मग पुढें ॥२२०८॥  
 नातरी मी आतां । न झुंजें निर्धारें । प्रतिज्ञा ही उरे । कोठें कैसी ? ॥२२०९॥  
 म्हणोनि न झुंजें । हे जे तुझे बोल । स्वभावं ते फोल । जाण पार्था ॥२२१०॥  
 आतां लोकदृष्टी । झुंजार तूं वीर । मानिलें साचार । जरी ऐमें ॥२२११॥  
 तरी तुझा क्षात्र-स्वभाव निभ्रांत । झुंजवील येथ । तुजलार्गीं ॥२२१२॥

स्वभावजेन कौन्तेय निवद्धः स्वेन कर्मणा ।

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत् ॥६०॥

वाहतां जलौघ । पूर्वेकडे वेगें । कोणी पोहूं लागे । पश्चिमेस ॥२२१३॥  
 तरी ओघ ओढी । आपणाकडे च । आग्रह तो साच । उरें तेंथें ॥२२१४॥  
 नातरी साळीचा । दाणा जरी म्हणे । आतां साळीपणें । नुगवें मी ॥२२१५॥  
 तरी सांडोनियां । स्वभावधर्मासी । सांगें कैसें त्यासी । जावेल ? ॥२२१६॥  
 क्षात्र-संस्कारें च । तैसी तुझ्या जाण । झालीसे घडण । स्वभावाची ॥२२१७॥  
 म्हणोनि तो तुज । झुंजाया लावील । न झुंजें हे बोल । तुझे वायां ॥२२१८॥  
 पार्था शौर्य तेज । दक्षतादि गुण । स्वभावतां जाण । तुझ्या ठायीं ॥२२१९॥  
 म्हणोनि त्या गुण-समूहानुसार । स्वभावं साचार । रणीं येथें ॥२२२०॥

युद्ध केल्याविण । कैमें राहवेल । तुज बैसवेल । कैमें स्वस्थ ? ॥२२२१॥  
 शौर्यादिक क्षात्र-। गुणांनीं तूं बद्ध । म्हणोनियां युद्ध-। प्रसंगां ह्या ॥२२२२॥  
 क्षात्र-धर्माचिया । शुद्ध प्रवाहांत । वाहात निभ्रांत । जाशील तूं ॥२२२३॥  
 आपुले शौर्यादि । गुण जन्मजात । ऐसे विचारांत । न घेतां चि ॥२२२४॥  
 न झुंजें मी आतां । ऐशा दृढवता । जरी पंडुसुता । घेसील तूं ॥२२२५॥  
 तरी बांधोनियां । हातपाय घट्ट । घातला रथांत । जयालागीं ॥२२२६॥  
 आग्रह तो धरी । न चालें मी ऐसा । तरी जाय जैसा । दूर देशा ॥२२२७॥  
 तैसा तूं अर्जुना । न झुंजतां येथ । पाहशील म्बस्थ । बैसां जरी ॥२२२८॥  
 तरी आग्रह तो । ठरांनियां फोल । तूं चि झुंजशील । सुनिश्चये ॥२२२९॥  
 उत्तर वैराटी । घाबरतां रणीं । आली उमळोनि । क्षात्र-वृत्ति ॥२२३०॥  
 मग झुंजावया । झालामी प्रवृत्त । ती च तुज येथ । झुंजवील ॥२२३१॥  
 सांगे रोगियासी । आवडे कारोग ? । दरिद्र्यासी भोग । दारिद्र्याचा ? २२३२  
 परी अदृष्टाच्या । बळें तयां तें तें । भोगावें लागतें । निरुपायें ॥२२३३॥  
 आणि तें अदृष्ट । धनंजया जाण । सर्वथा आधीन । ईश्वराच्या ॥२२३४॥  
 आणि तो ईश्वर । तुझ्या हृदयीं च । निरंतर साच । वास करी ॥२२३५॥  
 म्हणोनि वेगळें । न करील कांहीं । अदृष्ट तें पाहीं । तुजलागीं ॥२२३६॥

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।

भ्रामयन्मर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥६१॥

ईश्वरस्वरूपी । उदेलामे सूर्य । सर्वांच्या हृदय-। महाकाशीं ॥२२३७॥  
 ज्ञानवृत्तीचिया । सहस्र-करांनीं । ईश्वर-तरणी । प्रकाशे तो ॥२२३८॥  
 जागृत्यादि तिन्ही । अवस्था दावोनि । स्वर्गादि आणोनि । उजेडांत ॥२२३९॥  
 विपरीत ज्ञानें । भुलले पांथिक । तयांलागीं देख । चैववी जो ॥२२४०॥  
 दृश्यजगद्रूपी । जलाशयामाजीं । फुल्ल कमलें जीं । विषयांचीं ॥२२४१॥  
 पंच ज्ञानेंद्रियें । सहावें तें मन । पदूपाद हे जाण । जीवाचे ज्या ॥२२४२॥  
 अर्जुना त्या जीव-। भ्रमराकडोन । तयांचें सेवन । करवी जो ॥२२४३॥

असो हें रूपक । भूतांचिया ठायीं । स्फुरे जो का पाहीं । अहंकार ॥२२४४॥  
 तथा पांघरोनि । ईश्वर तो श्रेष्ठ । अमे उल्हासत । निरंतर ॥२२४५॥  
 आपुलिया आड । धनंजया जाण । पडदा लावोन । स्वमायेचा ॥२२४६॥  
 अंतरीं राहोन । एकला आपण । सूत्र खेळवोन । नानापरी ॥२२४७॥  
 नाचवी बाहेरी । छायाचित्रें ऐसीं । लक्ष चौन्याऐशीं । योनिरूप ॥२२४८॥  
 ब्रह्मपासांनियां । कीटकापर्यंत । सर्व भूतजात । असे जें का ॥२२४९॥  
 तयांची पाहोन । पात्रता साचार । दावी देहाकार । तयांलागीं ॥२२५०॥  
 तेव्हां ठविला जो । जाय देहाकार । स्वकर्मानुसार । जीवापुढें ॥२२५१॥  
 देह चि मी ऐमें । मानोनि साचार । होतसे तो स्वार । तयावरी ॥२२५२॥  
 तृणें चि बांधिली । तृणाची ती पेंढी । सुताची कीं गुंडी । सुतानें च ॥२२५३॥  
 निज प्रतिबिंब । देखोनि जळांत । मी च तें मानीत । बाळ जैसा ॥२२५४॥  
 तैमें देहाकरें । दुसरें तें मी च । ऐमें भ्रमें साच । कल्पोनियां ॥२२५५॥  
 देहाशीं तादात्म्य । पावोनियां जीव । 'देह चि मी' भाव । ऐसा धरी ॥२२५६॥  
 देहकाररूपी । यंत्रावरी जाण । ऐसे बैसवोन । प्राणियांसी ॥२२५७॥  
 प्रारब्धाच्या सूत्रें । नाचवी साचार । सर्व-सूत्र-धार । ईश्वर तो ॥२२५८॥  
 ज्यां जें स्वतंत्र । दिलें कर्म-सूत्र । गतीसी त्या पात्र । होती भूतें ॥२२५९॥  
 काय सांगूं फार । तृणालागीं वारा । भोवंडी अंबरा-मार्जी जैसा ॥२२६०॥  
 तैसा तो ईश्वर । तयां भूतांलागीं । भव्य भव-स्वर्गीं । भोवंडितो ॥२२६१॥  
 लोहचुंबकाच्या । संगतीनें जैसें । लोह फिरतसे । गरगरां ॥२२६२॥  
 तैसें ईश्वराच्या । नित्यसत्तायोगें । कर्म करूं लागे । प्राणिमात्र ॥२२६३॥  
 एक चंद्रोदयीं । सागरादिकांचे । व्यापार ते जैसे । सुरू होती ॥२२६४॥  
 अपार भरतें । येई सागरास । पावते विकास । कुमुदिनी ॥२२६५॥  
 सोमकांतालागीं । फुटतो पाझर । आनंदें चकोर । नाचूं लागे ॥२२६६॥  
 प्रकृतिआधीन । तैसीं नाना भूतें । नाचवी तयांतें । एक ईश ॥२२६७॥  
 तो चि एक ईश । तुझिया अंतरीं । पार्था वास करी । निरंतर ॥२२६८॥



न घेतां पार्थत्व । 'अहं' ऐसें स्फुरे । अंतरीं तें खरें । त्याचें रूप ॥२२६९॥  
 म्हणोनि तो ईश । अर्जुना निभ्रांत । करील प्रवृत्त । प्रकृतीसी ॥२२७०॥  
 न झुंजें मी ऐसें । जरी बोलशील । तुज झुंजवील । प्रकृति ती ॥२२७१॥  
 ईश्वर तो स्वामी । 'नियंता संपूर्ण । करी नियमन । प्रकृतीचें ॥२२७२॥  
 आणि प्रकृति ती । इंद्रियांकडोन । कमें करवोन । सुखें घेई ॥२२७३॥  
 करणें न करणें । दोन्ही हि सर्वथा । प्रकृतीच्या माथां । ठेवोनियां ॥२२७४॥  
 मग प्रकृति हि । जयाच्या आधीन । जो का नारायण । हृदयस्थ ॥२२७५॥

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।

तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥६२॥

तया सर्वभावे । काया वाचा मन । आणिक मीपण । समर्पोनि ॥२२७६॥  
 महार्णवां जैसें । 'रिगे गंगातोय । शरण तूं जाय । तैशा रीती ॥२२७७॥  
 मग तयाचिया । प्रसादेकरोन । सर्व हि शमोन । जाय जेथें ॥२२७८॥  
 ऐशा शांतिरूप । 'प्रमदेच्या छंदें । स्वरूपां स्वानंदें । रमशील ॥२२७९॥  
 विश्रांतीसी जेथें । लाभते विश्रांति । जेथोनि उत्पत्ति । उत्पत्तीची ॥२२८०॥  
 अनुभूति ती हि । स्वभावे पांडवा । जया अनुभवा । अनुभवी ॥२२८१॥  
 आपुल्या त्या आत्म-पदाचा अक्षय । होशील तूं 'राय । देव म्हणे ॥२२८२॥

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया ।

विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥६३॥

सर्व वाङ्मयाचें । गीतानाम सार । जाण हें साचार । सुविख्यात ॥२२८३॥  
 जयाचिया योगें । आत्मा हें चि रत्न । होतसे स्वाधीन । धनंजया ॥२२८४॥  
 जयाचें महत्त्व । वेदान्तें 'वानावें । ज्ञान ऐशा नावें । सुप्रसिद्ध ॥२२८५॥  
 म्हणोनियां तया । शास्त्रामी लाभली । शुद्ध कीर्ति भली । जगामार्जी ॥२२८६॥  
 पदार्थ डोळस । जे का 'बुध्यादिक । ते हि ज्याचे देख । कवडसे ॥२२८७॥  
 जयाचा उदय । होतां दिसें मी हि । जो मी असें पाहीं । सर्वद्रष्टा ॥२२८८॥  
 मज गूढाचें हि । जें का गुप्त धन । तें हें आत्मज्ञान । जाण पार्था ॥२२८९॥

सखा माझा भक्त । एक तूं म्हणोन । ठेवूं तें चोरोन । कैसैं येथें ? ॥२२९०॥  
 ह्या चि लागीं आज । माझें गुप्त धन । प्रसन्न होवोन । दिलें तुज ॥२२९१॥  
 बाळकाच्या मोहें । भुलोनियां माता । तथा 'बाबापुता' । म्हणे जैसी ॥२२९२॥  
 तैसें तुझें प्रेम । बोलवितें मज । देवोनि सहज । आत्म-धन ॥२२९३॥  
 आकाशासी जैसैं । गाळोनियां ध्यावें । नातरी सोलावें । अमृतातें ॥२२९४॥  
 किंवा दिव्यासी च । 'दिव्य करावया । जैसैं धनंजया । लावावें गा ॥२२९५॥  
 जयाचिया अंग- । प्रकाशेंकरोन । दिसूं शके कण । पाताळींचा ॥२२९६॥  
 तथा सूर्याच्या हि । नेत्रामार्जी जाण । जैसैं का अंजन । घालावें गा ॥२२९७॥  
 सर्वांपरी तैसें । विचारोनि भलें । हित म्यां बोलिलें । सर्वज्ञें हि ॥२२९८॥  
 आतां तूं हि भला । करोनि विचार । करावें साचार । आवडे तें ॥२२९९॥  
 देवाचे हे बोल । ऐकोनियां पार्थ । न बोलतां स्वस्थ । ठेला तेथें ॥२३००॥  
 दखोनि तें म्हणे । वैकुण्ठ-नायक । भला 'अवंचक । होसी पार्था ॥२३०१॥  
 असोनि भुकेला । तृप्त झालों अन्न । वाढत्यासी म्हणे । वरिवरी ॥२३०२॥  
 तरी भूकबाधा । सोडी ना तयास । वरी घडे दोष । 'वंचनाचा ॥२३०३॥  
 तैसा भेटतां हि । सर्वज्ञ श्रीगुरु । कैसा प्रश्न करूं । तयालागीं ॥२३०४॥  
 धरोनियां भीड । ऐसैं म्हणे कोणी । तरी फसवोनि । आपणासी ॥२३०५॥  
 आत्मवंचनाचा । वरी जोडी दोष । सत्यस्वरूपास । मुकानियां ॥२३०६॥  
 परी नव्हे तैसें । तुझें स्वस्थपण । धरोनियां मौन । बोलसी तूं ॥२३०७॥  
 ज्ञान तें सारांशें । सांगावें फिरोनि । 'आशय हा मनीं । वसे तुझ्या ॥२३०८॥  
 तेथ म्हणे पार्थ । होसी कृपावंत । भलें माझें चित्त । जाणसी तूं ॥२३०९॥  
 ऐसैं म्हणों तरी । देवा तुजविण । ज्ञाता दुजा कोण । असे काई ? ॥२३१०॥  
 स्वभावे तूं ज्ञाता । एक चि 'साचार । ज्ञेय चराचर । आघवें हें ॥२३११॥  
 सांगें लागे काय । करावें वर्णन । 'भास्कर म्हणोनः । भास्कराचें ? ॥२३१२॥  
 बोल हे ऐकोन । कृष्णदेव म्हणे । पार्था, हें वानणें । 'कासयासी ? ॥२३१३॥  
 सांगूं जें जें आम्ही । आकळे तें तुज । वानणें सहज । हें चि आम्हां ॥२३१४॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।

इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥६४॥

तरी पुनरपि । पार्था सावधान । निर्मळ वचन । ऐक माझें ॥२३१५॥  
 श्राव्य म्हणोनियां । एकावें हें कानीं । वाच्य हें म्हणोनि । बोलावें गा ॥२३१६॥  
 नव्हे ऐसें; परी । अर्जुना, साचार । भाग्य तुझें थोर । निःसंदेह ॥२३१७॥  
 चातकाची तृष्णा । भागावी म्हणोन । पाण्यातें धरोन । ठेवी नभ ॥२३१८॥  
 फुटे कासवीच्या । दृष्टीसी हि पान्हा । तैसी च अर्जुना । स्थिति येथें ॥२३१९॥  
 घडूं शके ना जो । जेथें व्यवहार । मिळावें साचार । फळ त्याचें ॥२३२०॥  
 अलभ्य हा लाभ । तरी च घडेल । जरी 'सानुकूल । होय दैव ॥२३२१॥  
 ऐक्याचिया घरीं । भोगावें हें मार । सारोनियां दूर । द्वैतभाव ॥२३२२॥  
 आणि जें 'निर्व्याज । प्रेमाचा विषय । आत्मा चि तो होय । ऐसें जाण ॥२३२३॥  
 आपुलें चि रूप । दिसावें म्हणोन । काढावें पुसोन । आरशातें ॥२३२४॥  
 तैसें स्वानंदार्थ । बोलतसें येथ । करोनि निमित्त । पार्था तुझें ॥२३२५॥  
 तुझ्या माझ्या ठायीं । मी तूं ऐसें द्वैत । नसे चि निभ्रांत । भक्तराजा ॥२३२६॥  
 म्हणोनि हें माझ्या । अंतरींचें गुज । सांगतसें तुज । जीवालागीं ॥२३२७॥  
 एकनिष्ठतेचें । अर्जुना हें जाण । स्वभावं 'व्यसन । असे मज ॥२३२८॥  
 आपुलें सर्वस्व । करी समर्पण । जळातें भुलोन । जातां मीठ ॥२३२९॥  
 मग जळ तें हि । धरी चि ना लाज । मिठाशीं सहज । एक व्हाया ॥२३३०॥  
 तैसा एकनिष्ठ । होसी माझा भक्त । शिवे चि ना द्वैत । तुजलागीं ॥२३३१॥  
 तरी आतां पार्था । तुझियापासोन । 'गौप्य हें चोरांन । ठेवूं कैसें ? ॥२३३२॥  
 घडे जेथें सर्व । गूढांचें दर्शन । ऐसें गूढाहून । गूढ जें का ॥२३३३॥  
 सांगेन तें माझें । निर्मळ वचन । चांग अवधान । देई पार्था ॥२३३४॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।

सामेवैष्णसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मं ॥६५॥

मज व्यापकातें । करीं तूं विषय । सर्व अंतर्बाह्य । व्यवहारीं ॥२३३५॥

जैसा आकाशासी । मिळोनियां राहे । पवन तो पाहें । सर्वांगानीं ॥२३३६॥  
 तैसीं घडतील । कर्में जीं हातून । करीं तीं अर्पण । माझ्या ठायीं ॥२३३७॥  
 रहावया करीं । मी च एक स्थान । मानसालागोन । आपुलिया ॥२३३८॥  
 भरोनियां ठेवीं । आपुले तूं कान । मद्गुण-श्रवण । करोनियां ॥२३३९॥  
 पार्था मूर्तिमंत । मी च जे का संत । निर्मळ अत्यंत । आत्मज्ञानें ॥२३४०॥  
 तयांचिया ठायीं । जडो दृष्टि तैसीः । प्रेम-पार्त्रीं जैसी । कामुकाची ॥२३४१॥  
 सर्व विश्वाचें मी । विश्वातींचें स्थान । परम पावन । नामें माझीं ॥२३४२॥  
 तयांचा उच्चार । गर्जो तुझी वाणी । जीवन मानोनि । मजलागीं ॥२३४३॥  
 हातांचें करणें । पायांचें चालणें । मज चि कारणें । होवो तुझें ॥२३४४॥  
 अर्जुना स्वहित । किंवा परहित । साधिसील येथ । जें जें कांहीं ॥२३४५॥  
 यज्ञ तो म्हणोन । तेंणें यज्ञें देख । होई तूं याज्ञिक । भला माझा ॥२३४६॥  
 एकैक हें किती । सांगू तुजलागीं । बाणवोनि अंगीं । सेवकत्व ॥२३४७॥  
 विश्व हें मद्रूप । मानोनि पांडवा । करीं माझी सेवा । सर्वभावे ॥२३४८॥  
 मग भूतद्रेष । सर्वथा लोपोन । सर्वत्र वंदन । करावया ॥२३४९॥  
 मी च उरें एक । तेव्हां प्राप्त होय । परम आश्रय । माझा तुज ॥२३५०॥  
 ऐशापरी विश्वा । नुरोनियां तिजें । एकान्त सहजें । आम्हांतुम्हां ॥२३५१॥  
 मी तुज भोगीन । भोगिसी तूं मातें । वाढेल आयतें । सुख नित्य ॥२३५२॥  
 आलें होतें आड । विश्व जें का तिजें । ज्ञानें तें सहजें । लोपे जेव्हां ॥२३५३॥  
 तेव्हां तूं हि मी च । ज्ञान हें होतां च । पावसील साच । अंतीं मातें ॥२३५४॥  
 बिंबीं प्रतिबिंब । होय जेव्हां एक । आटतां उदक । तडागाचें ॥२३५५॥  
 तेव्हां करी कोण । तेथें प्रतिबंध । तैसा चि अभेद । आम्हांतुम्हां ॥२३५६॥  
 सागरा कळोळ । अंबरा पवन । मिळो जातां कोण । येई आड ? ॥२३५७॥  
 म्हणोनियां जीव । देहोपाधिग्रस्त । मी तूं ऐसें द्रैत । तोंवरी च ॥२३५८॥  
 मग देहभाव । नष्ट होतां साच । धनंजया मी च । होसील तूं ॥२३५९॥  
 येथें मनीं किंतु । नको धरूं कांहीं । प्रचीत तूं घेई । स्वानुभवे ॥२३६०॥

जरी माझे बोल । होतील 'अन्यथा । तरी वाहें पार्था । आण तुझी ॥२३६१॥  
 वाहें तुझी आण । ऐमें जें मी म्हणें । शपथ ती घेणें । माझी च मी ॥२३६२॥  
 प्रीतीची ही जात । ऐमी अमे जाण । लज्जेचें स्मरण । होऊं नदी ॥२३६३॥  
 ए-हवीं ज्या मज । निःश्रयेंच ऐमें । वेद वर्णितमे । निःशंभेह ॥२३६४॥  
 ज्या माझा आश्रय । लाभला म्हणोन । आलें साचपण । विश्वाभासा ॥२३६५॥  
 कळिकाळतें हि । जिकितें जें साचें । सामर्थ्य आझेचें । ऐमें ज्याच्या ॥२३६६॥  
 सत्यमंकल्पी तो । देव मी निभ्रांत । सार्धीं विश्वहित । निरंतर ॥२३६७॥  
 मग कामयासी । आग्रहेंकरोन । वहावया आण । हवी ऐसी ? ॥२३६८॥  
 परी देवत्वाचें । सांडिलें मीं 'व्रीद । मज तुझा 'वेध । म्हणोनियां ॥२३६९॥  
 तुझ्या वेधें झालों । जीवसा अपूर्ण । माझ्या वेधें पूर्ण । झालासी तूं ॥२३७०॥  
 आपुली च आण । वाहे जैसा राजा । आपुलिया काजा । तैमें चि हें ॥२३७१॥  
 ऐकोनि हे बोल । पार्थ म्हणे देवें । ऐमें न बोलावें । अचाट हें ॥२३७२॥  
 एक तुझ्या नामें । कार्य-सिद्धि होय । ऐसा चि प्रत्यय । असे माझा ॥२३७३॥  
 ऐमें असोनि हि । स्वैमुखें सांगसी । वरी 'भाक देसी । आपुली तूं ॥२३७४॥  
 लीलाविनोदासी । तुझ्या नाहीं पार । ऐसा तूं उदार । कृपानिधे ॥२३७५॥  
 एक चि तो पुरे । रवीचा किरण । सारें पद्म-वन । विकासाया ॥२३७६॥  
 ऐमें असोनि हि । जगासी आदित्य । देतसे तो नित्य । सर्व तेज ॥२३७७॥  
 शांतवोनि पृथ्वी । भरितो 'अर्णव । करोनि वर्षाव । मेघराज ॥२३७८॥  
 तेथ चातक तो । केवळ निमित्त । तैसा च मी येथ । झालों देवा ॥२३७९॥  
 प्रभो उदारा, तूं । मज उपदेश । करोनि जगास । उद्धरिलें ! ॥२३८०॥  
 तंव म्हणे देव । पुरे हें म्त्वन । काय 'प्रयोजन । असे त्याचें ? ॥२३८१॥  
 ज्ञान-माधनें ह्या । मुनिश्रयें पार्था । माझी सायुज्यता । पावसील ॥२३८२॥  
 सिंधूमार्जां पडे । 'सैधवाचा कण । न लागतां क्षण । विरे जैसा ॥२३८३॥  
 तथा कणालागीं । नमे चि कारण । कणपणें भिन्न । उरावया ॥२३८४॥  
 तैसें सर्वां ठायीं । मातें चि भजतां । आघवें मी होतां । सुनिश्रयें ॥२३८५॥

अहंता निःशेष । लोपोनि तत्त्वतां । मी च होसी पार्था । स्वभावे तूं ॥२३८६॥  
 कर्मापासोनियां । मत्प्राप्तीपर्यंत । उपाय हे स्पष्ट । सांगितले ॥२३८७॥  
 प्रसन्नता माझी । लाधेल सर्वत्र । मज कर्ममात्र । समर्पितां ॥२३८८॥  
 मग प्रसादे त्या । होवोनियां ज्ञानी । जाशील मिळोनि । माझ्या रूपीं ॥२३८९॥  
 साध्यसाधनाची । नुरोनियां वार्ता । मग 'कृतार्थता । पावमील ॥२३९०॥  
 सर्वात्मका देवा । मज समर्पिळीं । पार्था तूं आपुर्लीं । सर्व कर्मे ॥२३९१॥  
 तेणें योगें माझा । 'प्रसाद हा तुज । लाधलासे आज । भक्तराजा ॥२३९२॥  
 अगा, पाहूं जातां । हें तों रणागिण । येथें ज्ञान कोण । उपदेशी ? ॥२३९३॥  
 परी प्रसादाच्या । बळें धनंजया । कैसा भाळोनियां । गेलों तुज ॥२३९४॥  
 जेणें होय मज । एकाचें दर्शन । लोपोनि अज्ञान । 'सप्रपंच ॥२३९५॥  
 तें हें गीतारूप । ज्ञान सयुक्तिक । नानापरी देख । सांगितलें ॥२३९६॥  
 ज्ञानबळें तेणें । सांडीं तूं अज्ञान । मूळ जें कारण । धर्माधर्मा ॥२३९७॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६॥

स्वली जैसी । आशा दुःखराशि । किंवा निंदा जैसी । पातकाते ॥२३९८॥  
 असो हें कीं जैसें । दुर्दैवाच्या पोटीं । दैन्य तें किरीटी । जन्म पावे ॥२३९९॥  
 तैसें पार्था स्वर्ग-नरक-सूचक । 'व्यालें धर्मादिक । अज्ञान जें ॥२४००॥  
 तथा अज्ञानाते । सांडीं तूं निःशेष । येणें चि निर्दोष । आत्म-ज्ञानें ॥२४०१॥  
 घेवोनियां दोर । आपुलिया हातीं । 'सर्पाकारभ्रांति । सांडावी गा ॥२४०२॥  
 नातरी सांडावा । निद्रा-त्यागें सारा । प्रपंच-पसारा । स्वप्रांतील ॥२४०३॥  
 काविळीपासोन । सुटतां आपण । चंद्र 'पीत-वर्ण । दिसे काय ? ॥२४०४॥  
 नातरी मुखाचें । संपे कडूपण । देहाते सोडोन । जातां व्याधि ॥२४०५॥  
 मावळतां सूर्य । आटतें सकळ । जैसें मृग-जळ । धनंजया ॥२४०६॥  
 नातरी समूळ । काष्ठ चि त्यजोन । अमीतें सांडोन । जावें जैसें ॥२४०७॥  
 तैसें धर्माधर्म । दावितें जें मूळ । अज्ञान सकळ । त्यजोनि तें ॥२४०८॥

१ पूर्ण समाधान. २ कृपा. ३ प्रपंचासह. ४ जन्म विला. ५ सर्प आहे असा भ्रम. ६ पिवळा.

सर्व धर्मातीत । स्वभावे निभ्रांत । होई नित्यमुक्त । भक्तराया ॥२४०९॥  
 जातां हारपोन । निद्रेसवे स्वप्न । उरतो आपण । एकले च ॥२४१०॥  
 समूळ अज्ञान । तैसें हारपतां । राहे स्वभावतां । मी चि एक ॥२४११॥  
 मग मी जो एक । तयाविण पाहीं । दुजे नुरे काहीं । भिन्नाभिन्न ॥२४१२॥  
 तरी सोऽहं बोधे । धनंजया तूं हि । होई माझ्या ठायीं । एकरूप ॥२४१३॥  
 अगा आपणासी । न मानितां भिन्न । माझे एकपण । जाणावे जें ॥२४१४॥  
 तयासी च नांव । सुनिश्चये जाण । अनन्य शरण । येणें मज ॥२४१५॥  
 घटाचिया नाशें । घटाकाश जैसें । स्वभावे प्रवेशे । महाकाशीं ॥२४१६॥  
 सर्वभावे पार्था । अनन्य होवोन । तैसा तूं शरण । येई मज ॥२४१७॥  
 सुवर्णाचा मणि । जैसा सुवर्णासी । नातरी पाण्यासी । जैसी लाट ॥२४१८॥  
 तैसा मज पार्था । येई तूं शरण । सर्वथा होऊन । एकरूप ॥२४१९॥  
 ये-हवीं शरण । आला वडवाभि । जैसा सामावोनि । महार्णवीं ॥२४२०॥  
 परी अब्धीहून । राहोनि तो भिन्न । तयासी जाळोन । टाकूं पाहे ॥२४२१॥  
 तैसें उठूं नेदी । पार्था भिन्नपण । होई तूं संपूर्ण । एकरूप ॥२४२२॥  
 मज हि शरण । रिघोनि स्वभावे । मागुतें उरावे । जीववे चि ॥२४२३॥  
 ऐमें बोलावया । बुद्धि सरसावे । तरी धिःकारावे । तियेलागीं ॥२४२४॥  
 दासीलागीं जरी । राजा अंगीकारी । तरी बरोबरी । पावे त्याची ॥२४२५॥  
 मग मी विश्वेश । स्वभावे भेटोन । तुटे ना बंधन । जीवत्वाचे ॥२४२६॥  
 ऐसे हीन बोल । बोले जरी कोणी । नको चि ते कार्नी । येऊं देऊं ॥२४२७॥  
 म्हणोनि मद्रूप । होवोनि पांडवा । करणें जी सेवा । साच माझी ॥२४२८॥  
 सहज ती भक्ति । करोनियां प्राप्त । सार्धी परमार्थ । येणें ज्ञानें ॥२४२९॥  
 मग ताकांतून । काढिलें जें लोणी । जाईना मिळोनि । पुन्हां ताकीं ॥२४३०॥  
 परिसाच्या स्पर्शें । लोहाचें सुवर्ण । होतां तें गंजोन । जाई काय ? ॥२४३१॥  
 काष्ठापासोनियां । प्रकटला अग्नि । राहे ना कोंडोनि । पुन्हां काष्ठीं ॥२४३२॥  
 तैसें अद्रयत्वे । अहंता सांडोन । येतां चि शरण । मजलागीं ॥२४३३॥

मग धर्माधर्म- बंधनापासोन । न लागतां क्षण । मुक्त होसी ॥२४३४॥  
 अर्जुना भास्कर । देखे का अंधार । प्रबोधीं गोचर । नोहे स्वप्न ॥२४३५॥  
 तैसा तूं मद्रूप । होतां मी जो एक । सर्व सर्वात्मक । सर्वातीत ॥२४३६॥  
 तयाविण दुजें । उरावया कांहीं । कारण चि नाहीं । पाहूं जातां ॥२४३७॥  
 तुझे पापपुण्य । मी च पंडु-सुता । होईन सर्वथा । ऐशा रीती ॥२४३८॥  
 म्हणोनि तूं मनीं । धरोनि अहंता । धर्माधर्मचिंता । नको वाहूं ॥२४३९॥  
 पडतांक्षणीं च । सलिलीं लवण । सलिल होवोन । राहे जैसें ॥२४४०॥  
 तैसें येतां मज । अनन्यशरण । सर्व हि होईन । मी च तुझे ॥२४४१॥  
 मानणें आपणां । मजहून भिन्न । होय जें कारण । सर्वबंधा ॥२४४२॥  
 तथा द्वैतभाव-। रूपी पापांतून । सुटशील ज्ञान । होतां माझे ॥२४४३॥  
 माझ्या ज्ञानें द्वैत । लोपतां निभ्रांत । अर्जुना तूं मुक्त । स्वभावे चि ॥२४४४॥  
 करोनियां घेई । ऐसें माझे ज्ञान । तुज सोडवीन । लवलाहे ॥२४४५॥  
 म्हणोनि निश्चित । शरण ये साच । मज एकासी च । जाणोनियां ॥२४४६॥  
 सर्वदृष्टींचिया । योगें जो डोळस । सर्व देशीं वास । असे ज्याचा ॥२४४७॥  
 सर्वरूपांचिया । योगें रूपवंत । देव तो श्रीकांत । बोलिला हें ॥२४४८॥  
 सांवळ्या श्रीकृष्णें । मग सकंकण । प्रेमें पसरोन । स्वय बाहु ॥२४४९॥  
 भक्तराज पार्था । दिलें आलिंगन । अनन्य शरण । आला जो का ॥२४५०॥  
 न पावतां जेथें । परतली वाचा । लागे ना बुद्धीचा । पाड जेथें ॥२४५१॥  
 बोला-बुद्धीसी हि । ह्यापरी अटक । ऐसें कांहीं एक । असे जें का ॥२४५२॥  
 तें चि पार्थालागीं । आलिंगनमिषें । दिलें हृषीकेशें । एकाएकीं ॥२४५३॥  
 हृदया हृदय । मिळोनियां गेलें । एक तें उरलें । तन्मयत्व ! ॥२४५४॥  
 देवें आपुलिया । अंतरींचें ज्ञान । अर्जुनालागोन । दिलें ऐसें ॥२४५५॥  
 आपणासारिखें । अर्जुनासी केलें । देहद्वैत भलें । राखोनियां ॥२४५६॥  
 जैसा दीपें दीप । लाविला प्रकाशे । आलिंगन तैसें । तयांचें तें ॥२४५७॥  
 आपणासारिखा । देवें केला पार्थ । देव-भक्त-द्वैत । न मोडितां ॥२४५८॥



तेव्हां पार्थासी जो । स्वानंदाचा पूर । लोटला अपार । एकाएकीं ॥२४५९॥  
 तयामार्जीं देव । बुडोनियां ठेला । थोर जरी झाला । सर्वव्यापी ॥२४६०॥  
 सिंधूलागीं सिंधु । भेटावया आला । भेटतां चि झाला । दुणा जैसा ॥२४६१॥  
 मग वाढूं लागे । आकाशापर्यंत । तैसें झालें तेथ । आर्लिगनीं ॥२४६२॥  
 स्वानंदैकरस । वाढला अपार । नावरे साचार । दोघांसी हि ॥२४६३॥  
 तया दोघांचें तें । एकत्र मिळणें । जाणावें कवणें । यथार्थत्वे ? ॥२४६४॥  
 काय सांगूं फार । नारायणें देवें । कांदलें आघवें । चराचर ! ॥२४६५॥  
 सर्वाधिकाराचें । स्थान जें पवित्र । एक मूळमूत्र । वेदांचें जें ॥२४६६॥  
 तें हें गीताशास्त्र । ऐशापरी येथ । श्रीकृष्णें प्रकट । केलें देखा ॥२४६७॥  
 अहो, येथें गीता । वेदां कैसी मूळ । विस्मयें म्हणाल । ऐसें जरी २४६८॥  
 तरी उपपत्ति । एका सुविख्यात । आशंकारहित । व्हाल जेणें ॥२४६९॥  
 जयाच्या \*निःश्वर्सीं । जन्मा आले वेद । तो हा सत्यसंध । भगवंत ॥२४७०॥  
 आपुलिया मुखें । प्रतिज्ञापूर्वक । शास्त्र अलौकिक । बोलिला हें ॥२४७१॥  
 म्हणोनियां वेदां । गीता मूळभूत । बोलणें उचित । होय ऐसें ॥२४७२॥  
 आणिक हि एक । येथें उपपत्ति । ती हि तुम्हांप्रति । सांगूं आतां ॥२४७३॥  
 न पावतां नाश । स्वरूपें साचार । विलीन विस्तार । जेथें ज्याचा ॥२४७४॥  
 तें चि त्याचें बीज । ऐसें म्हणों येतें । बीजीं सामावतें । झाड जैसें ॥२४७५॥  
 कांडत्रयात्मक । शब्दब्रह्म तैसें । सूक्ष्मरूपें वसे । गीतेमार्जीं ॥२४७६॥  
 म्हणोनि श्रीगीता । गमे वेद-बीज । कोणा हि सहज । मानेल हें ॥२४७७॥  
 अलंकार-रत्नीं । शोभतें सर्वांग । तैसे तिन्ही भाग । वेदांचे ते ॥२४७८॥  
 गीतेमार्जीं भले । उमटले जाणा । कर्म उपासना । आणि ज्ञान ॥२४७९॥  
 आतां काण्ड कोठें । कोणते तें स्पष्ट । डोळां दिसे नीट । ऐसें दावूं ॥२४८०॥  
 प्रथम अध्ययीं । प्रस्ताव तो साचा । शास्त्रप्रवृत्तीचा । गीतेचिया ॥२४८१॥  
 द्वितीय अध्ययीं । सांख्यतत्त्व भलें । सारांशें दाविलें । विवरोनि ॥२४८२॥  
 ज्ञानप्रधान हें । असे सांख्यशास्त्र । सर्वथा स्वतंत्र । मोक्षदानी ॥२४८३॥

एवढी च येथें। सूत्ररूपी खुणा । दाखविली जाणा । अध्यायीं ह्या ॥२४८४॥  
 मग अज्ञानें जे । जीव झाले बद्ध । त्यां मोक्षपद । लाभावया ॥२४८५॥  
 तृतीय अध्यायीं । देखा कर्म-मार्ग । आरंभ जो चांग । साधनेचा ॥२४८६॥  
 देह-अहंकारें । सर्वथा ते बद्ध । म्हणोनि प्रमाद । न करितां ॥२४८७॥  
 काम्य-निषिद्धातें । सांडोनियां येथ । त्यांनीं विहित । आचारावें ॥२४८८॥  
 नित्य शुद्धभावे । कर्म आचारावें । निर्णय जो देवें । केला ऐसा २४८९॥  
 कर्मकाण्ड भलें । तें चि जाणा येथ । तृतीयाध्यायांत । सांगितलें ॥२४९०॥  
 नित्य-नैमित्तिक । कर्में आवश्यक । होतील मोचक । कैशा रीती ॥२४९१॥  
 अपेक्षिती ऐसें । मुमुक्षु जे कोणी । गेले ओलांडोनि । बद्धावस्था ॥२४९२॥  
 त्यांसाठीं देवें । ब्रह्मार्पणयोग । सांगितला चांग । विवरोंनि ॥ २४९३॥  
 देहवाचामनें । नित्यादिक येथ । जैसें जें विहित । निपजेल ॥२४९४॥  
 ईश्वरासाठीं च । सर्व तें करावें । ऐसें वासुदेवें । निवेदिलें ॥२४९५॥  
 कर्मयोगें कैसा । भजावा ईश्वर । बरवा विचार । बोलिला हा ॥२४९६॥  
 चतुर्थ अध्यायीं । अखेरीपासोन । ऐसें विवरण । आरंभिलें ॥२४९७॥  
 तें चि विश्वरूप-। दर्शनापर्यंत । आठ अध्यायांत । संपविलें ॥२४९८॥  
 कर्में कैसा ईश । भजावा साचार । बोलिला प्रकार । हा जो साच ॥२४९९॥  
 तें चि गीतेमार्जी । उपासनाकाण्ड । दावितों उघड । बोलोनि हें ॥२५००॥  
 भक्तीनें च ईश-। प्रसाद लाभोन । संप्रदायखूण । श्रीगुरूची ॥२५०१॥  
 जें का सत्यज्ञान । कोंवळें अद्रय । त्याचा प्रत्यय । येऊं लागे ॥२५०२॥  
 अंतरीं तें ज्ञान । ठसावें म्हणोन । कृपाळु होवोन । भगवंतें ॥२५०३॥  
 'अद्वैष्टादि' आणि । 'अमानित्वादिक' । लक्षणें प्रमुख । सांगितलीं ॥२५०४॥  
 म्हणोनि अध्याय । बारावा हि भला । सहजें गणिला । ज्ञानकाण्डीं ॥२५०५॥  
 ह्यापरी बाराव्या । अध्यायापासोन । अध्याय धरोन । पंधरावा ॥२५०६॥  
 चोहोंमार्जी 'ज्ञान-। फलपाकसिद्धि । वर्णिली क्षरादि । निरूपणें ॥२५०७॥  
 ऐशापरी चारी । अध्यायांमाझारीं । श्रीहरि विवरी । ज्ञानकाण्ड ॥२५०८॥

म्हणोनि ही गीता । साजिरी श्रुति च । निरोपिते साच । काण्डत्रय ॥२५०९॥  
 गीताश्लोकरूपी । रत्नांची भूषणें । लेइलीं श्रुतीनें । ऐसें जाणा ॥२५१०॥  
 आपुलें जीवन । करावें सफळ । साधोनियां फळ । मोक्षरूप ॥२५११॥  
 जीवालागीं सांगे । काण्डत्रयात्मक । श्रुति हें चि एक । गर्जोनियां ॥२५१२॥  
 तथा मोक्षाचें जें । साधन हें ज्ञान । तेथें प्रतिदिन । वैर ज्याचें ॥२५१३॥  
 दोष ते दंभादि । अज्ञानजनित । षोडशाध्यायांत । सांगितले ॥२५१४॥  
 तथातें जिंकावें । सांगाती तो एक । घेवोनि रक्षक । शास्त्ररूप ॥२५१५॥  
 सप्तदशाध्यायीं । ऐसा चि संदेश । देई हृषीकेश । सर्वालागीं ॥२५१६॥  
 ऐसें सतरा हि । अध्यायांत साच । केलें श्रुतीचें च । निरूपण ॥२५१७॥  
 तथा सर्वाचा हि । जेथें तात्पर्यार्थ । साकल्यें यथार्थ । सांगितला ॥२५१८॥  
 तो हा अठरावा । सर्व अध्यायांचा । कळस चि साचा । देखा येथें ॥२५१९॥  
 श्रीमद्भगवद्गीता-। नामें हा प्रबंध । मूर्तिमंत वेद । ऐसें जाणा ॥२५२०॥  
 सर्व ज्ञानाचा हा । महार्णव भला । औदार्यें आगळा । वेदांहनि ॥२५२१॥  
 होय जरी वेद । स्वभावे संपन्न । तरी तो कृपण । ऐसें वाटे ॥२५२२॥  
 ब्रह्मक्षत्रियादि । तीन वर्णासी च । अधिकार साच । असे तेथें ॥२५२३॥  
 परी नारी शूद्र । अंत्यजादि योनि । लागे ना तो कानीं । तथाचिया ॥२५२४॥  
 म्हणोनि तें न्यून । फेडावयालागीं । प्रकटला जर्गी । गीतारूपें ॥२५२५॥  
 भवदुःखांतून । सुटावया आतां । कोणी हि श्रीगीता । उपासावी ॥२५२६॥  
 श्रवणाच्या मिषें । गीता शिरे कानीं । अर्थ-रूपें मनीं । प्रवेशे ही ॥२५२७॥  
 जपाचिया मिषें । मुखान्तरीं राहे । सुसेव्य ही आहे । सर्वासी च ॥२५२८॥  
 जो का उपासक । गीतापाठ जाणें । संगतीं राहणें । तथाचिया ॥२५२९॥  
 किंवा गीताग्रंथ । लिहोनियां शुद्ध । ठेवणें सन्निध । आपुलिया ॥२५३०॥  
 ऐशा ऐशा मिषें । गीतारूपें वेद । कैवल्याच्या शुद्ध । सुखाचें च ॥२५३१॥  
 घालीतसे सर्वा । सदा सदावर्त । येथें बाजारांत । संसाराच्या ॥२५३२॥  
 अंतरिक्षामार्जी । माराया भरारी । किंवा भूमीवरी । रहायासी ॥२५३३॥

सूर्य-प्रकाशाते । वावरावयास । आवार आकाश । असे जैसे ॥२५३४॥  
 तैसें निवडी ना । उत्तम अधम । सदा पाहे सम । सेवकांसी ॥२५३५॥  
 एक चि 'कैवल्य । देवोनि निभ्रांत । गीता करी शांत । सर्वांसी च ॥२५३६॥  
 ह्यापरी मागील । 'आक्षेपा भिवोन । पोटीं प्रवेशून । गीतेचिया ॥२५३७॥  
 सर्वांसी 'सुसेव्य । म्हणोनि गोमटी । वाढविली कीर्ति । वेदें आतां ॥२५३८॥  
 सुसेव्य जो वेद । ती ही मूर्त गीता । भगवंतें पार्था । सांगितली ॥२५३९॥  
 वासराच्या लोभें । दूध देईं गाय । परी होय सोय । सर्वांची च ॥२५४०॥  
 तैसा अर्जुनाच्या । निमित्तें साचार । जगाचा उद्धार । झाला आज ॥२५४१॥  
 चातकाच्यासाठीं । होय मेघ-वृष्टि । तेथ सर्व सृष्टि । शांत होय ॥२५४२॥  
 पद्मिनीचा भाव । अनन्य पाहोनि । उगवे 'तरणी । वेळोवेळां ॥२५४३॥  
 तेथ त्रैलोक्याच्या । दृष्टीसी आगळा । सुखाचा सोहळा । होय जैसा ॥२५४४॥  
 तैसें पार्थाचिया । निमित्तेंकरोन । गीता प्रकटोन । भगवंतें ॥२५४५॥  
 संसाराएवढें । थोर ओझें साचें । टाकिलें जगाचें । फेडोनियां ॥२५४६॥  
 सर्वशास्त्ररूपी । रत्नाचें सुतेज । अखण्ड सहज । 'प्रकटिता ॥२५४७॥  
 नव्हे का श्रीकान्त-। मुख-आकाशींचा । सूर्य चि हा साचा । गीतारूप ! २५४८  
 पावन तें कुळ । ज्या कुळीं जन्मून । ज्ञाना ह्या अर्जुन । पात्र झाला ॥२५४९॥  
 धन्य तयें गीता-। शास्त्राचें सुंदर । बांधिलें आवार । जगालागीं ॥२५५०॥  
 असो आर्लिंगनें । भगवंतीं भला । मिसळोनि गेला । होता पार्थ ॥२५५१॥  
 परी तयालागीं । सद्गुरु श्रीकान्तें । आणिलें मागुतें । भानावरी ॥२५५२॥  
 मग म्हणे गीता-। शास्त्र हें पांडवा । सांगें तुझ्या जीवा । मानलें का ? ॥२५५३॥  
 पार्थ म्हणे कृपा । आपुली म्हणोन । शास्त्र हें गहन । आकळलें ॥२५५४॥  
 विरळा च भोग । जोडिल्याचा घडे । दैवें ठेवा जोडे । जरी पार्था ॥२५५५॥  
 \*क्षीरसागराचें । सायासेंकरोन । करोनि मंथन । देवीं-दैत्यां ॥२५५६॥  
 मेळविलें फळ । अमृतासमान । परी तें जतन । नाहीं केलें ॥२५५७॥  
 म्हणोनि तें झालें । अमृत असोन । मृत्यूसी कारण । असुरांच्या ॥२५५८॥

लाधलें निधान । भोगूं नेणे येथ । तरी विपरीत । ऐसें होय ॥२५५९॥  
 भूपति \*नहुष । स्वर्गाधीश झाला । परी भांवावला । आचरणीं ॥२५६०॥  
 म्हणोनि सर्पत्व । पावला तो राय । नेणसी हें काय । धनंजया ? ॥२५६१॥  
 थोर पुण्यें आज । झालासी तूं पात्र । शास्त्र हें पवित्र । ऐकावया ॥२५६२॥  
 तरी स्वीकारोनि । संप्रदाय ह्याचा । शास्त्रार्थ हा साचा । अनुष्ठीं हो ॥२५६३॥  
 गुरु-संप्रदाय । स्वीकारिल्याविण । ह्याचें अनुष्ठान । करूं जासी ॥२५६४॥  
 परिणाम तरी । होईल अर्जुना । अमृत-मंथना । सारिखा गा ॥२५६५॥  
 गोमटी दुधाळू । देवें जोडे गाय । तरी काय होय । तेवढ्यानें ? ॥२५६६॥  
 कैसी तिची धार । काढावी हें कळे । तरी च तें मिळे । दूध तिचें ॥२५६७॥  
 तैसा श्रीसद्गुरु । होवोनि प्रसन्न । शिष्यासी संपूर्ण । विद्या देई ॥२५६८॥  
 तरी संप्रदायें । उपासिली जाय । तरी च ती होय । फलरूप ॥२५६९॥  
 म्हणोनि ह्या शास्त्रीं । स्वभावें यथार्थ । असे जो उचित । संप्रदाय ॥२५७०॥  
 तो चि विवरून । तुज सांगूं आतां । ऐक पंडु-सुता । अत्यादरें ॥२५७१॥

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ।

न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति ॥६७॥

तरी तुज हें जें । गीताशास्त्र भलें । आस्थेनें लाभलें । आज येथें ॥२५७२॥  
 तें तूं सर्वथैव । नको धनंजया । तपोहीनाचिया । कानीं घालूं ॥२५७३॥  
 किंवा कोणी झाला । तपोनिष्ठ भला । परी होय ढिला । गुरुभक्तीं ॥२५७४॥  
 तरी तयालागीं । तैसा मानी त्याज्य । वाळिला अंत्यज । वेदीं जैसा ॥२५७५॥  
 नातरी कावळा । वृद्ध जरी झाला । घालिती ना त्याला । पुरोडाश ॥२५७६॥  
 तैसी नेदीं गीता । तापसालागोन । गुरुभक्तिहीन । असे जो का ॥२५७७॥  
 किंवा तपोनिष्ठ । असोनि बरवा । गुरु आणि देवां । भजे नित्य ॥२५७८॥  
 परी ऐकावया । नाहीं उत्सुकता । तयासी ही गीता । नको सांगूं ॥२५७९॥  
 तप आणि भक्ती-मार्जी उणा नोहे । परी ऐकाया हें । अपात्र तो ॥२५८०॥  
 छिद्राविण मोतीं । असो कांतियुक्त । काय धागा त्यांत । प्रवेशेल ? ॥२५८१॥

सागर गंभीर । कोण हें नाकारी । वायां जाय परी । वृष्टि तेथें ॥२५८२॥  
 तृप्त झाला त्यासी । वाढोनि दिव्यान्न । वायां दवडोन । टाकावें कां ? ॥२५८३॥  
 त्याहुनी देवोनि । तें चि भुकेल्यासी । कां न औदार्यासी । दाखवावें ? ॥२५८४॥  
 म्हणोनि योग्यता । असो हवी तैसी । परी नाहीं ज्यासी । श्रवणेच्छा ॥२५८५॥  
 तया कौतुकें हि । नको देऊं गीता । सांगूं किती आतां । धनंजया ॥२५८६॥  
 रूपाचा सुजाण । जरी झाला डोळा । तरी परिमळा । जाणे काय ? ॥२५८७॥  
 सर्वथा जें योग्य । जेथें असे साच । सफळ तेथें च । होईल तें ॥२५८८॥  
 म्हणोनि तपस्वी । गुरुदेव-भक्त । परी नाहीं जेथ । श्रवणेच्छा ॥२५८९॥  
 तरी त्यांसी हें । नको देऊं शास्त्र । 'वाळावे अपात्र । म्हणोनि ते ॥२५९०॥  
 किंवा तपोभक्ति-संपन्न जो झाला । श्रवणीं हि ज्याला । उत्कटेच्छा ॥२५९१॥  
 परी गीताशास्त्र-निर्मिता मी देव । नारायण सर्व-लोकांशास्ता ॥२५९२॥  
 तया मज आणि । माझ्या संतजनां । निंदिती 'हेलना । करोनि जे ॥२५९३॥  
 ते हि गीताशास्त्र । ऐकावया पार्था । अपात्र सर्वथा । ऐसें जाण ॥२५९४॥  
 दीपाविण रात्रीं । ठाणदिवी जैसी । सामुग्री ती तैसी । त्यांची सर्व ॥२५९५॥  
 शरीर तरुण । गोरें सालङ्कृत । परी विरहित । प्राणें जैसें ॥२५९६॥  
 सुवर्ण-मंदिर । बांधिलें सुंदर । परी सपें द्वार । आडविलें ॥२५९७॥  
 नातरी दिव्यान्न । असावें चोखट । परी काळकूट । मार्जी जैसें ॥२५९८॥  
 किंवा बाहेरून । जरी मैत्री दाट । अंतरीं कपट । परिपूर्ण ॥२५९९॥  
 तैसी तप भक्ति । 'मेधा त्यांची जाण । निंदिती जे कोण । मजलागीं ॥२६००॥  
 असो तपी भक्त । मेधावी सर्वथा । निंदी माझ्या भक्तां । किंवा मज ॥२६०१॥  
 तरी धनंजया । नको देऊं त्यास । शास्त्रासी ह्या स्पर्श । करावया ॥२६०२॥  
 बहु बोलूं काय । निंदक सुजाण । ब्रह्मा हि समान । जरी झाला ॥२६०३॥  
 तरी कौतुकें हि । तया निंदकास । नको उपदेश । करूं ह्याचा ॥२६०४॥  
 म्हणोनि तपाच्या । दृढ पायावर । भक्तीचें मंदिर । उभारिलें ॥२६०५॥  
 आणि श्रवणेच्छा-रूपी दार पुढें । सताड उघडें । असे नित्य ॥२६०६॥

अनिंदा-रत्नांचा । सुंदर कळस । ज्या मंदिरास । चढविला ॥२६०७॥

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।

भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥६८॥

ऐशा सुनिर्मळ । <sup>१</sup>भक्तालयीं थोर । <sup>२</sup>गीतारत्नेश्वर । <sup>३</sup>प्रतिष्ठीं ही ॥२६०८॥

मग जगामार्जी । माझिया तोलाचा । होसील तूं साचा । प्रज्ञावंता ॥२६०९॥

अ उ म ह्या तीन । मातृकांच्या कुशीं । होता गर्भवासीं । सांपडला ॥२६१०॥

एकाक्षररूपें । ॐकार सहज । असे मूळ बीज । वेदांचें जो ॥२६११॥

तयाचा चि वेल-। विस्तार वाढला । गीतारूपें भला । ऐसें जाण ॥२६१२॥

किंवा श्लोकरूपी । फुलीं फळीं पाहीं । जणूं गायत्री ही । प्रफुल्लित ॥२६१३॥

अगा भेटवावी । <sup>४</sup>अनन्यजीवन । बाळकालागोन । माता जैसी ॥२६१४॥

गायत्रीमंत्राचें । रहस्य ही गीता । तैसी माझ्या भक्तां । मेळवी जो ॥२६१५॥

भक्तांची गीतेशीं । करील जो भेटी । होय तो देहान्तीं । मद्रूप चि ॥२६१६॥

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।

भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥६९॥

आणि शरीराचें । लेवोनियां लेणें । असे भिन्नपणें । जोंवरी तो ॥२६१७॥

तोंवरी हि मज । जीवप्राणासम । तो चि भक्तोत्तम । आवडे गा ॥२६१८॥

ज्ञानी कर्मयोगी । तपस्वी वा चांग । ऐसे अंतरंग । भक्त जे का ॥२६१९॥

तयांमार्जी एक । तो चि आवडता । मेळवी जो गीता । मद्भक्तांसी ॥२६२०॥

माझिया भक्तांचा । मेळावा पाहोन । देई त्यालागोन । गीताशास्त्र ॥२६२१॥

तो चि एक प्रिय । जैसा त्रिभुवनीं । तैसा दुजा कौणी । नाही मज ॥२६२२॥

मज ईश्वराच्या । प्रेमें चि ही गीता । सांगतां अहंता । सोडोनियां ॥२६२३॥

संतांचिया सभे-। मार्जी धनंजया । राहे होवोनियां । भूषण जो ॥२६२४॥

नूतन पल्लवां-। सारिखें साचार । करीत शरीर । रोमांचित ॥२६२५॥

हालती गा जैसे । वृक्ष मंद-वातें । तैसें शरीरातें । डोलवीत ॥२६२६॥

ओलीं व्हावीं पुष्पें । मकरंद-रसें । वहावीत तैसे । आनंदाश्रु ॥२६२७॥

कोकिल-कूजना-। ऐसे सद्गदित । काढाया लावीत । धन्योद्धार ॥२६२८॥  
 माझ्या भक्तरूपी । उद्यानांत भला । जणूं प्रवेशला । वसंत तो ॥२६२९॥  
 'जिणें चकोराचें । 'सार्थकीं लावीत । उगवे नभांत । चंद्र जैसा ॥२६३०॥  
 नातरी सजळ । मेघ 'नवोदित । पावतो ओ देत । मयूरांसी ॥२६३१॥  
 तैसी माझी प्राप्ति । व्हावी ह्या चि साठीं । शुद्ध भाव पोटीं । ठेवोनि जो ॥२६३२॥  
 संतसभेमाजीं । गीताश्लोकरूप । रत्नांची 'अमूप । करी वृष्टि ॥२६३३॥  
 तथा भक्ताऐसा । आवडता भला । नाहीं मज झाला । दुजा कोणी ॥२६३४॥  
 आणिक नाहीं च । पुढें हि होणार । सांगतो त्रिवार । तुज ऐसें ॥२६३५॥  
 भक्तिभावें संत-। सज्जनांलागोन । घाली जो भोजन । गीतार्थाचें ॥२६३६॥  
 तथाचा गा मज । एवढा जिह्वाळा । आवडे आगळा । तो चि एक ॥२६३७॥

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः ।

ज्ञानयज्ञेन तेनाहामिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥७०॥

ऐसी तुझ्यामाझ्या । समागमीं भली । कहाणी वाढली । गीतेची जी ॥२६३८॥  
 जेथें मोक्षधर्म । नांदे मूर्तिमंत । तो हा सकळार्थ-। सिद्धिदाता ॥२६३९॥  
 पाठें चि तो आम्हां । दोषांचा संवाद । पढे पद-भेद । न करितां ॥२६४०॥  
 तेणें प्रज्वलित । 'ज्ञानानळीं येथें । मूळ अविद्येतें । जाळोनियां ॥२६४१॥  
 ज्ञानयज्ञें मज । तोषविलें साच । परमात्म्यासी च । प्रज्ञावंता ॥२६४२॥  
 गीतार्थें जें लाभे । ज्ञानियासी पार्था । तें चि मिळे गीता-। पाठकासी ॥२६४३॥  
 अर्थज्ञासारिखें । तयासी हि फळ । करी जो केवळ । गीता-पाठ ॥२६४४॥  
 जाणतें वा तान्हें । ऐसा भेद कांहीं । नेणे माउली ही । गीतारूप ॥२६४५॥

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः ।

सोऽपि मुक्तः शुभौल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥७१॥

सर्वमार्गीं निंदा । सांडोनियां पार्था । परमार्थीं आस्था । धरोनियां ॥२६४६॥  
 गीताशास्त्राचें ह्या । करी जो श्रवण । श्रद्धा बाळगून । अंतरांत ॥२६४७॥  
 गीताक्षरें त्याच्या । पडतां चि 'कर्णीं । तत्काळ जळोनि । जाय पाप ॥२६४८॥



एकाएकीं अभि । लागतां वनासी । पळ घेती जैसीं । वनचरें ॥२६४९॥  
 किंवा उदयादीं । येतां चि भास्कर । हारपे अंधार । अंतराळीं ॥२६५०॥  
 तैसीं कानाचिया । महादारीं साच । घोषें रिघतां च । गीताक्षरें ॥२६५१॥  
 जगाच्या आरंभा-। पासोनि जें पाप । जाय आपोआप । झडोनि तें ॥२६५२॥  
 जन्म-परंपरा । ऐसी सुनिर्मळ । होतसे केवळ । पुण्यरूप ॥२६५३॥  
 गीतेचें श्रवण । घडतां चि देख । अलोट आणिक । फळ लाभे ॥२६५४॥  
 अक्षरागणिक । होती अश्वमेध । गीताक्षरें शुद्ध । ऐकतां हीं ॥२६५५॥  
 ऐकतां चि पापें । जावोनि लयास । होवोनि उत्कर्ष । सुकृताचा ॥२६५६॥  
 स्वर्गराज्यैश्वर्य । तेणें योगें साच । अंतीं लाभतें च । श्रोतयासी ॥२६५७॥  
 मेळवाया माझे । सायुज्य तें भलें । तो करी पहिलें । पेणें स्वर्गीं ॥२६५८॥  
 आवडे तोंवरी । भोगी तेथें भोग । मद्रूप तो मग । होय पार्था ॥२६५९॥  
 पढे किंवा एके । गीताशास्त्र भलें । तयालागीं मिळे । फळ ऐसें ॥२६६०॥  
 मी जो ब्रह्मानंद । तो चि भेटें तया । काय धनंजया । सांगूं फार ॥२६६१॥  
 असो जयासाठीं । केला हा साचार । एवढा विस्तार । शास्त्राचा ह्या ॥२६६२॥  
 झालें का तें काज । सफळ सर्वथा । तें चि पुसों आतां । तुजलागीं ॥२६६३॥

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा ।

कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनंजय ॥७२॥

तरी एकचित्तें । अर्जुना पवित्र । जें हें गीताशास्त्र । ऐकिलेंस ॥२६६४॥  
 तो हा सांगें शास्त्र-। सिद्धांत आधवा । तुज अनुभवा । आला काय ? ॥२६६५॥  
 सांगितलें कानीं । जैसें जिया परी । तैसें चि अंतरीं । ठसलें ना ? ॥२६६६॥  
 तरी स्वरूपाच्या । अज्ञानापासोन । होय जो निर्माण । मायामोह ॥२६६७॥  
 जेणें मोहें गेला । होतासी भुलोण । मोह तो जळोन । गेला कीं ना ? ॥२६६८॥  
 बहु पुसों काय । आपुलिया ठायीं । देखसी का कांहीं । कर्माकर्म ? ॥२६६९॥  
 स्वानंदैकरसीं । बुडोनि जाईल । ठायीं च बैसेल । म्हणोनियां ॥२६७०॥  
 देवें प्रश्नाचें हें । करोनि निमित्त । आणिला तो पार्थ । द्वैतदशे ॥२६७१॥

ए-हवीं तो देव । सर्वज्ञ स्वभावे । तयासी तें ठावे । नाहीं काय ! ॥२६७२॥  
 परी तो अर्जुन । द्रैत विसरोन । होईल निमग्न । ब्रह्मानंदीं ॥२६७३॥  
 म्हणोनि हा प्रश्न । करोनि श्रीहरी । देहभानावरी । आणी तया ॥२६७४॥  
 मग जैशा रीती । क्षीराब्धीमधून । बाहेरी निघून । पूर्णचंद्र ॥२६७५॥  
 विराजे आकाशीं । आपुल्या किरणीं । अभिन्न राहोनि । निज-तेजीं ॥२६७६॥  
 तैसें अहंब्रह्म । ऐशा स्फुरणांत । राहे ना निवांत । काहीं काळ ॥२६७७॥  
 तंव सर्व विश्व । ब्रह्मभावे भरे । मग पाठीं विरे । ब्रह्मत्व हि ॥२६७८॥  
 अहंब्रह्मभाव । मांडीत मोडीत । ऐसा स्वीकारीत । द्रैतभाव ॥२६७९॥  
 दुःखे देहाचिया । सीमेवरी आला । मग उभा ठेला । 'पार्थनामें ॥२६८०॥  
 थरथरत्या हातें । रोमांच दाबून । अंगीं जिरवून । 'स्वेदबिंदु ॥२६८१॥  
 धडधडे ऊर । करोनि तें स्थिर । देवोनि आधार । अंगें अंगा ॥२६८२॥  
 मग आनंदाश्रु । पुसोनि टाकीत । होते जे वहात । नेत्रांतून ॥२६८३॥  
 नाना उत्कंठांनीं । कंठ सद्गदित । हृदयीं दाबीत । उत्कंठा ती ॥२६८४॥  
 'वितुळली वाणी । सांवरोनि प्राणें । करोनि श्वसणें । व्यवस्थित ॥२६८५॥

अर्जुन उवाच—

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत ।

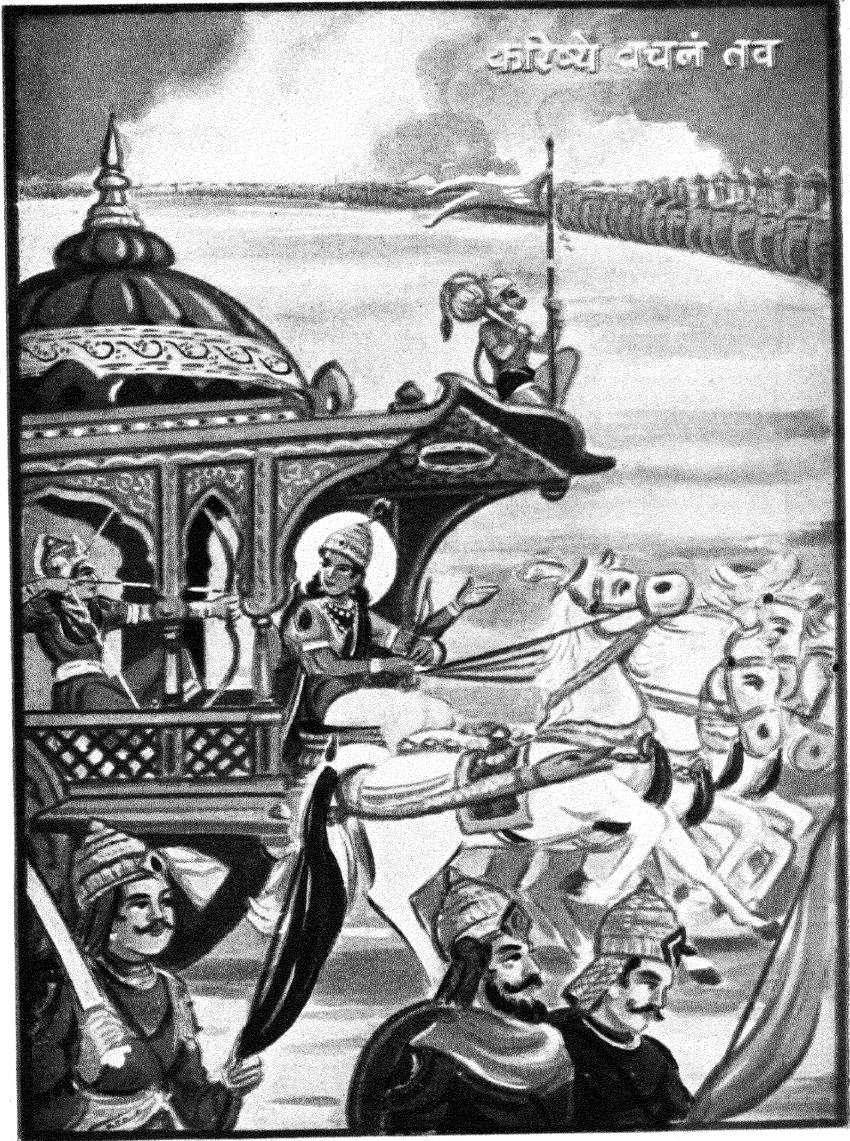
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ॥७३॥

पार्थ म्हणे देवा । पुससी हें काई । मोह माझ्या ठायीं । आहे कीं ना ॥२६८६॥  
 तरी सकुटुंब । गेला तो घेवोन । आपुलें ठिकाण । अज्ञानाचें ॥२६८७॥  
 अंधाराची वार्ता । पुसावी नेत्रांसी । येवोनियां 'पार्शी । दिवाकरें ॥२६८८॥  
 शोभेल हें काय । कोणे गांवीं सांग । तैसा तूं श्रीरंग । पुढें उभा ॥२६७९॥  
 प्रत्यक्ष दर्शन । तुझे प्रभुराया । काय करावया । असमर्थ ॥२६९०॥  
 वरी मातेचिया । प्रेमाहून थोर । प्रेम अनिवार । करोनियां ॥२६९१॥  
 सांगसी तें मज । तोंडभरी आज । आकळे ना गुज । साधनीं जें ॥२६९२॥  
 मोह माझ्याठायीं । असे किंवा नाहीं । पुससी हें काई । मज आतां ? ॥२६९३॥

'त्वद्रूप होवोन । झालों 'कृतकृत्य । त्रिवार हें सत्य । सांगतसें ॥२६९४॥  
 पार्थपणें होतों । गुंतोनियां गेलों । तुझेपणें झालों । मुक्त आतां ॥२६९५॥  
 आतां तुज मज । नित्य एकपणें । पुसणें सांगणें । दोन्ही नाहीं ॥२६९६॥  
 मोह तो समूळ । देशोधडी गेला । तुझ्या कृपें झाला । आत्म-बोध ॥२६९७॥  
 आतां करणें का । न करणें ऐसें । चित्तीं उठतसे । जेणें द्रैतें ॥२६९८॥  
 तथा द्रैतीं वास । सर्वत्र तुझा च । तुजविण साच । नेणें काहीं ॥२६९९॥  
 निश्चयेंकरोन । जेथें नुरे कर्म । पावलों परम । ब्रह्मभाव ॥२७००॥  
 आतां अमे कोठें । संदेहासी ठाव । झालों 'स्वयमेव । ब्रह्मरूप ॥२७०१॥  
 तुझ्या कृपें झाली । मज माझी भेटी । आतां कैंच्या गोष्टी । कर्तव्याच्या ? २७०२  
 आतां तुझी आज्ञा । एक चि प्रमाण । नाहीं त्यावांचोन । दुर्जा गोष्ट ॥२७०३॥  
 असोनि जें दृश्य । सर्व दृश्य नाही । दुजेपणें ग्रासी । द्रैतातें जें ॥२७०४॥  
 असोनि जें येथें । साच एक मात्र । वसे जें सर्वत्र । सर्वकाळ ॥२७०५॥  
 आणि घडतां च । जयाचा संबंध । जाती भव-बंध । तुटोनियां ॥२७०६॥  
 करितां चि आस । जयाची निःशेष । जातें विलयास । आशामात्र ॥२७०७॥  
 भेट होतां ज्याची । भेटे सर्व काहीं । आपुल्या चि ठायीं । आपणासी ॥२७०८॥  
 जयासाठीं वाटे । अद्रैताचें ज्ञान । सुखें ओलांडून । जावें ऐसें ॥२७०९॥  
 सहाय्य जें चांग । एकलेपणासी । तो तूं माझा होसी । गुरुदेव ॥२७१०॥  
 टाकावें फेडून । कृत्याकृत्य काम । आपण चि ब्रह्म । होवोनियां ॥२७११॥  
 मग सेवा ज्याची । करावी अपार । तो तूं सर्वाधार । गुरु माझा ॥२७१२॥  
 गंगा अब्धीलागीं । भेटावया गेली । भेटतां चि झाली । अब्धिरूप २७१३  
 निजपदरूपी । शेलका वांटा च । तैसा दिला साच । भक्तां जेणें ॥२७१४॥  
 तो तूं होसी मज । सेव्य 'निर्निमित्त । सद्गुरु समर्थ । विश्वनाथा ॥२७१५॥  
 निजपदप्राप्ति । देवोनि साचार । थोर उपकार । केला तुम्हीं ॥२७१६॥  
 श्रीगुरो दयाळा । मजतुम्हांआड । भेदाचें कवाड । होतें जें का ॥२७१७॥  
 'फेडोनि तें देवा । स्व-बोधें निःशंक । गोड केलें एक । सेवा-सुख ॥२७१८॥







आतां तुझी आज्ञा । एक चि प्रमाण । नाही त्यावांचोन । दुर्जी गोष्ट ॥२७०३॥



आतां भलतैसी । आज्ञा करीं मातें । आज्ञापिसी तें तें । आचरीन ॥२७१९॥  
 निघतां हे बोल । पार्थाचिया वाचे । सुखें देव नाचे । भुलोनियां ॥२७२०॥  
 मग म्हणे आज । मज विश्वफळा । अर्जुन हा झाला । फलद्रूप ॥२७२१॥  
 आपुला कुमर । जो का सुधाकर । संपूर्ण साचार । देखोनि तो ॥२७२२॥  
 आपुली मर्यादा । स्वभावेकरोन । जाय विसरोन । क्षीर-सिंधु ॥२७२३॥  
 तैसे कृष्णार्जुन । संवादीं रंगले । एकरूप झाले । देखोनियां ॥२७२४॥  
 आनंदें तन्मय । होवोनि संजय । रायालागीं काय । म्हणे ऐका ॥२७२५॥  
 देखें देखें राया । रक्षिलें सुदैवें । कैसें व्यासदेवें । आम्हां दोघां ॥२७२६॥  
 चर्मचक्षु ते हि । नाहीत तुम्हांसी । परी दिली कैसी । ज्ञानदृष्टि ॥२७२७॥  
 तुमचा सेवक । अश्वपरीक्षक । सामान्य मी एक । असोनि हि ॥२७२८॥  
 श्रीहरिपार्थाचा । संवाद हा भला । आम्हां ऐकूं आला । व्यासकृपें ॥२७२९॥  
 कैसा हा दारुण । युद्धाचा प्रसंग । दोन्ही सैन्यभाग । आपुले च ॥२७३०॥  
 येथें कोणाचा हि । होवो पराजय । परी जेणें क्षय । स्व-कुळाचा ॥२७३१॥  
 ऐशा हि संकटी । व्यासदेवें भला । अनुग्रह केला । आम्हांवरी ॥२७३२॥  
 कैसा हा उघड । ब्रह्मानंद येथ । आम्हां भोगवीत । व्यासदेव ॥२७३३॥  
 शीतल स्पर्शांत । चंद्राचे किरण । द्रवे ना पाषाण । परी जैसा ॥२७३४॥  
 तैसा धृतराष्ट्र । कोरडा च राहे । बोल ऐकोनि हे । संजयाचे ॥२७३५॥  
 रायाची ती दशा । संजयें देखोन । संवाद-वर्णन । थांबविलें ॥२७३६॥  
 परी स्वानंदें तो । वेडापिसा झाला । म्हणोनि लागला । पुन्हां बोलों ॥२७३७॥  
 भुलोनियां गेला । हर्षावेगें तेथ । म्हणोनि बोलत । रायापार्सी ॥२७३८॥  
 ए-हवीं हें काहीं । रायाजोगें नाही । निश्चयें हें तो हि । जाणतसे ॥२७३९॥

संजय उवाच—

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः ।

संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥७४॥

मग म्हणे राया । बोलिला जें पार्थ । हर्षला श्रीकांत । ऐकोनि तें ॥२७४०॥



'पूर्वापर-नामें । वेगळे सागर । परी जैसे नीर । एक चि ते ॥२७४१॥  
 तैसे कृष्णार्जुन । देहे जरी भिन्न । संवादीं संपूर्ण । एकरूप ॥२७४२॥  
 ठेवितां दर्पण । सन्मुख दर्पणा । पाहती आपणा । एकमेकीं ॥२७४३॥  
 तैसा देवासवें । देवात्रिया ठायीं । आपणातें पाही । पंडुसुत ॥२७४४॥  
 आणि देव तो हि । पांडवासहित । पांडवीं पहात । आपणासी ॥२७४५॥  
 नित्य-स्वरूपीं ज्या । देव-भक्तांसाठीं । पाहे जगजेठी । अवकाश ॥२७४६॥  
 त्या चि स्वरूपांत । पार्थ 'गुडाकेश । पाहे अवकाश । दोघातें हि ॥२७४७॥  
 आणिक कांहीं च । नाहीं दोघांविणें । दाघे एकपणें । नांदती ते ॥२७४८॥  
 आतां प्रश्नोत्तरं । कैसीं घडतील । मोडोनि जाईल । जरी द्वैत ॥२७४९॥  
 आणि जरी द्वैत । राहिलें तैसेच । तरी कैचे साच । ऐक्य-सुख ? ॥२७५०॥  
 ऐसें दुजेपणीं । बोलतां जो पूर्ण । टाकितो गिळोन । भेदालागीं ॥२७५१॥  
 संवाद तो ऐसा । श्रीहरि-पार्थाचा । ऐकिला मीं साचा । थोर भाग्यें ॥२७५२॥  
 समोरासमोर । ठेवितां दर्पण । पाहे कोणा कोण । ऐसें कल्पूं ? ॥२७५३॥  
 दीपापुढें दीप । ठेवितां आणिक । तेथें प्रकाशक । कोण कोणा ? ॥२७५४॥  
 किंवा कोण कोणा । प्रकाशिता होय । सूर्यापुढें सूर्य । उगवतां ? ॥२७५५॥  
 तैसे संवादीं ते । पावले एकता । नये 'निर्धारितां । स्थिति त्यांची ॥२७५६॥  
 उदका उदक । भेटावया पाहे । मध्ये उभें राहे । जरी मीठ ॥२७५७॥  
 तरी क्षणाचा हि । न लागतां वेळ । जळ चि केवळ । होय त्याचें ॥२७५८॥  
 श्रीहरि-पार्थाचा । तैसा येथें भला । संवाद जो झाला । 'अनिर्वाच्य ॥२७५९॥  
 तयाचा विचार । आठवितां मनीं । तन्मय होवोनि । गेलों मी हि ॥२७६०॥  
 ऐमें तो संजय । म्हणे ना जों तेथें । येवोनि भरतें । सात्त्विकांचें ॥२७६१॥  
 तेणें देहभान । गेलें हारपोन । तयासी मी कोण । आठवे ना ॥२७६२॥  
 अंगावरी जों जों । उठती रोमांच । शरीर संकोच । पावों लागे ॥२७६३॥  
 एकला चि कंप । जिंकी स्तंभ स्वेद । अभेद-आनंद- । स्पर्श होतां ॥२७६४॥  
 दृष्टीलानीं फुटे । प्रेमाचा पाझर । नव्हे ती साचार । अश्रुधारा ॥२७६५॥

नेणों काय पोटीं । मावे ना म्हणोन । सद्द होवोन । कंठ त्याचा ॥२७६६॥  
 उमटे ना शब्द । विवर्णता येत । ऐसी स्थिति होत । एकाएकी ॥२७६७॥  
 ऐसे अष्ट भाव । जाग्रत होवोन । पडतां चि मौन । तयालागीं ॥२७६८॥  
 संवादसुखाचा । जणूं चव्हाटा च । झाला वाटे साच । संजय तो ॥२७६९॥  
 ऐसी च अद्भुत । सुखाची त्या जाति । लाभे जेणें शांति । आपोआप ॥२७७०॥  
 तेणें योगें मग । लाधली मागुती । निजदेहस्मृति । संजयासी ॥२७७१॥

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्ब्रह्ममहं परम् ।

योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥७५॥

स्वानंदाचा भर । ऐसा ओसरतां । म्हणे तो मागुता । रायालागीं ॥२७७२॥  
 नसे चि जें ठावें । उपनिषदातिं । व्यासप्रसादें तें । ऐकिलें मीं ॥२७७३॥  
 कथा गीतेची ही । ऐकतां बरवी । माझें ब्रह्मभावीं । ऐक्य झालें ॥२७७४॥  
 गेलें हारपोन । माझें मीतूंपण । अज्ञान संपूर्ण । नष्ट झालें ॥२७७५॥  
 सर्व हि योगांचें । जें का प्राप्यस्थान । ऐसा जो श्रीकृष्ण । परमात्मा ॥२७७६॥  
 तयाचें भाषण । व्यासकृपें मज । मुलभ सहज । झालें आज ॥२७७७॥  
 पार्थाचिया मिषें । आपण चि दुजें । होवोनि सहजें । पार्थरूप ॥२७७८॥  
 स्वानंदासाठीं च । बोलिले जें देव । व्यासकृपें सर्व । ऐकिलें तें ॥२७७९॥  
 सामर्थ्य स्वतंत्र । ऐसें सद्गुरुचें । काय वानूं वाचे । कौरवेशा ॥२७८०॥

राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम् ।

केशवाजुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥७६॥

रत्नप्रभा जैसी । रत्नाचिया ठायीं । झांकोळीत येई । रत्नालागीं ॥२७८१॥  
 बोलूं जातां तैसा । विस्मयें संजय । स्वरूपी तन्मय । होय पुन्हां ॥२७८२॥  
 स्फटिकासारखीं । सरोवरे घट्ट । चंद्रोदयीं होत । हिमालयीं ॥२७८३॥  
 परी सूर्योदय । होतां मागुती तीं । पाझरों लागती । मग जैसीं ॥२७८४॥  
 तैसा पुन्हां येतां । देहभानावरी । आठवी अंतरीं । संवाद तो ॥२७८५॥  
 तों चि पडे पुन्हां । देहाची विस्मृति । ऐसी झाली स्थिति । संजयाची ॥२७८६॥

१ जात; प्रकार. २ धृतराष्ट्र राजाला. ३ ब्रह्मभावनेत. ४ ध्येय; फल. ५ कितो वाखाणूं ?  
 अ. जा. ४५

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमन्यद्भूतं हरेः ।

विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनःपुनः ॥७७॥

उठोनि तो मग । रायालागीं बोले । कैसें राहवलें । स्वस्थ तुम्हां ॥२७८७॥  
 पाहोनि हरीचें । विश्वरूप थोर । 'आनंद-निर्भर । नाहीं ज्ञालां ॥२७८८॥  
 न पाहतां दिसे । नाहींपणें असे । चुकवूं तें कैसें । रूप आतां ॥२७८९॥  
 विसरावें तरी । पडे ना विसर । रूप वारंवार । आठवे तें ॥२७९०॥  
 देखोनि तें रूप । कराया आश्चर्य । तेथें उरे काय । दुजेपण ! ॥२७९१॥  
 मज हि सकट । विश्व हें संपूर्ण । जातसे वाहोन । महापूरीं ॥२७९२॥  
 ऐसा कृष्णार्जुन-संवाद-संगम । पावन परम । असे जो का ॥२७९३॥  
 तेथें भक्ति-भावें । करोनियां स्नान । 'देई तिळदान । 'अहंतेंचें ॥२७९४॥  
 मग सांवेरे ना । स्वानंद म्हणोन । अद्भुत स्फुंदन । करूं लागे ॥२७९५॥  
 प्रेमानंदें आला । दाटोनियां गळा । म्हणे वेळोवेळां । कृष्ण कृष्ण ! ॥२७९६॥  
 परी अंतर्बाह्य । अंध कौरवेश । कैसें हें तयास । आकळावें ॥२७९७॥  
 म्हणोनि अवस्था । संजयाची कां ही । ऐसें जंव कांहीं । कल्पूं जाय ॥२७९८॥  
 तंव तें स्वानंद-मुख लवलाहीं । आपल्या चि ठायीं । जिरवोनि ॥२७९९॥  
 ज्ञाला अनावर । साखिकांचा वेग । तो हि तेणें मग । आवरिला ॥२८००॥  
 संग्राम-वृत्तांत । सांगावया येथ । तुज बैसवीत । व्यासदेव ॥२८०१॥  
 सांडोनि तें ऐसा । स्फुंदतोसि काय । ऐसें म्हणे राय । तिये वेळीं ॥२८०२॥  
 व्यासमुनींचा तो । न जाणतां हेतु । कां हें बोलसी तूं । 'अप्रसंगें ॥२८०३॥  
 राजमंदिरांत । ठेवितां भिल्लास । दाही दिशा ओस । भासती त्या ॥२८०४॥  
 नातरी 'मार्तंड । येतां उदयासी । 'निशाचरां जैसी । रात्र होय ॥२८०५॥  
 जेथींचें महत्त्व । ज्या नाहीं ठावें । तेणें तें म्हणावें । विपरीत ॥२८०६॥  
 म्हणोनि तो राव । संजयातें म्हणे । कां गा हें बोलणें । ऐशा वेळीं ॥२८०७॥  
 तरी कुरुक्षेत्रीं । अत्यंत दारुण । प्रस्तुत जें रण । मांडलेंसे ॥२८०८॥  
 तया रणीं अंतीं । विजयश्री माळ । कोणातें घालील । तें चि सांग ॥२८०९॥

एन्हवीं आम्हांति । हें चि वाटे एक । प्रतापें अधिक । दुर्याधन ॥२८१०॥  
 पांडवांचें दळ । पाहूं जातां तरी । दिढीनें तें भारी । असे ह्याचें ॥२८११॥  
 म्हणोनि विजय । दुर्याधनाचा च । ऐसें मत साच । आमुचें गा ॥२८१२॥  
 तरी नेणों कैसें । तुझे तें भाकित । सांग आम्हां येथ । असे तैसें ॥२८१३॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीविजयो भूतिर्भुवा नीतिर्मतिर्मम ॥७८॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यासयोगो नाम

अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

एकोनि हे बोल । संजय तो म्हणे । भाकित मी नेणें । दोवांचें हि ॥२८१४॥  
 परी आयुष्याची । दोरी बळकट । तेथें 'जिणें स्पष्ट । 'जाणों ये हें ॥२८१५॥  
 चंद्र तेथें 'ज्योत्स्ना । शंभु तेथें 'सती । संत तेथें वस्ती । विवेकाची ॥२८१६॥  
 सौजन्य तें जेथें । तेथें सोयरीक । राव तेथें देख । सैन्य जैसें ॥२८१७॥  
 नातरी 'अनल । तेथें दाहकता । सिद्ध स्वभावतां । असे जैसी ॥२८१८॥  
 दया तेथें धर्म । धर्मी 'सुखागम । सुखीं पुरुषोत्तम । असे जैसा ॥२८१९॥  
 वसंतीं उद्यानें । उद्यानांत फुलें । फूल तेथें मेळे । भ्रमरांचे ॥२८२०॥  
 गुरु तेथें ज्ञान । ज्ञानीं आत्मप्राप्ति । आत्मलाभीं शांति । असे जैसी ॥२८२१॥  
 भार्ग्यीं सुखभोग । सुखभोगीं हर्ष । हें असो प्रकाश । रवि तेथें ॥२८२२॥  
 तैसे ज्याच्या योगें । चारी पुरुषार्थ । सर्वथा सनाथ । होती राजा ॥२८२३॥  
 तो श्रीकृष्णदेव । जगन्नाथ जेथें । देवी लक्ष्मी तेथें । राहे नित्य ॥२८२४॥  
 आणि जयापार्शीं । लक्ष्मी जगन्माता । आपुलिया कान्ता- । सर्वे राहे ॥२८२५॥  
 तयाचिया घरीं । कां न रावाव्यात । अणिमादि अष्ट । महासिद्धि ? ॥२८२६॥  
 ऐसीं मायबापें । लाभलीं जयासी । तयाचिया देशीं । वृक्ष जे का ॥२८२७॥  
 कल्पतरूसी कां । तयांनीं सहज । मारोनियां पैज । जिंकू नये ? ॥२८२८॥  
 आणि जे पाषाण । तेथील आघवे । ते हि कां न व्हावे । चिंतामणि ? ॥२८२९॥

१ जगणें. २ जाणतां घेते. ३ चांदणें. ४ पार्वती (दक्षकन्या) ५ अग्नि. ६ सुखप्राप्ति; सुखाचें आगमन.

तथाचिया देशीं । जो जो भूमिभाग । तो तो सुवर्णांग । कां न व्हावा ? ॥२८३०॥  
 तथाचिया गांवीं । नद्या हि पावन । अमृतं भरोन । कां न जाव्या ? ॥२८३१॥  
 असे काय तेथें । नवल साचार । करोनि विचार । पाहें राजा ॥२८३२॥  
 तयामुखें स्वैर । निघती जे शब्द । सुखें म्हणों वेद । तयांलागीं ॥२८३३॥  
 सदेह ते सच्चिद्-आनंदस्वरूप । कां न आपोआप । व्हावे सांग ॥२८३४॥  
 देव तो श्रीकृष्ण । जयाचा जनक । जननी ती देख । रमादेवी ॥२८३५॥  
 स्वर्ग आणि मोक्ष । हीं जीं पदें दोन । होती तीं स्वाधीन । तथाचिया ॥२८३६॥  
 म्हणोनि जयाचा । पाठिराखा देव । झाला स्वयमेव । रमाकांत ॥२८३७॥  
 तेथें सर्व सिद्धि । मूर्तिमंत देख । नेणें मी आणिक । दुजें कांहीं ॥२८३८॥  
 'अव्धीचा च मेघ । परी उपयोग । अव्धीहून चांग । त्याचा जैसा ॥२८३९॥  
 तैसा देवाचा च । पार्थ भक्त भला । परी तो 'आगळा । देवाहून ॥२८४०॥  
 जरी सुवर्णत्व । देवांनि लोहास । होतसे परीस । दीक्षागुरु ॥२८४१॥  
 तरी सुवर्ण चि । होय उपयोगी । जैसें जगालागीं । पोसावया ॥२८४२॥  
 येथें गुरुत्वाचा । कमीपणा होई । ऐमें नको कांहीं । मानावया ॥२८४३॥  
 दीपाचिया रूपें । अग्नि जैसें साच । तेज आपुलें च । प्रकाशितो ॥२८४४॥  
 तैसा देवाच्या च । प्रसादेंकरोन । पार्थ देवाहून । बळवंत ॥२८४५॥  
 स्तुति भक्ताची च । देवालागीं रुचे । ऐसें ह्या स्तुतीचें । मोठेपण ॥२८४६॥  
 पुत्रें सर्वगुणीं । जिंकावें आपणा । हें चि रुचे मना । पितयाच्या ॥२८४७॥  
 तैसा स्वतःहून । श्रेष्ठ व्हावा पार्थ । पुरला मनोरथ । देवाचा हा ॥२८४८॥  
 काय सांगूं फार । कृष्णकृपायुक्त । 'साक्षेपें झुंजत । पार्थ जेथें ॥२८४९॥  
 तो चि पक्ष होय । विजयासी जागा । संदेह वाउगा । नको येथें ॥२८५०॥  
 नाही जरी झाला । तथाचा विजय । तरी व्यर्थ होय । विजयत्व ॥२८५१॥  
 म्हणोनिया लक्ष्मी । आणि लक्ष्मीकांत । तेविं पंडुसुत । असे जेथें ॥२८५२॥  
 तेथें निःसंशय । राहे 'अभ्युदय । संपूर्ण विजय । साच तेथें ॥२८५३॥  
 जरी भरंवसा । व्यासांचिया ठायीं । तरी बोल पाहीं । अढळ हे ॥२८५४॥

रमेसर्वे जेथें । वसे रमानाथ । आणि भक्तश्रेष्ठ । पार्थ जेथें ॥२८५५॥  
 तेथें नित्य नांदे । मुख आणि शांति । आणि होय प्राप्ति । मांगल्याची ॥२८५६॥  
 जरी अन्यथा हें । होईल भविष्य । तरी नव्हे शिष्य । व्यासांचा मी ॥२८५७॥  
 ऐसें रायालागीं । बोलिला गर्जोन । बाहू उभारून । संजय तो ॥२८५८॥  
 एका श्लोकीं ऐसें । भारताचें सार । संजयें साचार । सांगितलें ॥२८५९॥  
 केवढा अफाट । नेणां असे अभि । परी पेटवोनि । वात एक ॥२८६०॥  
 फेडावा अंधार । सूर्यास्तीं जो झाला । तैसें तो बोलिला । सार येथें ॥२८६१॥  
 साच पाहूं जातां । वेद ते अनंत । त्याचें भारत । सव्वा लक्ष ॥२८६२॥  
 भारताचें सार-। सर्वस्व ही गीता । गीतेच्याहि सातां । शतांमार्जी ॥२८६३॥  
 शेवटचा श्लोक । इत्यर्थ साचार । जो का पूर्णाद्वार । संजयाचा ॥२८६४॥  
 एका चि ह्या श्लोकीं । ज्याचा एकभाव । तेणें विद्या सर्व । आकळिली ॥२८६५॥  
 करिती धारण । सप्तशत श्लोकां । ऐसीं पदें देखा । गीतेचीं हीं ॥२८६६॥  
 पदें म्हणों कीं हें । परमामृत साचें । जणूं आकाशीचें । गीतारूपी ॥२८६७॥  
 किंवा गीतारूपी । आत्मराजसभे । जणूं केले उभे । स्तंभ चि हे ॥२८६८॥  
 सप्तशतीं मंत्रां । प्रतिपाद्य साच । गीता देवता च । भगवती ॥२८६९॥  
 वाटे मोहरूपी । महिषाचा वध । करोनि आनंद । पावलीसे ॥२८७०॥  
 कायावाचामनें । म्हणोनि जो कोणी । राहील होवोनि । भक्त हिचा ॥२८७१॥  
 तयासी ही देवी । चक्रवर्तीपद । देईल स्वानंद-। साम्राज्याचें ॥२८७२॥  
 नातरी अविद्या-। रूपी अंधारासी । पैजें दूरदेशीं । घालविते ॥२८७३॥  
 ऐसे सातशें हे । श्लोकरूपी सूर्य । प्रकटिता होय । कृष्णदेव ॥२८७४॥  
 किंवा आक्रमितां । संसाराचा पंथ । तेथ विश्रान्त्यर्थ । श्रान्तजीवां ॥२८७५॥  
 श्लोकाक्षररूपी । द्राक्षलते भली । वाटे गीता झाली । मांडव ही ॥२८७६॥  
 जेथें भाग्यवंत । संत-अलि-कुळें । सेविती कमळें । श्लोकरूपी ॥२८७७॥  
 तया कृष्णरूप । सरोवरीं गीता । बहरली लता । ऐसें वाटे ॥२८७८॥  
 नव्हेत कीं श्लोक । मज वाटे स्पष्ट । वाखाणिते भाट । गीतेचे हे ॥२८७९॥

ना तरी 'आवार । सातशें श्लोकांचें । करोनि हें साचें । मनोहारी ॥२८८०॥  
 वाटे गीतारूप । नगरींत भलीं । राहावया आलीं । सर्व शास्त्रें ॥२८८१॥  
 किंवा प्रिया गीता । प्रेमें उल्हामून । बाहू पसरोन । श्लोकरूपी ॥२८८२॥  
 परमात्मरूपी । निज-वल्हमास । आली भेटायाम । ऐसें वाटे ॥२८८३॥  
 ना तरी हे श्लोक । तरंग साचार । गीतारूपी क्षीर- । सागराचे ॥२८८४॥  
 किंवा गीतारूपी । पद्मिनी-पराग । सेविते हे भृंग । ऐसें वाटे ॥२८८५॥  
 किंवा गीतारूपी । रथाचे हे चांग । वाटती 'तुरंग । श्रीहरीचे ॥२८८६॥  
 'नर-अवतार । मूर्तिमंत पार्थ । झाला तो सिंहस्थ । म्हणोनियां ॥२८८७॥  
 श्लोकरूपी सर्व । तीर्थांचा हा मेळा । गंगेसी मिळाला । गीतारूपी ॥२८८८॥  
 एक एक श्लोक । त्रिंतामणि वाटे । देई जो चिंतातें । ब्रह्मलाभ ॥२८८९॥  
 किंवा कल्पवृक्ष । वाटती हे श्लोक । निर्विकल्पसुख- । फळदाते ॥२८९०॥  
 ह्यापरी गीतेचे । सातशें हे श्लोक । एकाहूनि एक । आगळे चि ॥२८९१॥  
 म्हणोनि त्यांतून । आगळा म्हणोन । निवडावा कोण । वर्णाविया ? ॥२८९२॥  
 अमृताब्धिमार्जी । खोल वा उथळ । करूं का येईल । भेद ऐसा ? ॥२८९३॥  
 म्हणूं ये का सूर्य । धाकटा वडील । दीपक मागील । कीं आर्थांचा ? ॥२८९४॥  
 कामधेनूठारी । पाडशी वा तान्ही । ऐसा भेद कोणी । करी काय ? ॥२८९५॥  
 कल्पवृक्षाचिया । पुष्पांमार्जी जैसा । नवीं जुनीं ऐसा । भेद नाही ॥२८९६॥  
 तैसा नसे श्लोकीं । 'आदिम 'अंतिम । उत्तम मध्यम । ऐसा भेद ॥२८९७॥  
 उत्कृष्ट निकृष्ट । ऐसा नसे भेद । कासया हें सिद्ध । करूं जावें ॥२८९८॥  
 काय सांगूं फार । साच पाहूं जातां । वाच्यवाचकता । नाहीं येथें ॥२८९९॥  
 वाच्यवाचक तो । श्रीहरी च एक । असें हें ठाऊक । कोणासी हि ॥२९००॥  
 येथें अर्थज्ञानें । लाभतें जें फळ । मिळें तें केवळ । पठणें हि ॥२९०१॥  
 होय एकरूप । वाच्यवाचकत्व । आगळें महत्त्व । शास्त्राचें ह्या ॥२९०२॥  
 आतां समर्थन । करावया काय । उरला विषय । सांगा मज ॥२९०३॥  
 असे गीता जाणा । 'साजिरी गोमटी । वाङ्मयी ही मूर्ति । श्रीहरीची ॥२९०४॥

इतर तीं शास्त्रें । देती अर्थज्ञान । मग प्रयोजन । नुरे त्यांचें ॥२९०५॥  
 तैसें नव्हे; परी । आगळें त्याहून । शास्त्र हें संपूर्ण । परब्रह्म ॥२९०६॥  
 सर्व विश्वाची ह्या । येवोनियां दया । सोपा करोनियां । ब्रह्मानंद ॥२९०७॥  
 देवें कैसा देखा । केलासे प्रकट । करोनि निमित्त । अर्जुनाचें ॥२९०८॥  
 चकोराच्या मिषें । चंद्र कलावंत । शांत करी तप्त । त्रि-लोकातें ॥२९०९॥  
 किंवा कळिकाळ- । जवरें जे पीडित । तयां दुःखमुक्त । करावया ॥२९१०॥  
 गंगौघ तो खालीं । सोडिला गिरीशें । गौतमाच्या मिषें । जैशा रीती ॥२९११॥  
 तैसें पार्थालागीं । वांसरूं करोन । माधवें होवोन । स्वयें गाय ॥२९१२॥  
 जगासी पुरेल । एवढें हें भलें । दुभतें दिधलें । गीतारूप ॥२९१३॥  
 जीवेंभावें येथें । जरी बुडी द्याल । ब्रह्म तें पावाल । सुनिश्चयें ॥२९१४॥  
 किंवा शास्त्राचें ह्या । पाठमिषें ओल । जरी का लागेल । जिह्वेलागीं ॥२९१५॥  
 तरी लोहाच्या । एका हि अंशास । जैसा होतां स्पर्श । परिसाचा ॥२९१६॥  
 लोह तें सर्वांगीं । पावे सुवर्णत्व । तैसें चि ब्रह्मत्व । लाभे येथें ॥२९१७॥  
 पाठरूपी वाटी । लावितां चि ओठीं । अंगा येई पुष्टि । ब्रह्मत्वाची ॥२९१८॥  
 न लागो तें ओठीं । पाठाचें हि ओल । परी कान द्याल । जरी येथें ॥२९१९॥  
 तरी श्रवणें हि । फल-प्राप्ति ती च । श्रेष्ठत्व ऐसें च । शास्त्राचें ह्या ॥२९२०॥  
 सर्वथा समर्थ । दाता जैसा येथें । म्हणे ना कोणातें । नाहीं ऐसें ॥२९२१॥  
 तैसें मोक्षाविण । दुजें नेदी काहीं । गीता श्रवणें हि । पाठें अर्थें ॥२९२२॥  
 म्हणोनि ज्ञात्याची । संगति पाहोन । करावें सेवन । गीतेचें च ॥२९२३॥  
 करावा तो काय । शास्त्रांचा विस्तार । होय जो इतर । गीतेहून ॥२९२४॥  
 कृष्णार्जुनांचा हा । स्वच्छंद संवाद । सर्वथा अगाध । आकळ्याया ॥२९२५॥  
 परी तो चि केला । स्पष्ट आणि सोपा । व्यासदेवें कृपा । करोनियां ॥२९२६॥  
 बाळकासी मुखें । घेवों येती ऐसे । घांस देई जैसे । प्रेमें माता ॥२९२७॥  
 ना तरी चतुरीं । पंख्याच्या द्वारा । अफाट हि वारा । वश केला ॥२९२८॥  
 तैसें तत्व न ये । बोलतां जें शब्दीं । अनुष्ठुप् छंदीं । रचोनि तें ॥२९२९॥



स्त्रियां शूद्रादिकां । आकळेल भलें । ऐसें सोपें केलें । व्यास-देवें ॥२९३०॥  
 पडोनि उदक । स्वातिनक्षत्रांत । न होती शिंपांत । जरी मोत्यें ॥२९३१॥  
 तरी तीं सुंदर । अंगनांच्या अंगा । कैसीं देतीं सांगा । दिव्य शोभा? ॥२९३२॥  
 कानासी गोवर । नाद कैसा होता । जरी तो न येता । वाद्यरूपा? ॥२९३३॥  
 किंवा पुष्परूप । सुगंध न होता । तरी घेऊं येता । कैसा घ्राणें ? ॥२९३४॥  
 जिह्वेलागीं गोडी । कैसी कळें येती । जरी पक्कान्नीं ती । राहती ना ? ॥२९३५॥  
 किंवा दिसे काय । दर्पणावांचोन । नयनें नयन । पाहूं जातां ? ॥२९३६॥  
 निर्गुण श्रीगुरु । सगुण न होता । भावें कैसा येता । आकळया ? ॥२९३७॥  
 तैसें असंख्यात । ब्रह्म मर्यादेंत । न येतें ह्या सप्त- । शत-श्लोकीं ॥२९३८॥  
 तरी तें कोणातें । प्राप्त होतें येथें । रूपासी न येतें । जरी ऐसें ? ॥२९३९॥  
 सागराचें पाणी । जरी वाहे मेघ । तरी पाहे जग । मेघासी च ॥२९४०॥  
 कीं जें अमर्याद । अगाध अनंत । होईल तें प्राप्त । कैसें कोणा ? ॥२९४१॥  
 ब्रह्म अनिर्वाच्य । रूपासी न येतें । ऐसें सात शतें । श्लोकद्वारा ॥२९४२॥  
 तरी काना-मुखा- । लागीं त्याचा चांग । घेतां येता भोग । कैशा रीती? ॥२९४३॥  
 म्हणोनि श्रीव्यास- । देवाचा हा थोर । झाला उपकार । विश्वावरी ॥२९४४॥  
 तेणें ग्रंथरूपें । आकारा आणिले । बोल ऐसे भले । श्रीहरीचे ॥२९४५॥  
 व्यासांचा तो ग्रंथ । विवरोनि येथ । मराठी भाषेंत । आणिला मीं ॥२९४६॥  
 व्यासादिकांची हि । दिव्य ज्ञानस्फूर्ति । साशंकता वृत्ति । धरी जेथें ॥२९४७॥  
 ऐसा तो गीतार्थ । दावाया उघड । करीं बडबड । मी हि रंक ॥२९४८॥  
 परी गीतारूप । शंकर तो भोळा । घाली पुष्पमाळा । व्यासोक्तीची ॥२९४९॥  
 तरी वाहिलें मीं । जें हें दूर्वादळ । तें हि न म्हणेल । नको ऐसें ॥२९५०॥  
 शमवाया तृष्णा । क्षीरसिंधुतटीं । समूह लोटती । कुंजरांचे ॥२९५१॥  
 तेथें चिलटांसी । झुल्लक म्हणोन । लावी का लोटोन । क्षीराब्धि तो ॥२९५२॥  
 गरुड तो करी । आकाशीं उड्डाण । तेथें चि तें सान । पांखरूं हि ॥२९५३॥  
 राजहंस-गति । विख्यात म्हणोनि । आणिकें का कोणीं । चालूं नये ? २९५४॥

घागरीएवढें । घागरींत वारी । तैमें चूळभरी । चुळीमार्जी ॥२९५५॥  
 दिवटीचें तेज । दिवटीएवढें । तैमें चि तें पडे । वातीचें हि ॥२९५६॥  
 भासे ना तळ्यांत । तळ्याएवढें का । जैमें नभ देखा । सागरांत ॥२९५७॥  
 तैसे व्यासादिक । महामति थोर । करिती विचार । ग्रंथाचा ह्या ॥२९५८॥  
 म्हणोनियां आम्ही । घ्यावा मागें पाय । हें तों दिसे काय । मयुक्तिक? ॥२९५९॥  
 मंदराएवढीं । आकारें अचाट । जळचरें जेथ । संचरती ॥२९६०॥  
 तथा महार्णवीं । सान सान मासे । ते हि स्वैर जैसे । पोहताती ॥२९६१॥  
 सूर्यालागीं काय । एकला अरुण । सन्निध म्हणोन । देखतसे ? ॥२९६२॥  
 पाहूं शके ना का । तयासी मुंगी हि । सुदूर जी राही । भूमितळीं ? ॥२९६३॥  
 म्हणोनियां आम्ही । प्राकृती गीतार्थ । येथ मराठींत । आणिला जो ॥२९६४॥  
 आमुचें तें धाष्टर्य । स्वभावे चि युक्त । कैसे अनुचित । म्हणों ये पां? ॥२९६५॥  
 बापामागोमाग । जाय जरी मूल । तरी तें पावेल । तें चि स्थळ ॥२९६६॥  
 व्यासांचा मागोवा । तैसा घेत घेत । वाट विचारीत । भाष्यकारां ॥२९६७॥  
 अयोग्या हि मज । गीतार्थनिधान । लाधल्यावांचोन । राहे कैसें ? ॥२९६८॥  
 क्षमा-बळें ज्याच्या । साहतसे भार । धरित्री म्थावर- । जंगमाचा ॥२९६९॥  
 निशाकांत ज्याचें । लाहोनि अमृत । विश्वालागीं शांत । करीतसे ॥२९७०॥  
 ज्याच्या अंग-प्रभा- । अंशें प्रभाकर । सर्व हि अंधार । दूर सारी ॥२९७१॥  
 महार्णवासी हि । लाभे ज्याचें तोय । तोयासी माधुर्य । मिळे ज्याचें ॥२९७२॥  
 आणि माधुर्यासी । ज्याच्या योगें भलें । सौंदर्य आगळें । प्राप्त होय ॥२९७३॥  
 ज्याच्या बळें बळ । लाभे पवनास । विस्तारे आकाश । ज्याच्या योगें ॥२९७४॥  
 ज्याच्या योगें ज्ञाना । आली उज्ज्वलता । झाली प्राप्त सत्ता । सार्वभौम ॥२९७५॥  
 ज्याच्या योगें चारी । वेद ते सुभाष । सुखासी उल्हास । ज्याच्या योगें ॥२९७६॥  
 बहु बोलूं काय । ज्याच्या योगें भलें । सारें विश्व आलें । रूपासी हें ॥२९७७॥  
 सद्गुरु तो माझा । श्रीनिवृत्तिनाथ । उदार समर्थ । ज्ञानमूर्ति ॥२९७८॥  
 नित्य निरंतर । सर्वा उपकारी । माझ्या हि अंतरीं । करी वास ॥२९७९॥

आतां अनायासें । सद्गुरुपामोन । प्राप्त झालें ज्ञान । गीतेचें ज्या ॥२९८०॥  
 जर्गी ती साद्यंत । सांगें मराठींत । नवल तें येथ । काय असे ॥२९८१॥  
 मृत्तिकेची मूर्ति । स्थापोनियां भावें । श्रीगुरूच्या नावें । रानीवनीं ॥२९८२॥  
 धनुर्विद्याभ्यास । एकलव्यें केला । सुविख्यात झाला । त्रिभुवनीं ॥२९८३॥  
 चंदनाच्या संगें । राहिलीं जीं झाडें । तयांसी हि जोडे । चंदनत्व ॥२९८४॥  
 नातरी जी छटी । मानिली वशिष्ठें । स्पर्धा करूं उठे । भास्कराशीं ॥२९८५॥  
 मग मी तों अमें । चित्तें सुमंपन्न । नव्हे अचेतन । छटीऐसा ॥२९८६॥  
 वरी करोनियां । कृपावलोकन । आपुलें दे स्थान । शिष्यासी जो ॥२९८७॥  
 ऐसा तो सद्गुरु । श्रीनिधित्तिनाथ । होय कृपावंत । स्वामी माझा ॥२९८८॥  
 आधीं च निर्दोष । जरी दृष्टि होय । त्याहीवरी सूर्य । पाठिराखा ॥२९८९॥  
 मग त्या दृष्टीसी । वस्तु न दिसेल । ऐसें संभवेळ । काय कोठें ? ॥२९९०॥  
 तैसे श्वासोच्छ्वास । माझे नित्य नवे । ते हि कां न व्हावे । काव्यग्रंथ ? ॥२९९१॥  
 ज्ञानदेव म्हणे । अशक्य तें काय । जरी कृपा होय । सद्गुरूची ! ॥२९९२॥  
 सद्गुरूची कृपा । म्हणोनि गीतार्थ । मराठींत स्पष्ट । सांगितला ॥२९९३॥  
 मराठी ही टीका । नव्हे एकदेशी । व्यापक सर्वाशीं । परिपूर्ण ॥२९९४॥  
 मूळ गीताश्लोक । संस्कृतामधून । आधीं विवरोन । पदान्तरां ॥२९९५॥  
 मग वाचील हा । माझा टीकाग्रंथ । तरी तो गीतार्थ । खुलवील ॥२९९६॥  
 किंवा संस्कृतांत । न सांगतां अर्थ । वाचिली भावार्थ- । दीपिका ही ॥२९९७॥  
 तरी संस्कृतांत । गीतार्थ जो सांगे । तयासी हि मागें । सारितां ये ॥२९९८॥  
 सुंदरांगीं जेव्हां । नसे अलंकार । मोकळा शृंगार । म्हणों तेव्हां ॥२९९९॥  
 मग तो चि तेथें । करितां धारण । उचित त्याहून । दुजें काय ? ॥३०००॥  
 किंवा स्वाभाविक । गुणें जैशा रीती । भूषवितें मोती । सुवर्णातें ॥३००१॥  
 आणि तयाविण । मोकळें राहिलें । तरी हि तें खुले । स्वरूपें चि ॥३००२॥  
 रिघतां वसंत । जैसीं गरगरीत । फुलें शोभिवंत । मोगरीचीं ॥३००३॥  
 असोत गुंफिलीं । किंवा मोकळीं च । सुगंधत्वे साच । सारखीं च ॥३००४॥

तैसे मूल श्लोक । गावोनियां मग । वाचितां हा चांग । टीकाग्रंथ ॥३००५॥  
 जैसा भरे रंग । तैसा चि तो देखा । नुसती च टीका । वाचितां ही ॥३००६॥  
 दुणा लाभदाता । ऐसा काव्यग्रंथ । रचिला हा येथ । ओंवीवद्ध ॥३००७॥  
 आबालसुबोध । ओंवीछंदामार्जी । गुंफिला जो आजी । टीकाग्रंथ ॥३००८॥  
 तथा ग्रंथांतील । अक्षरांसी भली । रमाळता आली । ब्रह्मरसें ॥३००९॥  
 'फुलावेरीं काय । चंदनें थांबावें । तेव्हां चि पावावें । मुगंधत्व ? ॥३०१०॥  
 तैसा हा प्रबंध । ध्यानाचिया आधीं । आणितो समाधि । श्रवणें चि ॥३०११॥  
 होतां चि श्रवण । मग जीवेंभावें । तें चि तें एकावें । ऐसें वाटे ॥३०१२॥  
 नको जावयास । शोधाया पांडित्य । वाचितां हा नित्य । टीकाग्रंथ ॥३०१३॥  
 कोण आठवण । करी अमृताची । वाचितां च रुचि । ग्रंथाची ह्या ॥३०१४॥  
 स्फुरलें हें काव्य । सहजें म्हणोन । विश्रांतीचें स्थान । झालें सर्वा ॥३०१५॥  
 जिंकी मननास । एकलें श्रवण । आतां पुसे कोण । निःश्चिंसा ! ॥३०१६॥  
 येथें कोणासी हि । श्रवणें चि भोग । घडेल अव्यंग । स्वानंदाचा ॥३०१७॥  
 सर्व इंद्रियांतें । देईल पोषण । एकलें श्रवण । ग्रंथाचें ह्या ॥३०१८॥  
 आपुल्या सामर्थ्यें । चंद्रांतें भोगून । चकोर सुजाण । ठरे जरी ॥३०१९॥  
 तरी त्या शीतल । चंद्राचा प्रकाश । पाहिजे तयास । लाभे जैसा ॥३०२०॥  
 तैसी ज्याची वृत्ति । झाली अंतर्मुख । शास्त्र आध्यात्मिक । त्यासी च हें ॥३०२१॥  
 परी शब्दांची हि । चातुरी अपूर्व । तोषवील सर्व । लोकांलागीं ॥३०२२॥  
 ऐसें श्रीसद्गुरु । निवृत्तिनाथाचें । श्रेष्ठत्व हें साचें । रूपा आलें ॥३०२३॥  
 ग्रंथ नव्हे हें तों । ओतलें अपूर्व । कृपेचें वैभव । श्रीगुरुच्या ॥३०२४॥  
 क्षीरसिंधुतटी । शिव आदिनाथ । कर्ण-कुहरांत । भवानीच्या ॥३०२५॥  
 नेणों केव्हां झाला । सांगता हें ज्ञान । उत्तम पावन । मोक्षदायी ॥३०२६॥  
 तें चि क्षीरार्णवीं । मत्स्येंद्रांसी प्राप्त । मत्स्योदरीं गुप्त । होता जो का ॥३०२७॥  
 मग हस्तपाद- । रहित चौरंगी । होता सप्तशृंगीं । बैसला जो ॥३०२८॥  
 तयालागीं होतां । मत्स्येंद्र-दर्शन । सर्वांगीं संपूर्ण । जाहला तो ॥३०२९॥

अखंड समाधि । भोगावी आपण । अंतरां धरोन । इच्छा ऐसी ॥३०३०॥  
 मग मत्स्येन्द्रं ती । योगज्ञानखूण । गोरक्षालागोन । सांगितली ॥३०३१॥  
 असे जो विषय- । विध्वंसनीं शूर । पद्मसरोवर । योगरूपी ॥३०३२॥  
 तथा गोरक्षातें । मत्स्येन्द्रं तें भलें । राज्यैश्वर्य दिलें । समाधीचें ॥३०३३॥  
 शंकरापासोन । परंपराप्राप्त । ऐमें हें अद्वैत- । आनंदाचें ॥३०३४॥  
 वैभव अपार । ओपिलें मंपूर्ण । गहिनीलागोन । श्रीगोरक्षें ॥३०३५॥  
 मग देवोनियां । आला कलिकाळ । गिळीत सकळ । जीवांलागीं ॥३०३६॥  
 श्रीगैनींकडोन । निवृत्तिनाथांस । मिळाला आदेश । देखा ऐसा ॥३०३७॥  
 कीं जें आदिगुरु । शंकरापासोन । आम्हां योगज्ञान । लाधलें हें ॥३०३८॥  
 परंपराप्राप्त । सर्व तें घेवोन । आमुच्याकडोन । मग तूं हि ॥३०३९॥  
 कळिकाळग्रस्त । जीवां सर्वा परी । सोडवीं मत्स्येन्द्रीं । दुःखांतून ॥३०४०॥  
 येतां वर्षाकाळ । मेघ ते साचार । करिती अपार । वृष्टि जैसी ॥३०४१॥  
 तैसा तो आधीं च । दयाळु विशेष । त्यांत हि आदेश । श्रीगुरुचा ॥३०४२॥  
 मग भवदुःखें । जाहले जे दीन । करुणा येवोन । जीवांची त्या ॥३०४३॥  
 सद्गुरु दयाळ । श्रीनिवृत्तिनाथ । करोनि निमित्त । गीतार्थाचें ॥३०४४॥  
 वर्षले अद्भुत । ब्रह्मरम जो का । तो चि तो हा देखा । टीकाग्रंथ ॥३०४५॥  
 तेथें उत्कंठित । चातक मी झालों । म्हणोनि पावलां । यश ऐमें ॥३०४६॥  
 ऐमें गुरुकृपें । लाधलें गहन । समाधिनिधान । आपुलें जें ॥३०४७॥  
 तें चि ग्रंथरूपें । रचोनि आइतें । श्रीनिवृत्तिनाथें । दिलें मज ॥३०४८॥  
 ये-हवीं मी कांहीं । पढें ना वाचीं ना । सेवा हि जाणें ना । सद्गुरुची ॥३०४९॥  
 ऐशा मज असे । योग्यता कोठोन । गीतार्थ कथन । करावया ? ॥३०५०॥  
 परी गुरुनाथें । साच माझ्या हातें । रक्षिलें जगातें । ग्रंथमिषें ॥३०५१॥  
 सद्गुरुची आज्ञा । म्हणोनि ह्या ठायीं । उणें पुरें कांहीं । बोलिलों जें ॥३०५२॥  
 विनंति ही पायीं । अहो श्रोतेजन । माउली होवोन । सहावें तें ॥३०५३॥  
 नेणें कैसा रंग । भरावा मिद्धान्तीं । नाहीं माझी गति । साहित्यांत ॥३०५४॥

नेणें अलंकार । नेणें शब्दमिद्धि । मी तों बालबुद्धि । अप्रवीण ॥३०५५॥  
 बाहुलें तें जैमें । नाचे सूत्रार्थीन । तैसा मी स्वाधीन । श्रीगुरुच्या ॥३०५६॥  
 मजलागीं पुढें । करोनियां साच । बोलिला हें तो च । माझ्या मुखें ॥३०५७॥  
 म्हणोनि क्षमावे । आतां गुण-दोष । कामया विशेष । प्रार्थविं हें? ॥३०५८॥  
 स्वामींनीं च केला । ग्रंथ हा निर्माण । निमित्त करोन । मजलागीं ॥३०५९॥  
 आणि तुम्हां संत-। सज्जनांचे सभे । राहिल जें उमें । न्यूनपणें ॥३०६०॥  
 तयासी पूर्णत्व । लाभेल ना साच । तरी तुम्हासी च । कोपो लोभें ॥३०६१॥  
 परिसाच्या स्पशें । लोह लोहत्वातें । मुकेना तरी तें । उणें कोणा ? ॥३०६२॥  
 वहाळवोहळें । एक चि करावें । जावोनि मिळावें । गंगेलागीं ॥३०६३॥  
 मग गंगारूप । जरी न तो होय । तरी म्हणों काय । दोष त्याचा ? ॥३०६४॥  
 म्हणोनि मी तुम्हां । संतांच्या चरणीं । पातलां येवोनि । थोर भाग्यें ॥३०६५॥  
 आतां मज काय । न्यूनपण जगीं । संपूर्ण सर्वांगीं । झालों साच ॥३०६६॥  
 तुम्हां सज्जनांची । झाली मज भेटी । श्रीगुरु-निवृत्ति-। कृपा बळें ॥३०६७॥  
 तें सर्व इच्छा । होवोनियां तृप्त । झालों मी कृतार्थ । स्वभावं चि ॥३०६८॥  
 अहो तुम्हां संतां-। मारिखें माहेर । लाघलें साचार । म्हणोनियां ॥३०६९॥  
 गीतार्थव्याख्यानीं । धरिली जी आस । मुखें ती सिद्धीस । गेली ऐसी ॥३०७०॥  
 शुद्ध सुवर्णांचें । दिव्य भूमि-तळ । सहजें येईल । ओतावया ॥३०७१॥  
 किंवा चिंतामणि-। रत्नांचे डोंगर । येतील साचार । रचावया ॥३०७२॥  
 किंवा तारकांचे । करूं येती चंद्र । अमृतें समुद्र । भरूं येती ॥३०७३॥  
 किंवा दिव्य कल्प-। वृक्षांचें उद्यान । लावणें कठिण । नाहीं येथें ॥३०७४॥  
 परी एक साच । गुरुकृपेविण । गीतार्थाची खूण । नये हाता ॥३०७५॥  
 तया गीतार्थातें । असोनि मी मुका । विवरिलें देखा । मराठींत ॥३०७६॥  
 ऐसा हा अपार । ग्रंथाचा सागर । उतरोनि पार । पावलों मी ॥३०७७॥  
 कीर्ति विजयाचा । उभारोनि ध्वज । स्वानंदें सहज । नाचें आतां ॥३०७८॥  
 रचिलें हें थोर । गीतार्थ-मंदिर । कलश सुंदर । चढवोनि ॥३०७९॥

मग स्थापोनियां । रम्य गाभाऱ्यांत । श्रीगुरुदेवत । पूजिलें मीं ॥३०८०॥  
 बाळ हिंडे वायां । चुकोनियां वाट । परीं निष्कपट । गीतामाय ॥३०८१॥  
 'तुमाचिया धमें । आज एकदां चि । मायलेंकराची । झाली भेट ॥३०८२॥  
 तुम्हां सज्जनांचे । थोर उपकार । जाणोनि साचार । बोलिलों हें ॥३०८३॥  
 म्हणोनि हें कार्य । कैसें म्हणों अल्प । थोर हा संकल्प । सिद्धी गेला ॥३०८४॥  
 काय सांगूं तुम्हीं । ग्रंथसमाप्तीचा । दाविला हा साचा । सोहाळ्य जो ॥३०८५॥  
 तेणें झालें माझे । अहो संतजन । कृतार्थ जीवन । सकळ हि ॥३०८६॥  
 ठेवोनियां तुम्हां-। ठायीं भरंवसा । धरियेल्या आशा । ज्या ज्या येथें ॥३०८७॥  
 त्या त्या सकळ हि । पुरवोनि आज । सुखी केलें मज । तुम्हीं संतीं ॥३०८८॥  
 तुम्हीं संतीं मज । धरोनियां हातीं । दुर्जा ग्रंथमृष्टि । केली जी ही ॥३०८९॥  
 पाहोनि ती ऐसी । थोर नवलाई । विश्वामित्रातें हि । हांसूं आम्ही ॥३०९०॥  
 निर्मिली ती तेणें । त्रिशंकुकारणें । आणावया उणें । विधात्यामी ॥३०९१॥  
 परी ती समूळ । जाणा नाशिवंत । नव्हे तेमा ग्रंथ । विनाशी हा ॥३०९२॥  
 उपमन्यूसार्थी । देव सदाशिव । लोभें क्षीरार्णव । निर्मी जरी ॥३०९३॥  
 परी तो हि पात्र । उपमेभी नोहे । विषगर्भ आहे । म्हणोनियां ॥३०९४॥  
 अंधोर अंधार-। जो का निशाचर । सर्व चराचर । गिळूं पाहे ॥३०९५॥  
 तया अंधारासी । सूर्य तो जिवारी । देवोनियां परी । ताप जगा ॥३०९६॥  
 वेंचोनि चांदणें । चंद्र निशानाथ । तस जगा शांत । करी जरी ॥३०९७॥  
 परी कलंकित । असे तो म्हणोन । उपमेसी हीन । वाटे येथें ॥३०९८॥  
 म्हणोनि जो तुम्हीं । संतजनीं थोर । केला उपकार । ग्रंथरूपी ॥३०९९॥  
 तयासी त्रैलोक्यां । नाहीं उपमा च । निस्तुल तो साच । ऐसें वाटे ॥३१००॥  
 कृपा तुमची च । बहु बोलूं काय । म्हणोनि ही होय । ग्रंथसिद्धि ॥३१०१॥  
 नित्य सर्वभावे । सेवावं तुम्हांतें । उरें मज येथें । हें चि एक ॥३१०२॥  
 आतां व्हावा तोष । विश्वात्मका देवा । देखोनि बरवा । वाग्यज्ञ हा ॥३१०३॥  
 मग तेणें देवें । द्यावं संतोषून । प्रसादाचें दान । हें चि मज ॥३१०४॥

सर्व हि दुष्टांची । सुटो दुष्ट खोडी । वाटो तयां गोडी । सत्कर्मी च ॥३१०५॥  
 परस्परांवरी । सर्व हि जीवांची । मैत्री जडो साची । जीवेंभावे ॥३१०६॥  
 उगवूं दे विश्वा । \*स्वधर्म-भाम्कर । लोपूं दे अंधार । पातकाचा ॥३१०७॥  
 करितील प्राणी । जी जी वांछा येथें । प्राप्त होवो त्यांतें । तें तें सर्व ॥३१०८॥  
 करीत वर्षाव । सर्वकल्याणाचा । ईश्वरनिष्ठांचा । समुदाय ॥३१०९॥  
 सदा सर्वकाल । सर्वत्र ह्या जर्गी । \*भूतमात्रालागीं । भेट देवो ॥३११०॥  
 चिंतामणीचे च । गांव जे सजीव । बोलते अर्णव । अमृताचे ॥३१११॥  
 चालतें बोलतें । \*कल्पतरूद्यान । साच \*अलांछन । चंद्रमे जे ॥३११२॥  
 तापहीन भानू । ऐसे माधुसंत । सदा आवडोत । सर्वांलागीं ॥३११३॥  
 सर्वसुखीं पूर्ण । होवोनि त्रिलोक । नित्य भजो एक । ईश्वरातें ॥३११४॥  
 आणि जर्गी झाला । विशेषेकरोन । ग्रंथ हा जीवन । जयांलागीं ॥३११५॥  
 इहपरलोक-। भोगांवरी जय । तयां प्राप्त होय । ऐसें होवो ॥३११६॥  
 तेव्हां श्रीविश्वेश । सद्गुरु निवृत्ति । संतोषोनि चित्तीं । म्हणे ऐसें ॥३११७॥  
 दान-प्रसाद हा । होईल निभ्रांत । आतां राहें स्वस्थ । ज्ञानदेवा ॥३११८॥  
 करोनि श्रवण । ऐसें वर-दान । ज्ञानदेव पूर्ण । सुखी झाला ॥३११९॥  
 कलियुगामार्जां । महाराष्ट्रप्रांतीं । गोदावरीतटीं । दक्षिणेस ॥३१२०॥  
 अनादि जें एक । त्रिलोकीं पवित्र । असे पुण्यक्षेत्र । पंचक्रोश ॥३१२१॥  
 जेथें जगदंबा । \*महालया राहे । चालक जी आहे । जगाची ह्या ॥३१२२॥  
 तेथें सकल हि । कलांचें आगर । रम्य अलंकार । यादवांचा ॥३१२३॥  
 पृथ्वीपति थोर । रामदेव राजा । पोषीतमे प्रजा । नीतिन्यायें ॥३१२४॥  
 तेथें आदिनाथ-। \*परंपरोद्भूत । निवृत्तीचा सुत । ज्ञानदेव ॥३१२५॥  
 तेणें गुरुकृपें । गीतेवरी आज । मराठीचा माज । चढविला ॥३१२६॥  
 श्रीहरिपार्थाचा । संवाद जो भला । भारतीं रंगला । भीष्मपर्वी ॥३१२७॥  
 असे जो साचार । उपनिषत्सार । शास्त्रांचें मोहर । सकळ हि ॥३१२८॥  
 जया सरोवरीं । नित्य निरंतर । करिती विहार । परमहंस ॥३१२९॥



तया श्रीगीतेचा । कळम बरवा । तो चि अठरावा । अध्याय हा ॥३१३०॥  
 पूर्ण झाला ऐसें । म्हणे श्रोतयांम । निवृत्तीचा दास । ज्ञानदेव ॥३१३१॥  
 आतां ग्रंथाची ह्या । पुण्यरूप भली । संपत्ति आपुली । करोनियां ॥३१३२॥  
 चढतें वाढतें । वैभव भोगून । सर्वमुखीं पूर्ण । व्हावें सर्वीं ॥३१३३॥

ज्ञानदेवें शके । वाराशें वारांत । गीताटीकाग्रंथ । रचिला हा ॥१॥  
 \*सच्चिदानंद वावा । आदरं करोन । ग्रंथ हा लिहोन । घेता झाला ॥२॥

मागुतीं तारण- । नाम संवत्सरीं । शके साहोत्तरीं । पंधराशें ॥१॥  
 एकाजनार्दनं । गीताज्ञानेश्वरी । केली अत्यादरीं । प्रतिशुद्ध ॥२॥  
 असोनि आधीं च । ग्रंथ अतिशुद्ध । झाला जो अशुद्ध । पाठान्तरीं ॥३॥  
 तो चि संशोधून । येथें ऐशा परी । केली ज्ञानेश्वरी । प्रतिशुद्ध ॥४॥  
 जयाची गीतेची । वाचितां ही टीका । होय ज्ञान लोकां । भाविकांसी ॥५॥  
 तया निष्कलंक । ज्ञानदेवालागीं । वंदोनि अष्टांगीं । भक्तिभावे ॥६॥  
 भाद्रपदमासीं । कपिलाषष्ठीचा । पाहोनियां साचा । पर्वकाळ ॥७॥  
 एकाजनार्दनं । गोदातटीं भला । ग्रंथ पूर्ण केला । पैठणांत ॥८॥

तया ग्रंथाचा हा । अमंगीं सुबोध । केला अनुवाद । स्वहितार्थ ॥१॥  
 सद्गुरु गणेश । उपनामं वैद्य । तेणें स्वमवेद्य । आत्मरूप ॥२॥  
 दाखवोनि स्वामी । स्वरूपानंदास । कैवल्यपदास । पांचविलें ॥३॥  
 निजकृपाहस्त । मस्तकीं ठेवोन । कृतार्थ जीवन । केलें साच ॥४॥  
 ज्ञानेश्वरीचें च । श्रवण मनन । घडावें चिंतन । सर्व काळ ॥५॥  
 ऐसी आज्ञा केली । ती च येथें भली । परिपाका आली । ग्रंथरूपें ॥६॥  
 ग्रंथरूपें ऐसा । तेणें चि साचार । केला उपकार । जगावरी ॥७॥  
 आबालवृद्धांसी । गीताज्ञानेश्वरी । सुगम सोपारी । झाली आतां ॥८॥  
 शके अठराशें । अठ्ठ्याहत्तरांत । होत हा समाप्त । अनुवाद ॥९॥  
 स्वामी म्हणे भावें । घडो गुरुदेवा । ऐसी तुझी सेवा । निरंतर ॥१०॥

रत्नागिरीप्रांतीं । पांवस ग्रामांत । स्वयंभू दैवत । विश्वेश्वर ॥१॥  
 तथा विश्वेशाची । पूर्वजांहातून । भावभक्तिपूर्ण । सेवा झाली ॥२॥  
 तें चि पुण्यफळ । लाधलों सकळ । जन्मोनि केवळ । त्यांच्या वंशीं ॥३॥  
 ज्यांच्या वंशीं कुळ-। धर्म रामसेवा । त्यांच्या पोटीं देवा । जन्म देई ॥४॥  
 साधुसंतांचें हें । मागणें साचार । त्याचा अनुकार । करोनियां ॥५॥  
 मी हि देवापार्शीं । हें चि मागें दान । न हो विस्मरण । तुझे देवा ॥६॥  
 आवडीनें ऐसें । नामसंकीर्तन । करीन मी धन । हें चि माझें ॥७॥  
 नको मज मुक्ति । नको चि संपत्ति । संतांची संगति । देई नित्य ॥८॥  
 स्वामी म्हणे मग । सुखें गर्भवासीं । घालावें आम्हांसी । तुक्यापरी ॥९॥

राम कृष्ण हरि । राम कृष्ण हरि । राम कृष्ण हरि ।

इतिश्री स्वामी स्वरूपानंदविरचित श्रीमत् अभंग-ज्ञानेश्वरी

अठरावा अध्याय समाप्त

हरये नमः । हरये नमः । हरये नमः । श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

## आरती श्रीज्ञानदेवाची

आरती ज्ञानराजा महाकैवल्यतेजा ।  
 सेविती साधुसंत मनु वेधला माझा ॥ध्रु०॥  
 लोपलें ज्ञान जर्गी हित नेणती कोणी ।  
 अवतार पांडुरंग नाम ठेविलें ज्ञानी ॥१॥  
 कनकाचें ताट करीं उभ्या गोपिका नारी ।  
 नारद तुंबरु हो साम-गायन करी ॥२॥  
 प्रकट गुह्य बोले विश्व ब्रह्म चि केलें ।  
 रामजनार्दनीं पार्यीं टक चि ठेलें ॥३॥

समाप्त

## परिशिष्ट १

### आरती विश्वनाथ महाराजांची

जयदेव जयदेव भवतारक जय सद्गुरु मौनी  
वेदप्रणीत निजगुज रहस्य प्रकटोनी  
मृगजलवत् जग मिथ्या सर्व हि निरसोनी  
स्वानंदामृत चिन्मय प्रकटसी हृद्भुवनी ॥१॥

जयदेव जयदेव जय सद्गुरु मौनी  
डुल्लासि ब्रह्मानंदें अति प्रेमें करुनी ॥ध्रु०॥  
अखंड परमानंद चि विसरुनि हे प्राणी  
अविवेकें आपणातें जीव चि मानूनी  
विपवत् विपयसुखातें सुख हें जाणूनी  
पावति अति दुःख चि ते हिंडुनि बहु योनी ॥२॥  
दुर्लभ दुर्लभ त्यांत हि पुण्यकृत कोणी  
वैराग्याधिकारी भाविक वरदानी  
तद्भक्तिस्तव तूं सगुणाकृति धरुनी  
त्या त्या स्थळासि जाउनि तारिसि ते प्राणी ॥३॥  
दृढतम वैराग्यानें विपयेच्छा हरिली  
प्रपंच निरसुनि बुद्धि स्वरुपीं मिळवीली  
देह द्वारासी नरवरनगरी त्यजिली  
विश्वनाथीं गुरुचरणीं भगवन् मति रमली ॥४॥  
त्वंपद तत्पद साक्षी सन्मय सुखराशी  
अंतर बाहेर सर्व हि व्यापुनि तूं अससी  
विरहित गुरुभक्ति जे त्यांतें नाढळसी  
गणेश वंदित आत्मा अभेद चरणासी ॥५॥

### आरती श्रीसद्गुरु गणेश महाराजांची

जयदेव जयदेव जय श्रीगुरुराया  
स्वामी गणेशनाथा नारायणतनया ॥ध्रु०॥  
जगदुद्धारनिमित्तें श्रीकृष्णें कथिलें  
जें निजगुज प्रिय पार्था वेदीं जें स्तविलें  
ज्ञानेश्वरादिकांनीं ज्यातें गौरविलें  
तें गीतामृत सुंदर नवनीत झालें ॥१॥

दुस्तर माया मंडळ दुर्दम रिपुगण हा  
 आत्म्यावरि देहाचा अध्यारोप महा  
 करुनी भ्रमवित मनुजा नेलें दूर पहा  
 सद्गुरुवांचुनि आतां रक्षिल कोण अहा ॥२॥  
 उज्ज्वल परंपरा श्रीगीताजनकाची  
 श्रीगुरु विश्वनाथें चालविली साची  
 निजसामर्थ्ये जोडी देउनि स्वपदाची  
 दिधली तुम्हां आज्ञा पतितोद्धरणाची ॥३॥  
 देहाहंकृतिरोगें बहु शिणलों आम्ही  
 सोऽहं औपध दिधलें नामें सार्थ तुम्हीं  
 दृष्टिभ्रम मावळला ज्ञानाची उर्मी  
 उठली, आत्मा झाला निर्लेप स्वामी ॥४॥  
 विनवी बालक त्वत्पदिं तारक दातारा  
 नाना संशय छेदुनि पाठविं माहेरा  
 यद्गत्वा न निवर्ते पुनरपि माधारा  
 करुणेच्या सागरा होई उदारा ॥५॥

### श्रीसद्गुरु गणेशनाथाष्टक

त्रिमूर्ति मूर्तिमंत एक मूर्ति जाण सद्गुरु  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥ ध्रु० ॥  
 एक जें अनंत तत्र कोदलें निराकृति  
 वेदशास्त्र 'नेति नेति' ह्या स्वरें प्रवादिती  
 महस्रवदन मूक होत त्यामि हें अगोचरु  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥१॥  
 चराचरासि व्यापुनि दशांगुळें वरी उरे  
 चर्मचक्षु लक्षि ना चलाचलांत तें स्फुरे  
 करवि ना करी, परंतु साक्षिभूत ईश्वरु  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥२॥  
 अधर्म धर्म नेणुनी भ्रमार्त पार्थ हो रणीं  
 सांकडें निवारणार्थ वासुदेव ये क्षणीं

दाबुनी विराटरूप निववि पार्थ लेकरूं  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥३॥  
 छेदुनी अनेक संशयांसि मार्ग दाखवी  
 कामरहित कर्मयोग अमृत त्यासि चाखवी  
 आत्मनिष्ठता उपाय त्यासि होत सुरतरु  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥४॥  
 असाध्य योगसाधना अलभ्य देह दंडितां  
 गुरुकृपा प्रसाद होय तरिच प्राप्त सर्वथा  
 त्यजोनियां अहंकरुतीसि गुरुरुपादांबुजा वरूं  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥५॥  
 ज्ञानदेव ज्ञाननिष्ठ साधुसंत जाणती  
 आत्मशोधनीं मनीं, जनांसि तेंचि सांगती  
 स्वयें चि सुलभ होत जात भजनमार्ग आचरूं  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥६॥  
 'स'कार ऊर्ध्व ईशरूप मानवी 'ह'कार जो  
 धरुनि भक्तिभावना सदैव लोक हा भजो  
 कापडी अजुनि मार्ग आक्रमीत शंकरु  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥७॥  
 विनाश ज्या न संभवे अखंड मंत्र हा निका  
 यम न शक्त गांजण्या गुरुप्रसादपाइका  
 करूनियां प्रणाम हृदयि मूर्तिपूजना करूं  
 स्मरूनियां गणेशनाथ त्वरित देह उद्धरूं ॥८॥

ॐ

श्रीस्वरूपानंद । स्वामीराज साच । प्रत्यक्ष गुरु च । मज झाले ॥१॥  
 सहज सर्वास । कळावी म्हणोन । अभंगीं रचोन । ज्ञानेश्वरी ॥२॥  
 एकएका पृष्टीं । ओळी पंचवीस । ग्रंथ छापणेंस । देते वेळीं ॥३॥  
 मजलागीं त्यांनीं । निमित्त करोन । सर्व चि आपण । लिहविलें ॥४॥  
 सात शतें आणि । एकवीस पृष्टें । शके अठराशें । ऐशींमार्जी ॥५॥  
 श्रावण मासांत । वद्य अष्टमीस । कृष्णजयंतीस । शुक्रवारीं ॥६॥  
 लेखनाचें कार्य । करविलें पूर्ण । कृपाळु होवोन । स्वामीरायें ॥७॥  
 श्रीधर कोकजे । गोपाळाचा सुत । मागणें मागत । स्वामीपार्शीं ॥८॥  
 धडावी ऐसी च । निरंतर सेवा । स्वामीरायें द्यावा । आशीर्वाद ॥९॥

## परिशिष्ट २—कांहीं विशेष शब्दांचें स्पष्टीकरण (उत्तरार्ध)

(महत्वाची टीप — पूर्वाधीत ज्यांचें स्पष्टीकरण दिलें आहे ते शब्द उत्तरार्धांत घेवले नाहीत व त्यांवर (उत्तरार्धांत) मूळग्रथातहि खूणा केलेल्या नाहीत.)

**अग्नि (तीन)** — प्रलयग्नि, विद्युदग्नि व वडवाग्नि.

**अणुसंशोधन** — (अ १५-७०२) विश्वांतील अणु-परमाणूंचा हिशेव. विश्वात ९२।९३ मूलद्रव्ये आहेत. त्यांचे सूक्ष्म घटक म्हणजे परमाणु. हें सर्व विश्व परमाणुमय आहे असा शास्त्रज्ञांचा पूर्वी समज होता. त्या परमाणूंचें हि परीक्षण करून हिशेव घेतां येईल. त्यांचें पृथक्करण हि करतां येईल. मात्र वैराग्याशिवाय आत्मज्ञान स्थिर होणार नाही.

**अनुष्टुभादिक** — अनुष्टुभ वगैरे, अनुष्टुप्—अनुष्टुभ हे एक अक्षरवृत्त आहे. ह्याचे चार चरण असून प्रत्येक चरणांत आठ अक्षरे असतात. सामान्यतः प्रत्येक चरणांत पांचवें अक्षर लघु (ह्रस्व) व सहावें गुरु (दीर्घ) असतें. दुसऱ्या व चौथ्या चरणांत सातवें अक्षर लघु असतें. श्रीगीतेचे पुष्कळसे श्लोक याच वृत्तांत आहेत. वेद-ऋचांची रचना यासारख्या अनेक छंदांत आहे. (अशा प्रकारें अनेक छंदामधून चर्चा आली आहे असा भाव.)

**अभिचारादिक** — दुसऱ्याला दुखापत किंवा नाश करण्याचे मंत्र, जादूटोणा, जारणमारण, करणी वगैरे.

**अष्ट दिग्गज** — पृथ्वीच्या अष्ट दिशांस राहून तिला आपल्या डोक्यावर उचलून धरणारे आठ हत्ती पुराणांत वर्णिले आहेत. ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अंजन, पुष्पदंत, सार्वभौम व सुप्रतीक अशीं त्यांची नांवे आहेत. (कालचक्रात त्यांचाहि नाश होतो.)

**आहेर** — लग्न, मुंज इत्यादि मंगल प्रसंगी अथवा एखाद्याच्या मत्कारार्थ-अभिनदनार्थ — त्यास त्याचे इष्टमित्र, सगेसोयरे, नातेवाईक ह्यांच्याकडून शेला, पागोटे वगैरे पोद्याख, दागिना इत्यादि जी देणगी दिली जाते ती.

**एकलव्य** — (अ. १८-२९८३) द्विरण्यधनु नांवाच्या निषाद (भिल्ल) राजाचा मुलगा एकलव्य. द्रोणाचार्याजवळ धनुर्विद्या शिकावी अशी त्याची इच्छा होती परंतु द्रोणाचार्यांनी 'तू क्षत्रिय नाहीस तेव्हा कौरवपाडव या राज-पुत्रांरोबर मी तुला शिकवू शकत नाही.' असें सांगितले. एकलव्याने गुरुद्रोणाचार्यांची मातीची मूर्ति करून त्या मूर्तीच्या चरणांजवळ धनुर्विद्येचा स्वतःच अभ्यास केला व तो द्रोणाचार्यांचा पट्टशिष्य जो अर्जुन त्याहून हि प्रवीण झाला. गुरुच्या मूर्तिकामूर्तीचा जर एवढा प्रभाव तर प्रत्यक्ष गुरुच्या अनुग्रहाचा प्रभाव फार मोठा हें नक्कीच.

**एकान्तर** — एक दिवसाआड जेवण्याचे व्रत; धारणे-पारणे.

**ओळंबा** — गवंड्याचे एक हत्यार, अचूकपणा व सरळपणा तपासण्याचे साधन. एका दोरीला लावलेले (शिसे, दगड वगैरेचे) गोल वजन. हें वजन लांबकळत ठेवून दोरी स्थिर झाल्यावर सिद्ध होणारा उभा लंब (भित इत्यादि उभ्या सरळ रेषेत आहे किंवा नाही हे पाहण्यासाठी).

**कांसवीची दृष्टि** — कृपादृष्टि. कांसवीच्या पिलांचें पोषण तिच्या केवळ दृष्टिक्षेपानेच होतें, अशी समजूत आहे त्यांना दूध न मिळतां हि त्यांचें पोषण होते.

**कांसवीचें तूप** — दूधच नाही तेथे तूप कोठलें? मिथ्या गोष्ट; असंभवनीय गोष्ट. (कांसवीची दृष्टि पहा)

**कृच्छ्र** — पहिल्या दिवशी एकदां जेवण, दुसऱ्या दिवशी सायकाळीं जेवण, तिसऱ्या दिवशीं न मागतां आपोआप मिळेल तें खाणे व चौथ्या दिवशीं उपोषण ह्याप्रमाणें क्रमाने बारा दिवस कर्ण्याचें व्रत.

**केशीहंता** — केशीला मारणारा श्रीकृष्ण, केशिन् हा कंसाच्या पक्षाकडील एक असुर. हा घोड्याचें रूप घेऊन कृष्णास मारण्याकरितां आला असतां कृष्णानें ह्याम ठार केलें.

**खाराचीं पुटे** — (अ. १८-२९९) सोन्याला, सोन्याच्या दागिन्याला, उजळा देण्यासाठी सोरा या खाराचा उपयोग करतात. खाराच्या पुटाने— उपयोगाने— सोनें अधिकाधिक तेजस्वी दिसू लागतें.

**गोतांबील** — सर्वांनी एका पानांत जेवणे.

**गौतमानें...गंगा...आणिली**(अ.१५-१०४२) नाशिकांत ब्रह्मगिरीजवळ गौतम ऋषीचा आश्रम होता. एकदां गौतमाकडून गोहृत्येचें पातक घडले असता त्याचें क्षालन व्हावें म्हणून गणपतीनें त्याला 'शंकरापासून गंगा मागून घ्या व तीत स्नान करा म्हणजे पावन व्हाल' असें सुचविले. त्याप्रमाणे गौतमानां ब्रह्मगिरीवर दीर्घ काल आराधना करून शंकराला प्रसन्न करून घेतले. शंकरांनी जर्टेंतील गंगा खाली सोडली ती गंगा-द्वारांतून वहात येऊन कुशावर्तात पडत असलेली आजहि दिसते. गंगेत स्नान करून गौतम ऋषि पावन झाला. ती गंगा म्हणजेच गोदावरी नदी.

**गौतमालागींच** (अ १७-१६६ व अ. १८-२९११) — गोदावरी गौतमासाठी निर्माण झाली असली तरी सर्वांनाच पावन करते.

**घुणाक्षरन्याय** — यदृच्छेनें गोष्ट घडणें. जसें किड्यानें कोरलेल्या भागाला अक्षरगीचा आकृति येणें.

**चक्रवाक (जोडी)** — एक पक्षी. यामध्ये दिवसां नर-मादीचे संमेलन व रात्री वियोग होतो. त्यामुळे ही जोडी रात्रभर एकमेकांना

हाका मारीत राहते असा कविसंकेत आहे.

**चतुर्विध अग्ने** — कोरडी, स्निग्ध (तुपा-तेलाचीं) शिजविलेली आणि भाजलेलीं अशीं चार प्रकारची किवा भक्ष्य, भोज्य, लेह्य (चाटा-वयाची) व चोप्य (चोवून खावयाची) अशीं.

**चंद्रायण** — वौर्णमेष पंधरा घांस खाणे व नंतर वद्य पक्षांत रोज एकेक घास कमी कमी करून शुक्लपक्षांत एकेक घांस वाढविणें अशा-प्रकारे चंद्राच्या क्षयवृद्धीप्रमाणें करतात असें प्रायश्चित्तात्मक व्रत.

**चौरंगी** — रुद्रपूरच्या भुलेश्वर राजाच्या थोरल्या राणीचा हा मुलगा. ह्याच्या वेळीं राणी गरोदर असतां तिला सवतीने नवऱ्याकडून वनांत हाकविले. तेथे ती प्रसूत झाली. काही दिवसांनी त्या मुलाचे हातपाय तोडून त्याला वेगीपाशी चौरंगावर बांधून ठेवले. मत्स्येन्द्रनाथ फिरत फिरत तेथे आले. त्यांच्या कृपेनें त्याला हातपाय परत मिळाले व तो त्यांचा शिष्य झाला. याचें चौरंगीनाथ असें नाव ठेवण्यांत आलें.

**जाळोनि अनंग...तो** (अ. १३-३८) — अनंग = कामदेव; मदन. ब्रह्मदेवाच्या हृदयापासून काम-देव उत्पन्न झाला. ह्याच्या स्त्रीचें नांव रति. तपस्थ्याच्या तपश्चर्येंत हा विघ्न आणतो व योग्याच्या चिन्तास चचलता आणतो. शंकर कैलासाचें राज्य सोडून स्मशानात राहावयास गेले त्या वेळी त्यानी आपल्या तृतीय नेत्रातील अग्नीनें ह्याचे भस्म केले.

**तन्मात्रापंचक** — तन्मात्रे = मिसळत होता शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ह्या गुणांचीं (विषयांची) निरनिराळी अतिसूक्ष्म मूलस्वरूपें. (मागील भागांत - चौथीस तत्त्वे पहा.)

**तक्षकाच्या फणीतील मणि** — अप्राप्य वस्तु. सापाच्या डोक्यांत मणि म्हणजे रत्न असतें असा कविसंकेत आहे. सापांत तक्षक फार भयंकर, त्याच्या डोक्यातील मणि म्हणजे मिळण्यास अशक्यच अशी गोष्ट.

**त्रिदोष** — कफ, वात व पित्त ह्या शरीरां-  
तील तिन्ही दोषांचा एकाच वेळी क्षोभ होणें.

**त्रिपुरी वेदिला** (अ. १७-३) त्रिपुरामुर  
नांवाचे तीन दैत्य होते. त्यांनी तपश्चर्या करून  
ब्रह्मदेवापासून तीन अभेद्य नगरे मागून घेतली  
होती. त्रिपुरामुरांच्या पीडेनें त्रैलोक्य त्रस्त झालें  
असतां देवांनी त्रिपुरवधार्थ शक्राची प्रार्थना केली.  
शकरांनी त्रिपुरामुरांबरोबर युद्ध सुरू केले. ह्या  
युद्धांत देवांनी शंकराला सर्व प्रकारचे साहाय्य  
दिले असतां हि प्रारंभी गणपतीची आराधना  
केली नसल्यामुळे देवाना यश लाभेना. ती आरा-  
धना केल्यावरच त्रिपुरामुराचा वध झाला.

**दिव्य** — कडक किवा कठोर परीक्षा. आपल्या  
सत्याची साक्ष पटवून देण्यासाठी विशिष्ट देह-  
दंडाची; अग्निदिव्य, जलदिव्य इत्यादि. अग्नि-  
दिव्य — अग्नीतून मुरझित वाहेर येणें, जसें  
सीतेने केले.

**दूर्वचा अंकुर** — दूर्वा — एक विशिष्ट प्रकारचें  
गवत. गणपतीला वाहतात. ह्याची मुळें जमिनीत  
खोलवर जातात आणि वरवर हें गवत वाळून  
गेलेलें वाटले तरी मुळाशी जिवंत असतें. जरा  
ओलावा मिळतांच वाढतें म्हणून दूर्वचा अंकुर  
म्हणजे अमर वस्तु.

**धूमकेतु** — अंडेनक्षत्र. आकाशांत हें आक-  
स्मिकपणे दिसू लागतें. ह्याचें आकाशात दिसू  
लागणें अनिष्टसूचक आहे; अशी समजूत आहे.

**धृति** — निश्चयशक्ति; धारणाशक्ति; मनांत  
दृढ सांठवून ठेवण्याची शक्ति. कार्याला चालना  
देणारी व बुद्धीचें नियमन करणारी शक्ति.

**धेडा नाचे** — अत्यंत हर्षित होऊन नाचणें.  
धेंडा नाचविणे—लग्न समारंभांत नवरानवरीस  
खांद्यावर घेऊन नाचणें.

**ध्रुव करीना भ्रमण** — (अ. १३-८०८)  
ध्रुवतारा आकाशांत नेहमी एकाच जागी स्थिर  
असतो असें दिसतें. विशेषतः ध्रुवप्रदेशांतून  
पाहिल्यास सर्व आकाशस्थ गोल त्याच्या सभोवार

प्रदक्षिणा घालतांना दिसतात. (पूर्वाधांत ध्रुवाची  
गोष्ट आली आहे.)

**नर-अवतार** — (अ. १८-२८८७) अर्जुन-  
(नर-नारायण पहा)

**नर-नारायण** — (अ. १५-८२७) नर आणि  
नारायण हे दोन प्राचीन ऋषि. ह्यांचें परस्परांत  
सख्य असून हे विष्णूचे अवतार मानले आहेत.  
नरांनो बदगिकाश्रमांत उग्र तप केले हाच पुढें  
अर्जुन झाला व नारायण ऋषि कृष्णरूपांनो  
अवतरले.

**नवचंडी** — देवीच्या स्तोत्राचें-सप्तशतीचें-  
नऊ वेळां पठण करून केलेली देवीची आराधना.

**नहुष** — (अ. १८-२५६०) पुरूरव्याचा नातू.  
नहुषराजा हा फार पराक्रमी व सद्गुणी असल्यानें,  
इंद्राला ब्रह्महत्येमुळें इंद्रपदाला मुकावें लागले  
तेव्हां, देव आणि ऋषि यांनी ह्याला इंद्र केलें.  
त्या स्थानी तो ऐपआरामात राहूं लागला. त्यानें  
विषयलंपट होऊन इंद्रपदप्रमाणे इंद्राणीची प्राप्ति  
व्हावी अशी इच्छा धरून इंद्राणीला उपभोगार्थ  
पाचारिलें. तिने संकट टळावें म्हणून अपूर्व वाह-  
नांतून नहुषाने वसून यावें अशी अट घातली.  
तेव्हां नहुषाने सप्तर्षीना वाहनाला जोडले व  
त्यांतून तो तिच्याकडे जाऊं लागला. त्याला घाई  
झाली होती म्हणून तो ऋषीना लाथेने हांकू  
लागला आणि 'सर्प सर्प' (म्हणजे 'चला, लवकर  
चला') असें म्हणू लागला तेव्हां अगस्तीना राग  
येऊन त्यानी 'तू मर्षयोनीत पतन पावशील'  
असा नहुषाला शाप दिला. तेव्हां नहुष इंद्रपदा-  
पासून च्युत होऊन सर्प झाला.

**नाग-कूर्म-कृकरादि** — शरीरातील चालक-  
शक्ति जी प्राण तिचे स्थानभेदावरून आणि  
कार्यभेदावरून दहा प्रकार केले आहेत. त्यांतील  
प्राण, अपान, व्यान, उदान व समान ह्यांना  
पंचप्राण असें नांव आहे. नाग, कूर्म, कृकर (ल);  
देवदत्त व धनंजय ह्यांना पंचउपप्राण म्हणतात.  
ह्यांची कार्ये अनुक्रमे शिक, जांभई, डेकर, उचकी



व शरीराला पुष्टि देणे (किंवा मृत शरीर फुगविणें) ही आहेत.

**निंबलोन (उत्तरील)** — कडुनिंबाची पाने, मोठ, मोहरी इत्यादि पदार्थ भोवती ओवाळून दृष्ट काढणे. यात प्रेम व ममता दिभून येते.

**निःश्वासीं जन्मा आले वेद** — (अ १८-२४७०) ईश्वराच्या उच्छ्वासानून वेद (आणि सर्व विश्व हि) निर्माण झाले अशी समजूत आहे.

**नैमिषारण्य** — गोमती नदीजवळचे एक पवित्र अरण्य. येथे कित्येक ऋषि रहात असत. त्यांना सौतीने येथे महाभारत सांगितले. सूताने यौनकादि ऋषींना येथेच यज्ञप्रसंगी अनेक पुराणे सांगितल्याचे पुराणांत वर्णन आहे.

**पर्वकाल** — पर्वणी, पुण्यकाळ, अमावास्या, पौर्णिमा, वैधृति, व्यतिपात, संक्रात, ग्रहण इत्यादि काल. ह्या काली समुद्रस्नान, श्राद्ध, दान, तप इत्यादि पुण्यकर्म केली असता कोटिगुणित फळ प्राप्त होते. (असे शास्त्रांत सांगितलें आहे.) विशिष्ट पर्वकाळात विशिष्ट देवतेची आराधना करावी अशी लोकम्हटी आहे.

**पंचकांची** — पाच विषय, पांच जानेद्विये, पाच कर्मद्विये इत्यादि पंचकांची; पंचीकरणाची. आकाश, वायु, अग्नि, आप आणि पृथ्वी अशी मूळ पंचमहाभूतें. त्याची दृश्य रूपे मात्र एका महाभूताचा मोठा भाग आणि इतर चारंगचा अल्प अल्प भाग याच्या मिश्रणाने झालेली असतात. या मिश्रणक्रियेस पंचीकरण म्हणतात.

**पंचाग्निसाधन** — चारी दिशाना चार कुंडें पेटवून दिवसभर उन्हात वसणे हा तपश्चर्येचा एक प्रकार आहे. याला पंचाग्निसेवन धूम्रपान असेंहि म्हणतात.

**पापग्रहपंक्ति** — आकाशातील ग्रहांची दुश्चिह्नकारक युति मगळ, गनि, राहु व केतु हे अशुभ मानलेले ग्रह एकत्र येणे.

**पांचवीच्या रात्री** — (अ १८-१४२६) प्रसूतीनंतर (पांचव्या) सहाव्या दिवशी सटवीची

पूजा करतात.. त्या रात्री बाल्गिणीच्या खोलीत रात्रभर समई लावून ठेवतात; दिवा अखंड तेवत राहावा म्हणून जपतात. त्याचा हेतु काळोखातून येऊन सटवीने बालकाला अपाय करूं नये असा असतो.

**प्राणजय** — प्राणशक्तीवर ताबा मिळविणें.

**प्रायश्चित्तोदक** — हातून घडलेल्या पापाचें किंवा विहित कर्म करण्याचे राहून गेल्यामुळे घडणाऱ्या दोषाचे निवारण करण्याकरिता दान (द्रव्य, गाय इत्यादि) देतात अगर यज्ञ करतात. ह्या दान दिलेल्या वस्तूवर अमुक गोष्टीबद्दल प्रायश्चित्त म्हणून दान दिल्याचे जे उदक (पाणी) सोडले जाते ते प्रायश्चित्तोदक.

**बलुत्या** — बलुत्यावर हुक्क सागणारा गावचा वतनदार. शेतकऱ्याच्या विविध गरजांना अनुसरून या बलुत्याच्या मोवदल्यात त्यानी ठराविक कामे शेतकऱ्याकरिता करावयाची असतात बलुते म्हणजे गावातील सुतार, लोहार, महार, माग, कुभार, चाभार, न्हावी. परीट इत्यादि वारा (काही ठिकाणी कमीजास्त) वतनदाराना शेतावर कुणव्याकडून मिळणारा पिकाचा वांटा.

**भगत (घुमे)** — देवऋषि. ज्याच्या अंगांत वारे येतें तो. खेडेगावानून विशेषतः कोकणांत अशी कांही थोडी माणसे आढळतात की, जी आपल्या अंगात देवतेचा मंचार होतो असे सांगतात आणि विशिष्ट वेळी अगर धूप घालून शरीर अगर त्याचा कांही भाग अत्यंत जलद कांपवितात. त्याला भगताचें घुमणे म्हणतात. अशा वेळी तो विशेष प्रकारे हुंकार देत लोकांच्या काही प्रश्नाची उत्तरे देवतेने दिलेली म्हणून सांगतो. भगत घुमताना त्याचे अंग पिळवटून निघत असतें.

**मन्वंतर** — कालक्रमांतील विशिष्ट विभाग. मनु म्हणजे विशिष्ट काळांतील मानवाचा पूर्वज. (पूर्वाधानील कल्प व चौदा मनु पहा.)

**मरीचि** — कश्यपाचा पिता. एक प्रजापति. सप्तर्षींपैकी एक. मरुत्समूहातील प्रमुख

**महालया** — (अ. १८ - ३१२२) मोहिनी-राज. नेवासें येथील दैवत. ह्याच्या देवळाच्या खांबाजवळ वसून ज्ञानेश्वरी लिहिली-सांगितली

**माथा हुंगिला** — पुत्रवत् प्रेम केले. पूर्वीच्या काळी बाप मुलाचें कौतुक करावयाचे वेळी-प्रेम दर्शवायचे वेळी-विशेषतः भेटीचे किंवा निरोपाचे वेळी मुलाचे मस्तक हुंगीत असे. मस्तकाचे अवघाण करी.

**रजःकणें (आरसा = दर्पण)** — धुळीच्या कणांनी. प्राचीन काळी धातूच्या चकचकीत पत्र्याचे आरसे अमत्. ते चकचकीत ठेवण्यासाठी बारीक वाळूने घांसून स्वच्छ करीत. आजहि आरशाची कांच खडूमारख्या पदार्थानि पुसून स्वच्छ करतात. सध्याच्या आरशाला काचेमागे चांदीचा थर व त्या मागें तांबड्या रगाचा थर देतात त्यामुळे आरशात प्रतिबिंब चांगले पडतें त्यांना उद्देशूनहि ' रजःकणें ' इत्यादि उल्लेख होऊं शकेल.

**रसायनरूपे (विषहि - जीववी)** - (अ. १८ - ३०९) आयुर्वेदान धोतरा, वचनाप इत्यादि जहाल विपारी वनस्पती विशिष्ट रसायन-प्रक्रियेनें रोगनिवारक औषधे बनवितात. रसायन रूपात विषक जगविणारं-औषध होते त्याप्रमाणे वधक असणारं कर्मच निष्कामपणे केल्याने मोक्षदायक ठरतें.

**रायतें** — कोशिविरीच्या उपयोगी मूळा, गाजर, काकडी इत्यादि किमून त्यांत मोहत्या दही इत्यादि घालून केलेले तोंडीलावणे; आंबट आंबे भाजून त्याच्या रसांत भरपूर ओल्या मिरचीचें तिखट व गुळ घालून तयार केलेले तोंडीलावणे.

**रेचक - कुंभक** — (हठ) योगातील श्वसन-पद्धति. रेचक-(संथपणे) श्वास बाहेर सोडणे, पूरक-श्वास आंत घेणे, कुंभक — श्वास आंत

अगर बाहेर काही काळ थांबवून (कोंडून) धरणे

**ललाटीचा लेख** — नशीब, दैव (पंथी देवी किंवा) ब्रह्मादेव जन्मलेल्या प्रत्येक मुलाचे सर्व भविष्य त्याच्या कपाळावर ( ललाटावर ) लिहून ठेवतो आणि त्यांत कधी हि बदल होत नाही अशी समजूत आहे.

**वाण** — वायन; व्रताच्या सांगतेकरितां ब्राह्मणास मूप, खण, ताडूळ वगैरे साहित्य देतात तें.

**विद्याधर** — एक देवयोनित्.

**विश्वबाहु** — (भासमान होणारं) सर्व कांही हे परमेश्वराचेंच रूप वस्तुन. अमन्यामुळे विश्वांनील होणाऱ्या सर्व क्रिया ह्या परमेश्वराचेच हात करीत आहेत म्हणून परमेश्वराला विश्वबाहु म्हणतात.

**विष... गिळोनि टाकी** — (अ. १८-१३४७) समुद्रमथनाच्या वेळी प्रथम जग जाळणारं हाला-हल विष बाहेर पडले त्याने जगाचा नाश होऊं नये म्हणून शंकर पुढे झाले व त्यानी ते विष प्रायत केलें आणि म्हणून तर पुढे मंथनातून अमृत बाहेर येऊ शकेल.

**व्याप्य-व्यापकता** — मच्छिद्र भांडें पाण्यांत बुडविलें तर त्या भांड्याच्या आत, बाहेर व मध्ये सर्वत्र पाणी गड्डील. या ठिकाणी तें भांडें व्याप्य व पाणी व्यापक. ह्या विश्वरूप भांड्यात आंत, बाहेर, मध्यें, सर्वत्र ते सच्चिदानंदरूप (ईश्वर) भरून राहिले आहे, म्हणजे विश्व हे व्याप्य आणि ईश्वर व्यापक परंतु परमार्थत सच्चिदानंद रूपाहून अन्य कांही कधीच नाही व नव्हतें म्हणून त्याला व्यापकता आहे असेहि म्हणता येत नाही, फक्त तोच तो आहे.

**शुकाठार्यो नुठावा कंदर्प** — (अ. १६-२५२) व्यास-पुत्र शुक हे जन्मतःच परम ज्ञानी होते. ते आजन्म ब्रह्मचारी होते. त्याच्या तपश्चर्येंत विघ्न आणण्यासाठी इंद्रानें रंभा नामक अप्सरेला त्यास

मोहित करण्याम पाठविले; पण रंभेलाहि ते वग झाले नाहीत. व्यासांनी त्यांस भागवत पढविलें व पुढें त्यांनी ते परीक्षित राजाम मांगितलें.

**श्रमणक** — बुद्धभिक्षु; जैन सत्यामी.

**सच्चिदानंदबाबा** — (अ. १८-शेवटी)

श्रीज्ञानेश्वर महाराज ह्यांनी नेवासे येथे यांचे-कडून ज्ञानेश्वरी लिहविली. महाराज ओंव्या मांगत व सच्चिदानंदबाबा त्या लिहून घेत. हे देगस्थ ब्राह्मण आडनांव थावरे. ह्यांनी ज्ञानेश्वर-विजय नावाचा ग्रंथ लिहिला होता.

**सम्यक्-ज्ञान** — यथार्थ अनुभव; अचूक आणि पूर्ण असे ज्ञान.

**सिंहस्थ** — गुरु ग्रह सिंह राशीत असणे. ह्या वेळी गंगा आदिकरून सर्व तीर्थ विशिष्ट ठिकाणीं एकत्र येतात अशी समजूत आहे. उदा० गोदावरीत नागिक येथे.

**स्थूल शरीर** — जड देह ज्ञानेद्रियांनी ज्याचा प्रत्यक्ष अनुभव मिळतो असे आपले शरीर. त्याचे आत मन, बुद्धि, प्राणशक्ति इत्यादींनी बनलेले सूक्ष्म शरीर असते.

**क्षमा** (अनाक्रोश क्षमा) — एखाद्याने अपराध केला असता, दुःख दिले असता त्याला शिक्षा द्यावी हा सामान्याचा स्वभाव असतो, पण स्वतःच्या दुवळेपणामुळें केव्हा केव्हां अपराध्याकडे दुर्लक्ष केले जातें त्याला हि व्यवहारात क्षमा म्हणतात. अपराध्याला शिक्षा देण्यासाठी जो उद्योग करावा लागतो त्याच्या आळसामुळे क्षमा केली जाते. परंतु ह्या दोन्ही ठिकाणी अपराध्याच्या कृत्यावद्दल आरंभी चीड आलेली असते म्हणून या क्षमेला अनाक्रोश हे विशेषण लावता

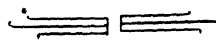
येत नाही. सर्व काही मीच आहे. ह्या ज्ञानामुळें-दांतांनी जीभ चाविली असतां जशी दांतांना शिक्षा केली जात नाही त्या पद्धतीने-अपराध करणाराहि मीच आहे ह्या ज्ञानामुळें त्याला शिक्षा केली जावी अशी कल्पनाहि न येतां जी सहज क्षमा तिला अनाक्रोश क्षमा म्हणतात.

**क्षीरसागराचें.. मंथन.. मृत्युसी कारण** —

(अ. १८-२५५६-५८) समुद्रांतून जेव्हां अमृत निघाले तेव्हा ते देव व दानव ह्या दोघाच्या हक्काचें झाले पण दानवाना अमर करणे ह्यानिकारक होईल हे लक्षात घेऊन विष्णूने मोहिनीरूप घेऊन अमृत वाटण्याचे काम घेतलें. देव-दानवांच्या समोरासमोर पंक्ति बसवून देवांच्या पक्तीत मात्र अमृत वाढले. राहू लवाडीने देवांच्या पक्तीत बसला व अमृत प्याला. चंद्र-सूर्यांनी त्याला ओळखिलें व विष्णूने अमृत त्याच्या गळ्याखाली जाण्यापूर्वीच त्याचा गिरच्छेद केला.

**क्षेत्र** — शेत. शरीर हे जीवात्म्याचे क्षेत्र म्हटले आहे. शेतकरी जसा उत्तम पीक काढतो त्याप्रमाणे ह्या देहाचा उपयोग करून आत्मानुभावाचे पीक काढावयाचे असतें. देहाधारे कर्तव्य पार पाडावयाचें असतें. ह्या क्षेत्राला जाणणारा ह्याहून वेगळा, केवळ माक्षीरूप असतो. त्यासच 'क्षेत्रज्ञ' म्हणतात. भिन्न भिन्न क्षेत्रात (देहात) राहणारा साक्षीरूप आत्मा वेगवेगळा नसून एका परमेश्वराचाच हा भिन्न भिन्न आभास आहे, असें ओळखणें हेच आत्म-ज्ञानाचें अंतिम रूप आहे.

**क्षेत्रज्ञ** — (क्षेत्र पहा)



## परिशिष्ट ३ : अनुवादांत वगळलेल्या ओंव्या

( राजवाडे प्रतीत ह्या ओंव्या आढळत नाहीतच. )

| अध्याय | ओंवी   |  | प्रत        |
|--------|--------|--|-------------|
| १३ वा. | ८२     | नवल अहंकाराची गोठी । विशेषें न लगे अज्ञानापार्ठी ।<br>सज्ञानाचे झोंबे कंठी । नाना संकटीं नाचवी ॥८२॥      | ( साखरे )   |
| १३ वा. | १७३    | जयाचेनि जालेपणें । पांगुळा होइजे प्राणें ।<br>जयाचेनि विंदाणें । जग हें चेष्टे ॥१७३॥                     | ( साखरे )   |
| १३ वा. | ९२६    | नभाचें शून्यत्व गिळून । गुणत्रयातें नुरवून ।<br>तें शून्य तें महाशून्य । श्रुतिवचनसंमत ॥९२६॥             | ( साखरे )   |
| १४ वा. | ८५     | जैसें का स्वप्न मोहा । तो एकाक्री देखे बहुवा ।<br>तो चि पाडु आत्मया । स्मरणेंवीण असे ॥८५॥                | ( साखरे )   |
| १४ वा. | २०२    | त्रिगुणवृद्धि निरूपण । तीं श्लोकां सांगितलें जाण ।<br>आतां सत्त्वादिवृद्धिलक्षण । सादर परिचेमीं ॥२०२॥    | ( साखरे )   |
| १४ वा. | ३३९    | कां शरीराआंतील प्राणु । घरीं आतिथ्याचा ब्राह्मणु ।<br>नाना चोहटांचा स्थाणु । उदासु जैसा ॥३३९॥            | ( साखरे )   |
| १५ वा. | ८६     | स्वर्मा प्रियापुढें तरुणांगी । निदेली चववृनि वेगीं ।<br>आलिंगिलेनिवीण आलिंगी । सकामु करी ॥८६॥            | ( साखरे )   |
| १५ वा. | १८६    | मतीचे सोट वांवे । घालिती स्फूर्तीचेनि थांवे ।<br>बुद्धिप्रकाश धे थांवे । विवेकावरी ॥१८६॥                 | ( साखरे )   |
| १५ वा. | २१९    | वांचूनि आम्हीं निरूपिलें जैमें । ययाचें अचळ मूळ असे तैमें ।<br>आणि तैसाचि जरी हा असे । साचोकारा ॥२१९॥    | ( साखरे )   |
| १५ वा. | २२०    | तरी कोणाचेनि संतानें । निपजती तया उन्मूळणें ।<br>काय फुंकिलिया गगनें । जाइजेल गा ॥२२०॥                   | ( साखरे )   |
| १५ वा. | २२२    | मृगजळाचीं गा तळीं । तियें दिठीं दुरूनि न्याहाळीं ।<br>वांचूनि तेणें पाणियें साळी केळी । लाविमी काई ॥२२२॥ | ( साखरे )   |
| १५ वा. | ४३१    | जैमें सर्पत्वा कां दोरा । दोरुचि मूळ धनुर्धरा ।<br>तैसा ज्ञानाअज्ञानाचिया संमारा । मियां चि सिद्धु॥४३१॥  | ( साखरे )   |
| १५ वा. | ५०८ अ. | अजामेकां । अजा म्हणतां जन्म नाहीं । त्यामि नाशु कैचा कायी ।<br>यालागीं अक्षर पाहीं । अज्ञानघन ॥५०८ अ.॥   | ( दांडेकर ) |
| १५ वा. | ५१२    | घनअज्ञानसुपुमि । तो बीजभावो म्हणती ।<br>येर स्वप्न हन जागृति । फळभावो तयाचा ॥५१२॥                        | ( साखरे )   |



## परिशिष्ट ४ : देणगीदारांचा नाम-निर्देश

| नांव                                       | रुपये | नांव   | रुपये |
|--|-------|--|-------|
| श्री. भास्कर रामचंद्र लिमये, रत्नागिरी     | ७०    | श्री दत्तात्रय पांडुरंग मोडक, रत्नागिरी                  | २५    |
| सौ. मावित्रीबाई दत्तात्रय बांद्रे, देवळें  | ३०    | श्री विठ्ठल उद्धव पटवर्धन, गणेशगुळें                     | ५०    |
| श्री. विठ्ठल गोविंद खांडेकर, खानू          | ३०    | श्री. धिवराम गणेश गोडबोले, विलेंपालें                    | २५    |
| श्री. श्रीधर नारायण गोखले, गोरेगाव         | २५    | कु. मीना विश्वनाथ गोरे, रत्नागिरी                        | २५    |
| श्री. वसंत वामुदेव पंडित, मुबई             | ५१    | श्री. काशिनाथ दत्तात्रय गद्रे, रत्नागिरी                 | २५    |
| श्री. पांडुरंग हरि लाड, मुबई               | २५    | डां. रामचंद्र अनंत पुराणिक, रत्नागिरी                    | २५    |
| वैद्य विनायक गोपाळ लिमये, पुणे             | २५    | श्री. महादेव रामचंद्र सुर्वे,                            |       |
| श्री. प्रभाकर रघुनाथ जोशी, असोडें          | २५    | (सुर्वे मंडळी) पांक्स १०१                                |       |
| श्री. विश्वनाथ परशुराम खांडिलकर, रत्नागिरी | २५    | मी. गीताबाई रामचंद्र परांजपे, रत्नागिरी                  | २५०   |
| श्री. रामचंद्र नारायण जोशी, कसोप           | २५    | श्री. देसाईवधू, पांक्स                                   | १५००  |
| श्री. बालकृष्ण तुकाराम मोजें, मालवण        | २५    | श्रीस्वरूपानंद-शिष्यद्वारा                               | १५००  |
| डां. वामुदेव काशिनाथ सोहोनी, सोमेश्वर      | २५    | श्री. रामचंद्र सखाराम नेने, मावळगें                      | २५    |
| श्री. अर्जुन केशव ठाकूर, तारकली            | २५    | श्री श्रीनाथ रामचंद्र मूळचे, कुरतडें                     | २५    |
| श्री. महादेव हरिश्चंद्र म्हापणकर, मुबई     | २५    | श्री हरी कृष्ण राणे, रत्नागिरी                           | १०१   |
| श्री. शंकर गणेश कुळकर्णी, पाथरट            | २५    | श्री. वामुदेव रामचंद्र ओटवणेकर, कुडाळ                    | २५    |
| श्री. विठ्ठल वामुदेव देसाई, केळखें         | २५    | श्री. रामचंद्र माहती भाटचे, रत्नागिरी                    | ३०    |
| श्री. सखाराम बापू भोगटे, मुबई              | ५०    | श्री. रघुनाथ महादेव शेटचे, राजापूर                       | ३०    |
| श्री. आर्. बी. कुळकर्णी, रत्नागिरी         | १००   | श्री. रघुनाथ केशव जोशी, महालकरी, वेंगुळें                | २५    |
| श्री. शंकर नारायण सटकर, गोरेगांव           | २५    | श्री. महादेव जनार्दन सहस्रबुद्धे, गोरेगांव               | २५    |
| श्री. गणेश रामचंद्र चिपळुणकर, मुबई         | ३०    | श्री. गोविंद केशव गोखले, मुबई                            | २५    |
| श्री. दत्तात्रय गजानन जोशी, मांगली         | २५    | डां. राजाराम भागवं देवधर, पांक्स                         | २५    |
| श्री. रामचंद्र विष्णु गोडबोले, खामगांव     | २५    | डां. वामन यशवंत परांजपे, मावळगें                         | ५०    |
| श्रीमती सुदराबाई जगन्नाथ पंडित, गोरेगाव    | २५    | श्री. प्रभाकर गोविंद खेर, रत्नागिरी                      | २५    |
| श्री. रामचंद्र ज्ञानदेव परब, सांगेली       | २५    | श्री. गणेश रामचंद्र वेहेरेबुवा, कुधें                    | २५    |
| श्री. पी. आर्. राजें, विलेंपालें           | २५    | श्री. शंकर दत्तात्रय राजाध्यक्ष, रत्नागिरी               | २५    |
| श्री. प्रल्हाद काशिनाथ सोहोनी, रत्नागिरी   | २५    | श्री. दत्तात्रय गोविंद गोडबोले, वकील, रत्नागिरी          | ५०    |
| श्री. केशव कृष्ण वैद्य, वडाळा              | २५    | श्री. गणपत गोविंद यादव, खानू                             | २५    |
| श्री. गजानन महादेव कांहेरे, डोबिवली        | २५    | श्री. गणेश हरि गोरे, रत्नागिरी                           | २५    |
| श्री. माधव दत्तात्रय मिराशी, मुबई          | २५    | श्री. दत्तात्रय काशिनाथ काळे, पावस                       | २५    |
| श्री. श्रीकृष्ण विठ्ठल लेले, गोळप          | २५    | श्री. गोपाळ दामोदर काळे, गोळप                            | २५    |
| डां. रामचंद्र श्रीकृष्ण जोगळेकर, रत्नागिरी | १२५   | श्री. उद्धव गोविंद खांडेकर, मुबई                         | ५०    |
| डां. भास्कर दत्तात्रय गोडबोले, मुबई        | ४०    | श्रीमती सीताबाई रामचंद्र खांडेकर, खानू                   | २५    |
| श्री. अच्युत गोविंद खेर, रत्नागिरी         | २५    | श्री. बापूजी गोविंद खेर, रत्नागिरी                       | २५    |
| श्री. अनंत वामुदेव गोगटे, गोळप             | २५    | श्री. विठ्ठल गणेश जोशी, पुणें                            | १०२   |
| श्री. विनायक विष्णु भाटवडेकर, रत्नागिरी    | ३०    | (श्रीसद्गुरु बाबामहाराज सहस्रबुद्धे समाधि-<br>मदिरातफें) |       |
| श्री. बालकृष्ण महादेव परांजपे, गांवखडी     | ५०    |  |       |

| नांव  | रुपये | नांव  | रुपये |
|---|-------|---|-------|
| सो लक्ष्मीबाई श्रीधर कोंकज, पावम  | २५    | श्री ग प. उपाध्ये, मुंबई                          | २५    |
| श्री. जनार्दन हरि पटवर्धन, मुंबई  | १५००  | श्री. मल्हार सदाशिव पारखे, पुणे                   | २५    |
| श्री गणेश कृष्ण जोशी, गणेशगळे   | २५    | श्री यशवत विठोबा गाधी, मुंबई                      | १०१   |
| डॉ. दत्तात्रय बळवत बोथरे, वांडे   | ५०    | श्री. दिवाकर वामन चितळे, नागपूर                   | ५१    |
| श्रीमती आनंदीबाई यशवत वेडेकर, पावम  | ५१    | श्री दामोदर वामन पोतदार, पुणे                     | २५    |
| श्री गोविंद विश्वनाथ आवडेंकर, विलिपार्ले  | २५    | श्री. गोपाळदाम पी कापडिया, मुंबई                  | १००   |
| श्री. दिवाकर यशवत अभ्यकर, गावडेआवरे   | २५    | श्री. आत्माराम विठ्ठल पाथरे,<br>(पाथरे बंधू) पावम | १०१   |
| श्री दत्तात्रय रघुनाथ डोगरे, मुंबई  | २५    | श्रीमती इंदिराबाई परशुराम खांडेकर, खानू           | २५    |
| श्री शंकर रामचंद्र काळे, गोंडप  | १००   | श्री मनोहर दत्तात्रय मिराशी, दामोळे               | २५    |
| श्री श्रीधर गोपाळ कोंकजे, पावम  | २५    | श्री. प्रभाकर आनंदराव पतंगे, मुंबई                | २५    |
| श्री श्रीकृष्ण गणेश फडके, वॉरिवर्ली   | २५    | श्री. विश्वनाथ नारायण गोलिवडेकर, मुंबई            | २५    |
| श्री दत्तात्रय रघुनाथ खानू, पावम  | २५    | श्री. वामन दत्तात्रय मिराशी, पाचोरे               | २५    |
| श्री. रामचंद्र नारायण गाधी, रत्नागिरी   | १०१   | श्री. पी. एम्. काळे, फोटोग्राफर, रत्नागिरी        | २५    |
| श्री. दत्तात्रय बाळकृष्ण मिर्गावी, पावम   | १२१   | श्री. रामचंद्र गणेश भिडे, रत्नागिरी               | २५    |
| याज्ञिकप्रवचनद्वारा (कुर्थे रु. ९, खानू रु. ६,<br>कुरतडे-डुंगरे रु. १५, हरचरी रु. ६, गो-<br>वर्चावाठार रु. २५, फणमोव रु. २०,<br>उमरे रु. ७, बदर रु. ५, पावम रु. २८) |       | श्री. मोरेश्वर यशवत परांजपे, पुणे                 | २५    |
| श्री. निवृत्ति नारायण मल्ट्टे, रत्नागिरी  | ५१    | श्री नारायण त्रिष्णु पटवर्धन, मुंबई               | २५    |
| श्रीमती सुशीलाबाई शंकर जावडेकर, गारगोटी   | २५    | श्री. श्रीधर विश्वनाथ लिमये, मुंबई                | ५०    |
| श्री. अनंत शंकर काळे, पुणे  | २५    | श्री. मोरेश्वर दिनकर जोशी, रत्नागिरी              | २५    |
| श्री. मधुकर दत्तात्रय मिराशी, मुंबई   | २५    | श्री. दामोदर गोपाळ पडित, वकील, रत्नागिरी          | २५    |
| श्री. काशिनार्थ शंकर काळे, कन्हाड   | २५    | श्री. अनंत महादेव बर्वे, वकील, रत्नागिरी          | २५    |
| श्रीमती जानकीबाई जगन्नाथ वेलणकर, रत्नागिरी  | २५    | श्री. मदाशिव गणेश भिडे, वकील, रत्नागिरी           | २५    |
| श्री. लक्ष्मण भाऊ आवेरकर, रत्नागिरी   | २५    | श्री. कृष्णाजी भास्कर नानल, वकील, रत्नागिरी       | २५    |
| श्री. बाळकृष्ण गणेश गोंडबोले, मुंबई   | २५    | श्री. सदानंद महादेव ठाकूर, वकील, रत्नागिरी        | २५    |
| कु. डडु गणेश गोंडबोले, मुंबई  | २५    | श्री. नारायण शिवराम दीक्षित पटवर्धन, रत्नागिरी    | २५    |
| श्रीमती मरस्वतीबाई गणेश गोंडबोले, मुंबई   | ५१    | श्री. एन्. व्ही. जोशी, वकील, रत्नागिरी            | २५    |
| मौ. रमाबाई शंकर रानडे, देवगड  | ५१    | श्री द. ल. नेने, चीफ ऑफिसर, रत्नागिरी             | २५    |
| डॉ. मी. म. भांडारकर, रत्नागिरी  | २५    | श्री. दत्तात्रय मी. पडित, रत्नागिरी               | २५    |
| श्री गो. य. टेव्हे, पावम  | २५    | श्री. ग. वि. भाटवडेकर, चिपळूण                     | २५    |
| श्री. आत्माराम रावजी भट, पुणे   | २५    | श्री. माधवराव तांबे, पोफळी                        | २५    |
| प्रा. माधव वामुदेव मेहेदळे, पुणे  | २५    | श्री. पी. व्ही. जोशी, पुणे                        | २५    |
| प्रा. विश्वनाथ नारायण गोखले, वाद्रा   | २५    | डॉ. वा. ग. खेर, M. B. B. S., पुणे                 | २५    |
| श्री. गंगाधर लक्ष्मण नातू गेट, मुंबई  | १००   | श्री. वसंत महादेव गुर्जर, पुणे                    | २५    |
| डॉ. ध. ज. परांजपे, पुणे   | २५    | श्री. जगन्नाथ गणेश काळे, पुणे                     | २५    |
| श्रीमती रघुनाथबाई जनार्दन गोगटे, मुंबई  | २५    | श्री. शरद विष्णु देव, पुणे                        | २५    |
| श्री वामन विश्वनाथ वावडेकर, मुंबई   | ५०    | श्री. आनंद गंगाधर पाठक, पुणे                      | २५    |
| श्री. वसंतराव एन्. सोमवजी, पुणे   | २५    | श्री. खंडेराव राधोबा वाध, पुणे                    | २५    |
|   |       | श्री. वामुदेव अमृत पानवलकर, पुणे                  | २५    |
|   |       | श्री. दत्तात्रय विनायक भट, पुणे                   | २५    |

| नांव   | रुपये | नांव                                    | रुपये |
|--|-------|---|-------|
| श्री. विष्णु केशव चिपळुणकर, मालाड                              | २५    | श्री. व्ही. सीताराम, मद्रास             | ५०    |
| श्री. दामोदर नारायण कामत, मुंबई                                | २५    | श्री. काशिनाथ सदाशिव रावते, मुंबई       | २५    |
| श्री. भालचंद्र केशव लिमये, मुंबई                               | २५    | श्री. पांडुरंग विठ्ठल कल्ले, मुंबई      | ५०१   |
| श्री. पांडुरंग शिवराम मरबळ्ळी, मुंबई                           | २५    | श्री. वैजनाथ विष्णु आठल्ये, मुंबई       | २५    |
| श्री. विश्वनाथ दत्तात्रय प्रभुदेसाई, माटुगा                    | २५    | श्री. शंकर दत्तात्रय बर्वे, मुंबई       | २५    |
| श्री. रामचंद्र भवानीशंकर मल्लापुर, मुंबई                       | २५    | श्री. दत्तात्रय अमृत फणसे, मुंबई        | २५    |
| श्री. राम भालचंद्र आठल्ये, मुंबई                               | ५१    | डॉ. गौरीशंकर महाबळेश्वर मासूरकर, मुंबई  | २५    |
| श्री. हरि भालचंद्र आठल्ये, मुंबई                               | २५    | श्री. गोकुळदास वेलजी सोमय्या, मुंबई     | २५१   |
| श्री. शाताराम व्यंकटराव नागरकट्टी, मुंबई                       | २५    | श्री. रामराव सदानंद रावते, दादर         | ३५    |
| श्री. लक्ष्मण रामचंद्र फडके, दादर                              | २५    | श्री. दीनानाथ गणेश बाणावली, मुंबई       | २५    |
| श्री. शाताराम सदाशिव आविये, मुंबई                              | २५    | श्री. गजानन मोरेश्वर परळकर, दादर        | २५    |
| श्री. मुरलीधर रामदयाळ धूत, मुंबई                               | १०१   | श्री. नाबाजी रामचंद्र भिमे, मुंबई       | ५०    |
| श्री. प्रताप नरहरि ऊर्फ बाळामाहेब,<br>यदे बसु आणि मडळी, माटुगा | २५    | श्री. धोंडोपत विष्णु सप्रे, मुंबई       | २५    |
| श्री. होरमसजी जहागिरजी वजीफदार, मुंबई                          | १०१   | श्री. पुरुषोत्तम विठ्ठल देशमुख, मुंबई   | ५१    |
| श्रीमती उमाबाई सदाशिव बलमेकर, मुंबई                            | २५    | श्रीमती सीताबाई रामचंद्र करदीकर, यवतमाळ | २५    |
| श्री. कृष्णाजी गणेश काळे, माटुगा                               | २५    | श्री. मधुकर गणपतराव मुगवे, राजकोट       | २५    |





**उत्तरार्ध समाप्त**

















श्रीमत् भावार्थ गीता

श्रीमत् भगवद्गीता प्रथमस्कंधे श्री ज्ञानेश्वरीच्या आधारे  
केलेला सुप्रसिद्ध भाषित, ऐक्यात्मक पद्यमय अनुवाद  
काऊन साईज : सचित्र १७८ पाने : मूल्य साडेतीन रुपये

श्रीमत् संजीवनी गाथा

श्रीसद्गुरुपर, श्रीहरिरूपपर, ज्ञानभक्तिपर, संतपर,  
नामपर, उपदेशपर, साधनपर आणि संकीर्ण अभंग.  
काऊन साईज : सचित्र १४१ पाने : मूल्य दोन रुपये

कांही अमिप्राय

मी स्वरूपानंद ह्याचा हा 'भावार्थगीता' नामक गीतेचा माकी अनुवाद वाचनीय,  
वनीय झाला आहे अशी खात्री देण्यात आम्हांम कमलाहि मकोच वाटत नाही.

महामहोपाध्याय व. बा. पोतवार

दि १९-१२-१९५१. प्रस्तुतची 'भावार्थ गीता' पठण करणाऱ्याला गीतेचे  
तत्त्वज्ञान ज्ञानाच्या आणि ज्ञानेश्वरीचा रम चाखल्याचे असे दुहेरी समाधान लाभेल.

ज. स. करंदीकर

प्रसाद, पुणे जुलई १९५२ : श्रीमत् भगवद्गीतेचा, स्वामी स्वरूपानंद ह्यांनी केलेला हा  
माकीबद्ध अनुवाद प्रसिद्ध होऊन वरचे दिवस झाले. त्याकडे ह्या विषयाच्या रमिक वाचकांचे  
अद्यापि जावे नितके लक्ष गेलेले दिसत नाही. . . . गीतेचा भावार्थ स्वामीजींनी ज्ञानेश्वरांच्या  
भावार्थदीपिकेला अनुसरून दिलेला आहे. त्यामुळे वाचकाला गीता आणि ज्ञानेश्वरी ह्या दोन्ही  
ग्रथांचे मार ह्या ग्रथामुळे कळण्याची मोय झाली आहे. . . . हा अनुवाद वाचू लागलो की, स्वामी  
स्वरूपानंदाना त्याच्या गुरूचा 'प्रसाद' लाभला आहे, हे महज लक्षात येते. त्यांच्या अनुवादातील  
'प्रसाद' गुण वाचकांचे चित्त प्रसन्न व शांत करील आणि त्यातील अर्थ वाचकाला समाधान देईल.

डॉ. श. रा. पेंडसे

बलवंत, रत्नागिरी दि ०७-०२-१९५० गीतेवर झालेल्या सर्व मराठी टीका व पद्यग्रंथ  
ह्यांचा अभ्यास केला असल्याचा ठसा 'श्रीमत् भावार्थ गीता' ह्या ग्रंथात उमटलेला दिसतो. केवळ  
माहिती ह्या दृष्टीने पाहिले तरी ह्या ग्रथाची योग्यता नि.मराय वरच्या दर्जाची ठरेल.

पण ह्या ग्रथाचे महत्त्व जाणवताहे अधिक आहे कारण भावार्थगीतेचे कर्ते हे स्वतः आत्मनिष्ठ  
मा. . . . अभ्यासवादी ज्ञानी पुरुषाच्या भूमिकेतून जसा प्रकारचा ग्रंथ निर्माण व्हावा अशी  
अपेक्षा प्रत्येक जना प्रकारचा हा ग्रंथ आहे, असे म्हणण्यांत अतिशयोक्ति नाही.

अतःकरणातून सहज स्फूर्ति निघालेले उद्गार ह्या पुस्तकात ग्रथित केलेले आहेत. रसाळ  
शब्दरचना लालित्यपूर्ण पद्यरचना आणि सर्व ठिकाणी आह्लाददायक प्रसाद हे ह्या ग्रथाचे  
बैनिष्ठ्य आहे

मो. वि. जोशी

आगामी प्रकाशन

श्रीमत् अभंग-ज्ञानेश्वरी

संक्षिप्त आवृत्ति : संपूर्ण चित्रावलिंसह

प्राप्तिस्थळ : श्री. वेसाईबंधू : मुक्काम पोस्ट पावस, जिल्हा रत्नागिरी